MSS No. 339 Subject PHILOSOPHY

Name of MSS योगवासिष्ठ

Author दोलूराम

Period ______ Folios 196

Script DEVANAGIRI. Source Prithi Pal Singh

Missing Folios N.A.

339

339

اصطلاح علم نشئتان

هرگاه نشئه یک سال آن دو سال شد
اترانداث میگویند

هرگاه سه سال شود نام
او تربان میگویند

هرگاه چهار سال شود نام
او چهتر میگویند

هرگاه پنج سال شود نام
او دوشک میگویند

هرگاه شش سال شود
نام او چوکه میگویند

هرگاه هفت سال شود
نام او چکیه میگویند

هرگاه هشت سال شود
نام او نیشب میگویند
ای یکمان جوانی رسید

هرگاه نه سال شود اخر
بهیر میگویند

در هفتاد و دو و با او تنسبه ۱۲۰۶
جعفر علی مرقوم گردید

در نعت

در حیث نعت درام حقیقت خلقت جهان از من گفتم

۶ ماه جیت سن ۱۳ ۱۱
فی شہر بابت جیت سوا [illegible]
[illegible]

[illegible]
۱۲ ماه ۵
[illegible]

OOD

॥ईश्व॥ सर्वेबाधाप्रशमनं
त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरी एवमे
व त्वया कार्य्यमस्मद्वै
रिविनाशनम्॥

نگشن ز تعشق عدم نہ نشنید حرف
وحیف جلوہ گاہ قدم نا نہند گام

از سخنان حضرت شیخ رحمہ

جو ہوئی سو ہوئی بس یار صبر شکر کرتا کر رہئی جو ہونے سو ہوئی یار جو ہوئی سو کر کر ہوس
بہہ ہسی کوئی روئی یار صبر شکر کرتا کر رہی جو ہوئی سو ہوئی یار رازق تینو
رزق رسیدا جو دم تیرا جگ وچ یار صبر شکر کرتا کر رہی جو ہوئی سو ہوئی یار
ور خیال بیٹھ حاضر ناظر دل کا دین دہوسی یار صبر شکر کرتا کر رہی جو ہوئی
سو ہوئی یار فقط

सुखमह म स्वासं न किंचिद वेदिषंति

ॐ

अंतर जोति बाहिर जोति प्रत्यक जोति प्रात पर:
जोत जोती स्वयं जोति आत्म जोति अहं शिव:

Yogvāshistha in Hindi
by Holū Ram

तत्वमसि। तत्पदं ईश्वरवाचकं॥ त्वंपदं जीववाचकं॥ असि
पदं चैतन्यवाचकं द्वयो आधारभूतं॥ चक्षुरादीनि करणानि
दिसाद्यनुगृहीतानि स्वस्वविषयेषु प्रवर्तन्ते तत्र बुद्धिकरणव्यापा
रमनुभवति त्वंचैतन्योज्वलितोऽन्यात्मकं दृष्टादृष्टरूपाकार
विपरणमतेतत् जागरणं भवति। तस्य साक्षी त्वंचैतन्य॥
जाग्रत संस्कारप्रत्यय वासनावासितं बुद्धिपुष्पपुटिक
बुद्धिवत् त्वंचैतन्यो ज्वलितोऽन्यात्मकं दृष्टादृष्टरूपाका
रं विपरणमतेतत्स्वप्नं भवति यथा चित्रपटवत् तस्य
द्रष्टृकं भूतं साक्षित्वमेव
जाग्रत्स्वप्नावस्या सर्वसंस्कारैः सह बुद्धिसांख्यात्मभूत्वा
विद्यायां लीनासां विद्यासंस्कारमात्रविशिष्टत्वयिवि
स्वप्नानि विकल्पानुभवो भवाति दृष्टे तद्द्वयं सुषुप्तावस्था
न कंचन कामं कामयति न किंचन स्वप्नं पश्यति सुख
स्वरूपं मिवेति योवेति तस्य स तस्मात् द्वी

सो



ॐम्॥ श्रीगणेशगुरूपगुरुवे नमः॥ ऽअथ वैराग्यप्रक
रणभाषवचनस्मृति भाषा लिख्यते॥ सतचितऽआनंदरू
पजो है ऽआत्मा तिसको नमस्कार है॥ कैसा है सतचित
ऽआनंदरूपऽआत्मा जिसतें इह सर्व है॥ ऽअर जिह विषे
इह सर्व होइ॥ जो इह सर्व है॥ ऽअर जिह विषे इह लीन हो
ते है इ॥ तिस सर्वात्मा को नमसकार है इ॥ ज्ञाता ज्ञान ज्ञे
य इत्यादरसन दृश्य करता करण क्रिया जिसकर सि
ध होते हैं॥ ऽऐसा जो ध्यानरूपऽआत्मा है॥ तिसको नमस
कार है॥ जिसऽआनंदसमुद्र के कण करके संपूरण विश्व
ऽआनंदवान है॥ ऽअर जिसऽआनंद कर सर्व जीव जीवते है
इ॥ तिसऽआनंदऽआत्मा को नमसकार है॥ कोऊ एक सुती
छण ब्राह्मण ऽअगस्त मुनि का सिष होत भया है॥ तिसके
मन विषे एक संसे उतपति भया है॥ तिसके निवर्त कर
ने ऽअर्थ ऽअगस्त मुनि के ऽआश्रम को गमन कीया॥ जाइक
र विधसंयुक्त प्रणाम करके स्थित भया॥ ऽअर निमता भाव
सौं प्रश्न करत भया॥ सुतीछणोवाच॥ हे भगवन सर्व तत
त्व सर्व शास्त्रों के ज्ञाता एक संसय मुज को भया है॥ कृपा
करके तुम निवरत करो॥ जो मोछ का कारण कर्म है॥ ऽअ
थवा ज्ञान है॥ ऽअथवा दोनों हैं॥ जो मोछ का साधन है सो
कहो॥ ऽअगस्तोवाच॥ हे ब्राह्मण केवल कर्म भी मोछ का सा
धन नहीं॥ ऽअर केवल मोछ ज्ञानतें भी नही होता॥ दोनों क
र मोछ की प्राप्त होती है॥ कर्म करके ऽअंतहकरण सुध
होता है॥ मोछ नहीं होता॥ ऽअंतहकरण सुध बिना केवल ज्ञा
न तें भी मोछ नहीं होता॥ ऽअर्थ इह॥ जो शास्त्रों का तातपर्य
ज्ञान निश्चा है इ॥ पर ऽअंतहकरण सुधरूपे बिना इस्थित
नही होता॥ तांतें दोनों कर मोछ की प्राप्त होती है॥ कर्मऊं
कर प्रथम ऽअंतहकरण सुध होता है॥ बहुड़ ज्ञान उपजता है
तब मोछ सिध होता है॥ जैसे दोनों पंखों कर पंछी ऽआका
स मार्ग को उडता है॥ तैसे कर्म ऽअर ज्ञान कर मोछ की प्रा
प्त होती है॥ हे ब्राह्मण इसके ऽअनुसार एक पुरातन इतहा

सहइ॥सोसुण॥एककारणनामब्राह्मणअग्निवेसकापुत्र
होतभयाहै॥सोगुरुकेंकेनिकटजायकरचारवेदषटअं
गोसहितअध्ययनकरतभया॥अध्ययनकरकेबहुडग
हमोंआया॥कर्मउंतेरहितहोकरतूष्णीअस्थितभया॥अ
थेइहजोसंसयसंयुक्तकर्मउंतेंरहितभया॥तबपितादेष
या॥जोइहकर्मोतेंविवर्जितहोकरइस्थितहूयाहै॥अइसे
देषकरइसगकारकहतभया॥अगनवेसोवाच॥हेपुत्रे
कर्मउंकीपालनाकिंउनहीकरतातूं॥कर्मोकेअकरनेक
रकेकैंसेसिधताकोपावेगा॥जिसकरतूंकर्मउंतेंरहित
हूयाहैं॥सोकारणकउ॥कारणोवाच॥हेपितानीएकसं
सयेमुझकेउतपतहूयाहे॥तिसकरमयकर्मउंतेंतूष्णी
होरहाहों॥सोसुण॥एकठउडविषेवेदोंनेकहाहै॥जबल
गजीवतारहै॥तबलगकर्मकरतारहे॥अरअवरठौरक
हाहै॥नकर्मोकरमोक्षहोताहै॥नपुत्रादिकोंकरमोक्षहो
ताहै॥नूंकेवलत्यागकरमोक्षहोताहै॥इनदोनोंविषेमुझको
क्याकर्तव्यहै॥सोकृपाकरकेकहो॥अगस्तोवाच॥हेसुतीक्ष्ण
अइसेजबकारणपिताकोंकहा॥तबतिसकावचनसुण
करअगनवेसकहतभया॥अगनवेसोवाच॥हेपुत्रएकक
थामुझतेंसुण॥जोपूर्वहूयाहै॥तिसकोंसुणकरतिसविषे
धांर॥आगेंजोतेरीइछाहोवेसोकर॥एकसुरुचीनामअप
छराथी॥सोकैंसीथी॥जोजेतीकछुअपसराहै॥तिनविषे
उतमथी॥एककालमोंहिमालयपरवतकेसिखरपरबेठी
थी॥सोहिमालापर्वतकैंसाहै॥जोदेवतेंअरकिंन्नरउंके
गण॥अपसरातहांक्रीडाकरतेहैं॥बहुडगंगाजीकाप्रवाह
लहरीदेतातहांचलाजाताहै॥तिसअगेंसेसिखरपरसुरुची
अपसराबेठीथी॥तिसनेंइंद्रकादूतअंतरिक्षतेंचलाआ
वतादेषा॥जबनिकटआयातबतिसकोंकहा॥हेसोभाग्य
देवदूतदेवगणउंविषेश्रेष्ठतूंकहांतेंआवताहैं॥अबक
हांचलाहै॥सोकृपाकरकेकहो॥देवदूतोवाच॥हेसुमंदेतुज
पछाहैसोसुण॥अरिष्टनेमीएकराजरिषथा॥पुत्रअपने

कष्टतें रहित देउ जमका नेम

को राज दे कर वैराग्य कीया॥ संपूर्ण विषयों की अभलाषा
त्याग कर गंधमादन पर्वत विषे जो यत तप करने लागा॥ ति
स के साथ मेरा एक कार्य था॥ सो कार्य कर के इंद्र के पास
चलेया जाता हों॥ तिस का संपूरन व्रतांत तैने वेदन करने कों
चल्या हों॥ अपसरोवाच॥ हे भगवन उह व्रतांत कवन है
सो मेरे ताईं कहो॥ तुज सों प्रिय जान कर पूछती हों॥ अर जो
महापुरुष हैं॥ तिन सों जो कोउ पूछता है॥ तब उदवेग तें र
हित हो कर उत्तर कहते हैं॥ तांते तुम कहो॥ देवदूतोवाच
हे सुभद्रे जैसे व्रतांत हूया है सो सुण॥ उह जो राजा गंधमा
दन पर्वत विषे तप करने लागा॥ बडा तप कीया॥ तब दे
वतों का राजा जो इंद्र है॥ तिस मुज कों आगया करी॥ कि हे
देवदूत तूं गंधमादन पर्वत विषे जाउ॥ विमान अपसरा ग
ण अवर नाना प्रकार की समग्री कों भी नाल लेजा॥ गंधर्व किं
नर ताल म्रदंग आदिक बजंत्री भी नाल लेजा॥ गंधमादन
पर्वत विषे तहां जाइ के राजा कों विमान पर चडाइ ले आ
उ॥ हे सुंदरी जब देवेंद्र अैसे कहा॥ तब मै विमान सहि
त सर्व समिग्री कों तहां ले आया॥ जहां राजा था॥ तब मै यक
हा॥ हे राजन तेरे कारन विमान ले आया हों॥ तिस पर आ
रूढ हो कर तुम स्वर्ग को चलो॥ अर दिव सुखों को उहां
चल के भोगो॥ जब मै यों अैसे कहा॥ तब मेरे वचन सुण क
र राजा बोलत भया॥ राजोवाच॥ हे देवदूत प्रथम स्वर्ग
का व्रतांत मुझ कों कहो॥ जो तेरे स्वर्ग विषे गुण क्या हैं॥ अ
रु दोष क्या हैं॥ तिस कों सुण कर प्रथम रिदे विषे धारों॥ पा
छे जो मेरी इछा होवेगी तो जावोंगा॥ देवदूतोवाच॥ हे राजे
न स्वर्ग विषे बडे दिव्य भोग हैं॥ जो बहु उत्तम पुंन्य करम हो
ते हैं॥ तब उत्तम स्वर्ग सुख प्राप्त होता है॥ अर जो मध्यम
पुंन्य करम होते हैं॥ तब मध्यम स्वर्ग सुख पावता है॥ अरु क
निष्ट कर्मों कर के निष्ट स्वर्ग सुख पावता है॥ इह तो स्वर्ग के
गुण कहे हैं॥ अर स्वर्ग विषे जो दोष हैं॥ सो सुण॥ हे राजन
जे प्राप्त ते ऊचे बैठते हैं॥ अर उत्तम सुखों कों भोगते हैं॥ ति
न कों देख कर जलन उतपत होती है॥ जो उन की उत्तमताई

सही नहीं जाती ॥ अरु जो कोई आपणे समान सुख भोगता
भोगता देषीता है ॥ तिस कों देष कर ईरषा आवती है ॥ जो
मेरे समान किंउं बैठता है ॥ अरु जे आपतें नीचे सुष भोगते
बैठते हें ॥ तिस कों देष कर अभिमान उपजता है ॥ जो में पुं
नतें श्रेष्ट हों ॥ अरु एक अवर भी दोष है ॥ जो जब इस के पु
न्य हीण होते हैं ॥ तब तिसी काल में इस को मनुष्य लोक विष
गिराइ देते हैं ॥ एक क्षण भी रहणे नहीं देते ॥ हे राजन इह दो
ष स्वर्ग विषे हैं ॥ हे मुनेंद्र जब इस प्रकार में राजा कों कहा
तब उस राजे कहा ॥ हे देवदूत इस स्वर्ग के हम योग्य नहीं ॥
हम उग्र तप कर के इस सरीर कों त्याग देवेंगे ॥ हे देवदू
त विमान कों ले जा ॥ जहां तें आया है ॥ हमारी नमस्कार है ॥ तुमकूं
देवदूतोवाच ॥ हे देवी जब इस प्रकार राजे मुज कों कहा
तब विमान अपसरा आदिक सर्व सामग्री कों स्वर्ग ले ग
या ॥ अरु संपूर्ण वृतांत राजा इंद्र के आगे जा कहा ॥ तब
राजा इंद्र प्रसन्न हूया ॥ अरु सुंदर बाणी कर के मुज कों क
हत भया ॥ हे देवदूत तें बहुर राजा पास जाउ ॥ जो राजा
संसार तें उपरत हूया है ॥ उसकों आतम पद की इछा भ
ई है ॥ इस राजा कों साथ ले कर बालमीक पास जाउ ॥ कैं
से बालमीक कहैं ॥ जिसनें आतम तत्व कों आत्मा चे कर जाना
है ॥ तिस के पास ले जाउ ॥ अरु बालमीक कों मेरा भी संदेसा
देउ ॥ हे बालमीक महारिष इस राजा कों तत्वबोध का उ
पदेस करो ॥ जो इहु बोध का अधिकारी है ॥ काहे तें जो इस
कों स्वर्ग की भी इछा नहीं ॥ अवर भी कछु नहीं ॥ तां ते तुम इस
कों तत्वबोध का उपदेस करो ॥ जो तत्वबोध कों पाय कर
संसार दुःख तें मुक्त होवे ॥ हे मुनेंद्र जब इस प्रकार देवरा
ज मुज कों कहा ॥ तब मैं चल्या ॥ जहां राजा था तहां मय जा
य कर कहा ॥ कि हे राजा तें संसार समुद्र तें मोक्ष होवणे
के निमित बालमीक पास चलो ॥ बालमीक तुज कों आत्म
बोध का उपदेस करेगा ॥ तब तिस राजा कों साथ ले क
र बालमीक के आश्रम आया ॥ तिस इस्थान विषे रा
जा को बैठाया ॥ अरु बालमीक कों इंद्र का संदेसा दी

या॥जो कुछ हां वरतांत हूया सो सुण॥जब उहां गए आगम कुगल
म कर बैठे॥तब बालमीक जी ने पूछा॥हे राजन कुशल है
कुशल है किं उ॥राजो वाच॥हे भगवन सर्व तत्व ज्ञ वेद वे
दांत जानन वालीयों विषे श्रेष्ट॥मय अब कृतारथ हू
या हों॥तुमारे दर्शन करके मुज को अब कुशल हूया
है॥अर कछु पूछता हों॥कृपा करके तिस का उतर कहो
जो संसार बंधन ते मुक्त होवूं॥तुमारे प्रसाद कर के॥सो उ
ही कहो॥बालमीको वाच॥हे राजन महारामायण अबं
डे तन तुम को कहता हों सो सुण॥सुण कर तिस का तात प
र्ये रिदे विषे धार॥जब तात पर्ये रिदे विषे धारेंगा॥तब
जीवन मुक्त होकर विचरेंगा॥हे राजन वसिष्ट अर राम
जी का संवाद है॥तिस विषे सनकय्या मो ते उपाय की
हैं॥तिस को सुण कर जैसे राम जी आपणे स्वभाव विषे
स्थित हूये हैं॥अर जीवन मुक्त होकर विचरे हैं॥तैं
से तें भी विचरेंगा॥राजो वाच॥हे भगवन राम जी कवन था॥अर
कैसे जीवन मुक्त होकर विचर्या है सो कहो॥बालमी
को वाच॥हे राजन श्राप के वस ते हरि जो है विष्णु जी तिन
नें देह धार कर॥जो ई विष्णु अद्वैत ज्ञान कर संपन्न है
भी कछु इक अज्ञान को अंगीकार करके मानुष का श
रीर धार्या था॥राजो वाच॥हे भगवन चिदानंद स्वरूप
जो हैं हरि विष्णु जी तिन को श्राप का कारण कैसे हूया॥
अरु किसने दीया सो कहो॥बालमीको वाच॥हे राजन ए
क काल में सनतकुमार जो हैं निषकाम सो ब्रह्मपुरी वि
षे बैठे थे॥अरु त्रिलोकी के पति जो हरि विष्णु भगवान
हैं॥सो बैकुंठ ते उतरे॥ब्रह्मपुरी विषे आये॥तब ब्रह्मा
सहित सब सभा उठ खडे हूये॥अर पूजन कीया॥अरु
सनतकुमार कछु पूजन न कीया॥तब तिन को देख कर
विष्णु भगवान बोलते भया॥हे सनतकुमार तुज को नि
षकामता का अभिमान है॥ताते तुम काम कर आतुर हो
वेंगा॥अर स्वामि कारतिक तेरा नाम होवेगा॥जब विष्णु
भगवान ऐसे कहा॥तब सनतकुमार बोले॥हे विष्णु

३

3

तुज कों सर्वज्ञता का अभिमान है ॥ तेरी सर्वज्ञता को उ कालि
निवर्त होवेगी ॥ अरु अज्ञानी होवेंगा ॥ हे राजन एक तो इह श्रा
प हूया ॥ एक काल में भृगु की नारी जाती रही थी ॥ तिस के
वियोग कर उह तप्तायमान था ॥ तिस को देख कर विष्णु
जी हसे थे ॥ तब भृगु ब्राह्मण ने श्राप दीया ॥ हे विष्णु मेरे तां
ई देख कर तुम हिं हासी करते हो ॥ तां ते मेरी न्याईं तूं भी स्त्री
के वियोग कर आतुर होवेंगा ॥ अरु एक देवशर्मा ब्राह्मण
ने श्राप दीया ॥ जो एक काल में नरसिंह भगवान गंगा जी
के तीर पर गए थे ॥ तहां देवशर्मा की स्त्री आई थी ॥ तिस कों
देख कर नरसिंह जी ने भयानक रूप दिखाया ॥ अरु हसे ॥ त
ब भय कर के उस ब्राह्मणी के प्राण निकस गए ॥ तब देव
शर्मा ने श्राप दीया ॥ जो तुम मुज कों स्त्री का वियोग दीया है
तां ते तुम भी स्त्री का वियोग पावोगे ॥ हे राजन सनतकुमार
अरु भृगु अरु देवशर्मा के श्राप कर विष्णु भगवान ने मानु
ष का सरीर धारया ॥ दशरथ राजे के गृह विषे उतपति हूया
हे राजन ऐसे तो सरीर धारया ॥ अब आगे जो वृत्तांत हूया
है सो सुण ॥ द्विव्य जो है देवलोक ॥ अरु भूम जो है पृथवी
लोक ॥ अरु पाताल जो है दैत्य लोक ॥ सो जिस के आश्रय प्र
काशते हैं ॥ अंतर बाहिर आत्मतत्व कर के पूर्न है ॥ ऐसा अनु
भवरूप जो आतमा है ॥ तिस सर्वात्मा कों नमसकार है ॥ हे रा
जन इह शास्त्र जो आरंभ कीया है ॥ तिस का विषय क्या है ॥
अरु प्रयोजन क्या है ॥ अरु संबंध क्या है ॥ अरु अधिकारी को
वन है ॥ सो सुण ॥ सत चित आनंदरूप अद्वैत चिनमात्र आत
मा को जनावता है ॥ इह विषय है ॥ अरु परमानंद आतमा की
प्राप्त अरु अनात्म अभिमान दुःख की निवृत्त एही प्रयोजन
है ॥ अरु ब्रह्मविद्या मोक्ष उपाव कर आत्म प्रतिपादन इह सं
बंध है ॥ जिस कों एही निश्चे है ॥ जो मय द्वैत भ्रम अनात्म देह
साथ बांध्या हूया हों ॥ किसी प्रकार छूटों ॥ न उह अत्यंत ज्ञान
वान है ॥ न मूर्ख है ॥ ऐसा जो विरक्त आतमा है ॥ तिस को अधि
कार है इस शास्त्र का ॥ सो इह मोक्ष उपाउ शास्त्र कैसा है ॥ परम
आनंद का प्राप्त करणे हारा है ॥ जो पुरुष इस कों विचारे ॥ सो

ज्ञानवान होवेगा ॥ बहुडि जन्ममृत्यु संसार मों न आवेगा ॥ हे
राजन इह महारामायण जो है सो पावन है ॥ बहु पापों कों ना
स करता है ॥ श्रवण मात्र तें ॥ जिस विषे राम कथा है ॥ सो प्रथम
मय नारदजी अपने सिष्य को श्रवण कराया है ॥ एक समें ना
रदजी चित कों एकाग्र करिके मेरे पास आया था ॥ तिस कों
मय उपदेस कीया था ॥ इस कों श्रवण करिके एक समें सुमेर
पर्वत पर गया था ॥ पितामह जो है ब्रह्माजी सो बैठे थे ॥ अर
नारदजी नमस्कार प्रणाम कीया ॥ अरु जा बैठा ॥ अरु ब्रह्माजी
को एह कथा सभ सुणाई ॥ तब ब्रह्माजी प्रसन्न होकर नारद
जी को कहा ॥ हे पुत्र कछु वर मांग ॥ मय तुझ पर प्रसन्न हूया हो ॥
हे राजन जब इस प्रकार ब्रह्मा कहा ॥ तब परम उदार जिसका
आशय है ॥ ऐसा नारदजी कहत भया ॥ हे भूत भविष्यत वर्त
मान के ईश्वर जो तुम प्रसन्न हूये हो ॥ तब इह वर देवो ॥ जिस
कर संपूरण जीव संसार के दुःख तें मुक्त होवें ॥ परम पद कों प्रा
प्त होवें ॥ सो कछु देवो ॥ ब्रह्मोवाच ॥ हे पुत्र तुम अपने गुरु वा
लमीक पास जा गमन करो ॥ जो तिसने आत्मबोध महारामा
यण अनिंदित शास्त्र का आरंभ कीया है इह ॥ तिस कों सुणकर
जीव महा मोह रूपी संसार समुद्र तें तरेंगे ॥ कैसा शास्त्र है ॥
महारामायण जो संसार समुद्र तरणे को पुल है ॥ परम पा
वन है ॥ वालमीकोवाच ॥ हे राजन जब इस प्रकार ब्रह्माजी
परमेष्टी नारदजी साथ मेरे आश्रम पर आए ॥ तब मय नाना
प्रकार तिनों का पूजन कीया ॥ कैसा ब्रह्माजी है जो सर्व जीवों
विषै है प्रीत जिस की ॥ सो मुझ कों कहत भया ॥ हे मुनों विषे श्रे
ष्ट वालमीक जी इह जो राम के स्वभाव कथन का आरंभ तुम
कीया है ॥ तिस के उद्यम का त्याग नहीं करणा ॥ इस कों अंत
प्रजंत समाप्त करणा है ॥ कैसा इह मोह उपाव है ॥ जो संसार
रूपी समुद्र के पार करने को जहाज है ॥ इस कर सर्व जीव
कृतार्थ होवेंगे ॥ वालमीकोवाच ॥ हे राजन इस प्रकार ब्र
ह्माजी मुझ कों कहि कर अंतरध्यान हो गए ॥ एक मुहूर्त में
जैत ॥ जैसे समुद्र तें आवर्त उठते हैं ॥ बहुड लीन हो जाते
हैं ॥ तैसे ब्रह्माजी अंतरध्यान हो गए ॥ तब मय नारदजी को
कहा ॥ हे पुत्र ब्रह्माजी ने क्या कहा ॥ नारदजीवाच ॥ हे न

गवन तुम कों ब्रह्माजी ऐसे कहा॥ हे मुनो विषे श्रेष्ठ इह जो तु
म रामके स्वभाव कथनका उद्यम कीया है॥ तिसका त्याग न
हीं करणा॥ अंतपर्जंत समाप्त करणा है॥ काहेतें जो इह संसा
रसमुद्र के पार करणे को जहाज है॥ इसकर सर्व जीव कृता
र्थ होवेंगे॥ संसार संकटतें मुक्त होवेंगे॥ वाल्मीकोवाच॥
हे राजन जब इसप्रकार मुज को ब्रह्माजी कहा॥ तब ब्रह्माजी
की आज्ञा अनुसार महारामायण कीया॥ भरद्वाज को
कहा॥ हे पुत्र जिसप्रकार रामजी निःशंक होकर विचरे हैं
वशिष्ठजी के उपदेस कर॥ तैसे तुम भी विचरो॥ तब उस प्रश्न
कीया॥ भारद्वाजोवाच॥ हे भगवन जिसप्रकार जीवनमुक्त
होकर रामजी विचरे हैं॥ आदितें लेकर अंतपर्जंत क्रम
कर मुज कों कहो॥ वाल्मीकोवाच॥ हे भारद्वाज राम लक्ष्म
ण भरत शत्रुघन सीता कौशल्या सौमित्रा दशरथ अष्ट
तो इह जीवनमुक्त हूये हैं॥ अरु अष्ट मंत्री अष्टगण वसिष्ट
वामदेवतें लेकर अष्ट विंशति जीवनमुक्त हूये हैं॥ रामतें ले
कर लक्ष्मण दशरथ पर्यंत अष्ट तो जीवनमुक्त इह हूये
हैं॥ अवर अवर जे परम बोधवान इस बिकेद भास जे
सनवर्धन सुखधाम बिभीषण इंद्रजित हनुमान वसिष्ट
वामदेव अष्ट मंत्री इहभी जीवनमुक्त हूए हैं॥ अद्वैतपद वि
षे नित्य तत्पर स्थित भये हैं॥ कदाचित द्वैत नहीं फुरया॥ के
वल चिन्मात्र परमपावन पद कों प्राप्त भए हैं॥ इतिश्रीविरा
ग्यप्रकर्णे कथाआरंभवर्णनंनाम सर्गः॥ १॥ भारद्वाजोवाच॥
हे भगवन जीवनमुक्त की इस्थिति कैसी होती है॥ अरु राम
जी कैसे जीवनमुक्त हूया है॥ आदितें लेकर अंतपर्जंत स
न कहो॥ वाल्मीकोवाच॥ हे पुत्र इह जो जगत भासता है सो वा
स्तव कछु उत्पन्न नहीं भया॥ अविचार कर के भासता है॥ वि
चार कीयेतें नष्ट हो जाता है॥ जैसे आकाश विषे नीलता भ्र
म कर भासती है॥ तैसे अविचार कर के जगत भासता है॥
विचार कीयेतें नष्ट हो जाता है॥ हे भारद्वाज जब लग दृश्य
का अत्यंत अभाव नहीं होता॥ तब लग परमपद की प्राप्त न
हीं होती॥ जब दृश्य का अत्यंत अभाव होवे॥ तब पीछे सुध

अवतिनके ना मसुए

चिदाकाश आत्मसत्ताभासेगी॥ कोउ इस द्रिश्य का महा गले
विवेक अभावक हते हैं॥ अरु मैं यतुज को त्रिकाल अभावक
हता हौं॥ इस श्लोक कर॥ जो इस श्लोक को आदि तें ले कर अं
त पर्यंत श्रवण करे॥ अरु तिस को धारे॥ तब तिस को भ्रां
ति निवर्त हो जाती है॥ अरु हृत्तम आनंद को प्राप्त होता है॥ हे सा
धु यह संसार भ्रममात्र सिध है॥ इस को नाममात्र जाण कर
विस्मरण करणा एही मुक्त है॥ अरु इस के बंधन का का
रण वासना ही है॥ जब वासना क्षय होवे॥ तब परम पद की
प्राप्त होवे॥ एक वासना का पुतला है॥ तिस का नाम मन है॥
जैसे जल दृढ जडता कर के बरफ हो जाता है॥ अरु सूर्य के आ
कास तें गल कर बहुड़ जल हो जाता है॥ तैसे वासना कर के
मन अग्यान रूपी बरफ का पुतला हूया है॥ जब ग्यान रूप
सूर्य उदे होवे॥ तब संसार की सतता रूपी बरफ निवृत्त
हो जाती है॥ जब संसार की सतता नष्ट हूयी॥ तब मन भी
नष्ट हो जाता है॥ जब मन नष्ट हूया॥ तब परम कल्याण
हूया॥ तातें इस के बंधन का कारण वासना ही हैं॥ वास
ना के क्षय हूये मुक्त है॥ सो वासना दुइ प्रकार की है॥ एक शु
ध है॥ एक अशुध है॥ जो आपने वास्तव स्वरूप के अग्यान
तें अनात्मा तत्व जो है देहादिक तिन विषे अहंभाव करण
सो अशुध है॥ जब इस को अनात्म विषे आत्म अभिमान हू
या॥ तब नाना प्रकार की वासना उपजती है॥ तिन कर के घ
टीयंत्र की नियाई परणामता है॥ हे साधु इह जो तें पंचभौ
तिक शरीर देखता है॥ सो सब वासना रूप है॥ वासना कर
के खडे हैं॥ जैसे मणके तागे के आश्रय होते हैं॥ जब तागा
टूट पडा॥ तब भिन्न भिन्न हो जाते हैं॥ तैसे वासना के क्षय
हूए पंच भौतिक शरीर भी न ही भासते॥ तातें अनर्थों का का
रण वासना ही है॥ जब वासना क्षय हूई॥ तब जगत का
आत्यंत अभाव हो जाता है॥ हे साधु अग्यानी वासना कर के
बहुड़ जन्म मरण को पावता है॥ अरु ग्यानवान की वासना
जन्म मरण का कारण नहीं होती॥ जैसे एक कचा बीज

५

5 होता है ॥ दूसरा दग्ध बीज होता है ॥ जो कच्चा है सो बहुड़ उप
जता है ॥ अरु जो दग्ध हूया है सो बहुड़ नही उपजता ॥ तां ते अ
ज्ञानी की वासनां जन्मों का कारण है ॥ अरु ज्ञानवान की वा
सनां जन्मों का कारण नहीं ॥ ज्ञानी की क्रिया स्वाभाविक गु
णों कर पड़ी होती है ॥ उक्ति सो साक्ष लिपायमान न होहि
ता ॥ खाता पीता लेता देता बोलता चलता व्यवहार करता है
पर अंतर सदा अद्वैत निष्ठा है ॥ कदाचित द्वैत भावना ति
स को नहीं फुरती ॥ अपने आप भाव विषे स्थित है ॥ तां ते
निर्गुण अक्रिय स्वरूप है ॥ तिस की क्रिया जनम मरण का का
रण नही होती ॥ जैसे कुंभार का चक्र होता है ॥ जब लग उस
को चर्न लगावता है ॥ तब लग वल चढ़ते जाते हैं ॥ जब चर्न
लगावणे ते रहा ॥ तब वल उतरते जाते हैं ॥ तैसे जब अहंका
र सहित क्रिया करता है ॥ तब लग जनमों को पावता है ॥ ज
ब अहंकार ते रहित हूया ॥ तब बहुड़ जन्म नहीं पावता ॥ हे
साधु इह जो अज्ञान रूप वासना है ॥ तिस के नास करणे का
उपाव एही है ॥ जो आत्म विद्या मोक्ष उपाव शास्त्र है ॥ इस ते इ
तर साधन कर मुक्त न होवेगा ॥ जो आत्म विद्या ही को अभ्यास
करेगा ॥ सो सुखयन ही आत्म पद को प्राप्त होवेगा ॥ हे साधु
ए जो मोक्ष उपाव रामजी अरु वसिष्ठ जी का संवाद है ॥ सो विचा
रणे योग्य है ॥ काहे ते जो बोध का कारण है ॥ जैसे रामजी जी
वन्मुक्त होकर विचरे हैं ॥ सो सुण ॥ एक दिन रामजी विद्या
पढ़कर अध्ययन शाला ते अपणे गृह मों आए ॥ संपूरण दि
न विलास सहित व्यतीत करते भए ॥ बहुड़ मन विषे तीर्थ हूं
अरु ठाकुरद्वारों का संकल्प धार कर पिता दशरथ पास
आया ॥ सो पिता कैसा था ॥ जो संपूरण प्रजा को सुख साथ रा
खता था ॥ अरु मन प्रजा तिस की संकट ते रहित सुख पाया
तिस दशरथ के चरन रघुनाथ जी ग्रहण कीये ॥ जैसे सुंदर
कमल को हंस ग्रहण करे ॥ तैसे अंगुरी सहित चर्न पकर्या
अरु मुख ते इह वचन कीया ॥ हे पिता जी मेरा चित तीर्थ हूं अ
रु ठाकुरद्वारों के दरसन को उठ्या है ॥ तां ते तुम आज्ञा देवो
जो मय दर्शनां को ॥ मय तुमारा पुत्र हां ॥ तुम को पालना कर

णा योग है॥ आगे मय कहा नीक कछु नहीं॥ एही प्रार्थना अब क
री है॥ तांतें तुम आग्या देवो॥ एव वचन मेरा फेरणा नहीं॥ काहेतें
जो ऐसा त्रिलोकी विषे कोऊ नहीं॥ जिसका मनोरथ इसग
ह तें सिध न हूया होवे॥ तांतें मुजकों आग्या देवो॥ वालमीको
वाच॥ हे भारद्वाज जब इस प्रकार रामजी कहा॥ तब वसिष्ठ
जी पास बैठे थे॥ तिनहु भी राजा दशरथ कों कहा॥ हे राजन रा
मजी कों आग्या देनी॥ जो रामजी तीर्थहु अरु ठाकुरद्वारों का
दरसन कर आवे॥ राजकुमार है॥ सेना भी इसके साथ दीजे॥
अरु धन मंत्री ब्राह्मण भी साथ दीजे॥ जो दरसन कर आवें॥
हे भारद्वाज जब ऐसे वसिष्ठजी कहा॥ तब सुनकर तें दश
करि रामजी कों आग्या दीनी॥ जब चलने लागे॥ तब पिता के
चरनें लागे॥ तब उसने कंठ लगाया॥ अरु रुदन करने लागे॥
तिनकों मिलकर आगे चले॥ लछमण तें लेकर जो भाई
हैं॥ तिनकों साथ लीया॥ अरु मंत्रीयों को भी साथ लीया॥ अ
र वसिष्ठजी विध के जानणे वाले ब्राह्मण साथ दीये॥ सेना
अरु धन बहुत साथ लीया॥ दान पुंन्य करत्ते गृह तें बाहि नि
कसे॥ तब उहां के लोक अरु इस्त्रीयां तिनहुनें रामजी के ऊ
पर पुष्पों की वर्षा करी॥ अर रामजी की मूरति हिरदे विषे धार
लीनी॥ इस प्रकार रामजी ऊहां तें चले॥ तब तीरथ जो हैं गं
गा यमुना सरस्वती तें आदि लेकर तिनहु के स्नान कीये वि
धि संयुक्त॥ पृथ्वी की चारों कोण उत्तर दक्षिण पूर्व पश्चिम
देख्ये॥ अरु चारों ओर समुद्र के स्नान कीये॥ अरु सुमेर पर्व
त पर गए॥ इस्नान दान यात्रा विध संयुक्त करते भए॥ संपू
र्न यात्रा कर्के एक वर्ष मों बहुड़ अपणे नगर मों आए॥ इ
ति श्री वैराग प्रकरणे तीर्थयात्रा वर्ननं नाम सर्गः॥२॥
॥२॥ वालमीकोवाच॥ हे भारद्वाज जब रामजी अपणे न
गर मों आवनें लागे॥ तब नगर के बासी जो लोक थे॥ अर इ
स्त्रीयां थी॥ सो सब पुष्पों की वर्षा करते भए॥ जय जय शब्द मु
खतें उचरनें लागे॥ बडे उत्साह कों प्राप्त भए॥ अर रामजी अ
पनें गृह विषे आए॥ जैसे इंद्र का पुत्र अपने स्वर्ग विषे आ
वता है॥ तैसे रामजी गृह विषे आए॥ प्रथम राजे दशरथ कों
प्रणाम कीया॥ बहुड़ वसिष्ठजी कों प्रणाम कीया॥ बहुर

ड जेते सभा के लोक थे तिनों कों यथायोग्य मिले ॥ बहुर अंत
हपुर विषे आवत भए ॥ कुल्या आदिक जो माता थी ॥ ति
नों कों यथायोग मिले ॥ जो बांधव भाई जन कुटंबी थे तिनों
कों यथायोग्य मिले ॥ हे भारद्वाज इस प्रकार रामजी के आव
ने का सप्त दिन उछाह होता रहा ॥ को उ मिलणे आवे कों क
छु लेणे आवे ॥ नट आदिक उस्तुत करें ॥ तिस ते अनंतर राम
जी को एह आचार हूया ॥ जो प्रातःकाल कों उठकर स्नान
आदिक संध्या कर्म करें ॥ बहुर भोजन करें ॥ बहुर भाईज
नों सों मिल कर तीर्थरुं की चर्चा वार्ता करें ॥ इस प्रकार बडे
उत्साह कर दिन रात्र को प्रतीत करें ॥ एक दिन जो प्रातः
काल को जो उठे ॥ उठकर राजा दशरथ कों देखते भए ॥ ब
डे तेज कर संपन्न जैसे इंद्र का तेज होता है ॥ तैसे तेजवान रा
जा को देखा ॥ अरु वशिष्टजी ते आदि लेकर बहुत सभा बैठी
है ॥ तब एक दिन राजा कहत भया ॥ हे रामजी तुम शिका
र खेलने जाया करो ॥ अरु रामजी वर्ष षोडस का कछु ऊन
राजकुमार था ॥ अरु लक्ष्मण भर्थ शत्रुघ्न भाई भी साथ थे
भोजन करके शिकार खेलने जावें ॥ दिन को रोज ऐसी कि
या करें ॥ रात्र को गृह विषे आन स्थित होवें ॥ जब केता काल
तसे बीता ॥ तब रामजी बाध्य ते आय ले अंतहपुर विषे आ
न स्थित भया शोक सहित ॥ हे भारद्वाज जेती कछु राजकु
मारों की चेष्टा थी ॥ तिनकों त्याग करणे कों तत विषे चिंता संयु
क्त बैठ रहे ॥ जेते कछु रस संयुक्त इंद्रियों के विषय हैं ॥ ति
नकों त्यागते भए ॥ अरु शरीर कृश जैसा हो गया ॥ मुख की
कांत जाती रही ॥ पीत वर्ण होत भई ॥ इच्छा ते रहित विरक्त
होय बैठे ॥ जैसे शरद काल विषे ताल निर्मल होता है ॥ तैसे
इछा रूपी मल ते रहित होत भया ॥ अरु शरीर दिन
दिन विषे दुर्बल होता जावे ॥ अरु जहां बैठें तहां चिंता स
हित बैठ रहि जावें ॥ अरु बैठें तब चिबक कों हाथ के आ
धार नाभ कर बैठें ॥ अरु टहलिये मंत्री बहुत कहें ॥ हे प्र
भो स्नान अरु संध्या करणे का समा हूया है ॥ तब उठकर क्रि
या करें ॥ जेती कछु खावणे पीवणे बोलणे चलणे की
क्रिया है ॥ सो मन विरस अरु विस्मरण हो गई ॥ तब लोक

मण अरु शत्रुघन देषकर ॥ जैसे रामजी चिंता संयुक्त बइठे
थे ॥ तैसे इह भी चिंता संयुक्त होबैठे ॥ तब दशरथ राजा इह
बात सुणकर रामजी पास आया ॥ आयकर देष्या जो शरी
र महा कृष जैसा होगया है ॥ तब सोक लागा करणे ॥ जो हा
इ हाइ इनकी क्या अवस्था भई है ॥ इस सोक के लीये रामजी
को गोद विषे बैठाया ॥ अरु पूछणे लागा ॥ हे पुत्र तुमको क्या
दुःख आपुत हूया है ॥ जिसकर तुम सोकवान हूये हो ॥ तब
रामजी कहा ॥ हे पिताजी हमको दुःख कोऊ नहीं ॥ ऐसे क
हिकर तुस्नी होरहे ॥ जब केते दिन इस प्रकार ब्यतीत हूये
तब राजा भी शोकवान हूया ॥ अरु सभ इस्त्रीयां भी शोक
वान भैयां ॥ अरु राजा मंत्रीयों साथ विचार करणे लागा
जो पुत्रों का किसी ठउर विवाह करो ॥ अरु इह भी विचार की
या जो एक्या हूया है ॥ जो मेरे पुत्र शोकवान रहिते हैं ॥ तब व
सिष्टजी ते पूछ्या ॥ हे मुनीश्वर मेरे पुत्र शोकवान किंउं र
हते हैं ॥ तब वसिष्टजी कहा ॥ हे राजन महापुरुषों कों जो को
ध होता है ॥ सो अप्रलेप कारण कर नहीं होता ॥ मोह अर शोक
भी अप्रत्य कारण कर नहीं होता ॥ जैसे पृथ्वी जल तेज वा
य आकास जो पंचभूत हैं ॥ सो अप्रत्य कार्य विषे विकारवान
नहीं होते ॥ तैसे महापुरुष अप्रलेप कार्य विषे शोकवान न न
ही होते ॥ तो ते हे राजन तूं शोक करणे योग्य नहीं ॥ अरु रा
मजी जो चिंतावान हूया है ॥ सो भी किसी बडे अर्थ के निमित्त
होवेगा ॥ पाछे इसका सुष निकसेगा ॥ कछु एक काल रहता
है ॥ सो कम मति करो ॥ वाल्मीकोवाच ॥ हे भारद्वाज ऐसे
वसिष्टजी अरु राजा दशरथ विचार करते थे ॥ तिसकाले
विषे विश्वामित्र गाधक पुत्र जग्य के अर्थ आवन भए ॥ बा
जा दशरथ के गृह आय कर ज्येष्टी को कहत भय ॥ जो रा
जा दशरथ कों जा कहो ॥ विश्वामित्र गाधका पुत्र बाहर ख
डा है ॥ तब ज्येष्टी आ कर राजा को कहा ॥ हे स्वामी एक बडा
तपस्वी विश्वामित्र गाधका पुत्र बाहर खडा है ॥ उसनें हमकों
कहा है ॥ जो राजा कों जा के संदेसा पहुचावो ॥ आगें राजा दश
रथ कैसा है ॥ जो संपूर्ण मंडलेश्वरों कर पूज्य है ॥ अर सम न
नों सहित अपनें सिंहासन पर बैठा है ॥ अर बडे तेज कर संप
न्ने है ॥ हे भारद्वाज जब इस प्रकार ज्येष्टी कहा ॥ तब राजा

7 सुणकरस्वर्णकेसिंहासनतेंउठखडाहूया॥ अरुचर्नोंकूरच
ल्या॥ एकओरराजाकेवसिष्ठजी॥ अरुदूसरीओरवामदेव
जी॥ अरुनटोंकीन्याईमंडलेश्वरउस्तुतिकूरतेजावें॥ इसप्र
कारसुंदरचालकरराजाचल्या॥ जबजहांतेंविश्वामित्रदृ
ष्टआया॥ तबतहांतेंराजाप्रणामकरणेलागा॥ जहांपृथ्वी
परसीसराजाकालागे॥ तहांपृथ्वीनीचेनायमानहोवे॥
इसप्रकारमस्तकटेकताटेकताचल्या॥ जहांविश्वामित्र
था॥ सोविश्वामित्रकेंसेहें॥ जोबडीजटासिरपरविराजें॥
अरुसरीरस्वर्णकीन्याईप्रकाशताहे॥ अरुदृष्टिकरअग्न
वानदृष्टआवे॥ अरुमहातेजवानसुंदरकोंतिजिसकी
हाथविषेतंद्रीबांसकीमहातपकीमूर्ती॥ ऐसेविश्वामित्र
कोप्रणामकर्ताहूया॥ राजाचर्नोंपरजायगिड्या॥ जैसेसू
र्यसदाशिवकेचर्नोंपरजागिरे॥ तैंसेराजागिड्या॥ हेप्रभो
मेरेवडेभागहूयेहें॥ जोतुमारादर्सनहूयाहे॥ हमपरतुमब
डाअनुग्रहकीया॥ हमकोबडाआनंदप्रापतहूयाहे॥ हेभग
वनमेरेआजबडेभागउदेहूयेहें॥ जोधर्मात्मारागननेविषे
आवेंगे॥ तिनकूंविषेमयभीगनीयोंगा॥ काहेतेंजोतुममेरेकू
कृतार्थकरणेकोंआएहो॥ हेभगवनतुमाराआवणाहमारे
लेषणेविषेनहींआवता॥ परंतुमनेबडाअनुग्रहकीयाहे॥
अरुसनतेंउत्कृष्टदृष्टआवतेहो॥ काहेतेंजोतुमछिगुण
लो॥ एकतोतेरेविषेहत्रीकाखनायहे॥ अरुदूसराब्राह्मण
काखनावनीतेरेविषेनासलाहे॥ अरुदोयोंतेंब्रांह्मणतुम
हूयेहो॥ अवरकिसीकीसमर्थ्यतोनहीदिषीती॥ हेमारवा
जजेंबराजाइसप्रकारविश्वामित्रकौंमिल्या॥ बहुडवसि
ष्ठजीविश्वामित्रकोकंठलगायमिल्ये॥ अरुवामदेवजीकं
ठलगायमिल्या॥ अरुअवरमंडलेश्वरोंनेबहुतप्रणामकी
ए॥ इसप्रकारसनमिल्ये॥ तबविश्वामित्रकोराजादस
रथअंतरलेगया॥ जहांबेठलेकास्थानथातहांआनक
रबैठे॥ सिंहासनपरविश्वामित्रकोबैठाया॥ अरुवसिष्ठजी
वामदेवकोबैठाया॥ बैठायकरराजाविश्वामित्रकापूज
नकरतेभया॥ अर्घपादकरपूजनकीया॥ अरुचर्नोंधोये

अरग दछिणा करी ॥ तब विश्वामित्र नी राजा को मान दई ॥
बहुड़ वसिष्टजी विश्वामित्र का पूजन कीया ॥ विश्वामित्र व
सिष्टजी का पूजन कीया ॥ अन्योन्य पूजन कीया ॥ इस प्रकार
पूजन करके सभ आपणे आपणे स्थान विषे जा बैठे ॥ तब रा
जे दसरथ कहा ॥ हे भगवन हमारे बड़े भाग उदे हूए हैं ॥ जो
तुमारा दर्सन हूया है ॥ जैसे किसी म्रतक को अंम्रत प्रापति होवे
अरु जन्म के अंधे को नेत्र प्राप्त होवें ॥ जैसे किसी का म्रूया
बांधव विवान पर जीवता चड्या आवे ॥ जैसे निर्धन को
चिंतामणि प्राप्त होवे ॥ तैसे तुमारे दर्सन कर हम प्रसन्नता
अरु आनंद को प्राप्त भए हूं ॥ हे मुनीश्वर तुमारा आवणा
जिस अर्थ हूया है ॥ सो क्रिपा कर कहो ॥ अरु जो तुमारा अर्थ
है ॥ सो संपूरण हूया जाणो ॥ काहे ते जो ऐसा पदार्थ कोऊ
नहीं ॥ जो मुझको देणा कठन होवे ॥ सभ कछु मेरे विद्यमान
है ॥ अरु जो तुमारा अर्थ है ॥ सो निस्चे कर पूरण हूया जाणो
जो तुम आज्ञा करोगे सो मय देवांगा ॥ इति श्री वैराग्य प्र
करणे विश्वामित्र आगमन नाम सर्गः ॥ बालमीको वा
च ॥ हे भारद्वाज जब इस प्रकार राजे दसरथ कहा ॥ तब
मुनों विषे जो है शार्दूल विश्वामित्र ॥ सो बहुत प्रसन्न भए ॥
अरु रोम खड़े हो आए ॥ जैसे पूर्णमासी के चंद्रमा को देख
कर हीरसमुद्र प्रसन्न होता है ॥ तैसे प्रसंन होकर विश्वा
मित्र कहत भया ॥ हे राजन शार्दूल तैं धंन्य है ॥ ऐसा किं
उ न होवें ॥ एक तो रघुवंसी हैं ॥ दूसरा वसिष्टजी तुमारा गुरु
है ॥ तिसकी आज्ञा विषे तें चलते होते हैं ॥ हे राजन जो कछु
मुजको प्रयोजन है ॥ सो तुमारे विद्यमान प्रगट करता हों ॥
सो सुण ॥ दसरात्रे यज्ञ का आरंभ मैंने कीया है ॥ मैं यनें जब जब
तेको करने लागता हों ॥ तब निसाचर जो हैं खरदूषण राह
स सो विध्वंस आन करते हैं ॥ जहां जहां हम जाय करने लाग
ता हों ॥ तहां तहां विध्वंस आन करते हैं ॥ अर्थ इह जो अप
वित्र आन करते हैं ॥ जो रुधिर मांस अस्थि डार जाते हैं ॥ उ
ह स्थान कर्म करने के योग्य नहीं रहता ॥ बहुड़ मैं और ठउ

उकरनेंलागताहों॥तहांभीउसीप्रकारअपवित्रकरजातेहैं
तिनोंकेनासकरणेनिमित्तमैंतुमारेपासआयाहों॥कदाचि
तऐसेकहोजोतुंभीसमर्थहैं॥हेराजनमययज्ञकोआरंभ
कीयाहै॥तिसकाअंगनेमाहै॥जोमयउनकोंश्रापदेवों॥त
बउहभस्महोजावैं॥परश्रापकेंधविनांहोतानहीं॥जबक्रो
धकराएतोयज्ञनिहफलहोताहै॥अरुजोचुपकररहता
हों॥तोअपवित्रकरजातेहैं॥तांतेमैंयतुमारीसरनेंआयाहों॥जोमे
राकार्यकरउं॥हेराजनतेराजोपुत्रहैरामजीकमलनयन
काकपक्षसंयुक्त॥अर्थइहजोबालिकइसरीसिखासहित
है॥तिसकोंमेरेसाथदेवोजोराक्षसोंकोंमारे॥तबमेरायज्ञ
सफलहोवे॥अरुइहसोकतुममतकरो॥जोमेरापुत्रबालि
कहै॥इहमहाइंद्रकेसमानसूरवीरहै॥इसकेसनमुखउह
ठहिरनसकेंगे॥तांतेमेरेसाथदेवो॥जोतेराधर्मभीरहे॥अरु
मेराकार्यभीहोवे॥इसविषेसंदेहनहींकरना॥हेराजनऐसा
पदार्थत्रिलोकीविषेकोउनहीं॥जोरामजीकोकरणांकठ
नहोवे॥इसतेंमयतेरेपुत्रकोलेजाताहों॥अरइहमेरेकर
तांपाजावेगा॥इसकोंभीहमविघ्ननहोणेदेवेंगे॥अरुजो
कछुरामजीवस्तुहै॥सोहमभीजाणतेहैं॥अथवावसिष्ठजी
जाणतेहैं॥अथवाकोउज्ञानवानत्रिकालदर्सीहोवे॥सोभी
इसकोंजाणताहोवेगा॥अवरकिसीकोसमर्थतानहीजो
इसकेजाणे॥तांतेइसकोमेरेसाथदेवो॥जोमेराकार्यसि
धहोवे॥हेराजनजोसमेकरकार्यहोताहै॥सोथोडेकरभीब
उतसिधहोताहै॥जैसेद्वितीयाकेचंद्रमाकोंएकतंतदीनीब
उतहै॥अरुपीछेंबहुतदीयाभीकार्यनहीरावता॥तैसेसमें
करथोडाकार्यभीबहुतसिधहोताहै॥अरुसमेंविनाबहु
तभीथोडाहोजाताहै॥तांतेंतंमेरेसाथरामजीकोंदे॥अबइह
बणइहबडेदुष्टहैं॥आयकरकेमेरायज्ञघंडुनकरतेहैं॥
जबरामजीउहांजावेंगे॥तबरामजीकेआगेंउहखडेनहो
सकेंगे॥जैसेसूर्यकेतेजकरतारागणछिपनहोजातेहैं॥
तैसेरामजीकेदेखणेकरराक्षसछिपनहोजावेंगे॥तांतेमेरे

साथ रामजीकों दे ॥ जो मेरा कार्य भी होवे ॥ अरु तेरा धर्म भी स्थि
त होवे ॥ अरु रामजी के नमित तें संसय मत कर ॥ किसी की
समर्थता नहीं ॥ जो रामजी के निकट आवे ॥ वालमीकोवाच
हे भारद्वाज जब विश्वामित्र ऐसे कहा ॥ तब राजा दसरथ सु
ण कर तूस्नी होरहा ॥ अरु गिर पड़ा ॥ एक मुहूर्त पर्यंत पड़ा र
हा ॥ इति श्री वैराग प्रकरणे विश्वामित्र अर्थ प्रार्थन कर
ननं नाम सर्गः ॥४॥ वालमीकोवाच ॥ हे भारद्वाज एक मु
हूर्त उपरंत राजा उठा ॥ अर महा दीन जैसा हो गया ॥ महा मो
ह को प्राप्त भया ॥ धीरज तें रहित होकर कहत भया ॥ राजो
वाच हे मुनीश्वर तुम हूं क्या कहा ॥ रामजी अबलों कुमार है
शास्त्र अस्त्र विद्या सीषी भी नहीं ॥ अब तो फूलों की सेज्या पर
सयन करने हारा है ॥ उह युध को कैसे करैगा ॥ कदाचित
रणभूमि का देषी भी नहीं ॥ अर राजस मारे साथ बेलणे
हारा है ॥ कोमल जिसका सरीर अर हाथ है ॥ उह युध कैसो
साथ कैसे करैगा ॥ कहूं पथरों अर कमलों का युध भी हू
या है ॥ उन दुष्टों साथ कैसे युध करैगा ॥ हे मुनीश्वर मैं नौ सह
स्र वर्ष का हूया हों ॥ अब दसवां सहस्र लागा है ॥ वृध हूया
हों ॥ वृध अवस्था मों मेरे गृह विषे चार पुत्र हूये हैं ॥ तिन
चारों के मध्य विषे भी कमल नयन रामजी कंवर उनषो
डस वर्ष के हूये हैं ॥ मुजको बडे उन प्रीत महै ॥ अर मेरे प्रा
ण है ॥ रामजी बिनां मय एक छिण भी नहीं रहि सकता ॥ जो
तुम उसको ले जावोगे ॥ तब मेरे प्राण निकस जावेंगे ॥ मृत्यु
हो जावोंगा ॥ हे मुनीश्वर केवल मेरा ही सनेह नहीं उस विषे
रामजी के भाई जो हैं ॥ लछमण भरत शत्रुघ्न ॥ अर माता जो है
सभन्यों के प्राण हैं ॥ जो तुम रामजी को ले जावैगे ॥ तब हम स
नही मृत्यु हो जावेंगे ॥ जो हम सभन्यों को मारने आया हैं ॥
तो ले जाउ ॥ हे मुनीश्वर मेरे चित्त विषे तो रामजी पूर्ण हो रहे
है ॥ तिसको मद तेरे साथ कैसे देवूं ॥ उह तो बालापन है
अर हम सभी उसको देष कर प्रसन्न होते हैं ॥ जैसे पूर्ण
मासी के चंद्रमा को देष कर षीर समुद्र प्रसंन होता है ॥

९

तैंसे रामजी कों देषकर हम सनीग संनहोते हैं ॥ तो रामजी
के वियोग कर हमारा जीवणा कैंसे होवेगा ॥ हे मुनीश्वर ऐसी
प्यारी इस्त्री भी नहीं ॥ और धन भी नहीं ॥ ऐसा प्यारा राज भी नहीं
जैसा प्यारा रामजी है ॥ हे मुनीश्वर तेरे वचन सुणकर मैंइ ब
डे शोक कों प्राप्त भया हों ॥ मेरे बडे भाग्य हैं ॥ जो तेरा आव
णा इस नमित हूया है ॥ तुमारे वचन सुणकर मेंय ऐसा हू
या हूं ॥ जैसे कमलफलों पर गडे की वर्षा होवे ॥ और कमल
नष्ट हो जावे ॥ तैसे तेरे वचन सुणकर मैं नष्टता कों प्राप्त भ
या हों ॥ जैसे जेष्ट आषाढ विषे वसंत रुत की मंजरी सुक
जाती है ॥ तैसे तेरे वचन सुणकर मेरे चित की प्रसंनता दूर हो
गई है ॥ हे मुनीश्वर रामजी के देणे कों मैं तो समर्थ नहीं हो
ता ॥ जो तूं कहै तो एक अक्षौहिणी मेरी सेना है ॥ सो कैसी सेना
है ॥ बडी सूरबीरता कर संपन्न है ॥ जिनकों शूरता अगला वि
द्या के नों आवती हैं ॥ सन्नही युध विषे चतुर हैं ॥ तिन कुं संहि
त मैंइ तेरे साथ चलता हों ॥ जो कंटकों को मारेंगे ॥ चार अंग
न की सेना है ॥ हस्ती घोडा रथ पयदक सो सभन कों साथ ले जा
वेंगे ॥ और जो तेरे यज्ञ के षंडने हारे हैं ॥ तिन कों नास करेंगे ॥
अरु एक साथ हम युध न करेंगे ॥ जो कदाचित यज्ञ षंडुन
हारा कुबेर का भाई विश्रवा का पुत्र रावण होवे ॥ तब
हम उस साथ युध करणे कों समर्थ नहीं ॥ हे मुनीश्वर प्रथ
म मेरे विषे बडा पराक्रम था ॥ ऐसा त्रिलोकी विषे कोऊ
न था ॥ जो मेरे साथ युध करे ॥ अब मेरी वृध अवस्था हूई
है ॥ अरु देह जरजरी भाव कों प्राप्त भया है ॥ इस कारण कर
मेरे विषे रावण के साथ युध करणे की समर्थता नहीं ॥ हे
मुनीश्वर मेरे कोऊ बडे भाग्य हैं ॥ जो तुम रामजी के लेणे
कों आया है ॥ अर मैंय तो रावणसों कंपता हों ॥ सो केवल
मैंय नहीं कंपता ॥ इंद्रादिक देवता सब रावणतें कंपते
हैं ॥ सब दैत्यों का उह राजा है ॥ अब किसी की समर्थता न
हीं ॥ जो उस साथ युध करे ॥ इस काल विषे उह बडा सूरबीर
है ॥ हे मुनीश्वर जो मेरी समर्थता उसके साथ युध करने की

नहीं॥ तौ रामजी राजकुमार कैसे युध करेगा॥ अरु जिस राम
जी के लेणे को तुम आए हौ॥ सो तो रोगी पडा है॥ उसको ऐसे
सी आधि चिंता लागी है॥ जिस कर महा रूष जैसा हो गया है॥
अंतःपुर विषे एकांत बैठा रहता है॥ षावणे पीवणे वस्त्रा
दिक पहिरणे जो राजकुमारों का किया है॥ सो सभ उसको
विसमरण हो गई है॥ मैं नहीं जानता जो उसको क्या दुःख
प्राप्त भया है॥ जैसे पीत वर्ण कमल होता है॥ तैसे उसका मु
ष पीत वर्ण हो गया है॥ उसको युध की समर्थता कहां है॥ अ
रु अपणे स्थान तें बाह्य उस पृथवी देषी भी नहीं॥ उह युध
कैसे करेगा॥ अरु हमारे प्राण भी उही है॥ जब उसका वियो
ग होवे तब हमारा जीवणा नहीं होता॥ जैसे जल तें रहित म
छली नहीं जीवती॥ तैसे रामजी विना हमारा जीवणा नहीं
होता॥ अरु दैत्यों के युध निमित हम तुमारे साथ चलते हैं
अरु रामजी युध करणे को योग्य नहीं॥ इति श्री वैराग
प्रकरणे दशरथ उक्त वरननं नाम सर्गः॥ ५ वाल
मीकोवाच॥ हे भारद्वाज जब इस प्रकार राजा दशरथ
कहा॥ तब दीन मोह सहित अधीरजवान वचन उं को श्रव
ण कर क्रोध को लीये विश्वामित्र बोल्या॥ विश्वामित्रो
वाच॥ हे राजन तें अपणे धर्म को स्मरण कर॥ जो इह अ
तैता तुम करी है॥ जो तेरा अर्थ होवेगा सो मैं पूर्ण करों
गा॥ अरु पूर्ण हूया जाणे ऐसे तुम कहा है॥ अब अपणे
धर्म को किउं त्यागता है॥ अरु जो तैं सिंह हूया मृग की न्या
ई भागता है॥ तो भागा॥ पर आगे रघुवंस कुल विषे ऐसा
कोऊ नहीं हूया॥ जैसे चंद्रमा के मंडल विषे अगनि नहीं उ
पजती॥ तैसे तुमारे कुल विषे ऐसा कदाचित नहीं हूया॥
जैसे तैं करता हैं॥ सो तैं कर हम उठ जावेंगे॥ का हे तें जो स
त्य गहते सत्य हीं जाईता है॥ पर इह तुमको योग्य न था॥
तुम वसते रहो राज करते रहो॥ जो कछु होवेगी सो सम अ
लेवेंगे॥ तें अपणे धर्म को त्यागता है तो त्याग॥ वाल्मीकोवा
च॥ हे भारद्वाज जब विश्वामित्र इस प्रकार कहा॥ क्रोध

सो पूर्न होकर। तब तिसके क्रोध करके पंचास कोटि योजन
पृथिवी कांपणे लागी॥ अरु इंद्रादिक देवते भी भयको प्राप्त
हूए॥ जो इह क्या हूया। तब वसिष्ठजी बोले॥ वसिष्ठोवाच॥
हे राजन इक्ष्वाकु की कुल धर्मात्मा हूई है॥ तूं दशरथ अपने
धर्मको किउं त्यागता हैं॥ मेरे विद्यमान तुझ कहा है। जो तुमारा
अर्थ होवैगा सो पूर्न करेगा॥ अरु पूरण हूया जाणै॥ अब किं
उ नागता हैं॥ रामजी को इसके साथ देह॥ अरु इह तेरे पुत्र
की रक्षा करेगा। अरु इह कैसा सूरबीर है। जो इसके समान
बल किसी का नहीं॥ साक्षात बल की मूर्ति है॥ अरु धर्मात्मा
ऐसा है। जो साक्षात धर्म की मूर्ति है॥ जो तपस्वी कहें। तो ऐसा
कोऊ नहीं॥ तप की इह खाण है॥ अरु बुधिवान कहें। तो इस
के समान बुधवान कोऊ नहीं॥ अरु सूरमा कहें। तो इसके स
मान सूरमा कोऊ नहीं॥ शास्त्र अस्त्र विद्या इस जैसी कोऊ नहीं
जाणता॥ कहते हैं जो दक्षप्रजापति की दोइ पुत्री थी॥ एक जया
अरु एक सुप्रभा। उसने तिनको दीयां॥ जो जया थी तिसके पंच
सय पुत्र हूये। दैत्यों के मारणे अर्थ उतपति कीये॥ अरु सुप्र
भा के भी पंचसय पुत्र थे तिस भी दैत्यन्ह के मारणे अर्थ उत
पति कीये थे॥ सो इस्त्रीयां इसके विद्यमान मूर्तिधारकर
आन इस्थित होत्या हैं॥ पर इह उनकुं केछलतें रहित है॥
तां तें इनके जीतणे को समर्थ कोऊ न होवैगा॥ जिसके साथ इ
ह होवे उह त्रिलोकी का आश्रय है॥ तां तें इसके साथ तें अ
पणा पुत्र देह॥ अरु संसै मत कर। किसी की समर्थता नहीं। जो
इसके होते कोऊ तेरे पुत्र को कछु कहि सके॥ इसकी दृष्ट
देखते साथ दुष्टों का अभाव हो जावेगा॥ जैसे सूर्य के उदे हूए
यें अंधकार का अभाव हो जाता है॥ हे राजन इसके साथ तेरे
पुत्र को खेद कहां होवे॥ तूं इक्ष्वाकु की कुल का है। तुम सारखे
भी अपने धर्म विषे इस्थित न रहें॥ तो इतर जीवों तें धर्म की
पालना कैसी होणी है॥ जो कछु श्रेष्ठ पुरुष करते हैं। तिनके
अनुसार अवर जीव भी करते हैं॥ जो तुम सारखे अपणे वच
न को पालन न करें। तब अवर किसा कछु करणी है॥ अरु
तुमारी कुल विषे ऐसे कबहूं न हूया। तां तें अपणे धर्म

के त्याग ते योग्य नहीं ॥ अपने पुत्र को इसके साथ तूं देह ॥ जो
तूं राहास के भयकर सोकवान होवें ॥ तो भी शोक न करें ॥ को
हते जो राहास का है ॥ मस्तु जो है काल में तूं धारकर इस स्थित न
आन होवें ॥ तो भी विश्वामित्र के विद्यमान तेरे पुत्र को कछु क
हि न सकेगा ॥ अरु जो तूं पुत्र को इसके साथ न देवेगा ॥ तो दो
प्रकार का तेरा धन नष्ट होवेगा ॥ एक धन एह जो कूप बावि
स्यां तडाग कढाए होवें ॥ तिनका जो पुन्य होवे सो नष्ट हो जावे
गा ॥ अरु यज्ञ तप स्नान आदिक जो पुन्य क्रिया है ॥ सो ति
स क्रिया का फल नष्ट हो जावेगा ॥ जो तेरे गृह तें निरास जावे
गा ॥ तां ते मोह अरु शोक को त्याग ॥ अपने धर्म को स्मरण कर के रा
मजी को इसके साथ देह ॥ तब सम न का विजेते रेस फल होवेंगे
हे राजन इस प्रकार तुज करणा था ॥ तब प्रथमें ही विचार क
र कहता ॥ विचारे विना कहने का प्रणम दुःख होता है ॥ तां ते इन
के साथ देह ॥ वाल्मीकोवाच ॥ हे भारद्वाज जब इस प्रका
र वसिष्ठ जी कहा ॥ तब राजा दसरथ धीर्यवान होकर भृत्ये
विषे जो श्रेष्ठ भृत्य था ॥ तिसको बुलाय कर कहत भया ॥ हे
महाबाहु रामजी को ले आउ ॥ सो भृत्य राजा की आज्ञा लेक
र रामजी के निकट गया ॥ महूर्त एक के उपरंत फिर आया
हे देव रामजी तो बडी चिंता विषे बैठे हैं ॥ मैं रामजी को वारं
वार कहत भया जो चलो ॥ तब कहत भये जो चलते हैं ॥ ऐसे
कहि कर बहुर तूष्णी होर रहे ॥ हे भारद्वाज इस प्रकार राजें
श्रवण कीया ॥ तब कहा रामजी के मंत्री टहलवे बुलावहु
तब सभ मही निकट बुलाए ॥ तब राजे कोमल वाणी सो कहा
हे रामजी के मित्रहु रामजी की क्या दशा है ॥ अरु क्यों कर रह
ई है ॥ सभ मंही क्रम कर कहो ॥ मंत्रीयोवाच ॥ हे देव हम क्या
कहें ॥ जेते कछु हम तुम को दृष्ट आवते हैं ॥ सो आकार कर आए
देखने मात्र हमारे साथ हैं ॥ अरु हम मन ते कहें ॥ काहे तें जो हमा
रा स्वामी रामजी किसी बडी चिंता को प्राप्त भये हैं ॥ हे राजन
जिस दिन के रघुनाथ जी तीर्थ करि आए हैं ॥ जो सणों सहित
तिस दिन के चिंता को प्राप्त भए हैं ॥ जो उत्तम भोजन हम ले
जाते हैं पाने को अथवा पीवणे को ॥ जो किसी प्रकार प्रसंन हो
वें ॥ परंतु हे ऐसी चिंता विषे लीन हैं ॥ जो देखते ही नहीं ॥ अरु जो दे
खते हैं ॥ तो निरादर करते हैं ॥ माता होवें कोई रमणीक पदा

रथ देती हैं ॥ तो भी डार देते हैं ॥ आवें अर्थी कों चा देते हैं ॥ ऐसें न
किसी पदारथ पर होते नहीं ॥ हे राजन उसकों कछु भी लागन
हीं लागता ॥ किसी वडी चिंता विषे मग्न हइ ॥ ऐसे जो जन-
भी अल्पमात्र लेते हैं ॥ छुधावंत रहता है ॥ न षावणे की इछा
है ॥ न पहिरणे की इछा है ॥ न किसी इंद्रियों के सुष की इछा है
महा उनमत्त की न्याई बैठा रहता है ॥ ऐसे मंत्री कहते हैं ॥
जो तेरी जय होवे ॥ तब कहते हैं ॥ जो जिसकों तुम संपदा
कहते हो ॥ सो आपदा है ॥ ऐसे जिसकों आपदा कहते हो सो
संपदा है ॥ संसार के पदार्थों कों सर्व सत जानकर यत्न क
रते हैं ॥ इसी उपावों विषे सम हूये हैं ॥ सो सन मगत हमा के जे
लवते हैं ॥ तिनकों सत जानकर यत्न करते हैं ॥ ऐसे दुख पा
वते हैं ॥ हे राजन कदाचित बोलते हैं तो ऐसे बोलते हैं ॥ अ
वर कछु उसकों रसदाइक नहीं भासता ॥ जिस पदार्थों कों
आगें प्रीत संयुक्त लेते थे तिनकों डार देते हैं ॥ जब बोल
ते हैं तब ऐसे बोलते हैं ॥ जो न राज सत है ॥ न भोग सत हैं
क जगत सत है ॥ सन भ्रांतमात्र है ॥ मिथ्या पदार्थों के न मि
त्तम सर्व पडे जतन करते हैं ॥ जिसकों सत जानते हैं ॥ ऐसें
सुषदाई जानते हैं ॥ सो बंधन का कारण है ॥ अवरों को कया
कहिली है ॥ जो कोई राजा अथवा पंडित जावे तो भी ऐसें न
नहीं होते ॥ भोग पदारथ ले जाते हैं ॥ तो भी क्रोध करते हैं ॥ तो
तेह म जानते हैं ॥ जो इनकों परमपद पावणे की इछा है ॥ पर
सुषलें कदाचित सुणता नहीं ॥ अरु कबहूं गावते हैं ॥ अथ
वा बोलते हैं ॥ तो ऐसें कहते हैं ॥ हाइ हाइ जो मय अनाथ
मारया गया हों ॥ ऐसे समझो तुम कि उ संसार विषे दूबते हो ॥
इह संसार तो परम अनर्थ का कारण है ॥ इस विषे सुष कि
सी ने नहीं पाया ॥ इसते छूटणे का उपाउ करो ॥ हे राजन ऐसे
सहूं कबहूं सुनीता है ॥ अवर न किसी साथ बोलता है ॥ न
हसता है ॥ हे राजन किसी परम चिंता विषे मगन है ॥ उसकों
चिंता निवारणे कों कोउ समर्थ नहीं दिषीता ॥ हे राजन हम
कों एही चिंता लाग रही है ॥ जो रामजी कों न षावणे की इछा
है ॥ न बोलणे की इछा है ॥ न पहिरणे की इछा है ॥ न सत्तक

मैंकीइछाहै ॥ तांतेमस्तुनहोजावे ॥ अरुजोवोऊकहताहै
जोतेंचक्रवर्तीराजाहोवे ॥ तेरीबरीआवैलीहोवे ॥ तेंसुष
भोगें ॥ तिसकेवचनसुणकररंजहोताहै ॥ हेराजनवोबल
रामजीकूंऐसीचिंतानही ॥ लछमणभरतशत्रुघ्नकोंभी
ऐसीचिंतालागरहीहै ॥ हेराजनअबरकाकहताहै ॥ अ
बतेरापुत्रअतीतहोरहाहै ॥ एकवस्त्रहीऊपरउढेबैठार
हतेहैं ॥ तांतेउसकाउपावकरो ॥ जिसकरउसकाउबनिवर्त
होवे ॥ विश्वामित्रोवाच ॥ हेसाधजोरामजीऐसाहैतो
हमारेपासलेआउ ॥ हमउसकाउःखनिवर्तकरेंगे ॥ हेरा
जादशरथतेंवधायाहैं ॥ जिसकपुत्रवैराग्यविवेककों
प्राप्तभयाहै ॥ हेराजनहमजोबैठेहैं वसिष्ठजीतेंआदिले
एकयुक्तउपदेसकरेंगे ॥ तिसकरउसकोंआत्मपदकीप्रा
प्तहोवेगी ॥ तबइहदशातेरेपुत्रकीहोवेगी ॥ जोलोष्टपा
बाणगोअरुस्थानस्वर्णअरुमाटीकोंएकसमानजाणेगा
अरुजोकछुतुमारामर्हतिआचारहै ॥ तिसकोंभीकरेगा
अकतिदेविषयपरमउदासीनहोवेगा ॥ हेराजनउसकर
केतुमारीकुलकृतकृतहोवेगी ॥ तांतेंजीअहींबुलावो
॥ बालमीकोवाच ॥ हेभारद्वाजऐसेवचनमुनीउकेसु
णकरराजादशरथनेंसुअरुमंत्रीकोकहा ॥ जोराम
जीकोलेआवो ॥ लछमणशत्रुघ्नसहितजीअहींलेआ
वो ॥ जबऐसेराजेदशरथनेंकहा ॥ तबमंत्रीनेसुरामजी
कोजाकहा ॥ तबरामजीआए ॥ आवतेंआवतेंराजादश
रथकोदेषतेभए ॥ बहुरउवसिष्ठजीविश्वामित्रकोदेष
तेभए ॥ राजादशरथअरुवसिष्ठविश्वामित्रकेसिरूप
रचमरहोतादेष्या ॥ वहमंडलेश्वरविद्यमानबैठेहैं ॥
तिनोंभीरामजीकोंदेष्या ॥ जोमूरतरूपाहोगयाहै ॥ जैं
सेश्यामकार्तिककोंशिवजीदेषें ॥ तैसेरामजीकोंराजा
दशरथदेषताभया ॥ तबरामजीआकरराजादशरथ
केचर्नोंपरमस्तकटेका ॥ बहुरउवसिष्ठजीकेचर्नोंपरम
स्तकटेका ॥ बहुरउविश्वामित्रकेचर्नोंपरमस्तकटेका
बहुरउब्राह्मणजोआयुकेबडेथेतिनहूंकोंनमस्का

रकरी॥ अरसभा विषे जो मंडलेश्वर बैठे थे॥ तिन हूं उठ क
र रामजी कों नमस्कार करी॥ अर राजा दशरथ रामजी को
गोद विषे बैठाया॥ अर मस्तक चूंबन कीया॥ तब रामजी
को राजा कहत भया॥ हे पुत्र केवल विरक्तता कर के परम
पद को प्राप्त नहीं होवीता॥ वसिष्टजी तुमारे गुरु हैं॥ तिन
के उपदेस अर युक्त कर हूवीता है ॥वसिष्टोवाच॥
हे रामजी तुम धंन्य हो॥ ते बडा सूरवीर हैं॥ जो विषे रूपी
शत्रु तुमने जीते हैं॥ जो विषे महा अजीत हैं॥ अर दुष्ट हैं
तिन हूं को तुमने जीत्या है॥ ताते तें धंन्य हैं धंन्य है ॥विश्वा
मित्रोवाच॥ हे कवलनयन अपने अंतर की जो चपल
ता है तिस को त्याग कर॥ अर जो कछु ते आज्ञा कर्या है सो
प्रगट कर के कहो॥ हे रामजी इह जो तुज को मोह प्राप्त भ
या है॥ सो कैसे हूया॥ अर किस कारण ते हूया है॥ अर कोन के
ता इक है सो कहो॥ अर अब तुज को वांछित क्या है सो भी
कहो॥ अर हम तुम को तिस पद विषे प्राप्त करेंगे॥ जिस
कर आधि दुख कदाचित न होवेंगे॥ जैसे प्रकास को चूहा
नही काट सकता॥ तैसे आधि पडा तुज को कदाचित न
होवेगी॥ हे रामजी संपूर्ण दुषते रे नास करेंगे॥ तें संसयम
त कर॥ जो कछु आपना वांछित है सो प्रगट करके हमारे
विद्यमान कहु॥ ॥वालमीकोवाच॥ हे भारद्वाज जब ऐसे
विश्वामित्र कहा॥ तब रामजी बहूत प्रसंन हूया॥ अर मोह
को त्यागता भया॥ जैसे घन को देख कर मोर प्रसन्न होता है
तैसे विश्वामित्र के वचन सुन कर रामजी प्रसन्न भया॥
अरु आपने हिर्दे विषे जानता भया॥ जो अब उस पद को
प्राप्त होवेगी॥ ॥इति श्री वैराग्य प्रकरणे रामजी आ
गमनं नाम सर्ग ४॥ वालमीकोवाच॥ हे भारद्वाज जब
ऐसे मुनीश्वर के वचन सुने॥ तब रामजी प्रसन्नता सों बो
लत भए ॥रामोवाच॥ हे भगवन जिस प्रकार वृतांत हू
या है॥ सो तुमारे विद्यमान कहता हों॥ मइ जो राजा दशर
थ के गृह विषे उतपत्त भया हों॥ बहुड क्रम कर के बडा
हूया हों॥ जग्योपवीत पाया है॥ बहुड वेद पडने लागा॥

चारो वेद पडे॥ अरु ब्रह्मचर्य साध्या॥ तब एक दिन पडकार ग्रह वि
षे आया॥ अरु मन विषे उपजी॥ जो तीर्थों का रटन करों॥ अरु
ठाकुर द्वारों का दर्सन करों॥ तब मैं पिता की आज्ञा लेकर ती
र्थयात्रा करी॥ विधिसंयुक्त पूजा स्नान करई हां आया॥ अ
रु आवले कोई हो उत्साह रह्या॥ तब मेरा इह आचार हूआ॥
जो प्रातःकाल विषे उठकर स्नान संध्यादिक कर्म करों॥ ब
हुड भोजन करों॥ केते दिन इस प्रकार व्यतीत भए॥ तब मेरे
रिदे विषे विचार उतपन भया॥ सो विचार मेरे चित को खैंच
ले गया॥ जैसे नदी के तट पर वली होती है॥ तिसको नदी
का प्रवाह खैंच ले जाता है॥ तैसे मेरे चित विषे जो जगत की
आस्था रूपी वली थी॥ सो विचार रूपी प्रवाह खैंच ले गया॥
तब मैं जानत भया जो राज करना है॥ अरु भोगों करना है
अरु जगत क्या है॥ सब नाममात्र है॥ जो इसकी वासना करते हैं
सो भी मूर्ख हैं॥ स्थावर जंगम रूप जेता कछु जगत है॥ सो सब
मिथ्या रूप है॥ हे मुनीश्वर जेते कछु पदार्थ हैं॥ सो सब म
न के रचे हैं॥ सो मन भी भ्रांत रूप है॥ अरु एहु तो मन दुखदा
ई हूया है॥ जिन पदार्थों को सत्य ध्याएकर दौडता है॥ अरु
सुखदाई जानता है॥ सो सब मृगतृष्णा के जलवत हैं॥ जैसे
मृगतृष्णा का जल भासता है॥ अरु है नहीं॥ तैसे मूरिख जी
व पदार्थों को सुखदाई जानते हैं॥ अरु अंत को नहीं आसहो
ते॥ हे मुनीश्वर इंद्रियों के जो भोग हैं॥ सो सर्पवत हैं॥ जिनका
मारया हूया जन्म जन्मांतर को पावता है॥ जो ऐसे भोगों विषे
आस्था करते हैं॥ सो महामूर्ख हैं॥ इन पदार्थों को मैं विचारक
र जानता भया हूं॥ ताते जिस पद का नास न होवे सो पावणे
कं योग्य है॥ इसी कारण तें मैं ने भोगों का त्याग कीया है॥ हे
मुनीश्वर जेते पदार्थ संपदा रूप भासते हैं॥ सो सब आप
दा रूप हैं॥ इन दुःख विषे रंचक भी सुख नहीं॥ जब इनका
वियोग होता है॥ तब कंटकों की न्याई चुभते हैं॥ जो इंद्रि
यों के भोग प्राप्त होते हैं॥ तो राग द्वेष कर पडे जलावते हैं॥
ताते दुखरूप हैं॥ जैसे पथर की सिला विषे छिद्र नहीं हो
ता॥ तैसे भोगों विषे रंचक भी सुख नहीं होता॥ हे मुनीश्वर

विषयों की चिंता विषे मय बहुत काल जलता रहा हों॥ जैसे
हरया वलव सो की पीन विषे रंच कअग्नि पाई थे॥ तब बहु
खदुख कर जलता रहता है॥ तैसे भोगों की अग्नि कर मैं
जलता रहता हों॥ इन विषे सुख कछु नहीं॥ दुख बहुत है॥ इ
नकी इछा करनी मूर्खता है॥ जैसे बाई को तणहों कर आ
छादन करते हैं॥ जब मृग हरणु तिन को पावते आवता
है॥ तब बाई विषे गिड पडता है॥ तैसे जो मूर्ख भोगों की इछा
करते हैं॥ तब जन्म मृत्यु रूपी बाई विषे गिड पडते हैं॥ अरु
दुख पावते हैं॥ हे मुनीश्वर भोग रूपी चोर हैं॥ अरु अग्यान
रूपी रात्रि विषे लूटणे लागते हैं॥ इसका जो आत्म रूपी
धन है॥ तिस को हरि ले जाते हैं॥ तिस आत्मानंद रूपी धन
के वियोग कर इह महा दीन हो जाता है॥ अरु जिन इंद्रं भो
गों के निमित्त इह यत्न करता है॥ सो दुःख रूप हैं॥ जिस
सरीर के निमित्त इह भोगों का यतन करता है॥ सो सरीर
छिन भंगुर असार रूप है॥ जिस को सदा भोगों की इछा र
हती है॥ सो मूर्ख जड है॥ उसका बोलणा चालणा भी ऐसा
है॥ जैसे सूके बांस के छिद्र विषे पवन जाता है॥ अरु शब्द
होता है॥ तैसे इह मानुषों का बोलणा चालणा है॥ जैसे ह
स्याद्रू या पेडोई मारूथल के मारिग की इछा नहीं करती
तैसे भोगों को भय दुखरूप जाण कर इनकी इछा नही
करता॥ अरु इह जो लक्ष्मी है॥ सो परम अनर्थों की देणे हारी
है॥ जब लग इह प्राप्त नहीं होती॥ तब लग इसके पावणे
का यतन करता है॥ अरु इसकी प्राप्ति भी अनर्थों कर हो
ता है॥ अरु जब प्राप्त होती है॥ तब प्रथम शुभ गुणों का ना
स करती है॥ जब शुभ गुण नास हूये तब सुख कहां है॥ त
ब परम आपदा को प्राप्त होता है॥ पर्म दुखों का कारण जा
ण कर मैं इह लक्ष्मी का त्याग कीया है॥ हे मुनीश्वर इ
स विषे गुण तब लग भासते हैं॥ जब लग लक्ष्मी नहीं प्रा
प्त भई॥ जब लक्ष्मी प्राप्त भई तब शुभ गुण नष्ट हो जाते
हैं॥ जैसे बसंत कनका मंजरी तब लग हरी होती है॥ जब

लगज्येष्टआषाढनहीआया ॥ जबज्येष्टआषाढआया ॥ त
बउसकीरसजलजातीहै ॥ तैसेजबलक्ष्मीकीप्राप्तनहीं
तबशुभगुणजलजातेहै ॥ अरुमधुरवचनतबलगबो
लताहै ॥ जबलगलक्ष्मीनहीप्राप्तभई ॥ जबउसकीप्राप्त
भई ॥ तबकोमलताकाअभावहोजाताहै ॥ हेमुनीश्वरइ
सविषेशुभगुणतबलगभासतेहैं ॥ जबलगतृष्णाप्र
वेसनहीकीया ॥ जबतृष्णाउपजी ॥ तबशुभगुणोंकाअभावहो
जाताहै ॥ जैसेदूधविषेमधुरतातबलगहै ॥ जबलगसर्पमु
खनहीपाया ॥ जबसर्पनेमुखपाया ॥ तबदूधविषहोजाता
है ॥ इतिश्रीवैराग्यप्रकरणेरामअनुभववर्ननेनाम
सर्गः ॥ १८ ॥ रामोवाच ॥ हेमुनीश्वरलक्ष्मीदेखणेमात्र
सुंदरभासतीहै ॥ जबइसकीप्राप्तहोतीहै ॥ तबनासकरजा
तीहै ॥ जैसेविषकीवलीदेखणेमात्रसुंदरहोतीहै ॥ अरुस
र्वकीएतेंमृत्युकरतीहै ॥ अरुदीनहोजाताहै ॥ जैसेकिसीके
गृहविषेचिंतामणिदबीहुईहोवे ॥ अरुवोह करलेवेनहीं
तबदारिद्रीरहताहै ॥ तैसेआत्मअज्ञानकरइहदीनजै
सा होगयाहै ॥ हेमुनीश्वरजबदीपकप्रज्वलतहोताहै ॥ त
बउसकावडाप्रकाशदृष्टआवताहै ॥ अरुसनपदार्थ
भासआवतेहैं ॥ जबदीपकनिर्वाणहोजाताहै ॥ तबप्रकाश
काअभावहोजाताहै ॥ काजरकीसमष्टतारहिजातीहै ॥ जो
सनेसनेउपजतीथी ॥ तैसेजबलक्ष्मीप्राप्तहोतीहै ॥ तबब
डेभोगोंकोंभुगावतीहै ॥ अरुउसतेंतृष्णाकपीकाजरउपज
तारहताहै ॥ जबलक्ष्मीकाअभावहोजाताहै ॥ तबतृष्णाकी
समष्टतारहिजातीहै ॥ तिसवासनातृष्णाकीसमष्टताक
रहेजातीहै ॥ तिसवासनातृष्णाकरकेअनेकजन्मोंकोंधार
ताहै ॥ शांतकोंकदाचितनहीप्राप्तहोता ॥ हेमुनीश्वरजबइ
सकोलक्ष्मीकीप्राप्तहोतीहै ॥ तबशांतकेउपजावनेहारे
गुणहोंकानासकरतीहै ॥ जैसेमेघतबलगहोताहै ॥ जब
लगपवननहीचल्या ॥ जबपवनचल्या ॥ तबमेघकाअभा
वहोजाताहै ॥ तैसेलक्ष्मीकीप्राप्तहुएगुणोंकाअभाव

जैसेलक्ष्मीकापारदहोंआगपटलोंमेंफलकरेजाताहै ८

होजाताहै॥ अरु अभिमानरूपी तपतहोताहै॥ हेमुनीश्वर
जोसूरमा होवे॥ अरु आपणे मुखतें न कहे॥ सो दुर्लभ है॥ अ
रु जो समर्थ होवे॥ तिसकी कोऊ अवज्ञा करे तिसविषे स
मबुधि रहे॥ सो भी दुर्लभ है॥ हे मुनीश्वर भोगरूपी सर्प है
तिसके रहिणे का स्थान लक्ष्मीरूपी गर्त है॥ अरु मोह
रूपी जो उन्मत्त हस्ती है॥ तिनके रहिणे का स्थान इह प
र्वत की अटवी है॥ सो हस्ती भोगरूपी कमलों कों खावते
हारे हैं॥ हे मुनीश्वर इह लक्ष्मी देखणे मात्र सुंदर द्रिष्टि आ
वती है॥ पर दुःखों का कारण है॥ जैसे खड्ग की धारा देखणे
मात्र सुंदर होती है॥ पर स्पर्स कीये तें नास करती है॥ तैसे ल
क्ष्मी सुभ गुणों कों नास करती है॥ हे मुनीश्वर मैं यह विचार क
र देख्या है॥ जो इस विषे सुख कोऊ नहीं॥ अरु सें लोभ रूपी मे
घ के नास करणे हारा इह सरितकाल है॥ इसविषे सुभ गु
ण तब लग द्रिष्टि आवते हैं॥ जब लग लक्ष्मी नहीं प्राप्त भई॥ जब
लक्ष्मी प्राप्त भई॥ तब सुभ गुण नास होजाते हैं॥ हे मुनीश्वर
ऐसी दुखदाइक जानकर इसकी इछा मैं त्यागी है॥ अरु
इह भोग भी मिथ्यारूप हैं॥ अरु क्षणभंगी हैं॥ जैसे बिजुली प्र
गट होती है॥ अरु छपजाती है॥ तैसे यह लक्ष्मी अज्ञान कर
सुंदर पड़ी भासती है॥ अरु क्षणभंगी हैं क्षणभंगुर है॥ इति श्री
वैराग्य प्रकरणे लक्ष्मी निरास वर्ननं नाम सर्गः॥ ८॥
श्री रामोवाच॥ हे मुनीश्वर जो युवा कों देखकर प्रसन्न हो
ते हैं॥ सो युवा ऐसी है॥ जैसे पत्र ऊपर जल की बूंद होती है॥
सो क्षण भंगुर है॥ तैसे युवा क्षण भंगुर है॥ जैसे जल तें तरंग
उपजता है॥ अरु नष्ट हो जाता है॥ तैसे युवा नष्ट हो जाती है
हे मुनीश्वर पवन को रोकणा अति कठन है॥ ऐसा कोऊ
होवे जो रोके॥ अरु आकास का चूर्ण करणा भी कठन है॥ ऐ
सा कोऊ होवे चूर्ण करे॥ अरु बिजुली का रोकणा भी कठ
न है॥ ऐसा कोऊ होवे रोके॥ पर अवस्था कों कोऊ कहे जो
इस्थिर होवहुं॥ सो कदाचित न होवेगा॥ ऐसी अवस्था कों पा
यकर जो आपको अमर हूया चहते हैं॥ सो मूर्ख हैं॥ जो ऐ
सी अवस्था कों पायकर भोगों की वांछा करते हैं॥ सो महा

जैसे जो तलक्ष्मी बिना देखे कर शुभगुणों कर संयुक्त होवे सो भी दुर्लभ है ४

लक्ष्मी =

आपदा के पात्र हैं ॥ तिनको जीवणे तें मरणा श्रेष्ट है ॥ अरु इ
स्त्री जो अपणे भर्ता की इछा करती है ॥ सो अपणे नास के निमि
त्त करती है ॥ अरु जो ज्ञानवान पुरुष हैं ॥ जिनों कों परमपद
पावणे की इछा होई है ॥ सो उनका जीवणा सुष के निमित्त है
उनके जीवणे कर अवरों के कार्य भी सिध होते हैं ॥ सो जीव
णा तिनहीं का श्रेष्ट है ॥ हे मुनीश्वर जो पुरुष ज्ञानरूप पडा है ॥
अर पावणे योग्य पद नहीं पाया ॥ तब शास्त्रों का पडना भी उस
को भार है ॥ जैसे अवर को ऊभार होवे ॥ तैसे पडना भी भार है ॥ जो
विचार चर्चा पडा करता है ॥ पर तिनके सार को नहीं जाना ॥ तब
उह विचार चर्चा भी भार है ॥ हे मुनीश्वर मन जो है सो आकास
रूप है ॥ जो मन विषे शांत नहीं ॥ तो मन भी इसको भार है ॥ अरु
जो मानुष सरीर पाया है ॥ तिस विषे अभिमान नहीं त्यागा ॥ त
ब उह सरीर भी भार है ॥ जीवणा तब ही श्रेष्ट है ॥ जो आत्मपद
की प्राप्त होवे ॥ अन्यथा इसका जीवणा व्यर्थ है ॥ जैसे बिलाचू
हे को पडी देषती है ॥ तैसे इसको मृत्यु पडी देषती है ॥ जैसे अंज
ली विषे जल पाया नहीं ठहिरता ॥ तैसे आर्बला चली जाती
है ॥ तिस काल में गुरु शास्त्र को पायकर जो भोगों की तृष्णा क
रते हैं ॥ ते महामूर्ष हैं ॥ इह तो मृत्यु के मुष विषे पडे हूये हैं ॥ अ
र जीवणे की आस करते हैं ॥ ते ते मूर्ष हैं ॥ जैसे सर्प के मुष वि
षे दर्दुर पडा होता है ॥ अर उह मछरों के षावणे की इछा कर
ता है ॥ तैसे इह पुरुष मृत्यु के मुष विषे पडे हूए हैं ॥ अरु भोग
णे की इछा करते हैं ॥ सो महामूर्ष हैं ॥ इह युवा अवस्था नास
हो जाती है ॥ जैसे नदी का प्रवाह चल्या जाता है ॥ तैसे चली जा
ता है ॥ बहुरु वृध अवस्था आइ प्राप्त होती है ॥ तिस विषे दुःष
आन प्राप्त होते हैं ॥ अरु सरीर जर्जरी भाव हो जाता है ॥ बहुरु
उ मृत्यु होता है ॥ एक काल भी मृत्यु इसका विश्वास नहीं कर
ती ॥ सदा इसको देषती रहिती है ॥ जैसे कामी पुरुष सुंदर इ
स्त्री कों देषता रहता है ॥ तैसे इसको मृत्यु देषती रहिती है ॥
एक काल भी इसका विश्वास नहीं करती ॥ हे मुनीश्वर मूर्ष म
नुष का जीवणा दुःख के निमित्त है ॥ जैसे वृधाईन को बहु
त जीवणा दुःख का कारण है ॥ इसको बहुत जीवणे तें मृत्यु

श्रेष्ट है॥ जिन पुरुषों मानुष सरीर पायकर आत्मपद पावने
का यत्न नहीं कीया॥ तिन आप आपणा नास कीया है॥ हे मुनी
श्वर उह देषने मात्र सुंदर द्रिष्ट आवते हैं॥ पर अंतर ते उनका
नास पडा होता है॥ जैसे बृक्ष को अंतर ते घुण खाइ जाता है॥
तैसे इह पुरुष बाहर ते सुंदर द्रिष्ट आवता है॥ अरु अंतर ते
इनको त्रिसना षाती जाती है॥ जो पुरुष पदार्थों को सुषरूप जा
नकर आश्रय करता है॥ सो इसको दुःखों का कारण होते हैं
जैसे नदी विषे फनकों आश्रय करके पार को तरया चाहे॥ उ
ह मूर्ष दुबेगा॥ तैसे जो संसार के पदार्थों को सुषरूप जानके
आश्रय करता है॥ सो संसार विषे दुःखों का भागी होता है॥ हे मु
नीश्वर इह संसार इंद्रधनुष की न्याई है॥ जैसे इंद्रधनुष ना
ना वर्णों साथ द्रिष्ट आवता है॥ पर नाममात्र है॥ तां ते मय इस
को बासना त्यागी है॥ इति श्री वैराग्य प्रकरणे जगत
आस्थावरननं नाम सर्गः॥ ८॥ रामोवाच॥ हे मुनी
श्वर इह जो अहंकार उदै हूया है॥ अज्ञान ते सो महा दुष्ट है
एही शत्रु है॥ इस मेरे ताई भय को प्राप्त कीया है॥ अरु मिथ्या
रूप है॥ जेते कछु दुःख हैं॥ तिनकी खाण अहंकार है॥ जब
लग अहंकार होता है॥ तब लग आधि पीडा पडी उपजती
है॥ उतपति होती है॥ तिनका अभाव कदाचित नहीं होता॥
हे मुनीश्वर जो कछु मय अहंकार सहित भोजन कीया है
अरु जो पुन्य कीया है॥ जो कछु लीया है॥ इत्यादिक क्रिया
जो कछु करी है॥ सो सभ व्यर्थ है॥ इसकर परमार्थ सिद्ध क
छु नहीं होता॥ जैसे अग्नि की राष विषे आहूती पाई व्यर्थ
होती है॥ तैसे अहंकार साथ क्रिया करी व्यर्थ होती है॥ जेते
कछु दुःख हैं॥ तिनका बीज अहंकार है॥ जब अहंकार
नास होवे॥ तब कल्याण होवे॥ तां ते सोई उपाव मुझको क
हो॥ जिसकर अहंकार निवर्त होवे॥ हे मुनीश्वर जो वस्तु सत्
होती है॥ तिसके त्यागणे विषे यत्न नहीं होता है॥ अरु जो वस्तु
ही न होवे॥ जतनकर के नासे॥ तिसके त्यागणे ते परम संपदा
प्राप्त होती है॥ अंतर रूपी चंद्रमा है॥ तिसके आछादने हारा
अहंकार राहु है॥ जैसे दैत्यरूप राहु चंद्रमा को ग्रास लेता

कुंडलर

है ॥ तब उसको सीतलता अरु प्रकास आछादया जाता है ॥ तैं
से जब अहंकार उपजता है ॥ तब सांति समता आछादी जाती है ॥
जब अहंकार रूपी मेघ आनि गर्जता है अरु वर्षा करता है ॥ त
ब तृष्णा रूप जो कटुक मंजरी है ॥ सो वरधती जाती है ॥ जब अ
हंकार का नास होवे ॥ तब तृष्णा का भी नास हो जाता है ॥ जैसे जब
लग मेघ है ॥ तब लग बिजली है ॥ जब विवेक रूपी पवन क
र अहंकार रूपी मेघ का नास होवे ॥ तब तृष्णा रूपी बिजली का
भी अभाव हो जाता है ॥ जैसे जब लग तेल अरु बाती है ॥ तब लग
दीपक का प्रकास है ॥ जब तेल बाती का नास होता है ॥ तब प्रका
स का भी अभाव हो जाता है ॥ हे मुनीश्वर परम दुखों का कारण
अहंकार है ॥ जब अहंकार का नास होवे ॥ तब दुख भी मिट जा
ते हैं ॥ हे मुनीश्वर एह जो मैं राम हों सो नहीं ॥ इछा भी कछु नहीं
का हे तें जो मय नहीं ॥ तो इछा किसकी होवे ॥ जो इछा है तो इह है
जो अहंकार तें रहित पद की प्राप्त होवे ॥ जहां अहंकार का उथा
न न होवे ॥ जैसे जैनेंद्र कूया है तैसे मय होवों ॥ एहा मुजको इछा
है ॥ हे मुनीश्वर जैसे कमल को गडा नास करता है ॥ तैसे अहं
कार आतम ज्ञान को नास करता है ॥ जैसे धीवर जाल कर
मछों को बंधमान करता है ॥ तिस कर उह दीन हो जातीयां हैं
तैसे अहंकार रूपी धीवर ने तृष्णा रूपी जाल साथ जीवकूं
को बंधमान कर्या है ॥ तिस कर महा दीन हो गए हैं ॥ जैसे पंछी
चोग को सुख रूप जान कर चुगणें आवते हैं ॥ तब जाल साथ
बांधे जाते हैं ॥ तांते हे मुनीश्वर मुजको सोई उपाव कहो जि
स कर के अहंकार का नास होवे ॥ जब अहंकार का नास हो
वे ॥ तब मय परम सुखी होवोंगा ॥ हे मुनीश्वर आत्म रूपी सूर्य
है ॥ तिसके आगे आवर्ण करणे हारा बदल रूपी अहंका
र है ॥ जब ज्ञान रूपी सरत काल आवै ॥ तब अहंकार रूपी ब
दल का नास होवे ॥ अरु तृष्णा रूपी कुहीड़ का भी अभाव
हो जावै ॥ हे मुनीश्वर इह मय निश्चे कर देख्या है ॥ जो जहां
अहंकार है ॥ तहां सभ आपदा आन प्राप्त होती हैं ॥ जैसे स
मुद्र विषे सभ नदीयां जाइ प्रवेस करतीयां हैं ॥ तैसे अहंका
र कर सभ आपदा आन प्रवेस करती हैं ॥ तांते सोई उपाव

कहो जिसकर अहंकार का नास होवे॥ इति श्री वैराग्य प्रक
रणे अहंकार दुरासा वर्ननं नाम सर्गः॥ ९॥ रामोवाच॥
हे मुनीश्वर यह जो मेरा चित्त है॥ सो काम क्रोध लोभ मोह तृ
ष्णा आदिक दुःखों कर जर्जरीभाव होगया है॥ अरु महापु
रुषों के जो गुण हैं॥ वैराग्य विचार धीरज संतोष आदिक
तिन की ओर नहीं जाता॥ सर्वदा विषयों की ओर धावता रह
ता है॥ जैसे मोर पंख पवन के लागे तें ठहिरता नहीं॥ तैसे चित्त
सदा फटकता फिरता है॥ अरु लाभ कछु नहीं प्राप्त होता॥
जैसे स्वान द्वारे द्वारे फटकता फिरता है॥ तैसे इह चित्त पदा
र्थों की ओर फटकता है॥ जो कछु प्राप्त होता है तो उस विषे
संतोष नहीं करता॥ अंतर तृष्णा पड़ी जलावती है॥ जैसे
पिटार विषे जल पाया ठहिरता नहीं॥ तैसे पदार्थों ते तृप्त
कदाचित नहीं होता॥ सदा तृष्णा करता है॥ हे मुनीश्वर यह
चित्त रूपी महामोह का समुद्र है॥ तिस विषे तृष्णा रूपी तरं
ग पड़े उठते हैं॥ कदाचित स्थिर होने नहीं देते॥ जैसे नदी
के वेग कर तट के वृक्ष गिरते बहते जाते हैं॥ तैसे चित्त रूप
नदी विषे मैं बहता जाता हों॥ मेरा जो अचल स्वभाव था
सो चलायमान हूया है॥ अरु इस चित्त कर कै महा दीन हू
या हों॥ जैसे जाल विषे पड़ा पंखी दीन होता है॥ तैसे वासना
रूपी जाल विषे मैं पड़ा हूया दीन हूया हों॥ जैसे मृग डु
तें न्यारा मृग खेदवान होता है॥ तैसे मैं आतम पद तें न्यारा
चित्त कर खेदवान हूया हों॥ हे मुनीश्वर यह चित्त सदा खे
दवान रहता है॥ इस्थित कदाचित नहीं रहता॥ जैसे षीर स
मुद्र मंदराचल कर कै खेदवान हूया था॥ तैसे यह चित्त संक
ल्प विकल्प कर खेदवान करता है॥ हे मुनीश्वर इस चित्त मे
रे तांई दूर तें दूर डार्या है॥ जैसे तीक्षण पवन के चलने
कर सूका तृण दूर तें दूर जा पड़ता है॥ तैसे चित्त रूपी पव
न मुझको आतम आनंद ते दूर डार्या है॥ जैसे सूके तृण
को अग्नि जलावती है॥ तैसे मुझको चित्त जलाया है॥ जै
से अग्नि तें धूआं निकसता है॥ तैसे चित्त रूपी अग्नि तें

तृष्णारूपी धूंह निकसता है ॥ तिसकर मैं यपरम दुषकों
पावता हों ॥ इह मेरा चित्त हंस नहीं होता ॥ राजहंस जो है
सो दूध जल मिले हूये कों भिन्न भिन्न करता है ॥ तिसकी
न्याई मैं यअनात्मा साथ आत्मा न करकै मिल्या हूया हों ॥
तिसकों भिन्न भिन्न नहीं कर सकता ॥ जद्यपि आत्मपद
पावणे का यतन करता हों ॥ तो भी प्राप्त नहीं करणे देता
जैसे नदी का प्रवाह समुद्र कों चल्या जाता है ॥ तिसकों ब
न अवर और वहाय ले जाता है ॥ समुद्र की ओर जावणे
नहीं देता ॥ तैसे चित्त मुजकों आत्मपद की ओर तें रोक
ता है ॥ तातें इह परम शत्रु है ॥ इसतें सोई उपाव करो ॥ जि
स कर शत्रु नाश होवे ॥ इह अपणी इन्द्रियों तृष्णा साथ मिल
कर भोजन कर्त्ती है ॥ जैसे मृतक सरीर कों स्वान स्वानी
भोजन कर्ते हैं ॥ तैसे आत्मज्ञान तें रहित मैं यमृतक स
मान हों ॥ तिसकर मुज कों भोजन कर्ते है ॥ हे मुनीश्वर
बडे समुद्र कों पान करणा भी सुगम है ॥ अरु अग्नि कों
भक्षण करणा भी सुगम है ॥ अरु चित्त का जीतणा महा
कठन है ॥ सदा चलरूप है ॥ जैसे समुद्र अपने द्रवता
स्वभाव कों त्यागता कदाचित नहीं ॥ तैसे चित्त पदार्थों की
ओर धावता रहता है ॥ ठहिरता कदाचित नहीं ॥ जैसे सू
र्य के उदै होणे कर दिन उदै होता है ॥ अरु अस्ति होणे
कर रात्र होती है ॥ तैसे चित्त के उदै होणे कर त्रिलोकी
उदै होती है ॥ अरु चित्त के नष्ट होणे कर लीन हो जाती
है ॥ हे मुनीश्वर एक समुद्र है ॥ तिस विषे गंभीर जल है
तिस विषे बडे सर्प रहते हैं ॥ जब तिस विषे प्रवेस क
ता है ॥ तब उह सर्प इसकों देखते हैं ॥ तिसकर इसकों वि
ष चड जाती है ॥ तिसकर दुःख पावता है ॥ चित्तरूपी स
मुद्र है ॥ अरु वासनारूपी जल है ॥ तिस विषे भोगरूपी
सर्प है ॥ जब इह उनके निकट जाता है ॥ तब भोगरूपी
सर्प इसकों देखते हैं ॥ तब विष इसकों चड जाती है ॥ हे मु

७

17 नीश्वर जिस भोगों को इह सुषरूप जान कर दौडता है॥
सो भोग दुःखरूप हैं॥ जैसे तृणों कर षाई आछादन होती
है॥ तिसको देषकर मूरष मृग षावणे को दौडता है॥ त
ब षाई विषे गिर पडता है॥ और दुःख पावता है॥ तैसे चि
त रूपी मृग भोगों कों देष कर भोगणे लागता है॥ तब तृ
ष्णा रूपी षाई विषे गिर पडता है॥ और जन्म तें जन्मांतर
के दुःख को पावता है॥ हे मुनीश्वर इह चित्त कबहूं बडा
गंभीर हो बैठता है॥ और जब भोगों कों देषता है॥ तब उन
की ओर हिलके की न्याई गिरता है॥ जैसे इल आकास विषे
उडती फिरती है॥ जब पृथ्वी पर मांस देषती है॥ तब उहां ते
गिर पडती है॥ मांस को ले जाती है॥ तैसे चित्त तब लग उदा
र है॥ जब लग भोगों को नहीं देषता॥ जब देषता है तब ति
स विषे बंधमान होता है॥ आत्मपद की ओर जाता नहीं॥
इस चित्त के जाल विषे मैं य फसीया हूं॥ या हों पंषी की न्याई॥
कैसा जाल है॥ वासना रूपी सूत्र है॥ अरु संसार की सत्तता
रूपी गांठी हैं॥ तिस विषे भोग रूपी चोग है॥ तिसको देषक
र फसीया हों॥ घटीयंत्र की न्याई अधः ऊर्ध को पडा कट
कता हों॥ हे मुनीश्वर सोई उपाय कहो॥ जिस प्रकार चित्त
को जीतूं॥ बडा आश्चर्य है॥ अब मुझ को किसी भोग की इ
छा नहीं॥ और जगत की लक्ष्मी भी मुझ को विरस जैसे भा
सती है॥ जैसे चंद्रमा बादरों की इछा नहीं करता॥ जब मेघ
आवता है॥ तब चंद्रमा को आछाद लेता है॥ तातें मय भी ज
गत की लक्ष्मी की इछा नहीं करता॥ इसका जो परम शत्रु
२ है सो चित्त है॥ हे मुनीश्वर महापुरुष जो जय का यत्न करते
हैं॥ सो जय इसी चित्त का जीतणा है॥ जिसके जीते परम
पद को प्राप्त हुवता है॥ तातें मुझ को उही उपाय कहो॥ जि
स कर मन को जीतों॥ सब दुःख इसी के आश्रय रहिते हैं
जैसे पर्वत ऊपर बन होता है॥ सो पर्वत के आश्रय होता
है॥ तैसे सब दुःख मन के आश्रय होते हैं॥ इति श्री वै
राग्य प्रकरणे चित्त दुराशा नाम सर्गः॥ ११॥ रामो वाच

हेआत्मनएमयचेतनस्वभावकारूपविषेजोतृस्नारूपीरात्रिआ
ईहै॥तिसविषेकामक्रोधलोभमोहआदिकउलूविच
रतेहै॥जबज्ञानरूपीसूर्यउदेहोवै॥तबतृस्नारूपी
रात्रिनष्टहोजावै॥हेमुनीश्वरचित्तरूपीपर्वतहै॥
तिसकेऊपरतृस्नारूपीनदीकाप्रवाहचलताहै
औरनानाप्रकारकेतरंगधारतेहै॥जैसेमेघकोदेख
रमोरप्रसन्नहोताहै॥तैसेतृस्नारूपीमोरणीप्रसन्न
होतीहै॥तातेपरमदुखकामूलतृस्नाहीहै॥जबमय
किसीइकसंतोषादिकगुणकोआश्रयकरताहूं॥त
बतिसकोतृस्नानासकरदेतीहै॥जैसेसुंदरनेडी
कोचूहातोडडारताहै॥तैसेसुभगुणकोतृस्नानास
करतीहै॥हेमुनीश्वरसमतेउत्कृष्टपदविषेवि
राजनेकायतनकरताहूं॥तोभीतृस्नाविराजनेन
हीदेती॥जैसेजालविषेफसीयापंखीआकासविषे
उडनेकायतनकरताहै॥तोभीउडनहीसकता॥तै
सेमयआत्मपदविषेप्राप्तहोनहीसकता॥स्त्रीपुत्र
औरकुटंबआदिकाइनकोगविलाईहै॥तिनहूविषे
जोफसीआहूइ॥सोनिकसनहीसकता॥तिसआस
रूपीफासीसाथबाध्याहूआकबहूऊर्ध्वकोजाता
है॥कबहूअधःकोजाताहै॥घटीयंत्रकीन्याई॥हेमु
नीश्वरएहतृस्नाइंद्रधनुषवतहै॥जैसेइंद्रधनुष
मलनमेघविषेहोताहै॥औरबहुतचिल्लनेरहितहो
तोहै॥नानाप्रकारकेरंगसहितभासताहै॥परमध्य
तेसून्यहै॥तैसेतृस्नामलनअंतहकरणविषेउप
जतीहै॥बडीहै॥परगुणरूपीचिल्लनेरहितहै॥देख
नेमात्रसुंदरहै॥परउसविषेअर्थकछुसिधनही
होता॥हेमुनीश्वरतृस्नारूपीमेघहै॥तिसतेदुखरू

पीबे दालिकसत्तो है ॥ अरु तृस्नां रूपी हस्म सर्पणी है ॥ ति
सका स्पर्श कोमल दृष्ट आवता है ॥ पर विष करपूरणी है
तिसके दंसले कर मृत्यु होवीता है ॥ अरु तृस्ना रूपी एक
बदल है ॥ आत्म रूपी सूर्य कौं आगें आवर्णी करता है ॥ ज
बज्ञान रूपी पवन आवे ॥ तब तृस्ना रूपी बदल का नास
होवे ॥ अरु आत्म पद का साक्षात कार होवे ॥ अरु गुण रू
पी कमलों का नास कर्ता तृस्ना रूपी गड़ा है ॥ अरु तृस्ना
रूपी महा भयानक काली रात्र है ॥ जिसकर बडे धीर्यवा
न हीं भयभीत होते हैं ॥ अरु सचे हृते कों भी अंध कर डारती है
जब इहां आवती है ॥ तब वे रोग अरु अम्यास रूपी नेत्रों
को अंध करती है ॥ अर्थ इह जो सत असत पदार्थों को बि
चारणे न ही देती ॥ हे मुनीश्वर तृस्ना रूपी डाकिनी है ॥ संतो
ष आदिक जो गुण हैं ॥ तिसा कलेजे को काट लेती है ॥ अरु
तृस्ना रूपी कंदरा है ॥ तिसके आश्रय मोह रूपी हस्ती उन
मत्त आन गाजते हैं ॥ अरु तृस्ना रूपी समुद्र है ॥ तिस विषे आ
पदा रूपी नदीयां आन प्रवेस करतीयां हैं ॥ तो ते सोई उपा
व मुजेकों कहो ॥ जिसकर तृस्ना रूपी दुःख तें छूटों ॥ हे मुनी
श्वर दुःख अग्नि के जलणे कर नहीं होता ॥ अरु खड्ग के
प्रहार कर भी ऐसा दुख नहीं होता ॥ जैसा दुःख त्रिस्ना कर
के होता है ॥ त्रिस्ना के प्रहार सा अघाइल हूया बडे दुखां कों
पावता है ॥ तृस्नां रूपी दीपक बडा जलता है ॥ अरु जन्मां
की परंपरा रूपी तिसतें कालुष उतपति होती है ॥ जैसे ज
ल विषे मछी होती है ॥ जो कछु जल विषे पाईए के करीव
टा आदिक ॥ तिसको मांस जान कर ग्रहण करती है ॥ परउ
सका अर्थ कछु सिध नहीं होता ॥ तैसे तृस्ना भी जो कछु देख
ती है ॥ तिसकी ओर दौडती है ॥ परतृप्ता किसी कर नहीं होती ॥
तृस्ना रूपी वंचणी है ॥ जो सदा उदती रहती है ॥ इस्थिर कदा
चित नहीं होती ॥ अरु तृस्नां रूपी बांतर है ॥ कबहूं किसी वृक्ष
पर जाता है ॥ कबहूं किसी पर जाता है ॥ इस्थिर कबहूं नहीं

होता॥ तांतें तृस्ना नाना प्रकार के पदार्थों कों दोडती है॥ तृस्न
किसी कर नहीं होती॥ जैसे घृत की आहूती कर अग्नि तृप्त
नहीं होती॥ हे मुनीश्वर तृस्नारूपी नदी है॥ तिस विषे वास
नारूपी जल है॥ तिस विषे अनेक तरंग उठते हैं॥ कदाचि
त मिटते नहीं॥ अरु तृस्नांनें जगतरूपी आबाडा लगाया
है॥ जिसको सिर ऊंचा कर देषता है॥ अरु मूर्ष पडे गसने
होते हैं॥ अरु तृस्नारूपी वृध इस्त्री है॥ जो पुरुष तिसका
त्याग करता है॥ तो भी उह पाछें लागी फिरती है॥ कबहूं इ
सका त्याग नहीं करती॥ अरु तृस्नारूपी जेवडी है॥ तिस
के साथ जीवरूपी पसू बांधे हैं॥ अरु पडे दुःख पावते हैं
अरु तृस्नारूपी दुष्टली है॥ जब कोउ उत्कृष्ट गुण ग्यान प्रा
प्त होता है॥ तिसको नास करती है॥ तिस गुण के वियोग क
र मयदीन हो जाता हों॥ जैसे प्रवाह मेघ को देष कर प्रस
न्न होता है॥ अरु बूंद को ग्रहण करता है॥ अरु पवन मे
घ को दूर कर देता है॥ तब उह दीन हो जाता है॥ तैसे जब तृ
स्ना गुणों कों नास करती है॥ तब मय दीन हो जाता हों॥ हे मु
नीश्वर तृस्ना मुज कों दूर ते दूर फारया है॥ जैसे पवन सूके
तृणों कों उडावता है॥ तैसे तृस्ना मुज कों आत्मपद ते दूर
डारा है॥ हे मुनीश्वर इह तृस्ना वैराग्य कर के निवृत्त होती
है॥ जैसे अंधकार का नास प्रकास कर होता है॥ अवर कि
सी उपाव कर नास नहीं होता॥ तैसे तृस्ना का नास वैराग्य
विना नहीं होता॥ हे मुनीश्वर इस तृस्ना मुज कों दीन कीया
है॥ जैसे सूके तृण को पवन षेदमान करता है॥ तैसे तृस्ना
मुज कों दीन कीया है॥ तांते सोई उपाव कहो जिस कर तृ
स्ना नास होवे॥ अरु आत्मपद की प्राप्त होवे॥ इति श्री
वैराग्यप्रकरणे तृस्नामहिमावर्ननं नाम सर्गः॥१
॥२॥ श्रीरामोवाच॥ हे मुनीश्वर इह जो अमंगलरू
प शरीर जगत विषे उतपत भया है॥ सो बडा अनाथरूप
है॥ अरु सदा विकारवान है॥ अरु मांस मज्जा कर पूरण है
सदा अपवित्ररूप है॥ तांतें जैसे विकारवान सरीर की मु

रूपीनदनी है
तिस

ब

19

जकोइछा नहीं॥ इहसरीर कैसा है॥ न अग्रतु है॥ न लतु है॥ अर्थ
इह न जड है॥ न चैतन्य है॥ जैसे अग्निके संगतें लोहा अग्नि
वत हो जाता है॥ तें जलावता है॥ अरु आपतें जलावता नहीं॥
तैसे इह देह न जड है॥ न चैतन्य है॥ जड इसतें नहीं॥ जो इसतें
कार्य नाहोता है॥ अरु चैतन इसतें नहीं॥ जो इसको आपतें
ज्ञान नहीं॥ तांतें मध्यभाव है॥ काहेतें जो चैतन्य आत्मा इस
विषे व्याप्या है॥ जो है विषे अग्निकी न्याई॥ अरु आपतें अप
वित्र रूप विकारवान है॥ ऐसे सरीरकी मुजको इछा नहीं॥
हे मुनीश्वर॥ जैसे अमंगलरूप सरीर विषे जो अहंपडी फु
रती है॥ सो दुःखोंका कारण है॥ इस संसार विषे इस्थित हो
कर॥ नाना प्रकारके शब्द पडी करती है॥ जैसे कोवा विषे बि
लाड बैग शब्द करता है॥ तं धर्मी कबहूं नहीं होता॥ तैसे अ
हंकार रूपी बिला देह विषे अहं अहं पडा करता है॥ मो
न कदाचित नहीं होता॥ हे मुनीश्वर शब्द उही सुंदर है॥ जो
जयके निमित्त होवे॥ अन्यथा शब्द व्यर्थ है॥ जैसे जयके नि
मित्त ढोलका शब्द सुंदर होता है॥ अन्यथा सुंदर नहीं होता॥
सो अहंकारतें रहित जो शब्द है॥ सो शुभ नीक होता है॥ हे
मुनीश्वर सरीर रूप नौका भोगों रूपी बरेती विषे पडी है॥
तिसको पार होवणा कठन है॥ जब वैराग रूपी जलवंट
अरु अभ्यास रूपी चपेका बल होवे॥ तब संसारके पारके
किनारेको प्राप्त होवे॥ बहुडि सरीररूपी बेडा है॥ अरु संसा
र रूपा समुद्र विषे पडा है॥ तिस संसार विषे तृष्णा रूपी जल
हो देते॥ जब सरीररूपी बेडे साथ वैराग रूपी सीखा लागे
अरु अभ्यास रूपी चपेका बल लागे॥ तब सरीर रूपी बेडा
पारको प्राप्त होवे॥ हे मुनीश्वर जिन पुरुषोंने ऐसे बेडेको
पाय कर आपको संसार समुद्रतें पार कीया है॥ ते ई सुषी
लेण है॥ अरु जिनोंने आपको पार नहीं कीया॥ ते परम आ
पदाको पावेंगे॥ हे मुनीश्वर सरीर रूपी वृक्ष है॥ अरु भुजा
रूपी इसकी साषा हैं॥ अरु अंगुरी इसके पत्र हैं॥ अरु जं
घा इसके थंभ हैं॥ अरु मांस इसकी त्वचा है॥ अरु बासनां

इसकी घड है॥ अरु सुष दुःख रूपी इसके फल हैं॥ अरु तृस्नां
रूपी घुण है॥ सरीर रूपी ब्रछ को अंतर तें षाता रहता है॥ ज
ब स्वेत फल इसको पडते हैं॥ तब विनास काल क समा आ
वता है॥ अब इउ सरीर रूपी ब्रछ कैसा है॥ जो भुजा रूपी इसके
डासे हैं॥ हस्त पाद इसके पत्र हैं॥ अरु गिटे रूपी गुछे हैं॥ अ
रु दंत रूपी फल हैं॥ अरु जंघा रूपी स्थंभ हैं॥ अरु कर्म रूपी
जल कर बधता जाता है॥ जैसे छिद्र तें जल निकसता रहता
है॥ तैसे सरीर के स्वासों तें जल निकसता रहता है॥ सरीर रू
पी ब्रछ विषे विष कर पूरण सर्पिणी तृस्ना रहती है॥ जो का
मनां कर के नस्ट हूये हैं॥ तिन्हों इस ब्रछ का आश्रय लेते
हैं॥ तब तृस्ना रूपी सर्पिणी तिसको डंसती है॥ तिसकर उह
पुरुष मृत्यु होता है॥ हे मुनीश्वर ऐसा जो अमंगल रूप सरी
र ब्रछ है॥ तिसकी इछा मुजको नहीं॥ इह परम दुःख का कार
ण है॥ जब लग इह पुरुष अपने परवार विषे बांध्या है॥ त हूया
ब लग मुक्त नही होता॥ सो परवार कवन है॥ देह इंद्रीयां मन
बुधि इसका परवार है॥ इन विषे जो अहंभाव है॥ जब इस
का त्याग करे॥ तब मुक्त होवे॥ अन्यथा मुक्त नही होता॥ हे मुनी
श्वर जो श्रेष्ट पुरुष हैं॥ ते पवित्र स्थान विषे रहते हैं॥ अपवि
त्र स्थान विषे नही रहते॥ सो अपवित्र स्थान देह है॥ तिस वि
षे रहने वाले भी अपवित्र हैं॥ अस्थि रूपी इस गृह विषे इटां
हैं॥ रुधिर पुरीषा इसको लिकड लागा है॥ अरु मांस की क
हगिल करी है॥ अहंकार रूपी इस विषे सुपच रहता है॥ अ
रु त्रिस्ना रूपी सुपचणी इसकी इस्त्री है॥ काम क्रोध लोभ मो
ह इसका परवार है॥ अंडी जिंनी करि पूर्ण ने ग्या हूया हैं॥ हे
मुनीश्वर ऐसा जो अपवित्र स्थान है॥ सो इस अमंगल रूपी स
रीर को मैं अंगीकार नही करता॥ इह रहे अथवा जावे॥ मेरा
इसके साथ अब प्रयोजन कछु नहीं॥ हे मुनीश्वर एक बडा
गृह है॥ तिस विषे बदे पसू रहते हैं॥ रुधिर कों उठावते हैं॥
जब उस गृह विषे को उठ जाता है॥ तब उसको अंगो साथ मार
ते हैं॥ सो सरीर रूपी बडा गृह है॥ तिस विषे इंद्रीयां रूपी पसू

है॥ जब इस विषे गृहं नाव करता है॥ तब इंद्रीयां रूपी पशु इ
सके विषय रूपी अंगो साथ मारते हैं॥ तृष्णा रूपी धूड साथ
इसकों मलिन करते हैं॥ हे मुनीश्वर ऐसे सरीर कों मय अंगी
कार नही करता॥ जिस गृह विषे सदा कलपनां पडी होती है॥
तिस विषे संपदा प्रवेस नही करती॥ ऐसा जो सरीर रूपी गृह
है॥ तिस विषे त्रिष्णा रूपी चंडी इस्त्री तहां रहती है॥ इं इंद्री रूपी
दासीयां कर सदा देवती रहती है॥ सो सदा कल्पनां करती रह
ती है॥ तिस कर सम दम रूपी संपदा प्रवेस नही करती॥ हे मुनी
श्वर तिस गृह विषे एक ज्ञय्या है॥ जब उस पर विश्राम करता
है॥ तब कछु सुष को पावता है॥ पर तिस का जो परवार है सो
विश्राम करणे नही देता॥ सो सज्जा कवन है॥ सुषुप्त रूपी ज्ञय्या
है॥ जब उस विषे विश्राम करता है॥ तब कांम क्रोधादिक रू द
न करते हैं॥ तब चंडी त्रिष्णा का परवार वासनां कर इस कों ज
गावता है॥ विसराम नही करणे देता॥ हे मुनीश्वर ऐसा दुखों
का मूल सरीर रूपी गृह है॥ तिस की इछा मय नें त्यागी है॥ एह
गृह पर मनुषों के देषणे हारा है॥ हे मुनीश्वर इह सरीर छिणभं
गुर है॥ जैसे जल की बूंद पत्र पर होती है॥ सो छिण मात्र है॥ तै
से सरीर छिण भंगुर है॥ ऐसे शरीर विषे आस्था करणी मू
र्षता है॥ ऐसे सरीर पर उपकार करणा भी दुःख के निमित्त
है॥ सुष कछु नही॥ जो धनाढ्य सरीर हैं॥ सो वडे भोग भोगते
हैं॥ जो निरधन हैं सो थोडे भोग भोगते हैं॥ पर जरा अवस्था
अरु मृत्यु दोनों कों तुल्य होती है॥ इन विषे विसेषता कछु न
हीं॥ शरीर साथ उपकार करणा दुःख का कारण है॥ त्रिष्णा
रूपी सर्पिणी जो गृह विषे राषेगा॥ अरु दूध उसकों पिलावे
गा॥ तो भी अंत सर्पिणी तिस कों मारेगी॥ तैसे जिस पुरुष नें स
रीर रूपी सर्प साथ सषाई करी है॥ तिस कों मारेगा॥ हे मुनीश्व
र इह सरीर तो नाशवंत है॥ इस कों जो भोग भुगावते हैं॥ ते मू
र्ष हैं॥ जैसे पवन का वेग आवता जाता है॥ तैसे इह सरीर ना
शवंत है॥ इस साथ प्रीत करणी दुःखों का कारण है॥ सब जी
व इस की आस्था विषे बांधे हुए हैं॥ कोउ विरला है जिस नें

इसकीआस्थात्यागीहै॥जैसेकोऊविरलामृगहोताहै॥जो
मारूथलविषेजलकीआस्थात्यागताहै॥अवरसबपडे
भ्रमतेहैं॥हेमुनीश्वरजैसेसरीरकोजेपुष्टकरतेहैं॥सोदु
खोंकेनमित्तहै॥जोइसशरीरसाथसबाईकरताहै॥सो
दुःखपावताहै॥हेमुनीश्वरजिनपुरुषोंसरीररूपीलक
डीकोज्ञानअग्निकरजलायाहै॥तिनकातोपरमअर्थसि
धहूयाहै॥अरुजिनऊंनेनहीजलाया॥तिनोंकोपरमदु
खोंकेनमित्तहै॥हेमुनीश्वरनमैंशरीरहों॥नमेरासरीरहै
नइसकामैंहों॥नइहमेराहै॥मुजकोंइसकीइछाकामनां
कोऊनहीं॥मैंअविनासीपुरुषहों॥अबतुमदेहोउपावक
हो॥जोजिसकरमैंपरमानंदकोंप्राप्तहोवों॥हेमुनीश्वर
जिनोंपुरुषोंनेसरीरकाअभिमानत्यागाहै॥सोपरमआनं
दीहूयेहैं॥अरुजिसकोंदेहविषेअभिमानहै॥सोपरमदुः
खीहै॥अरुजिसकोंइससरीरकाअभिमाननहीं॥सोपुरुषों
विषेउत्तमहै॥अरुनमस्कारकरणेयोग्यहै॥तिसकोमेरा
नमस्कारहै॥हेमुनीश्वरप्रथमजोमुजकोअज्ञानकासंयो
गथा॥सोअहंकाररूपीपिशाचकरथा॥तिसकरअनंतस
रीरोंविषेआस्थाउपजीहै॥जैसेप्रथमेंबीजतेअंकुरहोता
है॥अरुअंकुरतेंपाछेंवृक्षहोताहै॥तैसेअहंकारतेंसरीर
कोआस्थाहोतीहै॥हेमुनीश्वरइसअहंकाररूपीपिशा
चनेंसबजीवोंकोंदीनकीयाहै॥सोकैसाअहंकारवेताल
है॥जोअविचारितेसिधहै॥अरविचारकीएतेंअभावहोजा
ताहै॥जैसेप्रकाशअंधकारकोनासकरताहै॥तैसेविचार
कीएतेंअहंकारकाअभावहोजाताहै॥हेमुनीश्वरजिसस
रीरविषेइसनेंआस्थाकरीहै॥सोसरीरऐसाहै॥जैसेजल
कोप्रवाहहोताहै॥सोसदाचलरूपहै॥जैसेबिजलीकाच
मत्कारस्थिरनहोरहता॥तैसेसरीरकीआस्थाकरणीवृ
थाहै॥हेमुनीश्वरजैसेशरीरकीआस्थाकरकेजोअहंप्र
तीतकरतेहैं॥तेमहामूर्खहैं॥जैसेस्वप्नपुरमिथ्याहै॥तैसेय
हसरीरआदिकजगतमिथ्याहै॥जोइसकोंसत्यजानक

रहूसें नमित्त यतन करते है॥ सो आपले दुःखके नमित क
रते हैं॥ जैसे पतंग जो दीपक की इछा करता है॥ सो अपने दुः
खके नमित करता है॥ तैसे अग्यानी देह विषे अभिमान क
रते हैं॥ सो भोगों के नमित करते हैं॥ सो अपने नास के नमि
त करते हैं॥ हे मुनीश्वर अब मय तो इस सरीर का अभिमा
न अंगीकार नहीं करता॥ इह सरीर अभिमान दुःखों के देने
हारा है॥ अर जिसको देह अभिमान न हो रहा॥ तिसको भोगों
की इछा न रहेगी॥ तातें मय निरवासी हो रहा हों॥ एक परमप
द की इछा है मुजकों॥ जिसके पाए तें बउड संसार समुद्र कों
प्राप्त न होवों॥ इति श्री वैराग्यप्रकर्णे देह विचारो नाम सर्गः
॥१३॥ रामोवाच॥ हे मुनीश्वर इस संसार समुद्र विषे जो इ
हु उपजा है॥ प्रथम इसको बालिक अवस्था प्राप्त होती है॥ सो
भी परम दुःखों का कारण है॥ तिस विषे परम दीन होता है॥
अरु एते अवगुण इन विषे आन प्रवेस करते हैं॥ आर्तता
मूर्खता अचेतनता भोम दीनता जललनें दुःख करके ऐसे वि
कार आन प्रवेस करते हैं॥ हे मुनीश्वर इह बालिक अवस्था
महा विकारवान है॥ अरु बालिक सदा पदार्थों की ओर धा
वता रहता है॥ एक वस्त को ग्रहण करता है॥ अरु दूसरी कों
बउड चहता है॥ इह स्थिर कदाचित न हो होता॥ जैसे बांतर
बहिर कर न हो बैठता॥ जो कोउ बालिक को बहिर बैठणा
कहता है॥ तब अंतर तें पडा जलता है॥ अरु तेण तेण विषे
भयभीत पडा होता है॥ अंतको कदाचित नहीं प्राप्त होता॥ अ
रु महादीन जैसा हो जाता है॥ जैसे कदलीवन को हस्ती संग
लों साथ बांधा हूया दीन हो जाता है॥ तैसे इह चैतन्य पुरुष
बालिक अवस्था कर दीन हो जाता है॥ जो कछु इछा करता
है॥ सो विचार विनां करता है॥ तिस करके दुःखों को पावता है
मूढतां गुंगा अवस्था विषे रहता है॥ बउड तपने लागता है॥ जैं
से तप्त पृथ्वी पर जल पाईए॥ तौ एक क्षण सीतल होती है॥ ब
उड तप्त हो जाती है॥ तैसे बालिक एक पदार्थ कर सुखी हो
ता है॥ बउड तपने लागता है॥ जैसे रात्रि के व्यतीत हूयें सर्य

उदे होता है॥ तिसकर उल्लंघनादिक कष्टवान होते हैं॥ तैंसे
इह जीव स्वरूप ज्ञान के अभाव तें बालिक अवस्था तें कष्ट
वान होता है॥ हे मुनीश्वर जे बालिक अवस्था की उत्पत्ति
करते हैं॥ ते भी मूर्ष हैं॥ काहे तें जो विवेक तें रहित अवस्था
है॥ अरु सदा आतुर रहता है॥ इस्थिर कदाचित नहीं हो
ता॥ सदा पदार्थों की ओर धावता है॥ जैसा मूढ अवस्था की
मुज को इच्छा न हो॥ जो जिस पदार्थ को देषता है॥ तिस ही
की ओर धावता है॥ अरु छिन छिन विषे अपमान को पा
वता है॥ जैसे श्वाकर हाण हाण विषे अपमान को पावता है॥
तैंसे बालिक अपमान को पावता है॥ अरु बालिक को स
दा माता पिता का भय रहता है॥ अरु आप तें बडीयों का भी
भय रहता है॥ हे मुनीश्वर ऐसी दुःखरूप अवस्था की मुज
को इच्छा न हो॥ जैंसे बिजली चंचल है॥ तिस तें भी मन अरु
बालिक चंचल है॥ ऐसे जानीता है॥ जो बालिक मन तें चं
चल है॥ जैंसे मन चंचल है॥ तैंसे बालिक चंचल है॥ मन का
रूप ही बालिक है॥ हे मुनीश्वर जैंसे वेस्या का चित एक पु
रुष विषे नहीं ठहिरता॥ इह विचार तिसको नहीं जो इस
कर मेरा नाश होवेगा॥ तैंसे बालिक विचार तें रहित चेष्टा
करता है॥ सुष दुःष विषे सर्वदा तपायमान रहता है॥ जैंसे
जेष्ट आषाढ विषे पृथ्वी तपायमान होती है॥ तैंसे बा
लिक तपता रहता है॥ शांत को कबहूं प्राप्त नहीं होता॥ अ
रु जब विद्या पढने लागता है॥ तब गुरु सों ऐसा भयमान
होता है॥ जैंसे गरुड को देषकर सर्प भयमान होता है॥
तैंसे बालिक भयमान होता है॥ अंतर तें पडा जलता है॥
मुष तें कहि नहीं सकता॥ हे मुनीश्वर ऐसी बालिक अव
स्था की जो उत्पत्ति कर्ते हैं॥ ते भी मूर्ष हैं॥ इह जो परम दुः
षरूप अवस्था है॥ इस विषे विवेक विचार कछु नहीं॥
जैंसे बिजली इस्थिर नहीं होती॥ तैंसे बालिक का चित्त
इस्थिर नहीं होता॥ हे मुनीश्वर इह महा मूर्ष अवस्था है
कबहूं कहता है॥ हे पिता मुज को बर्फ का पुतला आन
दे॥ कबहूं कहता है मुज को चंद्रमा उतार दे॥ सो इह व

चन मूर्खें के हैं ॥ तांते ऐसी मूर्ख अवस्था को मय अंगीकार
नहीं करता ॥ जैसे दुःखों का अनन्त बालिक को होता है ॥ सो
हमारे स्मरण विषे नहीं आया ॥ इह बालिक अवस्था अव
गुणों का मूल है ॥ ऐसी नीच अवस्था को मय अंगीकार न
हीं करता ॥ इस को स्तुत करणे मूर्ख ता है ॥ इस अवस्था
विषे गुण को उलटा है ॥ इति श्री वैराग्य प्रकरणे बालिक
अवस्था वर्णनं नाम सर्गः ॥ १४ ॥ राम उवाच ॥ हे मुनीश्वर दुः
ख रूप बालिक अवस्था ते अनंतर जो युवा अवस्था आवती
है ॥ सो अधिक ते अधिक वीरानी को चरता है ॥ सो भी उत्तम नहीं
गिडे ऐसे केन मिनत अधिक दुःखदाई है ॥ जब युवा अवस्था आ
ई तब कामरूपी पिसाच आन लगता है ॥ सो कामरूपी पि
साच युवा अवस्थारूपी गर्त विषे आन स्थित होता है ॥ अरु
चित्त विषे आवता है ॥ अरु इच्छा को पसारता है ॥ जैसे सूर्य
के उदे हुए सूर्यमुखी कमल खिड़ आवते हैं ॥ अरु पंखड़ीयों
को पसारते हैं ॥ तैसे युवा अवस्था के नाम हुए चित्तरूपी क
मल पंखड़ी को पसारता है ॥ तब नाना प्रकार की इच्छा फुर
ती है ॥ अरु कामरूपी पिसाच इस को खाईयो विषे डाल देता
है ॥ तहां बड़ा दुःख पावता है ॥ जैसे कोई किसी को अग्न के कुं
ड विषे डाल देवे अरु दुःख पावे ॥ तैसे काम के वस हुआ दुः
ख पावता है ॥ हे मुनीश्वर जो कछु विकार हैं ॥ सो सब यु
वा अवस्था विषे आन प्राप्त होते हैं ॥ ऐसी दुःखों की देण
हारी युवा अवस्था है ॥ तिस को मय अंगीकार नहीं करता
सांत जो होती है ॥ सो चित्त के स्थित हुए होती है ॥ सो चित्त
युवा अवस्था विषे विषयों की ओर धावता है ॥ जैसे का
लल्दव की ओर धावता है ॥ तैसे चित्त विषयों की ओ
र धावता है ॥ जब इस को विषयों का संग होता है ॥ तब
भी त्रिसना निवृत्त नहीं होती ॥ तिस त्रिसना करके बंधमान
हुआ जन्म ते जन्मांतर को पावता है ॥ अरु दुःखों का भा
गी होता है ॥ तांते हे मुनीश्वर ऐसी दुःखदाई युवा अ
वस्था का मुझ को इच्छा नहीं ॥ जेते कछु दुःख हैं सो सभ
यौवन अवस्था विषे आन स्थित होते हैं ॥ काम क्रोध लोभ

मोह ऽ अहंकार चपलता ऽ अभिमान इत्यादिक जो दोष हैं ॥ सो
ऽ आन स्थित होते हैं ॥ जैसे मलयाचल विषे सर्प उपद्रव ऽ आ
न स्थित होते हैं ॥ हे मुनीश्वर इह युवा ऽ अवस्था कैसी है क्षण
भंगुर है ॥ जैसे बिजली का चमत्कार होता है ऽ अरु छप जाता
है ॥ तैसे यौवन ऽ अवस्था ऽ आवती ऽ अरु मिट जाती है ॥ जैसे स
मुद्र विषे तरंग उपजते हैं ऽ अरु मिट जाते हैं ॥ तैसे युवा ऽ अव
स्था ऽ आवती है ॥ अरु मिट जाती है ॥ जैसे स्वप्ने विषे स्त्री विका
र की छल ऽ आवता है ॥ अरु मिट जाता है ॥ तैसे ऽ अज्ञान कर यु
वा ऽ अवस्था ऽ आवती ऽ अरु छल जाती है ॥ हे मुनीश्वर युवा ऽ अ
वस्था इसका परम शत्रु है ॥ जो पुरुष इस शत्रु के शस्त्रों ते ब
चा है ॥ सोई इन ते छूटा है ॥ सो वज्र के प्रहार कर ते छेदीया
न जावेगा ॥ अरु जो इन कूं शस्त्रों कर वेध्या हूया है ॥ सो प
शु है ॥ हे मुनीश्वर देषते मात्र तो युवा ऽ अवस्था सुंदर है ॥
परं ऽ अंतर ते तृष्णा कर के जर्जरीभूत है ॥ जैसे बहो देषणे
मात्र सुंदर होवे ऽ अरु ऽ अंतर ते घुण खा जावे ॥ तैसे युवा ऽ अ
वस्था है ऽ अरु जिन कूं भोगों निमित यत्न करता है ॥ सो भोग
भी ऽ आपातरमणीय हैं ॥ अर्थ इह जो जब लग इंद्रीयों ऽ अरु
विषयों का संयोग है ॥ तब लग भले भासते हैं ॥ विचार वि
ना सुंदर लागते हैं ॥ जब इन का वियोग हूया तब दुःष दे
जाते हैं ॥ इन कूं भोगों कर मूर्ष प्रसन्न होते हैं ॥ हे मुनीश्वर
जो पुरुष युवा ऽ अवस्था कर प्रसन्न हूया है ॥ सो उन्मत्त है
तिस को शांत नहीं होती ॥ अंतर विषे त्रिष्णा सदा जलावती
है ॥ अरु इस्त्रीयों विषे चित ऽ आसक्त रहता है ॥ जब इष्ट वनि
ता का वियोग होता है ॥ तब तिस के वियोग कर बडा जलता
है ॥ जैसे उन्मत्त हस्ती होता है ॥ संगलों साथ बंधीता है ॥ त
ब स्थिर होता है ॥ तैसे कामरूपी हस्ती है ॥ तिस को युवा ऽ अ
वस्था रूपी संगल पडा है ॥ तिस विषे चित इस्थिर रहता है
ऽ अरु युवा रूपी नदी है ॥ अरु तिस विषे इच्छा रूपी जु तरंग ऽ अ
नेक उपजते हैं ॥ शांति कदाचित नहीं होती ॥ हे मुनीश्वर

इह युवाऽवस्था बडी दुष्ट है॥ यद्यपि कोऊ बडा बुधिवान
होवे॥ अरु सदा निर्मल होवे बुध तिसकी॥ पर जब युवाऽवस्था
तिसको आवै॥ तब बुधि तिसकी मलीन हो जाती है॥ जैसे बडी
नदी होवे॥ अरु निर्मल तिसका जल होवे॥ पर ज्यों वर्षाकाल
आवे॥ तब उह भी मलिन हो जाती है॥ तैसे युवाऽवस्था विषे
बुधि मलिन हो जाती है॥ हे मुनीश्वर शरीर रूपी वृक्ष है॥ तिस
विषे युवाऽवस्था रूपी वली प्रगट होती है॥ जब उह वली प्रग
ट होती है॥ तब तिसके ऊपर चित्त रूपी भवरा आन बैठता है
तृष्णा रूपी तिसकी सुगंध कर उनमत होता है॥ अरु तिस
जा को विचार सभ भूल जाता है॥ जैसे जब पवन चलता है॥ तब स
के पत्रों को उडा ले जाता है॥ टिकणे नहीं देता॥ तैसे जब युवाऽ
वस्था आवती है॥ तब वैराग्य दया संतोषादिक गुणों का अ
भाव करती है॥ अरु दुःख रूपी कमलों का सूर्य युवाऽवस्था
है॥ युवा के उदे हूए सभ विकार प्रफुलित हो आवते हैं॥ तांते
सभ दुःखों का मूल युवाऽवस्था है॥ जैसे सूर्य के उदे हूए॥ सू
र्यमुखी कमल खिड आवते हैं॥ तैसे चित रूपी कमल संसार नें
रूपी पंखडीयों साथ खिड आवते हैं॥ अरु तृष्णा रूपी भवरे ति
स ऊपर जाबैठते हैं॥ हे मुनीश्वर युवा रूपी मात्र है॥ सो सरीर के
जर्जरी भाव करने को आवती है॥ जैसे धान का बूटा तब लग ह
र्या होता है॥ जब लग उसको फल नहीं पडा॥ जब फल पडा॥ त
ब सुक जाता है॥ हरयावल उसकी चली जाती है॥ तैसे जब लग
युवा नहीं आई॥ तब लग सरीर सुंदर कोमल भासता है॥ जब यु
वा के आए भोगों विषे लागा॥ तब कोमलता जाती रहती है॥ क
ठोर होता है॥ जर्जरीभाव हो जाता है॥ तांते हे मुनीश्वर ऐसी जो
दुःखों का मूल युवाऽवस्था है॥ तिसकी इछा मुझको नहीं॥ यद्यि
प समुद्र बडे जल कर पूर्ण है॥ तरंगों को पसारता उछलता है
तौ भी मर्यादा को त्यागता नहीं॥ ईश्वर की आज्ञा कर मर्यादा वि
षे रहता है॥ अरु युवाऽवस्था ऐसी दुष्ट है॥ जो सास्त्र मर्यादा
अरु लोकों की मर्यादा अरु आपणा विचार तिनों इस विषे नहीं

रहते॥ धर्म अधर्म का विचार इस विषे नही रहता॥ जैसे अंधका
र विषे पदार्थ का ध्यान नही रहता॥ तैसे युवा अवस्था विषे शु
भ अशुभ का ज्ञान नही रहता॥ सदा आधि व्याधि कर तपता
रहता है॥ जैसे जल बिना मछली को शांति नही होती॥ तैसे विचा
र बिना पुरुष जलता रहता है॥ जब युवा अवस्था रूपी रा
त्रि आवती है॥ तब काम रूपी पिशाच आन गर्जता है॥ तब इ
सको इस कर एही संकल्प उठते हैं॥ जो अमुकी इस्त्री सुंदर
है॥ अरु कैसे उस के कटाक्ष हैं॥ किसी प्रकार कर के हम को प्रा
प्त होवे॥ ऐसी इच्छा साथ उह सदा जलता रहता है॥ हे मुनीश्व
र मानुष सरीर उत्तम है॥ पर जिन के अभाग हैं॥ तिन को आ
त्मपद की प्राप्त नही होती॥ जैसे चिंतामणि किसी को प्राप्त हो
वे॥ अरु उह अभागी उसका निरादर करे॥ उसको जाणे न
ही डार देवे॥ तैसे जिन पुरुषों मानुष सरीर पाकर आतम
पद नही पाया॥ ते बडे अभागी हैं॥ मूर्खता कर के अपले जीव
ले के अर्थ खोवते हैं॥ एते विकार इसको युवा अवस्था विषे
आन प्राप्त होते हैं॥ मान मोह मद इत्यादिक विकारों कर के
इसका नास होता है॥ हे मुनीश्वर युवा अवस्था वहे विकारों
को प्राप्त करती है॥ जैसे नदी वायु कर अनेक तरंगों को पसा
रती है॥ तैसे जब युवा आवती है॥ तब चित्त अनेक कामनों
को उठावता है॥ जैसे पखी पंखों कर तीव्र धावता है॥ जैसे सिं
ह भुजा के बल कर पशुओं के मारने को धावता है॥ तैसे चि
त युवा अवस्था कर विषयों की ओर धावता है॥ हे मुनीश्वर
समुद्र का तरणा भी कठन है॥ काहे तें जो अपार जल है॥ अ
रु विस्तार भी बडा है॥ जो जनों लग चल्या जावता है॥ तिस वि
षे मच्छ कच्छ वडे देहधारी रहते हैं॥ ऐसे दुस्तर समुद्र का
तरणा भी मय मानता हों॥ पर तिसे हीष युवा अवस्था का तर
णा मयक कठन जानता हों॥ ऐसे संकटों संयुक्त जो युवा अ
वस्था है॥ तिस विषे जो चलायमान नही होते॥ सो पुरुष धं
न्य हैं॥ अरु वंदना करने योग्य हैं॥ हे मुनीश्वर इह युवा

ऽवस्थाम लिनकर डारती है॥ जैसे जलकी बांवली होती है
अरु तिसके निकट राखका ढेर होवे॥ अरु तीक्ष्ण पवन च
ले॥ तब राखसाथ बांवली मलिन होजाती है॥ तैसे युवाअव
स्थाविषे विकारों साथ बुधमलिन होजाती है॥ हे मुनीश्वर
ऽवगुणों कर युवाअवस्थाकी मुजको इछा नहीं॥ हे युवा
मुजपर एही कृपा करनी जो आपणा दर्सन नहीं देणा॥ ते
रा आवणा ही मेंय दुःखका कारण जानता हों॥ जैसे पुत्रका
मरणा पिता नहीं देखसकता॥ तैसे तेरा आवणा मय सुखके
न मिलन ही देषता॥ हे मुनीश्वर युवाअवस्थालि दोष भोग
णी महाकठिन है॥ जो कोई यौवनवान होवे॥ नम्रता लज्जा संयु
क्त होवे॥ सो महागुणवान कहीता है॥ जैसे अकासविषे बन
होवणा कठिन है॥ तैसे युवाअवस्थाविषे विचार वैराग
संतोषआदिक कठन है॥ तांते मुजको सोई उपाव कहो॥
जिसकर मयं युवाअवस्थाते मुक्त होवों॥ अरु आत्मपदकों
प्राप्त होवों॥ इति श्री वैराग्यप्रकरणे युवागर्हिरा वर्ने
नं नाम सर्गः॥ ५॥ रामोवाच॥ हे मुनीश्वर जिस काम
विलास न मिल इस्त्रीकी वांछा करता है॥ सो इस्त्री मांस अ
स्थि रुधिर विष्टा मूत्र कर पूर्ण है॥ जो पुरुष विचार कर न
ही देखते॥ तिनको रमणीक भासती है॥ जैसे पर्वतके सिखर
ऊपरते गंडमाला सहित भासते हैं॥ अरु निकट जाय कर दि
खाते हैं॥ तब पथर वडे दिखीते हैं॥ तैसे इस्त्री वस्त्र भूष
णकर सुंदर भासती है॥ अरु जब विचार कर देखीये॥ तब
सार कछु नहीं निकसता॥ जैसे सर्पिणीके अंग कोमल दृष्ट
आवते हैं॥ पर स्पर्श कीयेतें विषकर नास करती है॥ तैसे इ
स्त्रीसाथ स्पर्श करते हैं॥ तिसको नास कर छाडती है॥ हे मु
नीश्वर कामी जो इस्त्रीकी वांछा करते हैं॥ सो अपणे नासके
न मित करते हैं॥ जैसे कदलीबनका हस्ती कागदकी ह
स्तिनी पर बंधन विषे आवता है॥ तैसे अग्यानी इस्त्रीकी इ
छा करके बंधन विषे आवता है॥ तांते परम दुःखोंको पाव
ता है॥ हे मुनीश्वर समते अधिक दाहक अग्नि नरककी

गंडमाल

है॥ सो सम जीवों को जलावता है॥ पर इस्त्री रूपी अग्नि तिसतें
भी अधिक है॥ काहेतें जो इस अग्नि के स्पर्स कीए तें सरी
र तप्त होता है॥ इस्त्री रूपी अग्नि स्मरण मात्र तें रिदे को ज
लावती है॥ अरु जब इस्त्री के सुख का वियोग होता है॥ तब अजी
व की न्याई हो जाता है॥ अरु संयोग विषे भी अजीव की न्याई हो जा
ता है॥ पर अग्यान कर जानता नहीं॥ हे मुनीश्वर इसके नास क
रनेहारी इस्त्री रूपी अग्नि है॥ जो इसकी इच्छा करते हैं सो म
हा मूर्ख हैं॥ अपने नास के निमित्त करते हैं॥ हे मुनीश्वर इस्त्री
रूपी विष की बेली है॥ अरु हस्तपादादिक तिसके पत्र हैं॥
अरु भुजा रूपी टहनी है॥ स्तन रूपी तिसके गुच्छे हैं॥ नेत्र आ
दिक इंद्री तिसके फल हैं॥ अरु कामी पुरुष इस पर भंवरे
आन बैठते हैं॥ सो अपने नास के निमित्त आन बैठते हैं॥
अरु कामना रूपी झीवर है॥ इस्त्री रूपी तिसने जाल पसारा है॥
तिस विषे कामी पुरुष मच्छ आन फासते हैं॥ काम रूपी झीव
र तिनको फसाकर कष्ट को प्राप्त करता है॥ जैसे दुःख दे
नेहारी जो इस्त्री की वांछा करते हैं॥ ते महामूर्ख हैं॥ हे मुनी
श्वर विष रूपी सर्पिणी है॥ जब तिसका फुंकार निकसता
है॥ तब तिसके निकट जो पत्र फल फल होते हैं॥ सो सम जल
ले जाते हैं॥ तैसे इस्त्री रूपी सर्पिणी है॥ जब उसकी इच्छा रूपी
फुंकार निकसता है॥ तब वैराग्य रूपी कमलनी जल जाती
है॥ अरु अवर सर्पिणी आप दंसती है॥ अरु इस्त्री रूपी सर्पि
णी की चितवनी कर विष चढ जाता है॥ हे मुनीश्वर जैसे दुः
खों के देनेहारी इस्त्री की मुजकों इच्छा नहीं॥ जैसे बधिक
छल कर के मछली को फसावता है कुंडी साथ॥ तैसे कामी
पुरुष मछी वत है॥ अरु सुंदर रूप मांस कर इस्त्री रूपी
कुंडी आच्छादी हुई है॥ अरु उस साथ सनेह रूपी तागा है॥
तिस कर काम पुरुष मछी को इस्त्री रूपी कुंडी साथ फसा
वता है॥ अरु तृष्णा रूपी छुरी साथ इसको मारता है॥ हे मुनी
श्वर इस्त्री का मुख रूपी चंद्रमा है॥ तिसको देखकर कामी
रूपी कमल खिड आवते हैं॥ हे मुनीश्वर चंद्रमुखी कमल

चंद्रमा को देखकर खिड़ आवते हैं॥ सूरज मुखी नही खिड़आ
वते॥ तैसे जो कामी पुरुष है॥ सो भोगों कर प्रसन्न होते हैं॥ ज्ञा
नवान प्रसन्न नहीं होते॥ जैसे नौला सर्प को खुदते निकास
कर मर्दन करता है॥ तैसे कामी को स्त्री मर्दन करती है॥ ज
ब इस्त्री के निकट जाता है॥ तब डेह इस को भस्म कर डार
ती है॥ हे मुनीश्वर इस्त्री रूपी जो अग्नि है॥ तिसका सनेह रू
पी विकार लगता है॥ तिस विषे काम क्रोधादिक उल्ले विच
रते हैं॥ वैराग्य संतोष आदिक गुणों को निकट आवने नु
ही देते॥ हे मुनीश्वर जो पुरुष इस्त्री रूपी खड्ग के प्रहार ते
बचा है॥ युवा रूपी संग्राम विषे॥ सो महा पुरुष धंन्य है॥ ति
सको हमारा नमस्कार है॥ इह इस्त्री का संग परम दुःखों
का कारण है॥ तां ते मुज को इस की इछा नहीं॥ हे मुनीश्वर जो
रोग होता है॥ तिस अनुसार औषध करीता है॥ तब रोग नि
वृत होता है॥ अरु जो अपथ्य को सेवीता है॥ तब रोग वध
जाता है॥ तांते मेरे रोग के अनुसार औषध करो॥ सो रोग मेरा
इह है॥ जरा मृत्यु मुज को बडा रोग है॥ तिसके नास का औष
ध मुज को देवो॥ अरु इस्त्री आदिक जो रोग हैं॥ सो इस रो
ग को वधकरते हैं॥ जैसे अग्नि विषे घृत पाईये॥ तब अग
नि वर्धती जाती है॥ तैसे भोगों ते जरा मृत्यु आदिक रोग
वर्धते हैं॥ तां ते इस रोग के निवृत का औषध करो॥ न
ही तां मय सर्व त्याग कर बन विषे जा बैठता हैं॥ हे मुनी
श्वर जिसने इस्त्री का त्याग कीया है॥ तिसने संसार का त्या
ग कीया है॥ जिसने संसार का त्याग कीया है॥ सो सुखी भया
है॥ संसार का बीज इस्त्री है॥ तां ते मुज को इस्त्री की इछा
नहीं॥ मुज को सोई उपाव कहो॥ जिस कर जरा मृत्यु रोग
निवृत होवे॥ इति श्री वैराग्य प्रकर्णे स्त्री दुराचार वर्णनं नाम स
र्गः॥ २६॥ रामोवाच॥ हे मुनीश्वर बालिक अवस्था तो महा जड
मूढ आसक्ति अवस्था है॥ अरु युवा आवती है॥ तब कुमा
र अवस्था को ग्रास लेती है॥ अरु युवा को जरा ग्रास ले
ती है॥ अरु सरीर जर्जरी भाव हो जाता है॥ अरु बुध भी

भी हीण हो जाती है॥ अरु मृत्यु कों प्राप्त होता है॥ हे मुनीश्वर
अज्ञानी का जीवण ऐसे व्यर्थ हो जाता है॥ जैसे नदी के तट
पर वृक्ष होता है॥ अरु प्रवाह कर के जर्जरी भाव हो जाता है
तैसे वृध अवस्था विषे सरीर जर्जरी भाव हो जाता है॥ जैसे
पवन कर के सूका पात जर्जरी भाव हो जाता है॥ तैसे जे नेक
रोग हैं॥ सो वृध अवस्था विषे आन लागते हैं॥ अरु सरीर
कृश हो जाता है॥ इस्त्री पुत्र आदिक सभ इस का त्याग क
र जाते हैं॥ जैसे पके फल कों वृक्ष त्याग देता है॥ तैसे इस
का त्याग करते हैं॥ अरु देष देष हसते हैं॥ जैसे उनमत्त
कों देष कर हासी करते हैं॥ अरु कहते हैं॥ जो अब बुधि
इस कों कछु नही रही॥ बडूडे की सी अवस्था है॥ जैसे कम
लों ऊपर गडा पडता है॥ कमल जर्जरी भाव हो जाते हैं॥
तैसे पुरुष जरा अवस्था विषे जर्जरी भाव हो जाता है॥ हे
मुनीश्वर जरा अवस्था दुःखों का ग्रह है॥ जहां जरा अव
स्था होती है॥ तहां सभ दुःख इकठे आन होते हैं॥ तिन
कर महादीन हो जाता है॥ अरु युवा अवस्था विषे जो का
म का बल था॥ सो भी जरा विषे हीण हो जाता है॥ अरु इं
द्रीयां भी दीन जैसी हो जाती हैं॥ चपलता का अभाव हो जा
ता है॥ जैसे पिता के निर्धन हूऐं पुत्र भी दीन हो जाता है॥
तैसे सरीर के निबल हूए इंद्रीया भी निबल हो जाती हैं
चपलता का अभाव हो जाता है॥ पर एक तृस्ना वर्धती जा
ती है॥ हे मुनीश्वर जब जरा रूपी रात्रि आवती है॥ तब पा
सी रूपा गिरदडी आन प्राप्त होती है॥ शब्द करती है॥ आ
धि व्याधि रूपी उलूं भी आन प्राप्त होते हैं॥ हे मुनीश्वर ऐ
सी जो नीच वृध अवस्था है॥ तिस की मुज कों इछा नहीं॥ जै
से पके फलों कर के वृतरु झुक पडता है॥ तैसे जरा के आये
तें देह झुक पडती है॥ तां ते मुज कों इछा नहीं इस की॥ बा
लिक अवस्था तो महामूढ है॥ अरु युवा तो महा विका
रवान है॥ अरु जरा अवस्था तो दुःखों का पात्र है॥ बालि
क अवस्था को युवा ग्रास लेती है॥ अरु युवा कों जरा ग्र

सलेती है॥ जराको मत्यु ग्रा सलेती है॥ इनकों आश्रय करके
मैं क्या सुखी होणा है॥ तांते सोई उपाव कहो॥ जिस करके
इन दुःखों तें मुक्त होवों॥ हे मुनीश्वर जब जरा अवस्था आ
वती है॥ तब मरण भी निकट आवता है॥ जैसे जब संध्या आ
ई तब रात्र आई॥ जब संध्या के आए ते दिन की आस्था करे
तो महा मूर्ष है॥ तैसे जरा के आए तें जीवण की आस्था राखे
तब मूर्षता है॥ हे मुनीश्वर जैसे बिली चितवती है जो चूहा
आवे तो ग्रास लेवों॥ तैसे मत्यु चितवती है॥ जो जरा आवे तो
ग्रास लेवों॥ सो जरा अवस्था तो मानो काल की सषा है॥ तब
काल जो इसका स्वामी है॥ सो इसकों ग्रास लेता है॥ हे मुनी
श्वर जब जरा आवती है॥ तब मत्यु प्रसन्न होती है॥ जैसे चंद्र
मा के उदे हूए चंद्रमुखी कमल बिड आवते हैं॥ तैसे जरारू
पी चंद्रमा के उदय हूये मत्यु रूपी कमल बिड आवते हैं
हे मुनीश्वर इह जरा अवस्था बडी दुष्ट है॥ वडे वडे जो हूये
हैं॥ तिनकों भी इसदीन कीया है॥ जदपि ऐसे सूर में हूये हैं
जो संग्राम विषे जिनों ने युध कीए हैं॥ अरु शत्रुयें को जीत्या
है॥ तो भी जरा रूपी पिसाचनी के संग कर दीन हो गए हैं॥ हे
मुनीश्वर जैसे गंगा के तट पर वृक्ष होते हैं॥ सो तिसके वेग
कर जर्जरी भाव हो जाते हैं॥ तैसे सरीर जर्जरी भाव हो जा
ता है॥ जैसे आकास तें उड़ती इल मांस के टुकडे को देष
कर झट मार लै जाती है॥ तैसे जरा के आए तें काल ग्रास
लेता है॥ हे मुनीश्वर इह तो काल का ग्रास बना हूया है॥ जै
से वृक्ष को हस्ती भोजन कर लेता है॥ तैसे जरा अवस्था को
ले देष कर काल भक्षण करता है॥ इति श्री वैराग्यप्रकर्णे जरा
वर्णनं नाम सर्गः॥ २८॥ रामोवाच॥ हे मुनीश्वर जेतक बूपदा
र्थ हैं॥ सो सब काल ग्रास लेत हैं॥ अरु बडे बडे बली हूये
काल हैं॥ जो सुमेर ते भी गंभीर थे॥ तिनकों भी ग्रास लीया है॥ अर
जगत रूपी एक गूलर का फल है॥ तिस विषे मछा है॥ सो
ब्रह्मादिक हैं॥ अरु इनों फलों के जो वृक्ष हैं॥ सो सब इस
काल का ग्रास हैं॥ सब को इस ने भक्षण करणा है॥ हे मुनी

जैसे सर्प को गरुड अथवा नोला ग्रास लेता है तैसे बडे बलीयों को भी
काल ग्रास लीया है ४

श्वर इह काल बडा बली है ॥ जो कछु देषणे विषे आवता है
सो सभ ने उस ग्रास लेवणा है ॥ अब मैं कौं क्या कहिणा है ॥ ह
मारे बडे जो उस्मा जो हैं ॥ तिन कौं भी काल ग्रास लेवणा है
जैसे मृग कौं सिंह ग्रास लेता है ॥ अब रमती काल कौ न हो
ए हो है ॥ घडी महूर्त पल विपल इसी कर जानीता है ॥ अरु
एक बेली तिस ने पसारी है ॥ जो रचा तिस की रात्रि है ॥ अ
रु फल उसका दिन है ॥ जो बरूपी नवरे तिस पर आने बै
ठते हैं ॥ हे मुनीश्वर इह काल बडा कूर है ॥ जो किसी पर द
या नहीं करता ॥ सभ कौं भोजन कर लेता है ॥ पर एक कम
लरूपी जो है सो उस तें बचा है ॥ सो कमल कैसा है ॥ जो अं
ति अरु मैत्री तिस के अंकुर हैं ॥ अरु चैतन्यता मात्र गंध का
स है ॥ इस कारण तें उह बचा है ॥ जो काल उस कौ पहुंच नही
सकता ॥ उस विबेग आत्म हूया काल भी लीन हो जाता है ॥ जो
ऐसे हैं ॥ तिन कौं भी काल मारता है ॥ ब्रह्मा विष्णु रुद्रादिक
सभ मूर्ती उस धारी हैं ॥ बहुड उस कौं अंतर ध्यान कर ले
ता है ॥ हे मुनीश्वर उत्पत्ति इस्थित अरु प्रलय सभ काल
तें होती है ॥ अनेक बार महाकल्प कौ ग्रास लीया है ॥ अरु
अनेक बार लेवेगा ॥ तिस के भोजन कर तें तृप्त कदाचित
नहीं होता ॥ अरु कदाचित होणा भी नहीं ॥ जैसे अग्नि घृत
की आहूती करत तृप्त नहीं होती ॥ तैसे जगत ब्रह्मांडों कौं
काल भोजन कर ले कर तृप्त नहीं होता ॥ अरु इन का ऐसा
स्वभाव है ॥ जो इंद्र कौं दारिद्री चा करता है ॥ अरु दारिद्री
कौं इंद्र चा करता है ॥ अरु सुमेर कौं राई चा करता है ॥ अर
राई कौं सुमेर चा करता है ॥ सभ तें ऊंचे ईश्वर्यवानों कौं नीचा
करता है ॥ सभ तें नीचे कौं ऊचा करता है ॥ बूंद कौं समुद्र कर
ता है ॥ अरु समुद्र कौं बूंद करता है ॥ ऐसी सासन सक्ति काल
की है ॥ जो मूढ जीव हैं ॥ तिन कौं शुभ अरु अशुभ रेसा पाछेद
ता रहता है ॥ काल रूप चक्र जीव रूप पिंडों कौं शुभ अशु
भ रूपी माल सा बांध कर अधः ऊर्ध कौं फिरावता है ॥
हे मुनीश्वर जेता कछु जगत विलास भासता है ॥ सो सभ कौं

श्री अक्षर जेताक कछु प्रपंच है सो काल के मुख विषे है ५३

कालग्रासलेता है॥ अरु जीवरूप रत्नोंका डबा कालरूपी सर्प नें उदर विषे सभनों कों मारता जाता है॥ क्रीडा पड़ा करता है॥ चंद्रमा सूर्य को खेनुं जानकर कबहूं अधः करता है॥ कबहूं ऊर्ध्व उठावता है॥ अरु जो महापुरुष हैं॥ सो सनकाल विषे समान रहते हैं॥ स्नेह किसी विषे नहीं करते॥ इसकर काल इनके नाश करणे को समर्थ नहीं होता॥ जैसे रुंडों की माला रुद्रजी गले विषे धारते हैं॥ तैसे जीवों की काल भोजन करता है॥ हे मुनीश्वर जो बडे बडे बली हैं॥ तिनों कों भी काल ग्रास लेता है॥ जैसे समुद्र को बडवाअग्नि ग्रास लेती है॥ तैसे काल सभनको ग्रास लेता है॥ हे मुनीश्वर सत्वगुण देवता हैं॥ अरु राजस गुणी राजा हैं॥ अरु तमोगुण प्रधान जो दैत्य हैं॥ तिनों विषे समर्थ कोऊ नहीं॥ जो इस्थित होवे॥ जैसे टोकणी विषे अन्न जल पाईता है॥ अरु तले अग्नि जगाती है॥ तब अन्न के दाणे अधः ऊर्ध्व को भ्रमते हैं॥ तैसे काल सभ जीवों कों भ्रमावता है॥ हे मुनीश्वर इह काल महा कठोर है॥ अस्थिर रहणे किसी को नहीं देता॥ मुजको भी इसी का भय आवता है॥ तातें मुजकों सोई उपाव कहो॥ जिसकर इसतें निर्भय होवों॥ इति श्री वैराग्य प्रकर्णे कालवृत्तांत वर्णनं नाम सर्गः॥ १८॥

रामो०॥ हे मुनीश्वर इह काल बडा बली है॥ जैसे राजा का पुत्र सिकार खेलने लागता है॥ तब बनचर जीव दुःख को पावते हैं॥ तैसे काल राजपुत्र सिकार खेलता है॥ तब सभ जीव दुःख पावते हैं॥ हे मुनीश्वर इह काल महा भैरव है॥ जो सभ के ग्रास लेता है॥ अरु इसका जो चंडी शक्ति है॥ तिसका बडा उदर है॥ अरु काली है॥ जो सभन को ग्रास करके पाछें नृत्य करती है॥ जैसे बन के मृगों कों सिंह सिंहनी भोजन करके विचरते हैं॥ तैसे नाना प्रकार के पदार्थों कों काल रचकर बहुड़ ग्रास लेता है॥ तातें मुजकों किसी जगत के पदार्थों की इछा नहीं॥ मुजको सोई उपाव कहो जिसकर इसतें छूटों॥ हे मुनीश्वर इस काल का महापराक्र

मही॥ इसके तेज के सन्मुख कोऊ नहीं ठहरता॥ सन इसी के
भय करके कांपते हैं॥ इह महा भैरव है॥ अरु इसकी जो
चंडका शक्ति है॥ सो महाबली है॥ अरु उहा नेत रूप है॥
तिसतें उलंघिल को ऊ नहीं हो सकता॥ महाकाल का रूप
काली है॥ अरु बडा भयानक जिसका आकार है॥ अरु का
लरूप जो रुद्र है॥ तिसतें अभिन्न रूप है॥ जब सन को ग्रा
स लेते हैं॥ तब पाछे भैरव अरु भैरवी निर्त करते हैं॥ सो
कैसी काली रूप भैरवी है॥ बडा जिसका आकार है॥ सीस
जिसका महा आकास है॥ अरु चर्ण जिसके पताल हैं॥ दसो
दिसा जिसकी भुजा हैं॥ अरु सप्त समुद्र जिसके हाथों विषे
कंकन हैं॥ संपूर्ण पृथवी उनके हाथों विषे पात्र है॥ तिस ऊ
पर जो जीव हैं॥ सो उसका भोजन हैं॥ हिमाला पर्वत अरु सु
मेर पर्वत दोनों कानों विषे तनोडे हैं॥ चंद्रमा सूर्य जिसके
कानों विषे लुडके हैं॥ अरु तारामंडल मस्तक ऊपर बिंदी
लागी हूई हैं॥ हाथों विषे त्रिसूल मूषल तें आदि ले कर स
स्त्र हैं॥ अरु जीवों के मारणे की तेड़ी फासी जिसके हाथ वि
षे है॥ ऐसी जो काली देवी है॥ सर्व जीवों को ग्रास करके भै
रव जो है रुद्र जी तिसके आगे निर्त करती है॥ अरु भैर
व जी कैसे हैं॥ जिसके आगे ठहिरणे की शक्ति किसी की
नहीं॥ जहां वेल्ली होवे॥ तहां तृण विषे उघाड कर लेवे॥ ज
हां उघाड होवे तहां तृण विषे वल्ली चा करे॥ इसते इसका
नाम देवी कहीता है॥ बडे बडे पदार्थों को नास करती है॥
इसी तें इसका नाम कांता है॥ नेत रूपी इसी तें है॥ जो इस आ
दि थास्या है॥ सोई होता है॥ हे मुनीश्वर काल रूपी ईश्वर है॥
तिसने क्रिया रूपी जाल पसास्या है॥ तिस विषे जीव रूपी पं
छीपडे फसते हैं॥ सांति को कदाचित नहीं पावते॥ हे मुनीश्वर
इह जो सभ नासी पदार्थ हैं॥ मैं यह किसको आश्रय करों॥ स्था
वर जंगम जगत सभ काल के मुख विषे है॥ मैं यह किसको आ
श्रय करके सुखी होवों॥ निर्भय आत्म पद जो है॥ सोई मुझ को
कहो॥ इति श्री वैराग्य प्रकर्णे कालविलास वर्णनं नाम सर्गः॥ २५

रामोवाच ॥ हे मुनीश्वर अबला महा चंचल है ॥ अरु मृत्यु
जो है ॥ सो इसके निकट है ॥ अन्यथा भाव को नहीं प्राप्त होव
ते देती ॥ इसको मारती है ॥ हे मुनीश्वर जेते कछु भोग हैं ॥ सो
रोग समान हैं ॥ अरु जिसको संपदा जानते हैं ॥ सो आपदा है ॥
जिनको सत जानते हैं ॥ सो असत्य है ॥ जिनको स्त्री पुत्रादि
क जानते हैं ॥ सो बंधन का कारण हैं ॥ अरु तृष्णा मृगतृष्णा
के जलवत है ॥ अरु इह देह जो है सो विकार रूप है ॥ अरु
इह मन चंचल अशांत रूप है ॥ अरु अहंकार महा नीच रू
प है ॥ इसाने दीनता को प्राप्त कीया है ॥ जेते कछु पदार्थ भा
सते हैं ॥ सो सब दुःखों के देणेहारे हैं ॥ तिनकर इसको शांति
कदाचित नहीं होती ॥ तांते इसकी इच्छा मुझको कछु नहीं ॥
हे मुनीश्वर बडे समुद्र दृष्ट आवते हैं ॥ अरु सुमेरादिक प
र्वत हैं ॥ सो सब नाश हो जावेंगे ॥ तो हम सारखीयां की क्या वा
र्ता है ॥ अरु बडे बडे दैत्य राक्षस हूए हैं ॥ ते भी नाश हो गए
हैं ॥ अरु इंद्र ते लेकर देवता अरु सिध हूये हैं ॥ अरु गंधर्व
हूये हैं ॥ सो सब नाश हो गए हैं ॥ तो हम सारखीयां की क्या क
हिणी है ॥ पृथ्वी जल अग्नि वायु सब नाश हो जावेंगे ॥ तो ह
म सारखीयों की क्या कहिणी है ॥ यम कुबेर वरुण जो इह बडे ते
जवान हैं ॥ सब नाश हो जावेंगे ॥ अरु तारामंडल जो दृष्ट आ
वता है ॥ सो भी गिर पडेगा ॥ तो हम सारखीयों की क्या कहिणी है
हे मुनीश्वर ध्रुव जो इस्थित भूत है ॥ सो भी नष्ट हो जावेगा ॥ अ
रु चंद्रमा जो अमृत कर पूरण है मंडल जिसका ॥ अरु सूर्य
जो अखंड है मंडल जिसका ॥ ऐसे प्रकाश संयुक्त दृष्ट आ
वते हैं ॥ सो सब नाश हो जावेंगे ॥ तो हम सारखीयों की क्या वार्ता
है ॥ हे मुनीश्वर अवर किसी की क्या कहिणी है ॥ इह जो बडे
ईश्वर हैं ॥ जगत के अधिष्ठाता हैं ॥ तिनका भी विनाश हो जाणा
है ॥ परमेष्ठी जो ब्रह्मा है तिनका भी अभाव हो जावेगा ॥ हरि जो
विष्णु है तिस विषे हरतम है ॥ सो भी हरी जावेगी ॥ महा भैरव
रूप जो रुद्र है ॥ सो भी सन्य हो जावेगा ॥ तो हम सारखीयों की क्या
वार्ता है ॥ अरु काल जो सब को भक्षण करणहारा है ॥ सो भी

टूक टूक हो जावेगा॥ ऽअरु नासता को प्राप्त होवेगा॥ ऽअरु का
ल की इच्छा जो नेत है॥ सो भी ऽअनेतता को पावेगी॥ सन का ऽआ
धार जो ऽआकास है॥ सो भी नास हो जावेगा॥ तो हम सारखों को
क्या वाती है॥ हे मुनीश्वर जेता कछु जगत है॥ नाम रूप ऽअरु ऽअ
र्थ सो सब नास हो जावेंगा॥ तो मय किसको इछा करों॥ ऽअरु कि
स को ऽआसरा करों॥ इह जगत भ्रम मात्र है॥ ऽअग्यानी को इस
विषे ऽआस्था होता है॥ हम नहीं जानते जो जगत भ्रम कैसे उत
पत भया है॥ पर एता मैं जानता हों॥ जो इसको ऽअहंकार ही नें
दुःखी कीया है॥ हे मुनीश्वर इसका जो परम शत्रु है॥ सो ऽअहंका
र ही है॥ ऽअहंकार कर के भटकता फिरता है॥ इह जीव पर
मार्थ लखतें भूला हूया पराभटकता है॥ ऽअज्ञान करके प्र
श्री विषे ऽआस्था करता है॥ ऽअरु भोगों को सुख रूप जाण कर
तिनका तृष्णा करता है॥ जिनको भोग रूप जानता है॥ सो भोग
रूप हैं॥ विचार कीये विना इह ऽअपणा नास ऽआप ही करता है॥
काहतें जो इसका कल्याण बोध ही करता है॥ जो सत विचार
सहित बोध की सरणी पडै तब इसका कल्याण होवै॥ हे मुनीश्व
र जब तृष्णा उपजती है॥ तब मुदता [प्रसनता] ऽअरु धैर्यता को नास करती
है॥ मुजकों सोई उपाव कहो॥ जिस कर मय ऽअविनासी पद कों प्रा
प्त होवों॥ इस भ्रांत रूप जगत की मय ऽआस्था नहीं करता॥ जो
कछु सुख दुख इसकों होणा है॥ सो होवणा ही है॥ मिटता नहीं इ
स निमित यत्न करणां मूर्खता है॥ इति श्री वैराग्य प्रकरणे काल
विलासो नाम सर्गः॥ २० रामोवाच॥ हे मुनीश्वर इह जो नाना प्रकार के
पदार्थ रमणीक भासते हैं॥ सो सब नास रूप हैं॥ इह तो मन की
कल्पना करके रचे हूये हैं॥ इस विषे मय किसकी ऽआस्था क
रों॥ हे मुनीश्वर ऽअग्यानी जीवों का जीवणा व्यर्थ है॥ इस जीवणे
विषे उनका ऽअर्थ सिध कछु नहीं होता॥ ऽअरु इह सरीर भी तब
लग सुंदर भासता है॥ जब जरा नहीं ऽआई॥ जैसे चंद्रमा का प्रका
स तब लग उज्वल भासता है॥ जब लग राहु दैत्य ऽआछादन नहीं
कीया॥ जब राहु दैत्य ऽआवरण करता है॥ तब प्रकास नहीं भा
सता॥ तैसे जरा ऽअवस्था के ऽआए तें युवा ऽअवस्था की सुंदरता

ईजातीरहतीहै॥ हेमुनीश्वरजराकेआएतें सरीरकृषजैं
साहोजाताहै॥ अरुतृस्नावधतीजातीहै॥ जैसेवर्षाकालवि
षेनदीवधतीजातीहै॥ तैसेजराअवस्थाविषेतृस्नावधती
जातीहै॥ अरुजिनोंपदार्थोंकीइहतृस्नाकरताहै॥ सोपदार
थदुःखरूपहैं॥ हेमुनीश्वरतृस्नारूपीएकवडीनदीहै॥ तिस
विषेरागद्वेषादिकमछोंकरजीवपडेदुःखपावतेहैं॥ जिस
पदार्थोंकीइछाकरतेहैं॥ सोसभनासरूपहैं॥ मूर्षताकरके
इसकीइछाकरतेहैं॥ हेमुनीश्वरजोरणरूपीसमुद्रकोजी
तकरतरजातेहैं॥ तिनकोंमयसूरमानहीमानता॥ मयति
नकोंसूरमाजानताहैं॥ जोइंद्रीयांरूपीसमुद्रविषेमनकीवृ
त्तिरूपीतरंगउठतेहैं॥ जोऐसेसमुद्रकोतरजावै॥ सोसूरमा
है॥ हेमुनीश्वरअग्यानीतिसक्रियाकाआरंभकरतेहैं॥ जिस
केपरणाममविषेदुःखहोताहैं॥ जिसकेप्रणाममविषेसुखहै॥
तिसकाआरंभनहीकरते॥ जोवणेकोव्यर्थवीतावतेहैं॥ बाले
कअवस्थाविषेसून्यरहतेहैं॥ अरयुवाअवस्थाविषेकाम
करउनमत्तहोजातेहैं॥ तिसकांमकरकेउनमत्तहस्तीकीन्या
ई इस्त्रीरूपीकंदराविषेजायइस्थितहोतेहैं॥ वृद्धअ
वस्थाहोतीहै॥ तिसकरकृष्णसरीरहोजाताहै॥ अरुसभअं
गछीणहोजातेहैं॥ अरुतृस्नावधतीजातीहै॥ हेमुनीश्वरइ
हपुरुषरूपमहामूर्षपसूहै॥ अरुइहमानुषरूपीसरीर
पर्वतपरआनआरूढहूयाहै॥ अरुआकासकेफलजगत
केपदार्थोंकीइछाकरताहै॥ सोअधःकोगिडेगा॥ रागद्वेषरू
पीकंटकोंकेवृक्षहैं तिनकुंविषेजाइपडेगा॥ हेमुनीश्वरजेते
कछुपदार्थभासतेहैं॥ सोसभनासवंतहै॥ आकासकेफलों
कीन्याईंअसततहैं॥ इनकुंविषेआस्थाकरणामूर्षताहै॥ अरु
जोग्यानवानपुरुषहैं॥ तिनकोविषीयोंकेभोगोंकीइछानही
रहिती॥ काहेतेंजोआत्मप्रकासकरइनकोंमिथ्याजानताहै॥
हेमुनीश्वरऐसाग्यानवानपुरुषदुर्लभहै॥ जिनकेकामनां
कोऊनहींरही॥ सदाआत्मइस्थितकरकेसोभताहै॥ ऐसेपुरु
षकोसंसारविषेइछाकछुनहीरहिती॥ काहेतेंजोइहपदा

र्थ असतसरूप जानता है॥ हे मुनीश्वर इह जगत नासरूप है॥ दे
षते देषते नष्ट होजाता है॥ तिस विषे मय किसका आसरा करें॥
जब सहस्र चौकड़ी युगों की व्यतीत होती है॥ तब ब्रह्मा का ए
क दिन होता है॥ तिस दिन के क्षय हूए तें सर्व जगत नी प्रल
य हो जाता है॥ बहुड ब्रह्माजी काल कर के नास हो जाता है॥
अरु ब्रह्माणी ए ते नास हूए हैं॥ जिन की संख्या नहीं करी जा
ती॥ असंख्य ही ब्रह्मा नास हो गए हैं॥ तो हम सारषों की क्या
वार्त्ता कहिणी है॥ हम कैसे आयु को भोगें॥ अरु किसकी सेव
ना करहि॥ एता सम चंचल रूप है॥ इस्थिर किसी रहिणा नहीं
एक एक क्षण विषे परे ग्रण मते हैं॥ सम नासरूप है॥ इसकी
आस्था मूर्ष करते हैं॥ तिसके साथ हम को कछु प्रयोजन न
हीं॥ जैसे मृग मारुस्थल विषे जलपान के निमित्त दौडता है॥
परंतु अंत को नही पावता॥ तैसे मूर्ष जीव जगत के पदार्थों को
सत जान कर तृष्णा करते हैं॥ परंतु सांतवान नही होते॥ काहे
ते जो सर्व असार रूप है॥ अरु जो स्त्री पुत्रादिक भासते हैं॥
सो तबलग भासते हैं॥ जबलग सरीर नष्ट नहीं भया॥ जब
सरीर नष्ट भया॥ तब न जानीयेगा जो कहां गए॥ अरु कहां
सों आए थे॥ जैसे दीपक तेल बाटी तें रहित निर्वाण होजा
ता है॥ नहीं जाणिआ जाता जो कहां गया॥ तैसे बाटी रूपी बांध
व सनेह रूपी तेल तें रहित सरीर रूपी दीपक निर्वाण होजा
ते हैं॥ नहीं जानीए जाते जो कहां गए॥ हे मुनीश्वर इन बांधवों
का जो मिलाप है॥ सो ऐसे है॥ जैसे तीर्थयात्रा को यात्री चले जा
ते हैं॥ तिनका समूह एक क्षण वृक्ष की छाया के नीचे बैठ जाते
हैं॥ तैसे बांधवों का मिलाप है॥ जैसे उन यात्रीयों विषे सनेह
करणा मूर्षता है॥ तैसे बांधवों विषे स्नेह करणा मूर्षता है
हे मुनीश्वर अहं मम की जेवडी के साथ बांधे हूए हैं॥ सो घरी
यंत्र की न्याई भटकते फिरते हैं॥ तिनको सांत कदाचित न
ही प्राप्त होती॥ उह देषणे मात्र तो चेतन दृष्ट आवते हैं॥ पर
उसतें पसु अरु बिलाणी श्रेष्ट है॥ जिनकी संवित देह इंद्रीयों
साथ बांधी हूई है॥ उह महामूर्ष हैं॥ उनको आत्मपद का प्रा

तैसे बाटी रूपी जो बांध
व हैं तिनविषे [illegible] नेह
रूपी जो तेल है तिसकर
सरीर जो भासते हैं सो
प्रकास है जब बाटी
रूपी दीपक प्रकास
निरवाण होते हैं ५

मी

जों

३०

30

म होवणी कथन है ॥ जैसे पवन कर के वृक्ष सो पात दूर ते हैं ॥ अरु उड जाते हैं उनकी वृक्ष साथ लागण कथन है ॥ तैसे जो देह दिकों साथ बोध्य कृये हैं ॥ तिन को आत्मपद प्राप्तण कथन है ॥ हे मुनीश्वर जब आत्मपद ते इह जीव वेमुख होता है ॥ तब जगत नाम को प्राप्त होता है ॥ अरु जब आतमा की और आवता है ॥ तब संसार इसको विस्मर्ण हो जाता है ॥ काहे तें जो पदार्थ जगत विषे नासवंते हैं ॥ सो सभ नास हो जाते हैं ॥ तां ते मय किसका आसरा करें ॥ उह पदार्थ मुजको कहो ॥ जिसका नास न होवे ॥ इति श्री वैराग प्रकरणे सर्व पदार्थ अभाव प्रतिपादनं नाम भागः ॥ २२ ॥ राम उवाच ॥ हे मुनीश्वर जेता कछु स्थावर जंगम जगत दिषीता है ॥ सो सभ नासरूप है ॥ किसी इस्थिर रहिणा नहीं ॥ अरु जो खाई स्थान थे ॥ सो देखते ही जलकर पूर्ण हो गए हैं ॥ अरु वडे जल के समुद्र दृष्ट आवते थे ॥ सो खात रूप हो गए हैं ॥ अरु जहां वस्ती थी तहां उद्याड हो गई है ॥ अरु जहां उद्याड थी तहां वस्ती हो गई है ॥ हे मुनीश्वर इस प्रकार देषते देषते पदार्थ विपर्यय हो जाते हैं ॥ बहु उ भय किसका आश्रय करों ॥ जो बडे बडे ऐश्वर्य कर संपन्न हूते हैं अरु बडे कर्तव्य तिन कुं कीए हैं ॥ अरु वीरजवान अरु तेजवान इत्यादिक विभूतकर संपन्न कृये हैं ॥ सो नीस्मरण मात्र हो गए हैं ॥ तो हम सारष्यों की क्या कहिणी है ॥ सभ नास हो गए हैं ॥ एक क्षण पल विषे हम भी चल्या जावणा है ॥ एक क्षण विषे संपदावान होते हैं ॥ अरु दूसरे क्षण विषे दरिद्री होते हैं ॥ एक क्षण विषे जीवते हैं ॥ अरु दूसरे क्षण विषे मर जाते हैं ॥ अरु अवर क्षण विषे मूये कृये भी जीव उठते हैं ॥ इस जगत की इस्थिरता कदाचित नहीं ॥ अरु तां ते बुधवान किसी की आस्था नहीं करते ॥ काहे ते जो जगत के पदार्थ सदा परणामी है ॥ कब कूं पुरुष इस्त्री हो जाता है ॥ अरु इस्त्री पुरुष हो जाता है ॥ अरु मानुष पशु हो जाता है ॥ अरु पशु मानुष हो जाता है ॥ जंगम स्थावर हो जाता है ॥ अरु स्थावर जंगम हो जाता है ॥ मानुष देवता हो जाते हैं ॥ अ

रु देवता मानुष हो जाते हैं ॥ कबहूं अर्ध को जाते कबहूं ऊ
र्ध को जाते हैं ॥ स्थिर कदाचित नही होते ॥ हे मुनीश्वर जेते प
दार्थ दृष्ट आवते हैं ॥ सो सर्व नास रूप हैं ॥ किसी इ स्थिर र
हणा नहीं ॥ जैसे जेती नदी हैं ॥ सो सर्व वडवाअग्नि विषे ज
लती हैं ॥ तैसे जेते पदार्थ हैं ॥ सो सर्व अभाव रूपी अग्नि का
ने हो होवेंगे ॥ अरु वडे वडे बली हमारे देषते देषते अभाव
हो गए हैं ॥ हे मुनीश्वर इह जो अन स्थिर रूप पदार्थ हैं ॥ म
य किसका आश्रय करें ॥ इह जो सूर्य वडे प्रकाश कर दृष्ट
आवता है ॥ सो जड रूप हो जावेगा ॥ अरु अमृत कर पूर्ण चंद्र
मा दृष्ट आवता है ॥ सो भी भस्म हो जावेगा ॥ अरु सुमेर आदि
क जो पर्वत दृष्ट आवते हैं ॥ सो सर्व नास हो जावेंगे ॥ अरु स
प्त लोक भी नास हो जावेंगे ॥ मानुष देवता यक्ष राक्षसादिक
सर्व नास होवेंगे ॥ अरु नक्षत्र चक्र जो है सो भी नास हो जावेगा
हे मुनीश्वर अवर किसी की क्या कहणी है ॥ ब्रह्मा विष्णु रु
द्र जो जगत के ईश्वर हैं ॥ ते भी भस्म हो जावेंगे ॥ तो हम सारखों
की क्या वार्ता कहणी है ॥ जेता कछु जगत दृष्ट आवता है ॥ इ
स्त्री पुत्र बांधव ऐश्वर्य वीर्य नाना प्रकार कर जो शोभते
हैं ॥ सो सर्व नास रूप हैं ॥ बऊड मय किसका आश्रय करें ॥
अरु किसकी इछा करें ॥ हे मुनीश्वर जो पुरुष दीर्घ दर्सी
हैं ॥ तिसकौं सर्व पदार्थ विरस भासते हैं ॥ उह किसी पदार्थ
की इछा नही करते ॥ अरु अपणी भार्या विषली के चमत
कार वत देषते हैं ॥ जिनकों ऐसी अपणी अबला की प्रती
त है ॥ ते किसकी इछा करें ॥ जैसे किसी कों चंडका के बल देव
ले नमित पालते हैं ॥ अथवा ग्रामसके बल देवणे नमित
पालीता है ॥ तब उह बाले पीए की इछा नही करता ॥ तैसे
जिनकों अपणा मरणा सनमुष होता है ॥ तिसकों किसी प
दार्थ की इछा नही रहती ॥ जो पुरुष इस जगत के पदार्थों
का आश्रय करेगा ॥ जो मैं इन कर सुषी होवोंगा ॥ सो नाश
ताकों प्राप्त होवेगा ॥ हे मुनीश्वर जो पुरुष विचारतें रहित
है ॥ तिनकों इह जगत रमणीक भासता है ॥ बऊड इनप

दार्थों के निमित्त जतन करता है॥ सो घटीयंत्र की न्याई कबहूं
अधः को जाता है॥ कबहूं ऊर्ध्व कों जाता है॥ समदृश्य काल को
ग्रास बली हूई है॥ अरु जिन कों विचार की प्राप्त भई है॥ तिन
कों इह जगत ब्रह्म स्वरूप भासता है॥ अरु जिन कों विचार
की प्राप्त न ही॥ तिन कों जगत भोग पदार्थ भासते हैं॥ सो पुरुष
नासता कों प्राप्त भए हैं॥ इह पदार्थ स्वप्नपुर की न्याई हैं॥ मय
इन की कैसे आस्था करों॥ इन का संबंध दुःखों के निमित्त है
जैसे मिठाई विषे विष मिली हूई होवै॥ उसके भोजन करणे
हारा मृत्यु कों प्राप्ति होता है॥ तैसे विषय भोगणे हारा नाश
कों प्राप्त होता है॥ इति श्री वैराग्य प्रकरणे जगत विपर्यय वर्ननं
नाम सर्गः॥२२॥ रामोवाच॥ हे मुनीश्वर इस संसार कों भोगों रू
पी अग्नि लागी है॥ तिस कर के पडे जलते हैं॥ अरु भोगों कर स
ब लोक दीन होर हे हैं॥ जैसे कमलों कों हस्ती चरणों कर मर्दन
करता है॥ तैसे भोगों कर पुरुष दीन होर हे हैं॥ जैसे वायु कर मे
घ नाश होजाते हैं॥ तैसे भोगों कर पुरुष दीन होते हैं॥ नाश हो
ते हैं॥ हे मुनीश्वर इह जगत नाशरूप है॥ किसी पदार्थ स्थिर
नहीं रहणा॥ तां ते मय किस की इछा करों॥ अरु किस का आ
श्रय करों॥ जो पुरुष वासनां रूपी जाल साथ इंद्रियों के अ
र्थ निमित्त फसीया है॥ सो बडे दुःखों कों प्राप्त होता है॥ हे मुनी
श्वर वासनां रूपी सूत्र विषे जीव रूपी मोती परोये हूये हैं॥
अरु मन रूपी ने दूया परोई कर के चेतन के गले विषे डार
ता है॥ जब वासनां रूपी तागा टूट पडे॥ तब भ्रम निवृत्त होजा
वे॥ हे मुनीश्वर इस के बंधन का कारण भोगों की इछा है॥ सो
भोगों की इछा कर पडा भटकता है॥ शांति को कदाचित नहीं
प्राप्त होता॥ तां तें मुज कों किसी भोग पदार्थ की इछा नहीं॥ न
राज की इछा है॥ न भोगों की इछा है॥ न गृह की इछा है॥ न ब
न की इछा है॥ न मरणे कर दुःख जानता हों॥ न जीवणे क
र सुख जानता हों॥ सुख जो होणा है॥ सो आत्मज्ञान कर होणा
है॥ अन्यथा किसी पदार्थ कर सुख नहीं होवणा॥ जैसे सूर्य
के उदे विनां अंधकार का अभाव नहीं होता॥ तैसे आत्मज्ञा

न विनां सुख कदाचित नही होएगा॥ तांते सोई उपाव कहो जिसक
र आत्म ज्ञान प्राप्त होवे॥ तब सुखी होवों॥ हे मुनीश्वर भोगों के भो
गने हारा अहंकार है॥ सो अहंकार मय त्याग कीया है॥ बहुड़ भो
गों की इछा कैसे होवे॥ हे मुनीश्वर इह विषय सर्प रूप हैं॥ जिन को
अपणा स्पर्श करते हैं॥ तिस का नास करते हैं॥ सर्प का दंस्या ए
क वार मृत्यु होता है॥ अरु विषय रूपी सर्प का दंस्या अनेक
जन्मों पर्यंत मरता जाता है॥ तांते परम विष विषय भोग हैं॥ वि
ष विष नही॥ विषय भोग विष हैं॥ हे मुनीश्वर आरे के साथ अं
गों का काटणा मंय सहारता हों॥ अरु वज्र कर के सरीर का चू
र्ण करणा मय सहारता हों॥ पर विषयों का भोगणा मुज को न
ही सहा जाता॥ इह मुज को बहुत दुःख दाइक दृष्ट आवते हैं
तांते सोई उपाव मुज को कहो॥ जिस कर के मेरे अंतर तें अज्ञा
न रूपी अंधकार दूर होवे॥ अरु जो न कहोगे॥ तब मंय अप
णी छाती पर धीर्य रूपी सिला दे कर बैठ रहोंगा॥ पर भोगों
की इछा मय न करोंगा॥ हे मुनीश्वर इह जेते पदार्थ हैं॥ सो सब
नाशवंत हैं॥ जैसे विद्युली का चमतकार होता है॥ अरु छप जा
ता है॥ जैसे अंजली विषे जल पाया नही ठहिरता॥ तैसे विष
य भोग अरु आर्बला नाश हो जाती है॥ जैसे वंड़ी कर मछी दुः
ख पावती है॥ तैसे भोगों की तृष्णा कर जीव दुःख पावते हैं॥
तांते मुज को किसी संसार के पदार्थ की इछा नहीं॥ जैसे जिस अव
पुरुष मृग जल को असत्य जाण्या है॥ तब उह जल पान की
इछा नही करता॥ तैसे मंय किसी पदार्थ की इछा नही करता
इति श्री वैराग्य प्रकरणे सर्व अनित्य प्रतिपादनं नाम सर्गः॥ २२॥
रामोवाच॥ हे मुनीश्वर संसार रूपी डोए विषे मोह रूपी कीच
मों मूर्ख मन गिड़ता है॥ तिस कर के बड़ा दुःख पावता है॥ शांति
वान के बहुड़ नही होता॥ जब जरा अवस्था आवती है॥ तब स
न अंग जर्जरी भाव हो जाते हैं॥ अरु कंपणे लागते हैं॥ अरु
तृष्णा वृध होती जाती है॥ जैसे जिउं जिउं निम का फल वृध
होता है॥ तिउं तिउं कटुक होता जाता है॥ हे मुनीश्वर जिनां पु
रुषों ने देह इंद्रीयादि को का आसरा लीया है॥ अपणे सुख
के नमित॥ ते पुरुष संसार रूपी अंधकूप विषे गिड़ेंगे॥ अ

रूनिकसनसकेगें॥अग्यानीकोविखेभोगोंकात्यागकदाचित
नहीकरता॥जैसेदेवताविवानोंकात्यागनहीकरते॥हेमुनी
श्वरजगतकेपदार्थोंसाथमेरीबुध्धिमलिनहोगईहे॥जैसे
वर्षाकालकीनदीमलनहोतीहे॥तैंसमेरीबुधिमलिनहोगे
ईहे॥तांतेसोईउपावकहो॥जिसकरनिर्मलहोवे॥अरूपर्व
तकीन्याईअचलहोवे॥अरुउहपदार्थकवनहे॥जोपरमा
नंदरूपांतिसरूपपयतननतेंनहिनहे॥अरुनिर्णयहे॥जिसकेपा
एतेंसंकाकोऊनहीरहती॥अरपावणानीकछुनहीरहता
॥अरसंपूर्णजगतनानाप्रकारब्रह्माकीरचनाभ्रमहोजाती
हे॥तिसपदपावणेकाउपावमुजकोंकहो॥हेमुनीश्वरजैसे
पदतेंजोमेरीबुधिभ्रमहे॥तांतेंमयशांतनहोहोता॥इहसं
सारअरुसंसारकेकर्ममोहरूपहे॥इनकुंविषेपड्याकूंया-
शांतकोंकदाचितनहीप्राप्तहोता॥अरजनकादिकजो
विदेहपविषेलागेहें॥अरुकमलकीन्याईअलेपरहतेहें॥
तैंसेसांतिवानसंसारविषेअलेपरहतेहें॥जैसेखलीकी
चविषेरहताहे॥अरकीचकास्पर्शनहीहोता॥तैंसेविदेहप
तारूपीराजविषेरहेहें॥परशांतिवानअलेपरहेहें॥हेमु
नीश्वरइहसंसाररूपीविसचकामुजकोलागीहे॥उहमंत्र
मुजकोकहो॥जिसकरइसकानासहोवे॥इसनेमुजकोंब
डादुःखदीयाहे॥अरुउहकवनप्रकाशहे॥जिसकेउदेहू
एमोहरूपीअंधकारकौनाशहोवे॥अरआत्मपदकीप्राप्तहो
जैंस वे॥हेमुनीश्वरबादरोंकरचंद्रमाअछादयाजाताहे॥तैंसेमे
रीबुधिविषयोंकरअछादीगईहे॥तांतेसोईउपावकहो
जिसकरइहआवर्णनाशहोवे॥अरुजोअमितसुखसुण
ताहे॥जिसकेपाएतेंपूर्णहोवीताहे॥अवरपावणाकछु
नहीरहता॥अरुसंपूर्णदुःखनष्टहोजातेहैं॥अंतरसीत
लहोजाताहे॥अैसाजोपदहेतिसकीप्राप्तकाउपावकहो
हेमुनीश्वरतिसचंद्रमाकीमुजकोइछाहे॥जिसकेप्रका
शकरबुधिरूपीकमलनीबिडआवताहे॥जिसकेअंब
तरूपीकिरणोंकोंपायकरतनमनिवृतहोतीहे॥हेमुनी

श्वर भुज को ग्रह विषे रहणे की इच्छा नहीं॥ अरु बन विषे रह
णे की इच्छा भी नहीं॥ तिस पद के पावणे की इच्छा है जिस
के पाए तें चिदानंद होवे॥ इति श्री वैराग्यप्रकरणे वैराग्यप्र
योजन नाम सर्गः॥ २४ रामोवाच॥ हे मुनीश्वर आर्बला की जो
आस्था करते हैं सो मूर्ष है॥ जैसे पत्र पर जल की बूंद होती है
तैसे आर्बला छण भंगुर है॥ जैसे बर्षा काल मो मंडूक बोलते हैं
अरु कंठ उसका बे चल दृष्ट आवता है॥ तैसे आर्बला छण
छण विषे चली जाती है॥ जैसे सदा शिव के मस्तक पर चंद्रमा
का रेखा कोमल है॥ तैसे इस शरीर की आर्बला है॥ हे मुनीश्व
र इस विषे जिसको आस्था है सो मूर्ष है॥ इह शरीर तो का
ल का ग्रास है॥ जैसे चूहे को बिल्ली ग्रास लेती है॥ तैसे इसको
काल ग्रास लेता है॥ हे मुनीश्वर इह देहरूपी बडा रोग लागा
है॥ तिसके निवारण को कर्तव्य क्या है॥ अरु पावणे योग
क्या है॥ जिसकर देहरूप भ्रम निवृत्त होवे॥ अरु इह जगत मू
र्खों को रमणीक भासता है॥ ऐसा पदार्थ पृथवी विषे अरु
आकास विषे देवलोक विषे कोऊ नहीं॥ जो ज्ञानवान को र
मणीक भासे॥ ज्ञानवान को एक आत्मस्वरूप रमणीक भासता
है॥ अरु अज्ञानी जगत को रमणीक जानकर आस्था कर
ते हैं॥ हे मुनीश्वर चंद्रमा विषे जो कलंक है॥ तिसकर सोभा
सुंदर नहीं भासती॥ जब कलंक दूर होवे तब सुंदर भासे॥
तैसे मेरे चित्तरूपी चंद्रमा विषे कामनारूप कलंक है॥ तिस
कर उज्वल नहीं होता॥ तां तैसा कोई उपाव कहो जिसकर कलं
कता तें रहित चित्त स्थित होवे॥ जैसे जल विषे प्रवेश करे॥
अर जल स्पर्श न करे॥ तैसे जगत के पदार्थों का लेप न लागे
हे मुनीश्वर मन विषे जो मननरूपी सत्ता है॥ सो युक्तिकर दूर
होती है॥ सो युक्ति मेरे मोह के निवृत्त अर्थ कहो॥ आगे जिसकी
निवृत्त हुई है॥ अरु जिस प्रकार हुई है॥ सो कहो॥ अर जिसक
र तुमारा अंतर शीतल हूया है॥ अरु जिस प्रकार अवरों का
हूया है॥ सो कहो॥ हे मुनीश्वर जैसे तुम जानते हो॥ सो कहो॥ अ
र जो तुमारे विद्यमान इह युक्ति नहीं पाई ती॥ तब मैं सर्वत्या

गकरके निरहंकार होय रहोंगा॥ जबलग उह युक्ति मेरे ताईं
प्राप्त न होवेगी॥ तबलग मैं य सरीर की क्रिया कछू न करों
गा॥ एही करोंगा॥ जो न मय हों॥ न मेरा देह है॥ सर्व त्याग कर
बैठ रहोंगा॥ जैसे कागज पर पुतली लिषी होती है॥ तैसे हो
रहोंगा॥ स्वास नी आवते जावते आवेहीं क्षीण होजावेंगे॥ अ
नर्थ रूपी देह निर्वाण होजावेगी॥ तब महा शांतिपद को प्रा
प्ति होवेंगा॥ वालमीकोवाच॥ हे भारद्वाज ऐसे कहिकर
रामजी तूष्णीं होय रहे॥ जैसे बडे मेघ को देखकर मोर आह्लाद
करके तूष्णीं होय रहते हैं॥ तैसे रामजी तूष्णीं होय रहे॥ इति
श्री वैराग्य प्रकरणे राम प्रश्न समाप्तं नाम सर्गः॥
॥३५॥ वालमीकोवाच॥ हे भारद्वाज जब रामजी ऐसे
वचन कहे॥ तब सभ विस्मय को प्राप्त भए॥ रोम खडे होय आए
मानो रोम भी ऊंचे होकर रामजी के वचन सुणते हैं॥ वसिष्ठ
वामदेव विश्वामित्र आदिक॥ अरु राजा दशरथ अरु इन
तें आदि लेकर सभ आश्चर्यमान हूये॥ अरु आकासचारी
सिध देवता गंधर्व किंनर जो थे॥ सो धंन्य धंन्य कहिकर पु
ष्पों की वर्षा करी॥ इस प्रकार अर्ध घडी पर्यंत वर्षा करी॥
सिधोवाच॥ हे कमल नयन रघुवंशीयों के कुल के चंद्रमा
तुं धंन्य है॥ हमों ने बहुत प्रकार के वचन सुणे हैं॥ पर ऐसे क
हूं नहीं सुणे॥ जैसे रामजी कहे हैं॥ इन वचनों को सुणकर हमा
रे विषे जो सिधता का अभिमान था॥ सो अब निवृत हूया है॥
वालमीकोवाच॥ हे भारद्वाज सिध ऐसे वचन कहिकर वि
चारते भए॥ जो रामजी ने बडे उदार वैराग्य के वचन कहे हैं॥
तिनका उत्तर मुनीश्वर देवें॥ तब वसिष्ठ विश्वामित्र वामदेव
पुलह पुलस्त्य तें आदि लेकर सभ उठ खडे हूये॥ राजा दशर
थ उठकर मंडलेश्वरों सहित मुनीश्वरों की पूजा करी॥ बहुत
सूर्य की किरणों साथ आए॥ यथा योग आसनों पर बैठ गए॥
वसिष्ठ विश्वामित्र नारद व्यासजी वामदेव पुलह पुलस्त्य अं
गिरा जो वृहस्पति का पिता है॥ अरु भृगु आए॥ अरु मैं य वाल
मीक भी तहां था॥ इत्यादिक ब्रह्म रिषि राज रूप सिध देवता

अरु देवतांके वंदिवे नायक सन्मान स्थित हुए॥ सम(
विदितवेद्य परम विश्रांतको प्राप्त भए॥ यथायोग्य आसनोंप
र स्थित भए॥ जहां रामजी बैठेथे रामजीकी पूजा करी॥ क्या पू
जा करी॥ हे रामजी धंन्य हे॥ धंन्य हे॥ धंन्य हैं तुं॥ एही पूजा करी
अरु नारदादिक कहत भए॥ हे रामजी तुजनें जो वैराग्य वि
वेकके वचन कहे हैं॥ सो सभको प्यारे लागते हैं॥ सभके क
ल्याण करता हैं॥ अरु परम बोधका कारण हैं॥ अब महा
वाक्योंका अर्थ तुमारे विषे प्रगट होता दृष्ट आवता हे॥ जैंसे
उज्वल पात्र तुम हो॥ तैंसा कोऊ विरला होता हे॥ जिसको संसा
रसमुद्र तें तरणेकी इछा होई हे॥ पुरुषप्रयत्न करकें सोई
मानुष हे॥ हे साधो वृक्ष तो बहुत हे॥ पर लौंगका वृक्ष कोऊ
विरला होता हे॥ तैंसे सरीरधारी मानुष बहुत हें॥ पर परम
पदके पावणे हारा कोऊ होता हे॥ जैंसे जल विषे तेलकी बूं
द पाई पसिर जाती हे॥ तैंसे थोडा वचन भी ईहां बहुता होवे
गा॥ इसकी बुध बहुत विसाल हे॥ अरु प्रकासवान हे॥ बो
धका परमपात्र हे॥ ॥इति श्री वैराग्यप्रकरणे मोक्ष
उपायो नाम सर्गः॥ समाप्तम्॥ २६ ॥ १॥

श्रीगुरुभ्यो नमः॥ अथ मुमुक्षुप्रकरण लिख्यते॥
वाल्मीकोवाच॥ हे नारदजी इह जो वचन हें॥ सो परमपा
वन हें॥ अरु कल्याणके कर्त्ता हें॥ इन विषे प्रीति तब होती हे
जब बहुत जन्मोंके पुण्य आन इकठे होते हें॥ तिनकी प्रीति इ
न वचनोंके श्रवण विषे होती हे॥ अरु तिनहींकों इन वचनों
का श्रवण प्राप्ति होता हे॥ इह वचन परम बोधका कारण हें
एक सहस्र पंचस इश्लोक वैराग्यप्रकरणके हें॥ हे नारदजी
जब इस प्रकार रामजी कहा॥ तब विश्वामित्रजी बोल्ये॥
विश्वामित्रोवाच॥ हे ज्ञानवानों विषे श्रेष्ठ रामजी॥ जो क
छु जानणे योग्य था सो तुम जान्या हे॥ अब इसतें जानणे क
छु नहीं रहा॥ पर तिस विषे विश्रांत पावणेके निमित्त कछु मा

र्जन करणा हे॥ जैसे शुध आदर्स विषे कछु मलिनता होवे॥ ज
ब उसको दूर करीये॥ तब शुध स्पष्ट मुख भासता हे॥ तैसे क
तुंजको छु इक उपदेस की अपेक्षा हे॥ हे रामजी तुज जैसा इस भगवा
न् व्यासजी का पुत्र शुकजी होत भया हे॥ उह भी विद्या बुधिवा
न था॥ जो कछु जानने योग्य है॥ सो तिसने जाणा था॥ पर विश्रां
त के निमित उसको अपेक्षा थी॥ उह विश्रांत को पाकर शांति
वान हूया हे॥ रामोवाच॥ हे भगवन शुकजी कैसा बुधवा
न था॥ अरु ज्ञातज्ञेय था॥ अरु उसको कैसे विश्रांत की अपेक्षा
थी॥ अरु कैसे विश्रांत को पावता भया॥ सो कृपा कर कहो॥
विश्वामित्रोवाच॥ हे रामजी अंजन के पर्वत की न्यांई जि
सका आकार हे॥ ऐसा जो भगवान व्यासजी स्वर्ण के सिंहास
न पर राजा दसरथ के पास बैठा हे॥ अरु सूर्य की न्यांई प्रका
शवान जिसकी कांत हे॥ तिसका पुत्र शुकजी था॥ अरु सर्व शा
स्त्रों का वेता था॥ सत को सत जाणा था॥ जो आतमा शांति रू
प हे तिसको जाणा था॥ पर विश्रांत को न पावत भया॥ तब उ
सको विकल्प उठया॥ जो जिसको मय जाणा हे॥ सो न होवेगा
का हे ते जो मुजको आनंद नहीं भासता॥ हे रामजी इस संसय
को धार कर एक काल में व्यासजी सुमेर पर्वत की कंदरा मो
बैठे थे॥ तिनके निकट आया॥ अरु कहत भया॥ हे भगवन इ
ह संसार आडंबर कहां सो उठया हे॥ अरु निव्रत कैसे होता हे
अरु आगे किनका निव्रत हूया हे॥ सो कहो॥ हे रामजी जब इ
स प्रकार शुकजी कहा॥ तब विदित वेद्य जो व्यासजी हे॥ सो त
त्व का उपदेश कहत भया॥ तब शुकजी कहा॥ हे भगवन जो क
छु तुमों कहा हे॥ सो मैं आगे ही जानता हों॥ इस कर मुजको शां
ति नहीं प्राप्त होती॥ हे रामजी जब इस प्रकार शुकजी कहा॥
तब सर्वज्ञ जो व्यासजी हे॥ सो विचारत भया॥ जो मेरे वचनों कर
इसको शांति न प्राप्त होवेगी॥ काहे ते जो इसको पिता अरु पुत्र
का संबंध भासता हे॥ ऐसे विचार करके कहत भया॥ हे पुत्र मं
य अत्यंत तत्वज्ञ नहीं॥ तां ते तूं राजा जनक के निकट जाउ॥ उ
ह सर्व तत्वज्ञ हे॥ अरु शांतात्मा हे॥ उससों तेरा मोह निव्रत हो

वेगा॥ हे रामजी जब इस प्रकार व्यासदेवजी कह्यो॥ तब शुकजी
कहांते चल्या॥ तब विदेह नाम जो मिथिला नगर था राजा जन
क का॥ तिस विषे आया॥ ऽआइकर राजा के द्वार पर स्थित भया
ऽअरु ज्येष्टीकों कहा॥ जो राजा को जा कहु॥ व्यासजी का पुत्र शुक
जी ऽआन खडा है॥ ज्येष्टी जा कहा॥ तब राजा जानत भया जो जि
ज्ञासा के निमित्त ऽआया है॥ तब कहा॥ जो खडा रहे॥ तब सप्त दि
न खडा रहा॥ बहुड राजे पूछ्या॥ शुकजी जो आया था॥ तब ज्ये
ष्टी कहा खडा है॥ तब राजे कहा॥ ले ऽआवो ऽअंतहपुर विषे॥ सु
दर भोग भुगावो॥ तब ऽअंतहपुर विषे ले गए॥ ऽअंतहपुर की
स्त्रीयों विषे सप्त दिन रह्या॥ तब राजे पूछा॥ ऽअब शुक की क्या
दशा है॥ ऽअरु ऽआगे क्या दशा थी॥ उनो कहा॥ न आगें निरादर क
र शोकवान था॥ ऽअरु न अब भोगों कर प्रसन्न भया है॥ इस प्र
तिष्ट विषे एक समान है॥ जैसे थोडे पवन कर सुमेर चलायमा
न नहीं होता॥ तैसे उह बहि भोगों कर प्रसन्न नहीं॥ ऽअरु निराद
र कर चलायमान नहीं॥ तब राजे कहा ईहां ले आवो॥ जब शुक
जी ऽआया॥ तब राजा उठ्या॥ ऽअरु दोनों बैठ गए॥ तब राजे कहा
हे मुनीश्वर तुम किस निमित्त ऽआए हो॥ तुमको क्या वांछा है॥ जो
कछु वांछा है सो कहो॥ ॥शुकोवाच॥ हे गुरो इह संसार कैसे
उत्पत्ति भया है॥ ऽअरु कैसे शांति होता है॥ सो मुजको कहो॥ हे रा
मजी जब इस प्रकार शुकजी कह्यो॥ तब राजा जनक बोल
या॥ यथा शास्त्र॥ जो कछु व्यासजी कहा था॥ सोई राजे कह्या
तब बहुड शुकजी कहा॥ हे भगवन जो कछु तुमों कहा है॥
सोई पिताजी कहा था॥ ऽअरु सोई शास्त्र कहते हैं॥ ऽअरु विचा
र कर के मय भी जानता हों॥ जो इह संसार ऽअपणे चित्त के स्पं
द विषे उठ्या है॥ ऽअरु चित्त के निस्पंद हूयें निवृत्त हो जाता
है॥ पर विश्रांत मुजको नहीं प्राप्त होती॥ ॥जनकोवाच॥
हे मुनीश्वर मय कहा है॥ ऽअरु तूं भी जानता है॥ इसतें उपरंत
जानणे को कछु नहीं॥ इह जगत चित्त के फुरणे कर हूया है॥
ऽअरु चित्त के ऽअफुर हूयें निवृत्त हो जाता है॥ ऽअरु ऽआतम त
त्व नित्य शुद्ध परमानंद स्वरूप केवल चिन्मात्र है॥ तिस
का ऽअभ्यास कर॥ तब तूं विश्रांत को पावेंगा॥ तूं मुक्तिरूप हैं
तेरा यत्न ऽआतमा की ऽओर है॥ दृश्य की ऽओर नहीं॥ हे मुनीश्वर

तें व्यासजी तें अधिक मुजकों जानकर आया हैं॥ अरु हमारी वे
ष्टा बाधतें दृष्ट आवती है॥ अरु तुमारी बाधतें भी नहीं॥ हे रामजी
जब इस प्रकार राजे जनक कहा॥ तब सुकजी सुमेर पर्वत की
कंदरा की उर चले॥ अरु जाय कर निर्विकल्प समाध लगाई॥
दस सहस्र वर्ष निर्विकल्प समाधि विषे स्थित भए॥ बहुड नि
र्वाण हो गए॥ जैंसे तेल विनां दीपक निर्वाण हो जाता है॥ तैंसे नि
र्वाण हो गए॥ जैंसे समुद्र विषे बूंद लीन हो जाती है॥ तैंसे लीन हो ग
ए॥ जैंसे सूर्य का प्रकास संध्या काल विषे सूर्य मों लीन हो जाता है
तैंसे कल्पना रूपी कलंक कों त्याग कर ब्रह्म पद कों प्राप्त भए॥
॥ ॥इति श्री मुमुक्षु प्रकरणे सुकजी निर्वाण वर्ननं
नाम सर्गः॥ १ ॥ विश्वामित्रो वाच॥ हे राजा दसरथ जि
स प्रकार सुकजी था सुधि बुधि॥ तैंसे रामजी हैं॥ जैंसे उसकों वि
श्रांत के निमित्त कछु मार्जन कर्तव्य था॥ तैंसे रामजी कों विश्रां
त के निमित्त कछु मार्जन कर्तव्य है॥ काहे तें जो आवर्ण कर ले हे
रे भोग हैं॥ सो तिन तें इछा इसकी निवृत भई है॥ अरु जो कछु
जानणे योग था॥ सो जाण्या है॥ अरु हम कछु युक्ति बतावणी है
तिस कर इसकों विश्रांत प्राप्त होवेगी॥ जैंसे सुकजी कों थोडे
मार्जन कर विश्रांत प्राप्त भई है॥ तैंसे रामजी कों भी विश्रांत प्रा
प्त होवेगी॥ हे राजन अब रामजी कों भोगां की क्रिया स्पर्श नही
करती॥ जैंसे ज्ञानवान कों अध्यात्मताप स्पर्श नहीं करते॥
तैंसे रामजी कों सरीर की क्रिया स्पर्श नहीं करती॥ जब लग
इसकों आत्मानंद का प्रकास नहीं होता॥ तब लग विषयों
की वासना दूर नही होती॥ जब आत्मानंद प्राप्त होता है॥ तब
विषयवासना कोऊ नहीं रहती॥ जैंसे मारुस्थल विषे वेली न
हीं उपजती॥ तैंसे ज्ञानवान कों विषयवासनां नहीं उतपति हो
ती॥ हे साधो ज्ञानवान जो विषय भोगां का त्याग करता है॥ सो
किसी फल कों धार कर नहीं करता॥ स्वभाविक ज्ञानवान की
विषयवासनां नष्ट हो जाती है॥ जैंसे सूर्य के उदे हूए ते अंधका
र का अभाव हो जाता है॥ तैंसे ज्ञानवान कों विषयवासना का
अभाव भया है॥ तातें रामजी कों किसी भोग पदार्थ की इछा
नहीं॥ विदितवेद्य हूया है॥ पर विश्राम कों अवेक्षा चहता
है॥ तातें सो इक हों जिस कर विश्रांत होवे इसकों॥ हे राजन

इह जो भगवान वसिष्टजी हैं ॥ इनों की युक्त कर विश्रांतवान हो
वेगा ॥ अरु आगे भी इह रघुवंश कुल के गुरु हैं ॥ इनऊं के उ
पदेश द्वारा आगे भी रघुवंशी ज्ञानवान हूए हैं ॥ अरु भगवा
न वसिष्टजी कैसे हैं ॥ जो सर्वज्ञ साहीरूप त्रिकालदर्शी हैं ॥ अ
रु ज्ञान का सूर्य हैं ॥ इनों के उपदेश कर के रामजी आत्मपद
कों प्राप्त होवेगा ॥ हे वसिष्टजी उह ब्रह्माजी का उपदेश तुमारे स्म
रण विषे है किंउ ॥ जो जब हमारा तुमारा विरुध हूया था ॥ तिस
विरुध के शांति अर्थे निगाध पर्वत विषे ब्रह्मा आय कर उपदे
श कीया ॥ अरु विरुध को दूर कीया ॥ अब ऊही उपदेश रामजी
कों करो ॥ इह भी अब निर्मल ज्ञान के पात्र हैं ॥ अरु ज्ञानवान भी
वही हैं ॥ अरु निर्मल शांतरूप भी वही है ॥ जो शुध पात्र विषे युक्त
अर्पण होवे ॥ पात्र विनां युक्त नहीं शोभती ॥ जिस विषे शिष्यभा
व नां होवे ॥ अरु विषय तें विरक्तता न होवे ॥ ऐसा जो अपात्र पुरु
ष है ॥ तिस को उपदेश करणा व्यर्थ है ॥ अरु जो विरक्त होवे ॥ अ
रु शिष्यभाव न होवे ॥ तब भी उपदेश न करे ॥ दोनों कर संयुक्त
होवे ॥ तब उपदेश करे ॥ पात्र विनां उपदेश करणा व्यर्थ है ॥ जैं
से गौ का दूध पवित्र है ॥ पर निजीव की खलडी विषे पाया व्यर्थ
होता है ॥ तैसे अपात्र कों उपदेश करणा व्यर्थ होता है ॥ हे मुनी
श्वर जो शिष्य वैराग्य कर संपन्न होवे ॥ अरु उदार आत्मा होवे ॥
सो तुमारे उपदेश के योग्य है ॥ तुम कैसे हो वीतराग भय क्रोध
तें रहित हो ॥ परम शांतिरूप हो ॥ तांते तुमारे उपदेश का इह पा
त्र है ॥ वाल्मीकोवाच ॥ हे भारद्वाज जब इस प्रकार विश्वामि
त्र कहा ॥ तब नारद अरु व्यासादिक कहा ॥ साधु साधु ॥ अर्थ इह
जो भला कहा भला कहा ॥ जैसे ही यथार्थ है ॥ तब राजा दशरथ
के पास बडे प्रकाश को धारते हूये जो बैठे थे ॥ ब्रह्माजी के पुत्र व
शिष्टजी तिनों ने कहा ॥ हे मुनीश्वर जो तुमों ने कहा ॥ सो हमों ने मा
न्या ॥ ऐसा समर्थ कोऊ नहीं ॥ जो संतों की आज्ञा निवारण करे ॥ हे
साधो ॥ जो राजा दशरथ के पुत्र हैं ॥ तिन सभनों के रिदे विषे जो तम
रूपी अज्ञान है ॥ सो मय ज्ञानरूपी सूर्य कर निवृत्त करेंगा ॥ जैसे
सूर्य के प्रकाश कर अंधकार दूर हो जाता है ॥ तैसे मैं यह इनका अ
ज्ञान दूर करेंगा ॥ हे मुनीश्वर जो कब ब्रह्माजी उपदेश कीया था
सो मुज कों अखंडित स्मरण है ॥ सोई उपदेश करेंगा ॥ तिस क

र रामजी निरसंसे पद कों प्राप्त होवें ॥ वाल्मीकोवाच ॥
इस प्रकार जब वशिष्टजी कहा विश्वामित्र को ॥ तिसके अनं
तर मोक्ष उपाव संगता कहिणे को रामजी के सनमुख होत भया
॥ इति श्री मुमुक्षु प्रकरणे विश्वामित्र वचन वर्ननं
नाम सर्गः ॥ २ ॥ श्री वशिष्ठोवाच ॥ हे रामजी जो कछु
कमलजा ब्रह्माजी मुज को कहा है ॥ जीवों के कल्याण निमित्त ॥
सो भली प्रकार करके मेरे स्मरण विषे आवता है ॥ अब तुज कों
कहता हों ॥ सो सुण ॥ श्री रामोवाच ॥ हे भगवन कछु इक
प्रश्न करणे का अवसर मैं पाया है ॥ तिस संसय को दूर करो
मोक्ष उपाव जो संगता है ॥ सो तो तुम पास नही कहोगे ॥ परइ हे जो
तुमाने कहा ॥ शुकजी विदेहमुक्ति भया ॥ तो भगवान व्यासजी
जो सर्वज्ञ है ॥ सो विदेहमुक्ति किउं न हूए ॥ वशिष्टोवाच ॥
हे रामजी जैसे सूर्य के किरणों विषे त्रिसरेण होती है ॥ पर तिस
की संख्या कछु नही होती ॥ तैसे परम सूर्य की संवेदन रूप कि
रणों विषे जो त्रिलोकी रूपी त्रिसरेण है ॥ सो असंख्य है ॥ तिन
की संख्या कछु नही ॥ अनंत हो कर मिट गई है ॥ अरु अब भी
अनंत है ॥ अरु अनंत ही त्रिलोकीयां ब्रह्म रूपी समुद्र विषे हो
वेंगीयां ॥ सो तिनकी संख्या कछु नही ॥ रामोवाच ॥ हे भग
वन जो आगे व्यतीत होई हैं ॥ अरु जो आगे होवेंगीयां ॥ तिनकी
संख्या केतीइक है ॥ अरु वर्तमान को तो जानते हो ॥ वशिष्टो
वाच ॥ हे रामजी अनंत कोट त्रिलोकीयां के गण उपजे हैं ॥
अरु मिट गए हैं ॥ अरु अनंत होवेंगीयां ॥ अरु अनंत अ
ब हैं ॥ तिनकी संख्या कछु नही ॥ काहे ते जो जीव असंख्य हैं ॥ अ
रु जीव जीव प्रति अपणी अपणी सृष्टि है ॥ जब इह जीव मृतु
होता है ॥ तब उसी स्थान विषे अपणे अंतिवाहक संकल्प रू
पी सरीर विषे इसको बांधव भासि आवते हैं ॥ अरु उसी स्थान
विषे परलोक भासि आवता है ॥ पृथवी अप तेज वायु आका
श पंच भूत भासि आवते हैं ॥ अरु नाना प्रकार की सृष्टि वा
सना के अनुसार भासि आवती है ॥ बहुड़ उहां ते मृतु होता है ॥
तब बहुड़ उहां सृष्टि भासि आवती है ॥ नामरूप संयुक्त उहां
जाग्रत जगत सत होकर पड़ा भासता है ॥ बहुड़ उहां ते ज

बमत्सु होता है॥ तब उस पंचभूत की सृष्टि का अभाव होजा
ता है॥ अरु आवरन भास आवती है॥ अकृत हो के जो जीव होते
हैं॥ तिन को भी इस प्रकार अनुभव होता है॥ इस प्रकार एक ए
क जीव की सृष्टि होती है॥ अरु मिट जाती है॥ तिन की संख्या क
छु नहीं॥ तो ब्रह्म विषे सृष्टों की संख्या कैसे होवे॥ सो कैसा सृ
ष्टा है॥ जैसे पुरुष फेरी लेता है॥ तिस को सर्व पदार्थ भ्रमते दृ
ष्ट आवते हैं॥ जैसे स्वप्न विषे सृष्टि भासती है॥ तैसे जीवों को प
रलोक अरु इहलोक भ्रम करके भासते हैं॥ वास्तव तें जग
त कछु उपजा नहीं॥ एक अद्वैत तत्त्व अपने आप विषे इस्थि
त है॥ तिस विषे द्वैत भ्रम अविद्या करके भासता है॥ जैसे बालि
क को अपने पिछावें विषे वैताल भासता है॥ अरु भय पाव
ता है॥ तैसे अज्ञानी को अपनी कल्पना ही जगत रूप हो भास
ती है॥ हे रामजी इह ब्यास देव जी तो मेरे देषते विषे बतीस वा
र आया है॥ तिस विषे दस तो एक ही प्रकार रूप हुये हैं॥ अ
रु एक ही जैसी क्रिया॥ अरु एक ही जैसा निश्चा हुया है॥ अर
अवर दस समान सम हूए हैं॥ अरु बाहरा विलक्षण आका
र॥ अरु विलक्षण क्रिया चेष्टा हूई है॥ जैसे समुद्र तें तरंग हो
ते हैं॥ केई समान होते हैं॥ केई विलक्षण उठ पडते हैं॥ तैसे व्या
स हूये हैं॥ अरु सम जो दस हूए हैं॥ तिन विषे दसवां व्यास ए
हो है॥ अरु आगे भी होवेंगे॥ अष्ट वार एही महाभारत करेगा
बडे इनतें वीचारवत्ता होकर विदेहमुक्ति होवेगा॥ अरु हम
भी होवेंगे॥ अरु बालमीक भी होवेगा॥ अरु भृगु भी होवेगा
अरु बृहस्पति का पिता अंगिरा भी होवेगा॥ इत्यादिक अव
र भी होवेंगे॥ हे रामजी एक सम ही होते हैं॥ अरु एक विलक्ष
ण होते हैं॥ केई संकल्प कर उडते फिरते हैं॥ आवण जावण
स्वप्न भ्रम की न्याईं पडे देषते हैं॥ अरु वास्तव तें न कोऊ आव
ता है न जाता है॥ न जन्मता है॥ न मरता है॥ इह नाम अज्ञान
करके पडा भासता है॥ विचार कीए तें लिक सता कछु नहीं
हे रामजी जो पुरुष आत्म सत्ता विषे जागा है॥ तिस को द्वैत
भ्रम नहीं भासता॥ उह आत्मा दर्शी सदा शांतिरूप है॥ परमा
नंद स्वरूप है॥ अरु सर्व कलनां तें रहित है॥ ऐसा जो जीवन
मुक्ति पुरुष है॥ तिस को चलाइ कोऊ नहीं सकता॥ ऐसा जो

37

व्यासजी है॥ तिसको सदेहमुक्ति अरु बिदेहमुक्ति की कल
नां कोऊ नहीं॥ सदा अद्वैतरूप है॥ हे रामजी जीवनमुक्ति को
सर्वात्मा सर्व ओर तें पूरण भासता है॥ अरु स्वस्थित रूप है॥ अ
रु निर्वाणपद विषे इस्थित है॥ इति श्री मुमुक्षु प्रकर
णे असंख्य सृष्टि प्रतिपादनं नाम सर्गः॥ ३॥ वसिष्ठ
उवाच॥ हे रामजी जीवनमुक्ति अरु विदेहमुक्ति विषे भे
द कछु नहीं॥ हे रामजी जीवनमुक्ति अरु विदेहमुक्त का अ
नुभव तुमको गतह्वा नहीं भासता॥ काहेतें जो स्वसंवेद्य है॥
अरु जो तिनका भेद भासता है॥ सो असम्यक दर्शी को भास
ता है॥ ज्ञानवान को भेद नहीं भासता॥ हे रामजी पवन नभ ह्यो
विषे अरु॥ जैसे वायु स्पंद रूप होती है॥ तो भी वायु है॥ अर
निस्पंद होता है तो भी वायु है॥ उसके वायुत्व विषे भेद कछु
नहीं॥ स्पंद होवे अथवा निस्पंद होवे॥ अरु अवर जीवों को
स्पंद होता है॥ तो भासती है॥ अरु निस्पंद होती है तो नहीं भा
सती॥ तैसे ज्ञानवान को जीवनमुक्ति अरु विदेहमुक्त विषे भे
द कछु नहीं॥ उसदा अद्वैतरूप है॥ द्वैत कलना ते रहित है
अरु अवर जीवों को उसका सरीर भासता है॥ तब जीवनमु
क्ति कहते हैं॥ जब सरीर अदृष्ट होता है॥ तब विदेहमुक्त क
हते हैं॥ उसको दोनों तुल्य हैं॥ हे रामजी अब[श्रवण कर]गैले तिस संग को
सुण॥ जो सब लोकों का भूषण है॥ जो कछु सिध होता है॥ सो अ
पने पुरुषार्थ कर सिध होता है॥ पर पुरुषार्थ बिनां कछु सि
ध नहीं होता॥ इह जो कहते हैं॥ जो देव करेगा सो होवेगा॥ ते मू
र्ख हैं॥ इह चंद्रमा जो रिदे को शीतल करता है॥ सो इस विषे भी
सीतलता पुरुषार्थ कर हूई है॥ हे रामजी जिस अर्थ की को
ई प्रार्थना करे॥ अरु यत्न करे अथक कर फिरे नहीं॥ तो अव
श्य मेव सिध होता है॥ अरु पुरुष प्रयत्न किस का नाम है सो
सुण॥ संतजन अरु सत्तशास्त्रों के उपदेस को पाय कर तिन
के अनुसार चित्त का विचरणा होवे॥ सो पुरुष प्रयत्न है॥ इ
सतें इतर जो चेष्टा करता है॥ तिसका नाम उनमत्त चेष्टा है॥
अरु जिस निमित्त प्रयत्न करता है॥ सो पावता है॥ एक जीव था

सोउसनेपुरुषप्रयत्नकरइंद्रकीपदवीपाईहै॥ सोत्रिलो
कीकापतिहूयाहै॥ इंद्रकेसिंहासनपरआरूढहोतभया
है॥ हेरामजीआत्मतत्वविषेचेतनसंवितस्पंदरूपहोकर
फुरतीहै॥ उहअपनेपुरुषार्थकरब्रह्माकेपदकोप्राप्तहो
तीहै॥ सोअपनेपुरुषार्थकरहूईहै॥ केवलचैतन्यजोआ
त्मतत्वहै॥ तिसविषेचेतसंवेदनस्पंदरूपहूईहै॥ उहीचेत
नसंवितअपनेपुरुषार्थकरकेगरुडऊपरआरूढविष्णु
रूपहूईहै॥ अरुपुरुषोत्तमकहीताहै॥ अरुउहीचेतनसं
वितअपनेपुरुषार्थकरकरुद्ररूपहूईहै॥ अर्धंगपार्वतीको
धाररहाहै॥ अरुमस्तकविषेचंद्रमाकोधारयाहै॥ परम
शांतिरूपनीलकंठहै॥ तांतेजोकछुसिधहोताहै॥ सोअ
पनेपुरुषार्थकरसिधहोताहै॥ हेरामजीपुरुषप्रयत्नवा
लाजोसुमेरकोलोजनकीयाचाहे॥ तोभीहोताहै॥ तैसेजोपूर
वदिनदुःकृतकीयाहोवे॥ अरुअगलेदिनसुकृतकरीये॥
तोदुःकृतदूरहोजाताहै॥ जोकोउअपनेहाथोंकरचरणा
मृतभीनहीलेसकता॥ अरुपुरुषार्थकरकेउहभीपृथ
वीकेखंडखंडकरणेकोसमर्थहोताहै॥ इतिश्रीमुमुक्षु
प्रकरणेपुरुषार्थवर्ननंनामसर्गः॥४॥ वसिष्टोवा
च॥ हेरामजीजोकछुचित्तवांछाकरताहै॥ अरुशास्त्रोंके सोंकरताहै
अनुसारपुरुषार्थनहींकरता॥ सोसुखकोनहीपावता॥ उ
सकीउनमत्तचेष्टाहै॥ अरुपुरुषार्थभीदोप्रकारकेहैं॥ एक
शास्त्रअनुसारहै॥ एकशास्त्रविरुधहै॥ यथाशास्त्रविध
कोत्यागकरअपनीइच्छाकेअनुसारविचरताहै॥ सोसिध
ताकोनपावेगा॥ अरुजोशास्त्रकेअनुसारपुरुषार्थकरे॥
तिसकरसिधताकोपावेगा॥ अरुदुःखीभीनहोवेगा॥ जोअ
नुभवतेंस्मृतिहोतीहै॥ अरुस्मृतितेंअनुभवहोताहै॥ सोदो
नोंपुरुषार्थकरहोतेहैं॥ दैवतोकछुनहूयाकिंउ॥ हेरामजी
अवरदैवकोउनहीं॥ इसकाकीयाइसकोप्राप्तहोताहै॥ अ
रुजोबलिष्टहोताहै॥ तिनकेअनुसारविचरताहै॥ जोपूर्व
लासंस्कारबलीहोताहै॥ तोउसकीजयहोतीहै॥ अरुजो

क्रियमाण कर्म बली होता है॥ तो उसकी जय होती है॥ हे राम
जी इह जो सतसंग करता है॥ अरु सतशास्त्र विचारता है॥
बहुड विषयों की ओर दौडता है॥ तब पूर्वला संसकार ब
ली र्जणीता है॥ तिसकर इस्थिर नहीं हो सकता॥ ऐसे जान
कर तुज पुरुषप्रयत्न का त्याग नहीं करणा॥ जो पूर्वला सं
सकार बली भी होवे॥ पर सतसंग अरु सतशास्त्रों का अभ्या
स करे॥ तो पूर्वले संस्कार को पुरुषप्रयत्न कर जीत लेता
है॥ जैसे पूर्वले दिन विषे दुःकृत कीया होवे॥ अरु आगले दि
न सुकृत करे॥ तो पिछले का अभाव हो जाता है॥ तैसे पुरु
षार्थ कर सिध्यता होती है॥ सो पुरुषार्थ क्या है॥ अरु तिसकर
सिध क्या होता है॥ सो सुण॥ ज्ञानवान जो संत हैं॥ अरु सतशा
स्त्र जो ब्रह्मविद्या है॥ तिसके अर्थ अनुसार प्रयत्न करणा
इसी का नाम पुरुषार्थ है॥ अरु पुरुषार्थ कर पावणे योग
आत्मा है॥ जिसके पाए तें संसारसमुद्र के पार होवे॥ हे रा
मजी जो कछु सिध होणा है॥ इसको अपणे पुरुषप्रयत्न क
र होणा है॥ अवर दैव कोऊ नहीं॥ अरु जो शास्त्र के अनुसा
र पुरुषार्थ को त्याग कर कहते हैं॥ जो कछु करणा है सो दै
व करणा है॥ सो मानुषों विषे गर्दन हैं॥ तिनका संग न करीए
इनों की संगत करणी दुःखों का कारण है॥ इस पुरुष को प्र
थम तो इह कर्तव्य है॥ जो अपणे वर्णाश्रम को ग्रहण करणा
और के स्वभाव का त्याग करणा॥ बहुड संतों का संग अरु स
तशास्त्रों का विचार करणा॥ तिनकर अपणे गुण दोषों को
विचारणा॥ जो दिन रात्र विषे शुभ मय क्या करता हों॥ अरु
अशुभ क्या करता हों॥ आगे गुण अरु दोषों का साक्षी होक
र॥ जो गुण हैं संतोष धैर्य वैराग्य विचार अभ्यास तिन कों
वधावणा॥ अरु दोष जो इनतें विपर्यय हैं॥ तिनका त्याग क
रणा॥ सो जब ऐसे पुरुषार्थ को अंगीकार करेगा॥ तब पर
मानंद स्वरूप आत्मा को प्राप्त होवेगा॥ तातें हे रामजी पाइ
ल दूये मृग की न्याई नहीं होवणा॥ जो घास तृण पत्र को रसी
ला जानकर पडा चुगता है॥ तैसे इस्त्री पुत्र धनादिक विषे

मगन नही होवणा ॥ इनतें विरक्त होवणा है ॥ दंतोंसों दंत मिला
इकर संसार समुद्र के पार होवणे का यत्न करो ॥ अरु बल
कर बंधन को तोड कर निकस जावणा ॥ जैसे केसरी सिंह
बल करके पिंजरे सों निकस जाता है ॥ तैसे बंधन को तोड
कर निकस जावणा ॥ एही पुरुषार्थ है ॥ हे रामजी जिसको
कछु सिद्धता प्राप्त भई है ॥ सो अपणे पुरुषार्थ कर भई है ॥
पुरुषार्थ विनां नही होती ॥ जैसे प्रकाश बिनां पदार्थ का प्र
मन नही होता ॥ जिन पुरुषों ने अपणा पुरुषार्थ त्यागा है ॥ अ
रु दैव के आश्रित हूये हैं ॥ जो हमारा कल्याण दैव करेगा ॥ सो
कदाचित न होवेगा ॥ जैसे पत्थरों तें तेल निकास्या चाहे ॥ तो
नही निकसता ॥ तैसे उनका कल्याण न होवेगा ॥ हे रामजी
तुम दैव का आश्रय त्याग कर अपले पुरुषार्थ को आश्रय
करो ॥ जिन अपनां पुरुषार्थ त्यागा है ॥ तिनको सुंदर कांति
लक्ष्मी त्याग जाती है ॥ उनकी कांत लघु हो जाती है ॥ जैसे वसं
त रुत की मंजरी वसंत रुत गए तें विरस हो जाती है ॥ तैसे उ
सकी कांति लघु हो जाती है ॥ जिन पुरुषों ऐसे निश्चय की
या है ॥ जो हमारे पालनेंहारा दैव है ॥ ते पुरुष ऐसे हैं ॥ जैसे
कोऊ पुरुष अपणी भुजा को सर्प जान कर डरे ॥ अरु भ
य को पावे ॥ जाणे नही जो मेरी भुजा है ॥ तैसे अपले पुरुषार्थ
को त्याग कर दैव का आश्रय लेते हैं ॥ सो भय को पावते हैं ॥ अ
र इसका नाम पुरुषार्थ है ॥ जो सतसंग अरु सतशास्त्रों को
विचारे ॥ तिनके अनुसार विचरणा ॥ अरु जो इनको त्याग क
र अपणी इच्छा के अनुसार विचरते हैं ॥ ते इहां भी सुख न पा
वेंगे ॥ अरु आगे भी सुख न पावेंगे ॥ दुह नेलहे ॥ हे रामजी जैसे
इह आदि नेत कूई है ॥ जो पट है सो पट ही है ॥ जो घट है सो घ
ट ही है ॥ पट है सो घट नही होता ॥ घट है सो पट नही होता ॥ तै
से इह भी नित कूई है ॥ जो पुरुषार्थ अपले बिनां परमपद की
प्राप्त नही होती ॥ हे रामजी जो संतों की संगत करता है ॥ अरु
सतशास्त्र भी विचारता है ॥ अरु उनके अर्थ विषे पुरुषार्थ
नही करता ॥ अर्थ इह जो आत्म अभ्यास नही करता ॥ तिस

कों सिधता नही प्राप्त होती ॥ जैसे अमृतके कुंडके निकट भी
बैठा होवे ॥ परपान कीये बिनां अमर नही होता ॥ तैसे आत
म अभ्यास बिनां सिधता नही होती ॥ हे रामजी अग्यानी जी
व अपणे जीवणे अर्थ खोवते हैं ॥ जब बालिक होता है ॥ त
ब मूढ अवस्था विषे लीन होता है ॥ अर युवा अवस्था विषे
विकारों कों सेवते हैं ॥ अरु जरा अवस्था विषे जर्जरीभाव
होकर मृत्यु हो जाता है ॥ इसी प्रकार कर जीवणें अर्थ खो
वते हैं ॥ अरु जो अपणें पुरुषार्थ त्याग कर दैवका आश्र
य करते हैं ॥ सो आत्महंता हैं ॥ सो सुख न पावेंगे ॥ हे रामजी
जो पुरुष ब्यवहार अरु परमार्थ विषे आलसी भए हैं ॥ सो
दीनता कों प्राप्त होवेंगे ॥ इह मैं विचार कर देष्या है ॥ तांतें तु
म अपणे पुरुषार्थ को आश्रय करो ॥ सतसंग अरु शास्त्रों
रूपी आदर्श कर गुण दोषों कों देषकर ॥ दोषों का त्याग
करणा ॥ अरु गुणों का ग्रहण करणा ॥ जब गुणों का ग्रह
ण करोगे ॥ तब आनंदी होवोगे ॥ वाल्मीकोवाच ॥ हे भा
रद्वाज जब इस प्रकार वसिष्टजी कहा ॥ तब सायंकाल का
समा हूया ॥ सब सभा स्नान कों गए ॥ परस्पर नमस्कार कर
के ॥ बहुड सूर्य की किरणों साथ आन इस्थित भए ॥ इति
श्री मुमुक्षु प्रकरणे पुरुषार्थ वर्ननं नाम सर्गः ॥
॥५॥ वसिष्टोवाच ॥ हे रामजी इसका जो कोऊ पूर्वला पु
रुषार्थ है ॥ तिसी का नाम दैव है ॥ अवर दैव कोऊ नही ॥ ज
ब इह सतसंग अरु सतशास्त्रों के विचार द्वारा पुरुषार्थ
करे ॥ तब पूर्वले संस्कार कों जीत लेता है ॥ हे रामजी इसके
पूर्वले पुरुषार्थ का नाम दैव है ॥ अरु अवर दैव कोऊ न
ही ॥ जो अवर दैव कल्पते हैं ॥ ते मूर्ष हैं ॥ जो पूर्वले दिन सुकृ
त कर आया होता है ॥ तब उही सुष होकर दिषाई देता
है ॥ जो पूर्वला संस्कार बली होता है ॥ तब उसकी जय
होती है ॥ अरु जो पुरुषार्थ बली होता है ॥ तब इसकी
जय होती है ॥ तांतें जो कछु प्राप्त होता है ॥ सो इसी के पु
रुषार्थ कर सिध होता है ॥ जो इक त्रैभाव होकर पुरु

षग यत्न करणा॥ इसी का नाम पुरुषार्थ हे॥ जिसका यतन
इकत्र भाव हो कर करेगा॥ तिसको अवश्य मेव पावेगा॥
तातें तुम संतजनों अरु सतशास्त्रों के वचनों कर युक्त
सों आत्म अभ्यास करो॥ इसी का नाम पुरुषार्थ हे॥ जैसे
ग का आकार पदार्थ का ज्ञान होता हे॥ तैसे पुरुषार्थ कर
के आत्मपद की प्राप्त होती हे॥ हे रामजी श्रेष्ट पुरुष तेई
हें॥ जिन सतसंग अरु सतशास्त्रों द्वारा बुध को तीक्ष्ण
करके संसार समुद्र के तरणे का पुरुषार्थ कीया हे॥
अरु जो पुरुषार्थ को त्याग बैठे हें॥ ते पुरुष नीच तें नीच
गति को पावेंगे॥ अरु जो श्रेष्ट पुरुष हें॥ सो अपणे पुरु
षार्थ करके परमानंद को प्राप्त होते हें॥ जिसको पायक
र बहुरु दुःखी नही होते॥ अरु जो देषणे मात्र दृष्ट आव
ते हें दीन॥ सो उत्तम पद को प्राप्त भए हें॥ पुरुषार्थ करके॥
हे रामजी इस जीव को संसार रूपी विसूचिका रोग ला
गा हे॥ तिसके दूर करणे का उपाव सुण॥ संतजनों अरु स
तशास्त्रों के अर्थ विषे दृढ भावना करणी॥ जो कछु ति
नकुं ते सुण्या हे॥ तिसका बारंबार अभ्यास करे॥ अरु अ
वर सभ भावनों का त्याग करे॥ तब इसको परमपद की
प्राप्त होवेगी॥ अरु द्वैत भ्रम निवर्त हो जावेगा॥ अद्वैत रू
प आत्मा पद भासेगा॥ इसका नाम पुरुषार्थ हे॥ इति
श्री मुमुक्षु प्रकरणे परम पुरुषार्थ वर्ननं नाम स
र्गः॥ ६॥ श्री वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी इस जीव को अ
पुरुषार्थ करके अध्यात्मताप आन लागते हें॥ तिसक
र सदा दुःखी पडा होता हे॥ शांति नही पावता॥ तुम रोगी
नही होवणा॥ अपणे पुरुषार्थ द्वारा जन्म मरण के बंध
न तें मुक्त होवणा॥ जिन पुरुषों नें अपणा पुरुषार्थ त्या
ग्या हे॥ अरु अवर किसी देव को मान कर तिस परायण
हूये हें॥ तिसका धर्म अर्थ काम मोक्ष नष्ट हो जाता हे॥
अरु अधम तें अधम गति को पावते हें॥ हे रामजी सुध
चेतन जो इसका अपणा आप हे॥ अरु वास्तव रूप हे

तिस के आश्रय हूआ है ॥ आदि चित संवेदन फुरी है
अहं अस्मि ॥ तब मन होकर फुरणे लागा है ॥ बहुर इंद्री
यां फुरती हैं ॥ बहुर इह फुरणा संतरु शास्त्रों के अनुसार
होवे ॥ तब इह पुरुष परम संपदा को प्राप्त होता है ॥ जो स
तशास्त्रों के अनुसार होवे ॥ तब वासना के अनुसार ज
म जाल विषे पड़ा नटकता है ॥ घटीयंत्र की न्याई ॥ शांत
वान कबहूं नहीं होता ॥ हे रामजी जिस किसी को सिधता
प्राप्त भई है ॥ सो पुरुषार्थ कर भई है ॥ जब किसी पदार्थ
को ग्रहण करणा होता है ॥ भुजा पसारीये तब ग्रहण हो
ता है ॥ अरु जो किसी देस को जावणा होता है ॥ जब चर
णों कर चलता है ॥ तब पहुंचता है ॥ तां ते देव जो पुरुषार्थ
विनां सिध कछु न हूया किंतु ॥ जो कोऊ देव के आश्रय र
हता है ॥ सो मूर्ख है ॥ हे रामजी जो अपना पुरुषार्थ त्याग क
र देव के आश्रये हो रहेगा ॥ तब उह सिधता को न पावे
गा ॥ काहे तें जो अपणे पुरुषार्थ विनां सिधता किसी को
नहीं प्राप्त होती ॥ अरु वृहस्पति जी जो धड पुरुषार्थ की
या है ॥ तब संपूर्ण देवतों के राजा का गुरु हूया है ॥ अरु
शुक्र जी अपणे पुरुषार्थ कर सर्व दैत्यों का गुरु हूया है ॥
अवर जो समान जीव हैं ॥ जिस पुरुष प्रयतन कीया है ॥
सो पुरुष उत्तम हूया है ॥ तां ते जिस किसी को सिधता प्रा
प्त भई है ॥ सो पुरुषार्थ कर भई है ॥ अरु जिनहुं अपणा
पुरुषार्थ त्यागा है ॥ तिन की सर्व संपदा मरे देवतें ही नास
होगई है ॥ अरु नरकों विषे पड़े जलते हैं ॥ जिस कर अर्थ
सिध होवे ॥ तिस का नाम पुरुषार्थ है ॥ हे रामजी इस पुरुष
को कर्तव्य एही है ॥ जो सतसंग अरु सत शास्त्रों को विचा
र कर बुधि को तीक्ष्ण करे ॥ अरु शुभ गुणों को पुष्ट क
रे ॥ दया धीर्य संतोष वैराग अभ्यास कर के बुध तीक्ष
ण करे ॥ तीक्ष्ण बुधि कर इन गुणों को पुष्ट करे ॥ हे रा
मजी सतसंग अरु सत शास्त्रों के अनुसार विचरणा ॥
अरु इंद्रीयों को शुभ मार्ग लगावणा ॥ तिस कर राग

इष तुज को स्पर्स न करेंगे ॥ समतें निर्लेप रहेंगा ॥ जैसे जल
तें कमल निर्लेप रहता है ॥ तैसे तूं निर्लेप रहेंगा ॥ हे रामजी
जिन महापुरुषों ने शांति प्राप्त होवे ॥ तिनकी भली प्रकार
सेवा करनी ॥ आज्ञा माननी ॥ काहे ते जो उनका वचन उपका
र है ॥ जो संसार समुद्र तें ईहां निकासते हैं ॥ हे रामजी संतजन
न भी उहा है ॥ अरु सत शास्त्र भी उहा है ॥ जिसकी संगत क
र चित्त उपशम होवे सुखी होणे का उपाव एही है ॥ तांते से
न अवेर कलना को त्याग कर अपने पुरुषार्थ को अंगी
कार करो ॥ तब जन्म मरण का भय निवृत होवे ॥ हे रामजी
जिसकी इह वांछा करता है ॥ अरु जिसके निमित पुरुषार्थ
करता है ॥ तब अवश्य मेव तिसको पावता है ॥ अरु जो वदे
ते जकर हृष्ट आवते हैं ॥ सो भी अपने पुरुषार्थ कर के हूए
हैं ॥ हे रामजी जनार्दन जो विष्णुजी है ॥ सो भी अवतार धार के
र दैत्यों को मारता है ॥ अरु अवर चेष्टा भी करता है ॥ परपाप
का स्पर्श तिसको कछु नहीं लागता ॥ काहे तें जो अपने पु
रुषार्थ कर के अक्षय पद को प्राप्त हूया है ॥ तुम भी पुरु
षार्थ को आश्रय करो ॥ तब संसार सागर को तरजावो
॥ इति श्री मुमुक्षु प्रकरणे पुरुषार्थ उपमा वर्ननं नं ना
म सर्गः ॥ ७ ॥ श्री वसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी इह जो देव
शब्द है ॥ सो मूरखों ने कल्पा है ॥ जो दैव हमारी रक्षा करे
गा ॥ हमको तो दैव का आकार दृष्ट नहीं आवता ॥ अवर दैव
कोऊ नहीं ॥ इसके पुरुषार्थ का नाम दैव है ॥ हे रामजी जिन पु
रुषों ने अपने पुरुषार्थ त्याग कीया है ॥ अरु दैव परायण
हूये हैं ॥ जो दैव हमारा कल्याण करेगा ॥ ते महा मूर्ख हैं ॥ हे रा
मजी जो इसका कीया कछु न होता ॥ अरु दैव करणे हारा हो
ता ॥ तब शास्त्र अरु गुरों का उपदेस भी न होता ॥ संतों अरु शास्त्रा
लों के उपदेस कर के अपने पुरुषार्थ द्वारा इसको वांछित
पद की प्राप्त होती है ॥ तांते अवर जो कोऊ दैव शब्द है ॥ सो व्य
र्थ है ॥ इस भ्रम को त्याग कर ॥ संतजन अरु शास्त्रों के अनु
सार पुरुषार्थ करे ॥ तब ही परमानंद सुख को पावे ॥ हे रामजी
पुरुषार्थ की वार्ता तो अज्ञानी भी प्रसिध कहते हैं ॥ जो अप

जो कोऊ अवर दैव कर(द्वारा)णे होता तो जब इह शरीर को त्यागता है अर शरीर शव होजाता है तब या शरीर सों कछु होती नहीं काहे ते
चेष्टा करणे हारा त्याग जाता है तो शव शरीर सों भी चेष्टा करवता सो चेष्टा कछु नहीं होती तांते जाणीता है जो दैव शब्द व्यर्थ है ॥ हेराम २

41 ले पुरुषार्थ कर सम कछु होता है॥ पुरुषार्थ विनां कछु न
ही होता॥ गोपाल भी जानता है॥ जो मय गोवों को चरावें नहीं
तो न्रषी ही रहें॥ तांते अवर दैव के आश्रय नही बैठता॥ आ
पे ही चरा लावता है॥ हे रामजी अवर दैव की कल्पनां भ्र
म कर के पडे करते हैं॥ अवर दैव तो हमको कोऊ दृष्ट नहीं
आवता॥ अपणे पुरुषार्थ कर सिधता दृष्ट आवती है॥
हे रामजी इह जो विश्वामित्र है॥ इनों दैव शब्द कों त्याग क
र के पुरुषार्थ को आश्रय कीया है॥ तांते ह्न त्री तें ब्रा
म्हण क्रूया है॥ जो ते अवर रुषीश्वर मुनीश्वर तत्व
वान क्रूये हैं॥ सो भी अपनें पुरुषार्थ कर क्रूये हैं॥ हे रा
मजी जो बिनां पडे को कोऊ पंडित होवे॥ तो भी जानीये
जो दैव कीया॥ सो पडे ते विनां पंडित नही होता॥ अरु
अत्तानी जो त्तानवान क्रूये हैं॥ सो अपणे पुरुषार्थ
कर क्रूये हैं॥ तांते अवर दैव कोऊ नहीं॥ मिथ्या भ्रम को
त्याग कर॥ संतजन अरु सतशास्त्रों के अनुसार सं
सार समुद्र तरणे का उपाव करो॥ तेरे पुरुषार्थ विनां
अवर दैव कोऊ नहीं॥ तांते अपणे पुरुषार्थ विनां सिध
कछु नहीं होता॥ अरु इस का कीया कछु न होता॥ तो
पाप करणे हारा नर्क को न जाता॥ अरु पुन्य करणे वा
ला स्वर्ग न जाता॥ तांते जो कछु प्राप्त होता है॥ सो अपणे
पुरुषार्थ कर होता है॥ हे रामजी जो कोऊ अवर दैव
करता होवे॥ तो इसका सिर काटीए॥ अरु दैव के आ
श्रय जीवता रहे॥ सो तो सिर विनां जीवता नहीं॥ तांते दै
व शब्द को त्याग कर॥ संतजनों अरु सतशास्त्रों के अ
नुसार अपणा पुरुषार्थ कर॥ तब आत्मपद विषे इ(
स्थित पावेंगा॥ ॥इति श्री मुमुक्षु प्रकरणे परम पुरु
षार्थ वर्ननं नाम सर्गः॥ ८ ॥रामोवाच॥ हे भगव
न सर्व धर्मों के वेता तुम कहते हो॥ अवर दैव कोऊ नहीं
अरु दैव शब्द तो है॥ सो जो ललमी कहते हैं॥ जो दैव

काकीयासमनकछु होता है॥ अरु दुःखसुखके देणेहारा
भीदैवहै॥ इहलोकोविषेप्रसिधहै॥ वसिष्ठोवाच॥
हेरामजीमयतुजकोंअैसेकहताहों॥ जोअमतेशलिव
तेहोवे॥ इसहीकाजोशुभअशुभकीयाकूया औक
र्महै॥ तिसकाफलअवश्यमेवभोगताहै॥ सोईदैवकही
ताहै॥ अरुपुरुषार्थकहीताहै॥ अवरदैवकोऊनही
कर्त्ताक्रियाकर्मादिकोंविषेभीदैवशब्दकोऊनहीं॥
हेरामजीमर्खोंकेपरचावणेनमितदैवशब्दकहाहै॥
जैसेआकासशून्यहै॥ तैसेदैवशब्दशून्यहै॥ रामोवा
च॥ हेभगवनसर्वधर्मोकेवेतातुमकहतेहो॥ जोदैवको
ऊनहीं॥ आकासवतशून्यहै॥ सोतुमारेकहणेकरभी
दैवसिधहोताहै॥ जैसेतुमकहतेहो॥ इसकेपुरुषार्थ
कानामदैवहै॥ अरुजगतविषेभीदैवशब्दप्रसिधहै
॥ वसिष्ठोवाच॥ हेरामजीमयअैसेतुजकोंकहताहों
जिसकरतेरेरिदेसोंदैवशब्दउठजावे॥ दैवनामअ
पनेंपुरुषार्थकाहै॥ अरुपुरुषार्थनामकर्मकाहै॥
अरुकर्मनामवासनाकाहै॥ अरुवासनांमनतेंहोती
है॥ अरुमनरूपीपुरुषहै॥ जैसीवासनांकरतीहै॥ सोई
प्राप्तहोतीहै॥ भलीवासनाकरेतोभलीहोतीहै॥ अरु
बुरीवासनांकरेतोबुरीहोतीहै॥ तांतेअवरदैवकोऊ
नहीं॥ पूर्वलाजोकोऊदृढपुरुषार्थकीयाकूयाहै॥ ति
सहीकानामदैवहै॥ हेरामजीविचारकररकेदेष॥ जोअ
पणेपुरुषार्थकर्मोतेंभिन्नसुषदुःखदेणेहाराअवर
दैवकोऊनहीं॥ पूर्वलाजोकोऊदृढपुरुषार्थकीयाहै॥
तिसहीकानामदैवहै॥ इहजोपापकर्मकीवासनाक
र्ताहै॥ सोकिसकरकर्ताहै॥ पूर्वलाजोपापकर्मकाअ
भ्यासहै॥ तिसकरइहपापकर्मकर्ताहै॥ अरुजोपूर्वला
पुन्यकर्मकीयाहोताहै॥ तोइहशुभमार्गविषेविचरता
है॥ रामोवाच॥ हेमुनीश्वरजोपूर्वलीदृढवासनाकेअ

नुसार इह विचरता है ॥ तो मैं यत्न क्या करों ॥ मुझ को पूर्व ली
वासनां नें दीन कीया है ॥ अब मुझ कों क्या कर्तव्य है ॥ व
सिष्ठोवाच ॥ हे रामजी जो कछु इस की पूर्व ली वासनां
दृड हो रही है ॥ तिस के अनुसार इह विचरता है ॥ पर जो
श्रेष्ट मानुष हैं ॥ सो अपने पुरुषार्थ कर के पूर्व ले मलीन
संस्कार कों दूर करते हैं ॥ ते शुध होते हैं ॥ ज्ञानवानों के वच
नों अनुसार दृड पुरुषार्थ करते हैं ॥ तब मलिन वासनां
दूर हो जाती हैं ॥ हे रामजी श्रेष्ट पुरुष वउ ही है ॥ जिन का पूर्व
ला कर्म अल्प भी मलीन था ॥ अरु संतजन सतशास्त्रों के अ
नुसार नला पुरुषार्थ कीया है ॥ सो सिधता को प्राप्त हूआ
या है ॥ अरु जो मूर्ष हैं ॥ तिननें अपणा पुरुषार्थ त्याग की
या है ॥ अरु पूर्व ले पाप कर्म विषे विचरते हैं ॥ अरु जे श्रेष्ट
पुरुष हैं ॥ तिन को इह कर्तव्य है ॥ प्रथम तो अपनी यां पं
चों इंद्रीयों वस करनी ॥ शास्त्रों के अनुसार तिन को वर्त्त
वणां ॥ जो शुभ वासनां दृड होवे ॥ अरु विरुध वासनां का
त्याग करणा ॥ जदपि त्यागनी दोनों वासना हैं ॥ पर प्रथम
शुभ वासना का ग्रहण करणा ॥ अरु अशुभ वासनां का
त्याग करणा ॥ जब शुभ वासनां कर के कषाइ परपक होवें
गे ॥ अंतह करण शुध होवेगा ॥ तिस विचार द्वारा रिदे वि
षे संतों अरु शास्त्रों का जो है सिधांत ॥ तिस का विचार उ
तपति होवेगा ॥ तिस विचार द्वारा तुझ को आत्मज्ञान की
प्राप्ति होवेगी ॥ जब आत्मपद प्राप्त हूया ॥ तब क्रिया का
तीन भी त्याग हो जावेगा ॥ केवल शुध अद्वैत रूप अपणा
आप भासेगा ॥ तातें हे रामजी सभ कलनां को त्याग कर
संतजन अरु सतशास्त्रों के अनुसार पुरुषार्थ करो ॥
॥ इति श्री मुमुक्षु प्रकरणे परमार्थ वर्ननं नाम स
र्गः ॥ ९ ॥ श्री वसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी मेरे वचनों को ग्र
हण कर ॥ जो बोध वक्ता है ते रे परम मित्र हैं ॥ अरु दुःखों
ते ते री रक्षा करेंगे ॥ हे रामजी इह जो मोक्ष उपाव तुझ को

कहिता हों॥ तिसके अनुसार तूं पुरुषार्थ कर॥ तब पर
म अर्थ तेरा सिध होवेगा॥ इह चित्त जो संसार के भोगों
की ओर धावता है॥ तिन भोगों रूपी गर्त्त विषे चित्त कों
गिडने मत दे॥ भोगों कों विरस जान कर त्यागो॥ इह त्याग
तेरा परम मित्र होवेगा॥ हे रामजी इह मोक्ष उपाव कैसा
है॥ चित्त एकाग्र करके श्रवण कर॥ तिस कर परमानंद
को प्राप्त होवेगी॥ प्रथम शम दम को धार॥ शम अर्थ इह
जो संपूर्ण संसार की वासनां त्याग कर॥ अरु उदारता क
र के तृप्त रहणा॥ अरु दम अर्थ इह॥ जो बाह्य इंद्रीयों कों
वस करणा॥ जब इन कों प्रथम धारेंगा॥ तब परम तत्व
का विचार आन उत्पत्ति होवेगा॥ तिस विचार विवेक द्वा
रा परम पद को प्राप्त होवेगा॥ जिस पद को पाइ कर बहु
ड़ दुःखी न होवेंगा कदाचित॥ इसके अनुसार पुरुषार्थ
कर॥ तब आत्म पद कों प्राप्त होवेंगा॥ पूर्व जो मुझ कों ब्र
ह्मा जी उपदेश कीया है॥ सो मय तुझ कों कहता हों॥ रा
मोवाच॥ हे मुनीश्वर तुझ को ब्रह्मा जी उपदेश कर्या
था॥ सो किस कारण कर कीया था॥ अरु कैसे तुम्हों धा सो
सो कहो॥ वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी शुध चिदाकाश एक
है॥ अरु अनंत है॥ ब्रह्म स्वरूप है॥ अविनाशी है॥ चिदानं
द है॥ तिस विषे जो संवेदन स्पंद हूया है॥ सो विष्णु रूप हो
कर स्थित हूया है॥ सो विष्णु जी कैसा है॥ जो इस्पंद अरु
अस्पंद विषे एक रस है॥ कदाचित अन्यथा भाव को नही
प्राप्त हूया॥ जैसे समुद्र तें तरंग उपजता है॥ तैसे शुध चि
दाकाश तें इस्पंद होकर विष्णु हूया॥ तिस विष्णु जी के स्व
र्ण वत किरणां नाभि कमल तें ब्रह्मा जी प्रगट भया॥ ति
स ब्रह्मा जी रूप मुनीश्वर सहित स्थावर जंगम जगजाव
तपत करी॥ जैसे मनोराज करके कोऊ पुरुष रच लेवे॥ तैसे स
मनोराज कर ब्रह्मा जी जगत कों उत्पत्ति कीया॥ तिस ज
गत की कोण विषे जो जंबूद्वीप भारत खंड है॥ तिस विषे म
नुष्यों कों आतुर देख्या॥ तब ब्रह्मा जी को करुणा उत्पत्ति भई दुःखकर
जैसे पुत्र को देख कर दुःखी पिता को करुणा उपजती है॥

तैसे इनो के सुख निमित ब्रह्माजी ने तप कौं उतपति कीया॥
जो तप करके बहुड़ सुखी होवें॥ स्वर्गादिक सुखों को भो
गें॥ तिन सुखों कौं भोग कर बहुड़ गिडें दुःखी होवें॥ ऐं
से देख कर ब्रह्माजी सत बोलणा॥ अरु दया आदिक
धर्म की गत पादन करते भए॥ तब लोकों को सुख हो
णे लागा॥ तहां केतक काल सुख को भोग कर बहुड़ दुः
खी रहें॥ हे रामजी ब्रह्माजी विचारते भया॥ जो इन का
दुःख आत्मज्ञान विनां निवृत्त न होवेगा॥ तां ते आत्म
ज्ञान को उतपति करीए॥ जो इह सुखी होवें॥ इस प्रकार
विचार कर ब्रह्माजी आत्मतत्व का अनुभव करते भया
जब आत्मतत्व के ज्ञान का संकल्प कीया॥ तिस ध्यान क
रके शुद्ध जो ज्ञान है॥ तिस की मूर्त हो कर मय प्रगट भ
या॥ सो मय कैसा हों॥ जो ब्रह्माजी के समान हों॥ ज्ञान ब
ल गुणों समसमान हैं॥ जैसे उन के हाथ विषे कमंडल
अरु गले विषे रुद्राक्ष की माला है॥ तैसे मेरे हाथ विषे
कमंडल गले विषे रुद्राक्ष की माला है॥ जैसे उस पर
मृगछाला है॥ तैसे मेरे ऊपर मृगछाला है॥ इस प्रकार
मेरा अरु ब्रह्माजी का समान आकार है॥ अरु स्वरूप मे
रा शुद्ध ज्ञानरूप है॥ तां ते जगत मुज कौं कछु न भासे॥
सुषुप्तवत मुज कौं जगत भासे॥ तब ब्रह्माजी विचार क
रा॥ जो इस कौं तो मय जीवों के कल्याण निमित उतपति
कीया है॥ अरु इह तो शुद्ध ज्ञान स्वरूप है॥ अरु ज्ञान का
उपदेस मांगत ब होवे॥ जब कछु प्रश्न उतर होवे॥ त
त्व अरु मिथ्या का विचार होवे॥ हे रामजी जीवों के क
ल्याण निमित मुज कौं गोद विषे बैठाया॥ अरु सीस प
र हाथ फेरा॥ तिस कर मय शीतल भया॥ तब ब्रह्माजी
मुज कौं कहा॥ जैसे हंस को हंस कहे॥ तैसे मुज कौं कहा
हे पुत्र जीवों के कल्याण निमित एक मुहूर्त पर्यंत तं
अज्ञान कौं अंगीकार कर॥ श्रेष्ट पुरुष अवर लोकों
के कल्याण निमित अंगीकार करते हैं॥ जैसे चंद्रमा
निर्मल बहुत है॥ अरु श्यामता कौं अंगीकार करता है॥

तैसे तुमभी एक मुहूर्त पर्यंत अज्ञान को अंगीकार क
रो॥ हे रामजी इस प्रकार मुझ कों ब्रह्माजी कहि कर आ
प दीया॥ जो तूं अज्ञानी होवैंगा॥ तब मय ब्रह्माजी की आ
ज्ञा मान कर आप का अंगीकार कीया॥ तब मेरा शुध
आतम तत्व अपणा आप था॥ तिस तें मय अन्य की
न्याई होत भया॥ आपणी स्वभाव सत्ता विस्मरण होग
ई॥ तिस का विस्मरण होणे मेरा मन जाग आया॥ अरु
भाव अभाव रूप जगत भासणे लागा॥ अरु आप को
मय वसिष्ट जाणत भया॥ अरु ब्रह्माजी का पुत्र जान
त भया॥ अरु पदार्थों की ओर चेचल होत भया॥ तब
मय संसार को महा दुःख रूप जान कर ब्रह्माजी सों पू
छत भया॥ हे भगवन इह संसार कैसे उतपति हूया
है॥ अरु कैसे लीन होता है॥ हे रामजी जब इस प्रकार
पितामह जी कों मय प्रश्न कीया॥ तब भली प्रकार मुझ
को उपदेस करत भया॥ तिस कर मेरा अज्ञान निवृत्त
भया॥ तब मय शुध आत्मा को प्राप्त हूया॥ जैसे आदर्श को
मार्जन करीता है॥ तब शुध हो आवता है॥ तैसे मय शु
ध हूया॥ हे रामजी मय कैसा हों॥ जो ब्रह्माजी तें भी अ
धिक हों॥ तब मुझ को परमेष्टी ब्रह्माजी नें आज्ञा क
री॥ हे पुत्र तूं जंबूद्वीप भारथ खंड विषे जाउ॥ तुझ को
सृष्टि पर्यंत अधिकार है॥ तहां जाउ जीवों को उपदेस
करो॥ जिनों को संसार के सुख का इछा होवे॥ तिनों कों
कर्मों का उपदेस करणा॥ तिस कर स्वर्गादिक सुख भो
गें॥ अरु जो संसार तें विरक्त होवें॥ अरु आतम पद की
इछा होवै॥ तिन को ज्ञान का उपदेस करणा॥ तां ते अब
तें भूमलोक विषे जाउ॥ हे रामजी मेरा उपजणा अरु
आवणा अरु उपदेसणा हूया है॥ सो इस प्रकार हूया
है॥ इति श्री मुमुक्षु प्रकरणे ज्ञान अवतार वर्ननं नाम
म सर्गः॥ १०॥ श्री वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी मय इस प्र
कार पृथवी पर आवता भया हूं॥ कैसा मय हूं॥ जो ज्ञा

44

नहीं वांछित है॥ जिसकों तिसकर ब्रह्माजी मुझकों उ
तपति करत भया॥ रामोवाच॥ हे भगवन तिस ज्ञा
न के उपजणे के अनंतर जीवों की बुध कैसे होत भई
॥वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी शुध आतम तत्व जो है
तिसका स्वभाव रूप संवेदन फुरती है॥ सो ब्रह्मा रूप हो
कर इस्थित भई है॥ जैसे समुद्र अपणी द्रवता कर के
तरंग रूप होणा सत्ता है॥ तैसे ब्रह्माजी होत भया है॥ ब
ड़े संपूर्ण जगत उतपति कीया॥ अरु तीनों काल उत
पति उतपती कीए॥ तब केता काल व्यतीत भया॥ अरु कल
युग आया॥ तिसकर जीवों की बुध मलिन होगई॥ अरु
पाप विषे विचरणे लागे॥ शास्त्र वेद की आज्ञा तें रहि
त भए॥ इस प्रकार धर्म की मर्यादा लुपन होगई॥ पाप प्र
गट भया॥ जेती कछु राज अरु धर्म की मर्यादा थी सो स
भ नष्ट होगई॥ तब जीव कष्ट पावणे लागे॥ तिनों को दे
ख कर ब्रह्माजी को करुणा उपजी॥ तिस करुणा कर मु
झकों भूमलोक में भेज्या॥ हे पुत्र तुम जाय कर धर्म की म
र्यादा स्थापन करो॥ अरु जीवों को उपदेस करो॥ जिनकों
भोगों की इछा होवे॥ तिनकों कर्मकांड का उपदेस करणा
जप तप स्नानादिक यज्ञों कर्मकांड का उपदेस करणा॥
अरु जो संसार तें विरक्त होवें॥ अरु मोक्ष की इछा करें
तिनको ब्रह्मविद्या का उपदेस करणा॥ हे रामजी मुझकों
इस प्रकार कहि भेज्या॥ तैसे ही सनतकुमार आदिकों को
भी कहत भये॥ अरु नारदादिकों को भी कहत भए॥ तब
हम सभी रिषीश्वर एकठे होकर विचार करत भए॥ जो
किसी प्रकार जगत की मर्यादा होवे॥ अरु जीव शुभ मार्ग
विषे विचरें॥ तब हमों ने इह विचार कीया॥ जो प्रथम रा
जों का स्थापन (इस्थित) करीए॥ जो जीव तिनों की आज्ञा अनुसा
र विचरें॥ तब हमों ने राजे स्थापन कीए॥ कैसे राजे जो ब
डे वीर्यवान अरु तेजवान॥ बडे उदारात्मा सो राजे होत
भए॥ तिन राजों को हम अध्यात्म विद्या उपदेस करी॥

तिन उपदेसकौं पायके परमपदको प्रापुत होत भए॥ जो परमा
नंद अविनासीपद है॥ तिन ब्रह्मविद्याका उपदेस तिन
को कीया॥ तब उह सुखी हूये॥ इस कारणतें ब्रह्मविद्याका
नाम राजविद्या है॥ तब हमौंनें वेद शास्त्र स्मृति पुराण
कर धर्मकी मर्यादा स्थापन करी॥ जो तप जप यज्ञ दान
सनानादिक क्रियाको प्रगट कीया॥ अरु जो वो इनके से
वणे कर सुखी होवोगे॥ तब तिनको सेवणे लागे॥ कैसे से
वणे लागे फलके धारकर॥ तिन विषे कोऊ विरला निह
कामता रिदे सुधके निमित्त करे॥ हे रामजी जो मूरिष थे॥ सो
फलकी कामना करके कर्मौंको सेवें॥ घटीयंत्रकी न्याई
भटकते फिरें॥ अधः ऊर्धको चले जावें॥ अरु जो निहका
म करें तिनका रिदा सुध होवे॥ तब उनको उपदेस पाना
आतम ज्ञानकी प्राप्त होवे॥ इस प्रकार केई जीव मुक्ति हू
ये हैं॥ केई राजा विदितवेद हूये हैं॥ हे रामजी इस प्रकार
राजौंकी परंपरा ज्ञानकी प्रापुत होत भई है॥ अरु इस रा
जा दसरथको भी ज्ञानकी प्राप्त होवेगी॥ अब तें भी राज
कुमार हैं॥ सो तूं सभतें श्रेष्ठ हैं॥ ऐसा आगे कोऊ नहीं
हूया॥ हे रामजी तूं स्वाभाविक विरक्त हूया हैं॥ किसी का
रण कर नहीं हूया॥ स्वाभाविक रिदे सुध कर हूया हैं॥
इस कारणतें तूं श्रेष्ठ हैं॥ जो कोऊ अनिष्ट दुःख आन प्रा
प्त होता है॥ तिसकर विरक्तता उपजती है॥ सो तुजको ऐ
सें नहीं उपजी॥ तुजको सब इंद्रीयोंके विषय भी विद्यमा
न हैं॥ तिनके होते ही तुजको वैराग्य उपजा है॥ तातें तूं श्रे
ष्ट हैं॥ हे रामजी मसाणादिक जो कष्टके स्थान हैं॥ तिन
कौं देखकर सभनको वैराग्य उपजता है॥ जो इह संसारक
बहु नहीं॥ मरजावणा है॥ तिन विषे भी जो श्रेष्ट पुरुष हो
ता है॥ तिनको घिड होजाता है॥ जो अवर मूर्ख हैं॥ सो वि
षयों विषे आसक्त होते हैं॥ तातें जिनको अकारणक
र वैराग्य उपजा है॥ सो श्रेष्ट है॥ हे रामजी जो श्रेष्ट पुरुष हैं
सो अपणे वैराग्य अरु अभ्यासके बलकर संसारके बंध
न तें मुक्त होजाते हैं॥ जैसे हस्ती बंधनको तोडकर निक

जो

45

सजाता है। तब सुखी होता है। तैसे वैराग्य अरु अभ्यास के
बल कर बंधन तें मुक्ति होता है। सो धन्य है। हे रामजी इह
संसार बडा अनर्थ रूप है। जिन पुरुषों अवलि पुरुषार्थ
कर के इस बंधन को नहीं तोरया। तिनको राग द्वेष रूपी
अग्नि पडी जलावती है। जैसे सूके तृण को अग्नि जला
वती है। तैसे उनको राग द्वेष जलावते हैं। जिन पुरुषों को
अवलि पुरुषार्थ कर के शास्त्र अरु गुरों के वचनों कर
ज्ञान की प्राप्त हूई है। तिनको अध्यात्मक आधि देवक
आधि भूतक ताप जलाय नहीं सकते। जैसे वर्षा काल
के होते बन को अग्नि लाग नहीं सकती। हे रामजी जि
न पुरुषों ने संसार को विरस जाण्या है। तिनको संसार के
पदार्थ वस नहीं कर सकते। अरु मूर्ख वस हो जाते हैं। जैं
से तीक्ष्ण पवन अवरखों को गिडाय देता है। अरु कल्प
वृक्ष के गिरावणे को समर्थ नहीं होता। हे रामजी श्रेष्ठ
पुरुष भी ऊही हैं। जिनको संसार विरस भासता है। अरु
केवल आत्म तत्व की इच्छा करते हैं। अरु तिस परायण
हूये हैं। ब्रह्म विद्या का अधिकार भी तिनको है। अ
रु उत्तम पुरुष भी वही हैं। हे रामजी तुम भी तैसे उघल
पात्र हो। जैसे कोमल पृथ्वी विषे बीज बोवीता है। तैसे
अब मैं तुज को उपदेस करता हूं। अरु जिनको भोगों
की इच्छा है। संसार की ओर यत्न करते हैं। ते पशु महा
नीच हैं। तिनको मेरा धिकार है। अरु श्रेष्ठ पुरुष तेई
हैं। जिनसों संसार के तरणे का पुरुषार्थ हूया है। ते ध
न्य हैं। हे रामजी ब्रह्म भी लिखी सों करीए जो लीये जो मे
रे ग्रंथ के उत्तर देणे कूं समर्थ होवेगा। अरु तिस के व
चन पर आस्तिक भाव नां होवे। तब ब्रह्म उसगति क
रीये। काहे तें जो विसाह विनां ग्रहण करणां पाप होता है।
अरु गुरु भी उपदेस तिसकों करे। जो संसार तें विरक्त
होवे। अरु केवल आत्म परायण। जिसकी श्रद्धा हो
वे। अरु आस्तिक भाव होवे। ऐसे पात्र को देष कर उ
पदेस करे। पात्र विनां उपदेस न करे। हे रामजी गुरु श्री

रूशिष्यदोनोंउतमहोतेहैं॥तबवचनशोभतेहैं॥सोतूंभीउ
पदेसकाउतमपात्रहैं॥जैसेगुणशास्त्रोंविषेवर्तनकीये
हैं॥तैसमहीगुणतेरेविषेपाईतेहैं॥अरुमयंभीउपदेस
करणेकोसामर्थहों॥तांतेराकार्यशीघ्रहोवेगा॥हेरामजी ते५
षुनगुणोंसाथतेरीबुधनिर्मलहोरहीहै॥मेरेसिधांतका जो
सारवचनहैं॥सोतेरेरिदेविषेप्रवेशकरजावेंगे॥जैसेउद्य
लवस्त्रपरकेसरकारंगशीघ्रहीचडजाताहै॥तैसेमेराउ
पदेसतेरेरिदेविषेसमाजावेगा॥जैसेसूर्यकेउदेहूयेंसू
र्यमुखीकमलखिडआवतेहैं॥तैसेतेरीबुधवचनोंकर
खिडआवेगी॥हेरामजीजोकछुशास्त्रोंकासिधांतआत्म
तत्वमयंतुजकोंकहताहों॥तिसविषेतेरीबुधिशीघ्रही
प्रवेशकरजावेगी॥हेरामजीमयंतुमारेआगेंहाथजो
डकरप्रार्थनांकरताहों॥जोकछुमयंतुजकोंउपदेशक
रताहों॥तिसविषेतूंआस्तिकभावनांकर॥जोइनोंवच
नोंकरमेराकल्याणहोवेगा॥जोतुमकोधारणाहीनहो
वे॥तोप्रश्नहीनकर॥जिसशिष्यकोंगुरूकेवचनोंवि
षेआस्तिकभावनांहोतीहै॥तिसकाशीघ्रहीकल्याण
होताहै॥तांतेमेरेवचनोंविषेआस्तिकभावनाकर॥जि
सकरतेंआत्मपदविषेप्राप्तहोवें॥सोमयकहताहों॥प्र
थमतोइहकर॥जोमोक्षद्वारेकेचारद्वारपालहैं॥तिन
सोंमित्रभावनांकर॥जबतिनसोंमित्रभावनांकरेंगा॥
तबमोक्षकेद्वारकेअंतरपहूंचाइदेवेंगे॥तबआत्म
दर्शनतुजकोहोवेगा॥द्वारपालोंकानामश्रवणकर॥
समसंतोषविचारसंतोंकीसंगतइहचारद्वारपालहैं
जिनपुरुषोंइनकोंवसकीयाहै॥तिसकोंइहशीघ्रहीं
मोक्षरूपीद्वारेकेअंतरपहूंचाइदेतेहैं॥हेरामजीजोस
महीवसनहोवें॥तोत्रयहोवें॥अथवादोहोवें॥अथवा
एकहोवे॥सोभीचारोंआवेंगे॥इनचारोंकापरस्परस्नेह
हे॥जहांएकभीआवताहै॥तहांचारोंआवतेहैं॥जिन
इनकेसाथमित्राईकरीहै॥तेसुखीभएहैं॥अरुजिनों

इनका त्याग कीया है॥ ते दुःखी रहते हैं॥ हे रामजी जदि प
प्राणों का त्याग होवे॥ तो भी एक तो बलकर वस करीए॥ ए
कके वस कीए चारों वस होते हैं॥ अरु तेरी बुधि विषे तो शु
भगुणों आन निवास कीया है॥ जैसे सूर्य के प्रकाश विषे
सभ प्रकाश आवते हैं॥ तैसे तेरे विषे सभ गुण पईते हैं॥
हे रामजी तूं अब मेरे वचनों का अधिकारी भया है॥ हे
रामजी सत शास्त्रों अरु संतों की संगत द्वारा बुध को ती
क्षण कीये तें आत्मतत्व विषे प्रवेश करता है॥ तातें श्रेष्ट
पुरुष उहा हैं॥ जिनउं संसार कों विरस जान कर त्याग की
या है॥ सत शास्त्र अरु संतों के वचन द्वारा आत्मपद पा
वणे का यत्न करते हैं॥ तब अविनासी पद कों प्राप्त होते
हैं॥ अरु जो शुभ मार्ग को त्याग कर संसार की ओर लगा
गे हैं॥ ते महामूढ अरु जड हैं॥ जैसे जल दंड सरदी क
रके गडा हो जाता है॥ तैसे उह अज्ञानी मूर्षता कर के आ
त्मपद तें भ्रस्य रहते हैं॥ हे रामजी अज्ञानी के रिदे रूपी
बिल विषे दुरासा रूपी सर्प रहता है॥ कदाचित शांति कों
नहीं प्राप्त होता॥ आस्था कर सदा सुकचा रहता है॥ जैं
से अगनि विषि मांस पाया सुकच जाता है॥ तैसे आस्था क
र उनका चित सुकचा रहता है॥ हे रामजी आत्मपद के
साक्षात्कार विषे विसेष ही आसा आवरण है॥ जैसे सू
र्य के आगें मेघ आवर्ण होता है॥ तैसे आत्मपद के आ
गें दुरासा आवर्ण है॥ जब आसा रूपी आवर्ण दूर होवे॥
तब आत्मपद का साक्षात्कार होवे॥ आसा तब दूर होवे
जब संतों की संगत अरु सतशास्त्रों का वीचार होवे॥ हे
रामजी संसार रूपी एक बडा वृक्ष है॥ तिस को बोध रू
पी खड्ग कर छेदो॥ जब सतशास्त्रों अरु संतों की संग
त करती क्षण बुधि होवेगी॥ तब संसार रूपी वृक्ष नष्ट
हो जावेगा॥ जहां शुभगुण होते हैं॥ तहां आत्मज्ञान भी
आन विराजता है॥ जैसे जहां कमल फूल होते हैं॥ त
हां भवरे भी आन इस्थित होते हैं॥ हे रामजी शुभगु

णरूपी वायुकर जब इच्छारूपी मेघ निवर्त होवे ॥ तब आ
त्मरूपी चंद्रमा का साक्षात्कार होवे ॥ जैसे चंद्रमा के उदे
हूये आकाश सोभता है ॥ तैसे आत्मा के साक्षात्कार हूये
तेरी बुधि शोभेगी ॥ इति श्री मुमुक्षुप्रकरणे वक्ताग
श्मवर्णनं नाम सर्गः ॥ ११ ॥ श्री वसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी
अब तूं मेरे वचनों का अधिकारी हूया हैं ॥ काहेतें जो त
प विचार वैराग्य संतोष आदिक शुभ गुण हैं ॥ अरु संतो
शास्त्रों जो गुण कहे हैं ॥ सो सभ तेरे विषे पाईते हैं ॥ रज
तम कों त्यागकर शुध सात्विक भाव होइकर सुण ॥ जैते
कछू जिज्ञासी के गुण हैं ॥ सो सभ तेरे विषे पाईते हैं ॥ अ
रु जैते कछू गुरां के गुण हैं ॥ सो सभ मेरे विषे पाईते हैं ॥
तांतें तूं मेरे वचनों का अधिकारी है ॥ हे रामजी जब चंद्र
मा उदे होता है ॥ तब चंद्रकांतमणि द्रवीभूत होती है ॥ अ
र्थ इह जो तिसतें अमृत स्रवता है ॥ अवर जो पथर की सि
ला होती है ॥ तिनों तें नहीं स्रवता ॥ तैसे जहां जिज्ञासी होता
है ॥ तिसकों परमार्थवचन लागते हैं ॥ अरु अज्ञानी कों
नहीं लागते ॥ हे रामजी जो शिष्य शुधपात्र होवे ॥ अरु उ
पदेश करणेहारा ज्ञानवान न होवे ॥ तब भी उस शिष्य कों
आत्मा का साक्षात्कार नहीं होता ॥ जैसे चंद्रमुखी कमल
नी होवे ॥ अरु चंद्रमा न होवे ॥ तब प्रफुलित नहीं होती ॥
तांतें तूं मोक्ष का पात्र हैं ॥ अरु मैं ज्ञानी परमगुरु हों ॥ मेरे
उपदेश करते तेरा अज्ञान निवृत होवेगा ॥ अब मैं जो तु
उपाव कहता हों ॥ तिसकों तूं भली प्रकार विचारेंगा ॥ त
ब जैते कछू मन की मननवृत्ति है ॥ तिनका अभाव होजा
वेगा ॥ जैसे महाप्रलय के सूर्य के तेजकर मंदरादिक प
र्वतादिक जल जाते हैं ॥ तैसे वैराग्य अरु अभ्यास के ब
लकर इस मन कों आपते विषे लीन कर ॥ जो शांतात्मा
होवे ॥ तिसकों दूह कर्तव्य है ॥ हे रामजी जिन संतों के संग
अरु शास्त्रों के विचारकर आत्मपद कों पाया है ॥ तेई
सुखी हूए हैं ॥ बहुड़ दुःख उनकों नहीं लागता ॥ काहेतें
जो दुःख देह अभिमान कर होता है ॥ सो देह अभिमान

उनोंने त्याग कीया है ॥ जैसे सर्प कुंज को त्यागता है ॥ तैसे उन
देह अभिमान त्यागा है ॥ तातें सर्वदा सुखी रहता है ॥ हे राम
जी जिन विचार अरु बल द्वारा आत्मपद पाया है ॥ ते जन
अद्भुत परम आनंद को प्राप्त हूए हैं ॥ अरु सम जगत तिन
कौं आनंदरूप भासता है ॥ हे रामजी संसार नाना रूप जो इ
ह संसार है ॥ सो अज्ञानी के हिर्दै विषे दृढ होइ रहा है ॥ सो
तिन कौं ऐसा दुःख होता है ॥ जैसा सर्प के दंस लै तें दुःख
नहीं होता ॥ जैसा अग्नि के जल लैतें दुःख नहीं होता ॥ जै
सा दुःख उन कौ संसार की प्रीत कर होता है ॥ हे रामजी जि
न पुरुषों संतसंग अरु सतशास्त्र विचार द्वारा आत्मपद
पाया नहीं ॥ ते ऐसे कष्ट कौ पावते हैं ॥ जो नरक कों की अग्नि
विषे जलते हैं ॥ अरु चक्की विषे पीसते हैं ॥ अरु कोल्हू वि
षे पिरीते हैं ॥ सो बडे कष्ट कौ प्राप्त होते हैं ॥ हे रामजी ऐ
सा दुःख कोऊ नहीं ॥ जो इस जीव कौं प्राप्त नहीं होता ॥ आ
त्मा के प्रमाद कर के सम्न दुःख होते हैं ॥ अरु जिन पदार्थों
कौं इह रमणीक जानते हैं ॥ ते चक्र की न्याई चंचल हैं ॥ इ
स्थिर कदाचित नहीं रहते ॥ सत मार्ग कौ त्याग कर जो इ
न की इछा करता है ॥ सो महा दुःख कौ प्राप्त होवैगा ॥ अरु
जिन पुरुषों संसार कौं विरस जान्या है ॥ अरु परमार्थ की
ओर दृढ हूए हैं ॥ तिन कौं आत्मपद की प्राप्त होती है ॥ हे रा
मजी जिन पुरुष कौं आत्मज्ञान की प्राप्त हूई है ॥ तिन
कौं दुःख कदाचित नहीं होता ॥ जो तिन कौं दुःख होता
तो आत्मज्ञान निमित्त पुरुषार्थ कौ कोऊ न करता ॥
हे रामजी ज्ञानवान विषे नाना प्रकार की चेष्टा दृष्ट आ
वती है ॥ तो भी सदा शांतिरूप हैं ॥ संसार का दुःख उस को
कोऊ नहीं स्पर्श करता ॥ काहे तें जो ज्ञानरूपी कवच उ
सनें पहिर्या है ॥ हे रामजी जो ज्ञानवान कौं दुःख होता
तो बडे ब्रह्मरिषि राजरिषि अवर भी ज्ञानवान हूए हैं
ते भी दुःखों कौं सहार न सकते ॥ दुःख कर आतुर होते
ते ॥ सो ज्ञानवान ज्ञान का कवच पहिर्या है ॥ तातें दुःख
को कोऊ नहीं स्पर्श करता ॥ सदा आनंद स्वरूप हैं ॥ जैसे

ब्रह्मा विष्णु रुद्र अवर जीवोंकी न्याई चेष्टा करते हैं॥ परस
हा शांति रूप हैं॥ इसी प्रकार अवर भी ज्ञानवान पुरुष शां
तिवान हूए हैं॥ कर्तृत्वका अभिमान उनको कछु नही
फुरता॥ हे रामजी जो कछु क्रिया करते हैं॥ सो उनको वि
लास रूप है॥ अरु सम्पूर्ण जगत उनको आनंद रूप भास
ता है॥ हे रामजी शरीररूपी रथ है॥ अरु इंद्रीयांरूपी अ
श्व हैं॥ मनरूपी वार्य है॥ जिससे अश्वोंको खैंचीता है॥ अ
रु बुधरूपी रथवाई है॥ तिसको इंद्रीयारूपी अश्व अशु
भ मार्गविषे ले जाते हैं॥ अरु ज्ञानवानके इंद्रीयांरूपी
अश्व ऐसे हैं॥ जो जहां जाते हैं॥ तहां आनंद रूप है॥ कि
सी ठौड विषे खेद नही होता॥ सदा सर्वदा क्रिया उनकी
विलास है॥ ॥इति श्रीमुमुक्षुप्रकरणे तत्वज्ञानमाहा
त्म्यवर्णनं नाम सर्गः॥ १२॥ श्रीवशिष्ठोवाच॥ हे राम
जी ऐसी दृष्टको आश्रय कर॥ जो तेरा रिदा पुष्ट होवे॥
अर्थ इह जो बल पावे॥ बहुड संसारके इष्ट अनिष्ट वि
षे चलायमान न होवे॥ जिन पुरुषोंको इस प्रकार आत्म
पदकी प्राप्त भई है॥ सो परम आनंदी भए हैं॥ न शोक क यं
रते हैं॥ न याचना करते हैं॥ हेय उपादेयतें रहित हैं॥ शांति
रूप हैं॥ हे रामजी उह पुरुष नाना प्रकारकी चेष्टा करते
भी दृष्ट आवते हैं॥ अरु कछु नही करते॥ जहां उनके म
नकी वृत्त जाती है॥ तहां आत्म सत्ता ही भासती है॥ उह आ
त्मानंद कर पूरण होय रहे हैं॥ जैसे पूर्णमासीका चंद्रमा
अमृत करके पूर्ण होता है॥ तैसे ज्ञानवान आत्मारूपी
अमृत कर पूर्ण होता है॥ हे रामजी इह जो मय तुज कों
अमृतरूपी वृत्त कहा है॥ इसको तें जब आ लेगा॥ तब तु
जको आत्मपदकी साक्षात्कारी होवेगी॥ जब इसको आ
त्मज्ञानकी प्राप्त होती है॥ तब सभ दुःख नष्ट हो जाते हैं
जैसे चंद्रमाके मंडल विषे तप्त नही होती॥ तैसे ज्ञानवा
नको रागद्वेषरूपी दुःख नही होता॥ अरु अज्ञानीकों

48

सुखकदाचितनहीहोता॥जोक्रियाकरताहै॥तिसविषेदुः
खहीपावताहै॥सुखनहीपावता॥जैसेकिकरकेवृक्षसों
कंटकपडेउपजतेहैं॥तैसेअज्ञानीकीक्रियासोंदुःखप
डेउपजतेहैं॥हेरामजीजोहाथविषेठीकडाहोवे॥अरु
चंडालोंकेगृहकीभिक्षामांगीयेतोभीबहुतभलीहै॥अ
रुमूर्खोंकीसंगततेंश्रेष्ठहै॥परआत्मपदकोजिज्ञासाहो
वे॥अरुमूर्खताविषेजीवणाव्यर्थहै॥तिसमूर्खताकेदूरक
रणेअर्थमयमोक्षउपावकहताहों॥हेरामजीइहमोक्ष
उपावपरमबोधकाकारणहै॥अरुकछुबुधिपदपदा
र्थोंकेजानणेहारीहोवे॥जोमोक्षउपावशास्त्रकोविचा
रे॥तबतिसकीमूर्खतानिवृत्तहोजावे॥अरुपरमपदकी
प्राप्तहोवे॥जैसेआत्मबोधकाकारणइहशास्त्रहै॥तैं
साअवरत्रिलोकीविषेकोउनहीं॥नानाप्रकारकेदृष्टां
तोंसहितइसविषेइतहासकथाहैं॥तिसकोइहजबा
विचारेगा॥तबपरमानंदकोप्राप्तहोवेगा॥अरुअज्ञान
रूपीतिमिरकेनासकरणेकोज्ञानरूपीसूर्यहै॥जैसे
अंधकारकोंसूर्यनासकरताहै॥तैसेअज्ञानकोंइहशा
स्त्रनासकरताहै॥हेरामजीजिसप्रकारइसकाकल्या
णहोताहै॥सोसुण॥गुरुजोज्ञानवानहै॥शास्त्रकाउप
देसकरे॥अरुअपणांअनुभवभीहोवे॥जबगुरुअरु
शास्त्रअरुअपनांअनुभवतीनोंइकठेहोवें॥तबइसप्र
कारककल्याणहोवै॥जबलगअरुतमआनंदकोनहीं
प्राप्तभया॥तबलगदृढअभ्यासकरे॥तिसअद्भुतमआ
नंदकेप्राप्तकरणेहारेहमगुरुहैं॥इसजीवकेहममि
त्रहैं॥जैसामित्रअवरकोउनहीं॥हमारीसंगतइसजी
वकोंआनंददेणेहारीहै॥तातेजोकछुमयकहताहों
सोनेकर॥हेरामजीइहजोसंसारकेभोगहैं॥सोक्षण
मात्रहैं॥तातेइनकात्यागकर॥अरुहमारेवचनोंकेवि
चारतेंदुःखनष्टहोजावेगा॥हेरामजीजिसपुरुषनेह
मारेसाथप्रीतकरीहै॥तिसकोहमपरमआनंदकी

प्राप्त करते हैं ॥ जिस आनंद को पायकर ब्रह्मादिक भी मोँ
परम आनंदी भए हैं ॥ अरु अवर ज्ञानवान आनंदी हू
ए हैं ॥ जो हमारे साथ प्रीति करता है ॥ सो तिस निर्दोष प
द कों प्राप्त होता है ॥ हे रामजी श्रेष्ट पुरुष सोई है ॥ जिसने
संतों का संग अरु सतशास्त्रों के विचार द्वारा द्वैत रूप को वि
स्मरण कीया है ॥ अरु निर्णय कीया है ॥ आत्मा का प्रमा
द इसको दीन करता है ॥ अरु अज्ञानी का चित्त रूपी क
मल तब लग संकुचा रहता है ॥ जब लग चित्मा रूपी रा
त्रि है ॥ जब ज्ञान रूपी सूर्य उदे हूया ॥ तब तत्मा रूपी रा
त्रि नष्ट होजावेगी ॥ अरु हृदय रूपी कमल खिड आ
वेगा ॥ हे रामजी जिन पुरुषों ने संतों की संगत अरु सत
शास्त्रों के विचार द्वारा आत्मपद को पाया है ॥ ते पुरुष
केवल केवली भाव को प्राप्त हूए हैं ॥ अर्थ इह जो शुध
आत्मतत्व को प्राप्त भए हैं ॥ अरु संसार भावतें न का
निवृत्त होगया है ॥ हे रामजी इह संसार मन के संसरणे
तें उतपत्ति भया है ॥ तांतें अवर उपावों कर कल्याण न
होवेगा ॥ एक मन ही के जीतणे कर कल्याण होवेगा ॥
हे रामजी इसी मन के जीतणे कों ज्ञानी परमपद कह
ते हैं ॥ अरु तिस ही कों रसाइण कहते हैं ॥ जिसके पाणें तें
अमर होता है ॥ अरु सम सुखों की पूर्णता होती है ॥ तिस
का साधन समता अरु संतोष है ॥ समता अरु संतोष क
र ज्ञान उतपत्ति होता है ॥ सो आत्मज्ञानी कैसा है ॥ सदा
शांति रूप निर्मल अरु निर्लेप है ॥ जिनकों भाव अभा
व रूप जगत स्पर्श नहीं कर सकता ॥ जैसे आकाश सर्व
तें निर्लेप है ॥ तैसे ज्ञानवान सर्वतें निर्लेप हैं ॥ हे रामजी रूया
इस पुरुष कों परम विश्राम का कारण सम है ॥ अरु इ
ह संसार जो दिखीता है ॥ सो मारुस्थल की नदीवत है ॥ ति
स कों देख कर अज्ञानी सुख जानते हैं ॥ अरु सुख कों क
दाचित नहीं पावते ॥ सम ही कर इह जीव सुखी होता है ॥
अन्यथा सुखी नहीं होता ॥ हे रामजी सम ही परमानंद

है॥ अरु समही परमपद है॥ समही शिवपद है॥ जिस पु
49 रुषनें शिवपदकौ पाया है॥ सो संसारसमुद्र के पार हू
या है॥ तिसकौं शत्रु भी मित्र होजाते हैं॥ हे रामजी जब चं
द्रमा आन उदे होता है॥ तहां अंम्रत की किरणां पडी फु
रती हैं॥ अरु सीतलता होती है॥ तैसे जिनके ह्रिदे विषे
समरूपी चंद्रमा आन उदे हूया है॥ तिसकी सर्व तप मि
ट जाती है॥ अरु परम शांतिवान होता है॥ काहे तें जो
शांतिरूपी अंम्रत करतप्त है॥ हे रामजी समकर के इ
सकौं परमबोध होता है॥ जैसे पूर्णमासी का चंद्रमा सो
भता है॥ तैसे समवान पुरुष शोभता है॥ जैसे विष्णुजी
के दो हृदय हैं॥ एक आप लोआपा विषे स्थित है॥ अ
रु दूसरा सतऊ विषे रहता है॥ तैसे समवान के दुइ ह्रि
दे होते हैं॥ एक शरीर विषे होता है॥ दूसर समभी इस
का हिदा होता है॥ हे रामजी ऐसा आनंद अंम्रत के पा
न कीये ते नही होता॥ अरु लक्ष्मी के प्राप्त हूए भी नही
होता॥ जैसा आनंद समकर होता है॥ हे रामजी जैसे बा
लिक माता कौ पायकर आनंदवान होता है॥ अरु जि
सकौ सम की प्राप्त भई है॥ सो बालिक ते भी अधिक आ
नंदी होता है॥ हे रामजी ऐसा आनंद चक्रवर्ती राज के
पाए तें भी नही होता॥ अरु त्रिलोकी के राज पाए तें भी
नही होता॥ जैसा आनंद समवान पुरुष कौ होता है॥ हे
रामजी जो पुरुष अध्यात्मक तापौं कर पडा जलता
है॥ अरु उसके हिरदे विषे समकी प्राप्त होवै॥ तब सब ता
प उसके मिट जाते हैं॥ जैसे तप्त पृथ्वी पर मेघ की वर्षा
होवै॥ तब शीतल हो जाता है॥ तैसे जिसकौं समकी प्रा
प्त भई है॥ उसका हिदा महा शीतल हो जाता है॥ हे रा
मजी जो संसार के रमणीक पदार्थौं विषे बंधमान न
ही होता॥ अरु आत्मानंद कर के तृप्त है॥ तिसकौ सम
वान कहते हैं॥ सदा निर्लेप रहता है॥ हे रामजी ऐसा जो
पुरुष है॥ इष्ट अनिष्ट विषे सम शांतिरूप रहता है॥

हेरामजीउहपुरुषसमचेष्टाकरतानीदृष्टआवताहै
परसदाशांतिरूपनिर्लेपहै॥कोऊक्रियाउसकोबंध
ननहीकरती॥जैसेजलविषेकमलनिर्लेपरहताहै।
तैसेशांतिवाननिर्लेपरहताहै॥हेरामजीजोपुरुषबे
डेराजसंपदाकोपाइकर॥अरुबडीआपदाकोपाय
कर॥जिंउकातिंउनिर्लेपरहताहै॥सोपुरुषज्ञानवान् ग्यांतिवान६
कहीताहै॥हेरामजीजिसपुरुषकोंशांतकीप्राप्तभई
है॥सोअंतरबाह्यतेंशीतलहै॥अरुसद्धाएकरसहै
जैसेहिमालापर्वतशीतलहोताहै॥तैसेउहपुरुषशी
तलहोताहै॥अरुमुखकीकांतभीतिसकीवधतीजा
तीहै॥हेरामजीजिसकोशांतकीप्रापतभईहै॥सोपर
मातेदीकृयाहै॥अरुज्ञानवानतिसकोपरमपदकह
तेहैं॥अरुपुरुषार्थजोकरणाहै॥सोएहीकरणाहै॥
जिसकरइसकोशांतिप्राप्तहोवै॥जोतमसंसारसाग
रकेपारकोप्राप्तहोवै॥इतिश्रीमुमुक्षप्रकरणेसमनि
रूपणंनामसर्गः॥१२॥श्रीवसिष्ठोवाच॥हेरामजी
जबतिदेशुधहोताहै॥तबइसकोंविचारउदेहोताहै॥
सतशास्त्रगुरोंकेवचनोंद्वाराजबबुधतीक्षणहोतीहै
तबशीघ्रहीआतमपदकीप्राप्तहोतीहै॥हेरामजीजि
सकोंकछुसिधताप्राप्तभईहै॥सोविचारअरुपुरुषा
र्थकरप्राप्तभईहै॥अरुराजादिकजोप्राप्तहोतेहैं॥
सोभीविचारअरुपुरुषार्थकरप्राप्तहोतेहैं॥हेरामजी सोविचारवानकहतेहैं ४
शुधबुधकाविचारग्रहणकरो॥तबआतमज्ञानको
प्राप्तहोवो॥जैसेदीपककरकेपदार्थकाज्ञानहोता
है॥तैसेविचारककेआत्मज्ञानप्राप्तहोताहै॥जिसपु
रुषविचारककेसतअसतकोजान्याहै॥असतको
त्यागकरसत्यकीओरजतनकीयाहै॥हेरामजीजहां
जहांविचारहै॥तहांतहांदुःखनहीरहते॥जैसेजहांप्र
कासहै॥तहांअंधकारनहीरहता॥अरजहांप्रकासन
हीहोता॥तहांअंधकारहोताहै॥तैसेजहांविचारहै॥

तहां संसार नयन होर हता ॥ अरु जहां विचार न हो ॥ त
हां अंधकार ही होता है ॥ अरु जहां आत्मविचार उतपति
होता है ॥ तहां सुख के देणेहारे शुभगुण आन प्राप्त होते
हैं ॥ जैसे मानसरोवर विषे कमल उतपति होते हैं ॥ तैसे
विचारवान के शुभगुण आन उतपति होते हैं ॥ अरु ज
हां विचार न हो ॥ तहां दुःखों का आगमन होता है ॥ हे राम
जी जो कछु अविचार कर क्रिया करीती है ॥ सो दुःखों
का कारण होती है ॥ जिस कर शुभ क्रिया शास्त्रों के अ
नुसार न होवे ॥ सो दुःखरूप है ॥ हे रामजी विवेकरूपी रा
जा है ॥ अरु विचाररूपी धुजा है ॥ जहां विवेकरूपी राजा
आगमन करता है ॥ तहां विचाररूपी धुजा भी साथ च
लती है ॥ जहां विचाररूपी धुजा आवती है ॥ तहां विवेक
रूपी राजा भी आवता है ॥ सोई पुरुष विचार करके संप
न्न है ॥ अरु पूजणे योग्य है ॥ तिसको सभ कोऊ नमस्का
र करता है ॥ जैसे दुतीया के चंद्रमा को नमस्कार करते
हैं ॥ तैसे विचारवान कों सभ नमस्कार करते हैं ॥ हे रा
मजी हमारे देषतें देषतें अल्पबुधी जीव भी विचार
की दृढता करके मोक्षपद कों प्राप्त भए हैं ॥ तां ते विचा
र इसका परम मित्र है ॥ जो विचारवान पुरुष है ॥ तिनू
का अंतर बाहिर शीतल हो जाता है ॥ जैसे हिमालापर्व
त शीतल होता है ॥ तैसे उह पुरुष शीतल हो जाता है ॥
विचार करके ऐसे पद कों प्राप्त होता है ॥ जो पद निर्म
ल है ॥ शुध है ॥ स्वछ है ॥ परमानंद शिवरूप है ॥ तिसको
पाइकर न किसी के त्यागणे की इछा करते हैं ॥ न कि
सी के ग्रहण की इछा करते हैं ॥ इष्ट अनिष्ट विषे समा
न रहते हैं ॥ जैसे तरंगों के उपजणे अरु लीन होवणे
विषे समुद्र समान है ॥ तैसे विवेकी इष्ट अनिष्ट विषे
सम रहता है ॥ अरु संसार भ्रम तिसका मिट जाता है ॥
आधार आधेय तें रहित केवल अद्वैत तत्व उसकों
भानु होता है ॥ हे रामजी अपणे मन के मोह तें संसार

उपजता है॥ अरु स्वरूपके प्रमाद कर दुःखदाई भास
ता है॥ जैसे अविचार करके बालक कों अपणी छाया
विषे वैताल भासता है॥ तैसे इस कों जगत भासता है
जब आत्मा की प्राप्त होवै॥ तब जगत भ्रम नष्ट हो
जावै॥ हे रामजी जिस घट विषे विचार उपजता है॥ त
हां समता भी आन उतपत्ति होती है॥ जैसे बीज तें अंकु आव
र निकसता है॥ तैसे विचार कों एते समता उपज आव
ती है॥ अरु विचारवान पुरुष जिस और देषता है॥ ति
सी और आनंद ही भासता है॥ दुःख नहीं भासता॥ जहां
अविचार है तहां दुःख है॥ जहां विचार है तहां सुष है॥
हे रामजी विचार करके इस कौं परमपद की प्राप्त होती
है॥ जिन पुरुषों ने विचार द्वारा परमार्थ सत्ता का आश्र
य लीया है॥ सो परम शांत कौं प्राप्त होते हैं॥ हेय उपादेय
बुधि तिस की जाती रहती है॥ अरु दृश्य कौं साक्षीभूत
होकर देषता है॥ अरु संसार के भाव अभाव विषे जित
का तित रहता है॥ सो विचार करके दुःख कौं निवृत क
रते हैं॥ सो विचार इस प्रकार प्राप्त होता है॥ जो वेद अरु
वेदांत के सिधांत कौं भली प्रकार कर विचारीये॥ जब
इन कौं भली प्रकार विचारेंगा॥ तब विचार की दृढता
करके आत्मतत्व कौं प्राप्त होवैंगा॥ जैसे प्रकाश कर प
दार्थों का ज्ञान होता है॥ तैसे शास्त्र अरु गुरों के विचार
कर आत्मतत्व का ज्ञान होता है॥ अरु जैसे प्रकाश होवे
अरु नेत्र न होवैं॥ तब पदार्थ नहीं भासता॥ तैसे शास्त्र अ
रु गुरों के होतें भी जो विचार ते शून्य है॥ तिस कौं आत्मप
द की प्राप्त नहीं होती॥ हे रामजी जो विचार रूपी नेत्रों कर
संपन्न है॥ सो उंस चक्षते है॥ अरु जो विचार रूपी नेत्रों तें र
हित है॥ सो अंध है॥ हे रामजी तातें ऐसा विचार कर जो म
य कवन हों॥ अरु इह जगत क्या है॥ अरु इस की उतपत्ति
कैसे हुई है॥ लीन कैसे होता है॥ इस प्रकार संतों अरु शा
स्त्रों के अनुसार विचार करके सत कौं सत जाने॥ अरु अ
सत कौं असत जाने॥ बहुड़ जिस कौं असत जाण्या है

तिसका त्याग कर॥ अरु सत्त विषे इस्थित हो॥ इस
का नाम विचार है॥ इस विचार कर आत्मपद की प्रा
प्त होती है॥ तिस कर सर्व पदार्थों का ज्ञान होता है॥ ज
ब लग प्रारब्ध वेग होता है॥ तब लग शरीर की क्रिया
अलेप होकर करता है॥ बहुड शरीर कों त्याग कर
विदेहमुक्ति होता है॥ हे रामजी तांते ऐसे विचार को
आश्रै करो॥ ऐसे विचार को आश्रय करके संसार
समुद्र को तरो॥ हे रामजी जो पुरुष विचार तें शून्य है
तिस कों सम अपद आन प्राप्त होती है॥ जैसे सम
न दीयां समुद्र विषे स्वभाविक आन प्रवेश करती
यां हैं॥ तैसे अविचारी पुरुष विषे सम अपदा प्रवे
श करती हैं॥ हे रामजी जो पुरुष विचारवान है॥ सो
संसार के भोगों विषे नहीं गिडता॥ सत्य विचार विषे
इस्थित होता है॥ तिस कर तत्वज्ञान को प्राप्त होता है
विश्राम होता है॥ अरु विश्राम करके चित्त उपशम
होता है॥ चित्त के उपशम हूएं सम दुःखों का नाश हो
ता है॥ इति श्री मुमुक्षु प्रकरणे विचार निरूपणं ना
म सर्गः॥ १४॥ श्री वसिष्ठोवाच॥ हे अविचार रू
पी शत्रु के नाश करता रामजी॥ जिस कों संतोष प्राप्त
हूया है॥ सो परम आनंदी हूया है॥ अरु त्रिलोकी का
ऐश्वर्य उस कों त्रिण की न्याई भासता है॥ हे रामजी
ऐसा आनंद त्रिलोकी के राज कर नहीं प्राप्त होता
अरु अमृत के पान कीये तें भी ऐसा आनंद नहीं प्रा
प्त होता॥ जैसा आनंद संतोषवान को होता है॥ हे राम
जी इछा रूपी रात्रि है॥ अरु तृष्णा रूपी कमल कों मुक
लाय लेती है॥ जब संतोष रूपी सूर्य उदे होता है॥ तब
इछा रूपी रात्रि का अभाव हो जाता है॥ जैसे क्षीर समु
द्र उजलता करके शोभिता है॥ तैसे संतोषवान शो

अर तत्वज्ञानकर

भाषावता है हे रामजी जो त्रिलोकी का राजा है अरु इ छा निवृत्त नही हूई तो दारिद्री है अरु जो निर्धन है अरु संतोषवान है सो सर्व का ईश्वर है सो संतोष किसका नाम है सो सुणु जो अप्राप्त की इछा न करै अरु प्राप्त हूई इष्ट अनिष्ट विषे रागद्वेषतें रहित वि चरै इसका नाम संतोष है संतोष नाम परमपद का है संतोषवान पुरुष सदा आनंदवान रहता है अरु आत्मा इस्थित भया है तिसको अवर इछा कछु नही फुरती अरु संतोषता करके उसका रिदा प्रफुलित हो ता है अरु जो संतोषतें रहित है तिसके रिदे रूपी व न विषे चिंता रूपी कंटे पडे उतपत होते हैं हे रामजी जो चित संतोषतें रहित है तिस विषे नाना प्रकार की इछा पडी उपजती है जैसे समुद्र विषे नाना प्रकार के तरंग पडे उपजते हैं तैसे त्रिष्णावान के रिदे विषे ना ना प्रकार की तृष्णा पडी उपजती है हे रामजी जो संतु ष्ट आत्मा है सो परम आनंदी है तिसको जगत के प दार्थों विषे हेय उपादेय बुधि नही होती हे रामजी जैसा आनंद संतोषवान को होता है तैसा आनंद अ ष्ट सिधी के पाएतें भी नही होता अरु अमृत के पान कीएतें भी नही होता अरु संतोषवान सदा शांतिवा न अरु निर्लेप है हे रामजी संतोषवान पुरुष सभ को प्यारा लागता है जैसे पूर्णमासी का चंद्रमा सभको प्यारा लागता है तैसे संतोषवान सभको प्यारा लाग ता है हे रामजी जहां संतोष है तहां इछा नही रहती उहउदारात्मा है अरु भोगों विषे दीन नही होता जैसे मेघ प अरु सर्वदा आत्मानंद करत पहोता है जैसे मेघ प वन के आएतें नष्ट हो जाता है तैसे संतोष के आएतें इछा नष्ट हो जाती है हे रामजी तुम भी संतोष को धा रो तब परमपद को पावोगे ॥ ॥ इति श्री मुमुक्षु प्रक रणे संतोष निरूपणं नाम सर्गः ॥ ५ ॥ वसिष्ठो वा०

52 हे रामजी किसी ऽअवर उपावों कर ऽआत्मपद की प्राप्त नहीं
होती ॥ जैसे साधसंग ऽअरु शास्त्रों के विचार कर होती है ॥
साधसंगरूपी एक वृक्ष है ॥ तिसका फल ऽआत्मज्ञान है ॥ जि
स पुरुष ने इस फल की रक्षा करी है ॥ सो ऽअनुभवरूपी फ
ल कों पावता है ॥ हे रामजी ऽआत्मानंद ते जो रहित है ॥ सो सं
तों के संग कर के ऽआत्म ऽआनंद सों पूर्ण होता है ॥ ऽअरु ऽअम
र होता है ॥ ऽअरु जो विपदा कर के दुःखी है ॥ सो संतों के संग
कर सुखी होता है ॥ ऽअरु संपदावान होता है ॥ ऽआपदारूपी
कमलों कों संतों का संग गड़ा है ॥ ऽअरु संतों के संग कर ऽआ
त्मविषयणी बुधि प्राप्त होती है ॥ तिस कर के मृत्यु तें रहि
त होता है ॥ ऽअरु परमानंद को पावता है ॥ हे रामजी संतजन
प्रकाशरूप हैं ॥ तिन की संगत कर परम पदार्थ की प्राप्त
होती है ॥ तां ते उह साधसंग कर परमगति कों पावते हैं ॥
जो ऽअध्यात्म ऽआदिक तीन तापों कर पड़ा जलता है ॥ तिस
कों शीतल करणे हारा साध का संग है ॥ जैसे तपा हूई पृ
थवी मेघ की वर्षा कर शीतल होती है ॥ तैसे संतों के संग
कर रिदा शीतल होता है ॥ हे रामजी मोहरूपी वृक्ष का ना
श करता सतसंगरूपी कुहाड़ा है ॥ साधसंग कर के इह
पुरुष ऽअविनाशी पद कों प्राप्त होता है ॥ ऽअरु सर्व तें उतम
होता है ॥ जैसे सर्व ऽअपसरा तें लछमी उतम है ॥ तैसे सतसं
ग करता सभ तें उतम होता है ॥ हे रामजी इह चारे जो मोक्ष
के द्वारपाल हैं ॥ जिस पुरुषों इस के साथ प्रीति करी है ॥ ते
शीघ्र ही ऽआत्मपद कों प्राप्त हूए हैं ॥ ऽअरु जो इन की सेवना
नही करते ॥ सो मोक्ष कों प्राप्त नही होते ॥ हे रामजी इन चारों
विषे एक भी जहां ऽआवता है ॥ तहां ऽअवर तीन भी ऽआवते
हैं ॥ जहां सम ऽआन प्राप्त होता है ॥ तहां संतोष ऽअरु विचार
ऽअरु साधसंग भी ऽआवते हैं ॥ जैसे जहां समुद्र होता है ॥
तहां सर्व नदीयां भी ऽआवती हैं ॥ तैसे जहां सम होता है ॥
तहां ऽअवर तीन भी ऽआवते हैं ॥ जहां साधसंग होता है ॥ त
हां सम संतोष विचार भी ऽआवते हैं ॥ ऽअरु सर्व संपदा ऽआ

वर्तीहैं॥ अरु जहां संतोष होता है॥ तहां सम विचार साधसं
गभी आवता है॥ जैसे पूर्णमासी के चंद्रमा विषे सभी कला
आवती हैं॥ तैसे जहां संतोष आवता है॥ तहां अवर तीन
भी आवते हैं॥ अरु जहां विचार आवता है॥ तहां संतोष स
म साधसंग भी आवता है॥ जैसे श्रेष्ट मंत्रीयों कर लक्ष्मी
राज विषे इस्थित होती है॥ तैसे जहां विचार होता है॥ तहां
अवर तीन भी आवते हैं॥ ताते हे रामजी जो चारों आन ए
कत्र होवें॥ तब तौ परम श्रेष्ट है॥ अरु जो चारो एकत्र न हो
वें॥ तो एक होवै॥ तो भी चारों आवेंगे॥ मोक्ष के प्राप्त होवणे
का यह परम साधन है॥ अवर उपावों कर मोक्ष की प्राप्त न
हीं होती॥ संतोष परमं लाभं॥ सतसंग परम ज्ञेयं॥ विचार
परम ज्ञानं॥ समं च परमं सुखः॥ हे रामजी इह परम कल्या
ण के करता हैं॥ जो इनों कर के संपन्न है॥ तिसकी ब्रह्मादि
क भी उस्तति करते हैं॥ हे रामजी मन रूपी हस्ती विचार रू
पी अंकुश कर के वश होता है॥ अरु मन रूपी बन विषे
वासनां रूप नदी चलती है॥ तिसके शुभ अशुभ रूपी दो
किनारे हैं॥ अरु पुरुषार्थ करणा इह है जो अशुभ की
ओर तें रोकणा॥ अरु शुभन की ओर चलावणा॥ जब अंत
रमुखी आतमा के सन्मुख वृत्ति का प्रवाह होवेगा॥ तब तूं
परम पद को प्राप्त होवेगा॥ हे रामजी प्रथम पुरुषार्थ क
रणा इह है॥ अविचार रूपी टिबा दूर होवे॥ तब आपे ही
प्रवाह वहि चलेगा॥ हे रामजी दृश्य की ओर जो प्रवाह च
लता है॥ सो बंधन का कारण है॥ जब अंतरमुख प्रवाह च
लता है॥ सो मोक्ष का कारण होता है॥ इति श्री मुमुक्षु
प्रकरणे साधसंग मउपमा वर्ननं नाम सर्गः॥ ॥
श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी इह जो मेरे वचन हैं॥ जो वि
चारवान शुध अधिकारी है॥ तिसकों इह वचन योग्य हैं
कैसे वचन हैं॥ जो परम बोध का कारण हैं॥ जो पुरुष शुध
पात्र है॥ सो इनों वचनों कों पाकर शोभता है॥ अरु इह
वचन भी कहां शोभा पावते हैं॥ जैसे मेघों के अभाव कर्ये

चंद्रमा शोभा पावता है ॥ तैसे इन वचनों कर जिज्ञासी शोभा पा
वता है ॥ हे रामजी तुम परम पात्र हो ॥ और मेरे वचन परम उत
म हैं ॥ इह जो महारामायण मोक्ष उपाव शास्त्र है ॥ सो आत्म बो
ध का परम कारण है ॥ और परम पावन वाक्यों की संगता
है ॥ और नाना प्रकार के दृष्टांत युक्ती कही हैं ॥ जिन के ब
हुते जन्मों के पुण्य एकठे आन होवें ॥ तिन का कल्पवृक्ष ब
नता है ॥ और फलों कर झुक पडता है ॥ तिस को इह शास्त्र
श्रवण होता है ॥ हे रामजी जो पुरुष इस महारामायण मो
क्ष उपाव शास्त्र का अध्ययन करे ॥ अथवा किसी निहकां
म साधतें सुणे ॥ आदि तें लेकर अंत पर्यंत विचारे ॥ तब
तिस का संसार भ्रम निवृत्त हो जावे ॥ जैसे जेवडी के जाणे तें
सर्प भ्रम निवृत्त हो जाता है ॥ तैसे इस शास्त्र के अभ्यास की
ये तें संसार भ्रम निवृत्त हो जाता है ॥ सो इस मोक्ष उपाव शा
स्त्र का बत्री हजार श्लोक है ॥ और षट प्रकरण हैं ॥ प्रथम
वैराग्य प्रकरण है ॥ सो वैराग्य का परम कारण है ॥ एक स
हस्र पंच स इसलोक है ॥ तिस तें अनंतर मुमुक्षु व्यवहा
र प्रकरण है ॥ तिस विषे परम निर्मल वचन हैं ॥ तिस कर
इह परम निर्मल होता है ॥ जैसे मलिन रूई मणि मार्जन की
ए तें निर्मल हो आवती है ॥ तैसे इस के श्रवण तें इह निर्म
ल होता है ॥ और विचार के बल तें आत्म पद पावणे को स
मर्थ होता है ॥ तिस का एक सहस्र सलोक है ॥ तिस के अ
नंतर उतपत्ति प्रकरण है ॥ तिस का पंच सहस्र सलोक है
तिस विषे बडी सुंदर कथा दृष्टांतों सहित कही हैं ॥ सो कैं
सी उतपत्ति कही है ॥ जिस के विचारे तें जगत का सद भा
स चलता रहता है ॥ अर्थ इह जो जगत का अत्यंता भाव ज
नीता है ॥ हे रामजी इह जगत मानुष देवता दैत्य पर्वत न
दीयां देस काल पृथवी अप तेज वायु आकाश आदिक स्
थावर जंगम भासते हैं ॥ सो अज्ञान कर भासते हैं ॥ और
इस की उतपत्ति कैसे भई है ॥ जैसे जेवडी विषे सर्प उतप
ति होता है ॥ और सिपी विषे रूपा उत्पत्ति होता है ॥ जैसे सूर्य

कीकिरणोंविषेजलभासताहै॥जैसेजलविषेतरंगहो
ताहै॥तैसेइहजगतभासताहै॥ऽअर्थाकारकछुनहीं॥
ऽऔरजोभासताहै॥सोऽअज्ञानकरभासताहै॥ऽअज्ञान
करउतपतिभासताहै॥ऽऔरज्ञानकरलीनहोजाताहै॥
जैसेस्वप्नस्रिष्टभ्रमकरकेभासतीहै॥ऽऔरजाग्रतें
निवृत्तहोजातीहै॥तैसेऽअविद्याकरकेजगतभासता
है॥ऽऔरसम्यकज्ञानकरनिवृत्तहोजाताहै॥सोऽअवि
द्याभीकछुवस्तुनहीं॥सर्वब्रह्मस्वरूपचिदाकाशऽअनं
तात्माहै॥तिसविषेनजगतउपजाहै॥नलीनहोणाहै॥
जिंउकीतिंउऽआत्मसत्ताऽअपणेऽआपविषेइस्थितहै॥
तिसविषेजगतऽऐसेहै॥जैसेचित्रेलेकेनिश्चयविषे
चित्रहोतेहैं॥जोइस्थंभेविषेएतीपुतलीहैं॥परकूयेबि
नांउसकोंभासतीहैं॥तैसेइहस्रिष्टमनविषेभासतीहै॥
कूएविनांभासतीहै॥वास्तवतेंउपजीकछुनही॥ऽआभास
रूपहै॥जबचित्तसंवेदनइस्पंदरूपहोतीहै॥तबनाना
प्रकारकाजगतहोभासताहै॥ऽऔरनिस्पंदहोतीहै॥तब
जगतकाऽअभावहोजाताहै॥इसप्रकारकरकेउतपतप्र
करणविषेजगतकीउतपतिकहीहै॥तिसकेऽअनंतरइ
स्थितप्रकरणहै॥तिसविषेजगतकीइस्थितकहीहै॥सो
कैसेकहीहै॥जैसेइंद्रधनुषऽआकाशरूपहै॥ऽअविचार
करकेउसविषेऽआस्तिकभावनांहोतीहै॥जैसेसूर्यकी
किरणोंविषेजलाभासहोताहै॥तैसेऽअज्ञानकरकेजग
तप्रतीतहोतीहै॥जैसेसंकल्पनगरभासताहै॥तैसेइहज
गतभासताहै॥जैसेइंद्रजालकेपुत्रोंकीस्रिष्टसंकल्प
करकेइस्थितहै॥तैसेइहजगतभीजान॥हेरामजीइसप्र
कारइस्थितप्रकरणविषेकहाहै॥तिसकेतीनसहस्र
श्लोकहैं॥तिसकेविचारणेकरजगतसत्ताजातीरहतीहै॥
तिसकेऽअनंतरउपशमप्रकरणहै॥तिसकेपंचसहस्र
सलोकहैं॥तिसकेविचारणेकरऽअहंत्ववासनालीनहो
जातीहै॥जैसेजाग्रतेंस्वप्नस्रिष्टलीनहोजातीहै॥तैसेवि

चारवान की जगत वासनां जाती रहिती है ॥ काहे तें जो उ
सकें चिदे विषे जगत वासनां जाती रहती है ॥ जब जगत आ
काश रूप हूया ॥ तब वासनां किसकी करे ॥ तब मन भी उ
पशम हो जाता है ॥ देषणे मात्र उसकी चेष्टा होती है ॥ पर
उसके मन विषे कछु नहीं होती ॥ जैसे मूर्त्त की आगति दे
षणे मात्र होती है ॥ तैसे ज्ञानवान की क्रिया देषणे मात्र
होती है ॥ हे रामजी जब मन विषे इछा नष्ट होती है ॥ तब
मन भी निर्वाण हो जाता है ॥ जैसे तेल तें रहित दीपक निर्वा
ण हो जाता है ॥ तैसे इछा तें रहित मन निर्वाण हो जाता है
इस प्रकार उपशम प्रकरण है ॥ तिसके अनंतर निर्वा
ण प्रकरण है ॥ सो सोलं हजार पंचसय श्लोक है ॥ तिस
विषे परम निर्वाण वचन कहे हैं ॥ विचार कीये बिनां चित्त अ
रु चेतन का जो संबंध भासता है ॥ सो निर्वाण हो जाता है ॥ हे
रामजी अहंकार रूपी पिसाच था ॥ सो विचार कर नष्ट हो
जाता है ॥ जेती कछु इछा फुरती है ॥ सो सभ निर्वाण हो जाती
है ॥ हे रामजी शरीर के होते भी उह निहशरीर हो जाता है
इह नाना प्रकार का जगत उसकों नहीं भासता ॥ जगत की
आदिक और तें उह प्रत्य हो जाता है ॥ अहं त्वं जगत उसकों नहीं भा
सता ॥ जैसे सूर्य को अंधकार नहीं दृष्ट आवता ॥ तैसे उस
कों जगत नहीं भासता ॥ उह ऐसे पद कों प्राप्त होता है ॥ जि
सके किसी गमाण विषे जगत है ॥ जैसे सुमेर पर्वत के किसी
कोण विषे कमल होता है ॥ तिस पर भवरे स्थित होते हैं ॥
तैसे ब्रह्म के किसी अणु विषे जगत सार है ॥ अरु उह पुरु
ष आचेतन चिन्मात्र है ॥ अरूप अवलोक मनसकार
तिसकों प्रकाश रूप हो जाता है ॥ हे रामजी जिस पद कों
उह प्राप्त हूया है ॥ तिस पद की उस्तुत ब्रह्मा विष्णु रुद्र
कहें तो भी कहणे कों समर्थ न होवें ॥ सो ऐसा पद है ॥
॥ इति श्री मुमुक्षु प्रकरणे व्यवहार प्रतिपादनं नाम
सर्गः ॥ ८ ॥ श्री वसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी इह परम उप
शम वाक्य है ॥ इनको विचार करणे हारा उत्तम पद को प्रा

त होता है॥ जैसे उत्तम क्षेत्र विषे उत्तम बीज पाए तें उत्तम फ
ल संपूर्ण प्राप्त होता है॥ तैसे इसके विचारणे वाला उत्तम
फल को प्राप्त होता है॥ तातें इह उत्तम वाक्य हैं॥ हे रामजी
युक्ति तें रहित ब्रह्मा के वाक्य होवें॥ तो भी तिनका त्याग क
रीये॥ अरु पौरुष [पुरुष] वाक्य युक्त सहित होवें॥ तो भी तिनका
अंगीकार करीए॥ हे रामजी ब्रह्मा के वचन युक्ति तें रहित
होवें॥ तिनकौं सूके तृण की न्याई त्याग करीये॥ अरु बा
लिक के वचन युक्तिपूर्वक होवें॥ तो तिनका अंगीकार क
रीये॥ बडे छोटे का विचार न करीये॥ युक्तिपूर्वक वचन
होवे॥ तिनका अंगीकार करीये॥ हे रामजी मेरे वचन सम यु
क्तिपूर्वक हैं॥ अरु बोध का परम कारण है॥ जो पुरुष एका
ग्र होकर आदि तें ले अंत पर्यंत पडे॥ अथवा श्रवण करे
अरु विचारे॥ तिसकी बुध संस्कारी होवे॥ प्रथम वैराग्य प्र
करण के विचारसें तें इसको वैराग्य उपजता है॥ जेते कछु भोग
जगत के रमणीक पदार्थ भासते हैं॥ तिनको विरस हो
जाते हैं॥ जब भोगों विषे विरसता उपजी॥ तब शांति स्वरू
प आत्मतत्त्व विषे प्रीति उत्पत्ति होती है॥ शास्त्रों का सिधां
त बुधि विषे आन इस्थित होता है॥ अरु संसार के विका
रों तें बुधि निर्मल होती है॥ तब बहुड आधि व्याधि पीडा
उसकों नहीं होती॥ जें जें विचार दृढ होवे॥ त्यों त्यों शांतता भा
होवेगा॥ बहुड तिस पद की प्राप्त होवेगी॥ जिसके पाए तें सं
सार के क्षोभ न मिट जावेंगे॥ हे रामजी आत्मज्ञानी कों संसार
के रागद्वेष बंधन नहीं सकते॥ अर्थ इह॥ जो सुखस्वरूप आनंद क
र पदार्थों कों ग्रहण नहीं करता॥ अंतरात्मा ही विषे इस्थि
त होता है॥ अरु बाह्य तें सब क्रिया करता दृष्ट आवता है
पर रागद्वेष तें रहित है॥ हे रामजी जेते कछु जगत की प्रल
य अरु उत्पत्ति का क्षोभ न होता है॥ सो ज्ञानवान को खेद न
ही दे सकता॥ समुद्र की न्याई गंभीर रहता है॥ अरु पर्वत की
न्याई अचल इस्थित होता है॥ अरु चंद्रमा की न्याई शीत
ल है॥ हे रामजी आत्मज्ञान करके ऐसे पद को प्राप्त होता है
जिसके पाए तें अवर पावणा कछु नहीं रहता॥ सो आत्म

परमाणीकृत
तें रहित

ज्ञान का कारण इह मेरा मोक्ष उपाय शास्त्र है॥ जिस विषे ना
नाप्रकार के दृष्टांत हैं॥ दृष्टांत किसका नाम है॥ जो वस्तु अ
परिछिन्न होवे॥ अरु देषणे विषे न आवे॥ तिसकी न्याई
जो देषणे विषे आवे॥ तिस दृष्टांत कर समझी जावे॥ तिसका
नाम दृष्टांत है॥ हे रामजी इह जगत जो कारण कार्य रूप भा
सता है॥ अरु आत्मा कार्य कारण तें रहित है॥ आत्मा अरु
जगत की एकता कैसे होवे॥ तां ते जो मय दृष्टांत देवांगा॥ ति
सका एक अंग लेवणा॥ सर्व अंग नहीं लेणे॥ हे रामजी कारण
अरु कार्य की कलना मूर्खों नें करी है॥ तिसके निषेधणे
को मय स्वप्न का दृष्टांत कहांगा॥ तिसके समझणे कर तेरा
संसार नष्ट होवेगा॥ दृग अरु दृश्यरूप का भेद जो मूर्खों को भास
ता है॥ तिनके दूर करणे को भी स्वप्न दृष्टांत कहांगा॥ तिसके
विचारणे कर मिथ्या विभाग कलना का अभाव हो जावे
गा॥ हे रामजी ऐसी कलना का नाश करता मेरा मोक्ष उपा
य शास्त्र है॥ जब इसको वारंवार विचारेंगा॥ तब दृश्य भ्र
म शांति हो जावेगा॥ इस शास्त्र के विचार विषे लागेंगा॥ त
ब अज्ञान नष्ट हो जावेगा॥ अरु आत्मपद को प्राप्त होवेंगा
हे रामजी इह शास्त्र प्रकाश रूप है॥ जैसे अंधकार विषे प
दार्थ दृष्ट नहीं आवता॥ अरु दीपक के प्रकाश कर सब दृष्ट
देषता है॥ तैसे शास्त्र रूपी दीपक कर अरु विचार रूपी
नेत्रों साथ आत्मपद की प्राप्त होती है॥ हे रामजी आत्म ज्ञान
विचार बिनां वरस तप कर प्राप्त नहीं होता॥ जब विचार क
र दृढ़ अभ्यास करीए॥ तब प्राप्त होता है॥ तां ते मोक्ष उपाय
जो परम पावन शास्त्र है॥ तिसके विचार कीये तें जगत भ्र
म नष्ट हो जावेगा॥ जगत के देषतें देषतें जगत भाव मि
ट जावेगा॥ जैसे जेवड़ी विषे सर्प जाने तें भय पावता है॥ ज
ब जेवड़ी जानी॥ तब भय निवृत्त हो जाता है॥ तैसे इह जगत
भ्रम विचार कीये तें नष्ट हो जाता है॥ अरु जन्म मरण का
भय भी नहीं रहता॥ हे रामजी जन्म अरु मरण का भी बड़ा
त्रास है॥ पर इस शास्त्र के विचारे तें नष्ट हो जाता है॥ अरु
जिनहुं नें इसका विचार त्यागा है॥ सो माता के गर्भ विषे की

ढयों नी को प्राप्त होवेंगे ॥ अरु कष्ट तें कष्ट को पावेंगे ॥ अरु जो
इस शास्त्र को विचारेंगे ॥ सो विचारवान आत्मपद को प्रा
प्त होवेंगे ॥ अरु अनंत सृष्टि हीं आत्मज्ञानी को अपणे ही
रूप भासती हैं ॥ कोऊ पदार्थ आत्मा तें भिन्न नहीं भासता
जिसको जल का ज्ञान हूया है ॥ तिसको लहरी तरंग स
भ जल ही भासते हैं ॥ तातें आत्मज्ञानी को सभ आत्मा ही भा
सता है ॥ जैसे मंदराचल पर्वत के निकसे तें क्षीरसमुद्र शां
त रूप होता है ॥ तैसे संकल्प विकल्प तें रहित ज्ञानवान शां
ति रूप होता है ॥ हे रामजी अवर जो तेज होता है ॥ सो दाह
क होता है ॥ अरु ज्ञानरूपी तेज जिस घट विषे उदे होता
है ॥ सो शीतल शांत रूप होता है ॥ बहुड तिस विषे संसा
र का विकार कोऊ नहीं रहता ॥ हे रामजी संसार भ्रम आ
त्मा के प्रमाद कर होता है ॥ सो आत्मा के पाए तें यत्न वि उदे
ना शांति हो जाता है ॥ फूल के तोरणे विषे यत्न कछू होता
है ॥ पर आत्मा के पावणे विषे यत्न कछू नहीं ॥ काहे तें
जो बोधरूप बोध ही कर जणीता है ॥ हे रामजी जो जान
णे मात्र ज्ञानस्वरूप है ॥ तिस विषे स्थित होवणा काय
त्न है ॥ आत्मा शुध अद्वैतरूप है ॥ अरु तिस विषे जग
त भासता है ॥ सो भ्रममात्र है ॥ पूर्व अपर विचार कीये
तें जिसकी सत्ता न पाईए ॥ तिसको भ्रममात्र जानीये ॥
अरु जो पूर्व अपर विचार कीये तें सत होवे ॥ तिसको
सत रूप जाणीये ॥ तातें इस जगत की सत्ता न आदि
विषे है न अंत विषे है ॥ तातें स्वप्नवत है ॥ जैसे स्वप्न
के आदि विषे भी पदार्थ कोऊ नहीं ॥ अरु अंत विषे भी
कोऊ नहीं ॥ तैसे जगत आदि विषे भी नहीं ॥ अरु अंत
विषे भी नहीं पाईता ॥ हे रामजी जो आदि विषे भी न हो
वे ॥ अरु अंत विषे भी न रहे ॥ तिसको मध्य विषे भी अ
सत्य जाणीये ॥ तिसपर इह दृष्टांत कहते हैं ॥ संकल्प
पुरु ॥ ध्याननगर ॥ स्वप्नपुरु की न्याई इन पदार्थों की स जो
त्ता न आदि होती है ॥ न अंत होता है मध्य विषे भासती

56 है ॥ सो भ्रममात्र है ॥ तांते इह जगत भी भ्रममात्र है ॥ कार्यका
रणरूप भासता है ॥ पर अकारण है ॥ जगत आकार है
अरु आत्मा निराकार है ॥ इस जगत का दृष्टांत जो आ
त्मापर देवेंगा ॥ सो तिसका एक अंग लेणा ॥ आत्मबोध
के निमित सार भूत ग्रहण करणा ॥ जैसे अंधकार विषे
पदार्थ पड़ा होवे ॥ तिसको दीपक के प्रकाश साथ देष
लेणा ॥ सो दीपक के प्रकाश साथ प्रयोजन है ॥ ऐसे न
ही कहणा जो दीपक किसका है ॥ अरु तेल वाटी कैसा
है ॥ अरु किस स्थान का है ॥ दीपक का प्रकाश अंगीकार
करणा है ॥ एक अंग दृष्टांत का अंगीकार करणा ॥ आ
त्मबोध के निमित्त ॥ जो वचन अनुभव को प्रगट करे ति
सका अंगीकार करणा ॥ अरु जो अनुभव को प्रगट न
करे तिसका त्याग करणा ॥ जो पुरुष अपने बोध के नि
मित वचन को ग्रहण करता है ॥ सो ई श्रेष्ट है ॥ अरु जो
वाद के निमित ग्रहण न करे ॥ अरु विचार कर तिसका
अभ्यास करे ॥ तब उह आत्मबोध को पावता है ॥ हे राम
जी आत्मबोध पावणे निमित अवणमनन अभ्यास चहि
ता है ॥ जब शांति विचार संतोष संतसमागम सुधि बु
धि की प्राप्त होवे ॥ तब परमपद को पावता है ॥ हे रामजी
दृष्टांत जिसका कहीता है ॥ सो पदार्थ का एक देश लेक
र कहीता है ॥ सर्वमुख कहिले कर अखंडित का अभा
कर व हो जाता है ॥ अरु जो सर्वमुख दृष्टांत जानीये ॥ तब स
तरूप होता है ॥ सो ऐसे नहीं ॥ आत्मा सत्त स्वरूप है ॥ कार
ण कार्य ते रहित शुध चैतन्य है ॥ तिसके लखावणे निमि
त कारण कार्य जगत का दृष्टांत कैसे दीजे ॥ इस जगत
का जो दृष्टांत कहीता है ॥ सो एक अंग लेकर कहीता है
अरु बुधिवान भी दृष्टांत के एक अंग को ग्रहण कर
ते हैं ॥ हे रामजी जो श्रेष्ट पुरुष हैं ॥ सो अपणे बोध के नि
मित सार को ग्रहण करते हैं ॥ अरु जिज्ञासी को भी ए
ही चाहीए ॥ जो अपणे बोध के निमित्त सार को ग्रहण क

रे॥ अवर वाद न करे॥ जैसे छुधार्थी के चावल पाके आन
प्राप्त होवें॥ तब भोजन करणे का प्रयोजन होता है॥ उनकी
उतपति का वाद करणा व्यर्थ है॥ हे रामजी वाक्य सोई है
जो अनुभव को प्रगट करे॥ जो अनुभव को प्रगट न करे
तिस वाक्यों का त्याग करणा है॥ जो इस्त्री का वाक्य होवे अ
रु अनुभव को प्रत्यक्ष करे॥ तिस को ग्रहण करीये॥ अ
रु परम गुरु जानीए॥ अरु वेदों का वचन होवे॥ अरु अनु
भव को प्रत्यक्ष न करे॥ तिस का भी त्याग करणा है॥ जब ले
ग विश्राम को नही पाया॥ तब लग विचार कर्त्तव्य है॥ वि
श्राम का नाम तुरीया पद है॥ जब विश्राम की प्राप्त भई॥
तब अत्यंत शांति होती है॥ जैसे मंदराचल पर्वत के छो
भ ते रहित क्षीर समुद्र शांतवान हूया॥ तैसे शांतिवान हो
ता है॥ हे रामजी जो तुरीया पद संयुक्त पुरुष है॥ तिस कों
कर्मों कि करणे न करणे विषे प्रयोजन कछु नही रहा॥
स देह रहे॥ अथवा अदेह होवे॥ गृहस्थ होवे॥ अथवा वि
रक्त होवे॥ तिस को कर्तव्य कछु नही॥ उह पुरुष संसार के
पार को प्राप्त हूया है॥ हे रामजी उपमेय को उपमा कर के
जानीता है॥ सो एक अंग को ग्रहण कर के जानीता है॥ त
ब बोध का प्राप्त होती है॥ अरु जो बोध ते रहित है॥ सो मु
क्ति को प्राप्त नही होता॥ उह अर्थ वाक्य कहता है॥ हे राम
जी शुध स्वरूप आत्म सत्ता इस के घट विषे विराजती
है॥ तिस कों त्याग कर जो अवर विकल्प उठावते हैं॥ सो
चोग चुंच है॥ अरु मूर्ख हैं॥ हे रामजी अर्थ प्रत्यक्ष होवे॥ = पशू
सो प्रमाण मानने योग्य है॥ अवर जो प्रमाण है अनुमा
नादिक॥ सो तिन की सत्ता प्रत्यक्ष प्रमाण कर होती है॥ जैं
से सर्व नदीयों का अधिष्टान समुद्र है॥ तैसे सर्व प्रमाणों
का अधिष्टान प्रत्यक्ष प्रमाण है॥ सो प्रत्यक्ष क्या है॥ सो सु
ण॥ हे रामजी सर्व चक्षु रूप ज्ञान संवित संवेदन है॥ तिस
चक्षु कर जो विद्यमान होवे॥ तिस का नाम प्रत्यक्ष प्रमाण
है॥ तिन प्रमाणों को विषय करणे वाला जीव है॥ अपणे
वास्तव स्वरूप के अज्ञान कर अनात्म रूपी दृश्य बनी

है॥ तिस विषे अहंकृतकर अभिमानी हूया है॥ जिस विषे
अभिमानी हूया है॥ बहुड तिस दृश्य विषे हेयउपादेयबुध
हूई है॥ अरु रागद्वेष करपडा जलता है॥ आपको कर्त्ता मा
नकरपडा भटकता है॥ बालमुख हूया है॥ हे रामजी जब
विचार करके अंतरमुख होवे संवेदन॥ तब आत्मपद प्र
प्रमालक्त त्यक्त होवे॥ अरु निजभावको प्राप्त होवे॥ अरु परिछिन्न भावका
अभाव हो जाता है॥ अरु शुद्ध सत्ताको प्राप्त होता है॥ जैसे
सुपने के जागेतें सुपने का शरीर अदृश्य हो जाता है॥ तै
से आत्मा के प्रत्यक्त जानेतें सब भ्रम मिट जाते हैं॥ अरु शु
ध आत्मसत्ता भासती है॥ हे रामजी इह जो दृष्टा भासता है
सो मिथ्या है॥ जो दृष्टा है॥ तो दृश्य भी होती है॥ अरु जो दृ
श्य है॥ तो दृष्टा भी होता है॥ सो इह भ्रम मिथ्या है॥ आका
शरूप है॥ जैसे पवन विषे स्पंदशक्ति रहती है॥ तैसे आ
त्मा विषे इस्पंद शक्ति रहती है॥ जब संवेदन स्पंदरूप हो
ती है॥ तब दृश्यरूप होकर इस्थित होती है॥ जैसे सुपने
विषे अनुभव सत्ता दृश्यरूप होकर भासती है॥ तैसे इह
दृश्य भी जानला॥ तातें सर्व आत्मसत्ता है॥ ऐसे विचार क
रके आत्मपदको प्राप्त होवो॥ जो ऐसे विचार कर आ
त्मपदको प्राप्त न हो सको॥ तब अहंकार का उलेख जो
फुरता है॥ तिसही का अभाव करो॥ पाछे जो शेष रहेगा
सो शुध आत्मसत्ता है॥ अरु जब शुध बोधको तुम प्रा
प्त होवोगे॥ तब ऐसी चेष्टा पडी होवेगी॥ जैसे यंत्री की पुत
ली संवेदन बिनां पडी चेष्टा करती है॥ तैसे देहरूपी पुत
ली के पालनहारा मन संवेदन करहोता है॥ तिसकरके चे
ष्टा पडी होवेगी॥ पर जब अहंकृत का अभाव होवेगा॥ तातें
यत्न करके तिस पद पावनेका अभ्यास करो॥ जो नित्य शु
ध शांतिरूप है॥ हे रामजी अवर देवशास्त्र को त्याग कर अ
पना पुरुषार्थ करो॥ अरु आत्मपदको प्राप्त होवो॥ जो कौ
उ पुरुषार्थ विषे परायण है॥ सो आत्मपदको प्राप्त होता
है॥ अरु जो नीच है॥ सो नहीं प्राप्त होता॥ तातें अपने पुरु
षार्थको आश्रय करके संसार समुद्र के पारको प्राप्त

होवे॥ ॥इति श्रीमुमुक्षुप्रकरणे मोक्षव्यवहारवर्न दृष्टांतप्रमाण
नं नाम सर्गः॥ १८ ॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी जब
इसको संगत करके शुध बोध होवे॥ तब आत्मपद पाव
णे को समर्थ होवे॥ प्रथम सतसंग करे॥ बडे महापुरु
षों के गुण समसंतोषआदिक रिदे विषे धारे॥ इनकर
ज्ञान रिदे विषे उपजता है॥ जब आत्मज्ञान उपजा॥ तब
समआदिक गुण भीआन इस्थित होते हैं॥ तब समआ
दिक गुणों कर आत्मज्ञान होता है॥ अरु आत्मज्ञान क
र समआदिक होते हैं॥ तांते समआदिक का अभ्यास क
रे॥ तब शीघ्र ही आत्मपद की प्राप्त होवे॥ अरु ज्ञानवान
कों समआदिक गुण स्वाभाविक आन उदे होते हैं॥ अ
रु जिज्ञासी को अभ्यास कर प्राप्त होते हैं॥ तिसतें अनंत
र ज्ञान की प्राप्त होता है॥ जैसे ऊचे वृक्ष कर धान्यों की पा
लनां करते हैं॥ तैसे समआदिक के पालने कर आत्मप
द कों प्राप्त होता है॥ हे रामजी इस मोक्षउपाव शास्त्र कों
आदितें लेकर अंतपर्यंत श्रवण करे॥ विचारे॥ तब
भ्रांतिनिवृत होवेगी॥ धर्म अर्थ काम मोक्ष सर्व पुरुषा
र्थ कर के सिध होते हैं॥ इह मोक्षउपाव शास्त्र बोध का
परम कारण है॥ जो शुध बुधिवान पुरुष इसकों श्रधा
संयुक्त विचारेगा॥ तिसकों शीघ्र ही आत्मपद की प्राप्त
होवेगी॥ तांते इस मोक्षउपाव का भली प्रकार अभ्यास
करो॥ ॥इति श्रीमुमुक्षुप्रकरणे निर्णयसमा
प्तं नाम सर्गः॥ १९॥ शुभम्॥ द्वो प्रकरण समाप्तम्॥

श्रीगुरुभ्यो नमः॥ ॐ॥ अथ उतपतप्रकरण लिख्य
ते॥ ॐ॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ मुमुक्षुप्रकरण के अनंत
र उतपतप्रकरण श्रवण कर॥ हे रामजी ब्रह्म अरु ब्र
ह्मवेता इह सर्व दृष्ट ब्रह्म के आश्रय पडे फुरते हैं॥ म
य अरु तं इदं सहित इत्यादिक सर्व दृष्ट आत्मसत्ता के
आसरे पडे फुरते हैं॥ जैसे स्वप्ने विषे दृष्ट होते हैं॥ सो

ऽअनुभवसत्ताविषेहोतेहैं॥ तैसेइहभीजान॥ ऽअरुऽअवरजो
तिसविषेविकल्पहोतेहैं॥ जोजगतक्याहै॥ ऽअरुकैसेउ
त्पतिहूयाहै॥ ऽअरुकिसकोहै॥ इत्यादिकजोविकल्पहैं
सोचोगचुंचहै॥ हेरामजीइहजगतभ्रममात्रस्वरूपहै॥ इ
हांस्वप्नकादृष्टांतविचारलेणा॥ प्रथममुमुक्षप्रकरणतु
जकोकहाहै॥ ऽअबउतपत्तप्रकरणकहताहां॥ सोसुण
जोज्ञानरूपहै॥ सोवस्तुहै॥ सोईदृश्यनामहै॥ हेरामजीब
ढताभीउहीहै॥ जोउपजाहोताहै॥ ऽअरुघटताभीउहीहै॥
जोउपजाहोताहै॥ ऽअरुबंधमोक्षभीउहीहोताहै॥ जोउ
पजाहोताहै॥ उत्तमनीचभीउहीहोताहै॥ जोउपजाहोता
है॥ जोउपजाहीनहोवे॥ तिसकानबंधणाहै॥ नघटणाहै
नबंधहोताहै॥ नमोक्षहोताहै॥ नउत्तमहोताहै॥ ननीचहो
ताहै॥ हेरामजीस्थावरजंगमजोजगतदिषीताहै॥ सोस
मऽआकाररूपहै॥ द्रष्टाकाजोदृश्यसाथसंयोगहै॥ इसी
कानामबंधनहै॥ तिससंयोगकानिवृत्तहोवणाइसीका
नाममोक्षहै॥ सोतिसीकेनिवृत्तकाउपावमयकहताहै
देहरूपीजोजगतहै॥ सोचिन्मात्ररूपहै॥ ऽअवरकछुउप
जानहीं॥ ऽअरुउपजाजोभासताहै॥ सोऽऐसेहै॥ जैसेसुषु
प्ततेस्वप्नाहोताहै॥ तैसेजगतकीउतपतिहै॥ ऽअरुजैसे
स्वप्नतेंसुषुप्तहोतीहै॥ तैसेजगतकीप्रलयहै॥ जोप्रल
यविषेहूपरहताहै॥ तिसकीसंज्ञाव्यवहारकेनमित्त
राष्यांहै॥ चित्तसत्ताब्रह्मऽआत्मासतचितऽआनंदइत्या
दिकजिसकेनामराषेहैं॥ सोसनकाऽअपणाऽआपहै॥
चेतताकरकेतिसकानामजीवहूयाहै॥ तातेशब्दऽअर्थों
कोग्रहणकरणेलागा॥ हेरामजीशब्दऽअर्थजोग्रहण
करताहै॥ सोजीवहै॥ ऽअरुचेतन्यसंवेदनविषेजोस्पंद
हूयाहै॥ सोसंकल्पविकल्परूपमनहोकरस्थितहूया
है॥ तिसकेसमरणेकरकेदेशकालनदीयांपर्वतस्था
वरजंगमरूपजगतहूयाहै॥ तिसकोकेईऽअविद्याकह
तेहैं॥ ऽअरुकेईजगतकहतेहैं॥ केईमायाकहतेहैं॥ के
ईसंकल्पकहतेहैं॥ केईदृश्यकहतेहैं॥ वास्तवतेंसम

गत्म स्वरूप है॥ इतर कछु नहीं॥ जैसे स्वर्णतें भूषण होता है
सो भूषण स्वर्ण रूप है॥ स्वर्णतें इतर भूषण कछु वस्तु नहीं
तैसे जगत अरु आत्म विषे कछु भेद नहीं॥ भेद तब होवे ज
ब कछु उपजा होवे जगत॥ जो उपजा ही न होवे॥ तो भेद कैसे
होवे॥ जो कछु भेद भासता है॥ सो मृगतृष्णा के जलवत है
जैसे मृगतृष्णा की नदी के तरंग भासते हैं॥ सो तहां सूर्य की
किरणें ही तरंग रूप हो भासती है॥ पर है कछु नहीं॥ तैसे
आत्मा विषे जगत भासता है॥ चैतन्य के अणु अणु विषे
सृष्टि है॥ पर कैसीयां हैं॥ आत्म रूप हैं॥ कछु उपजी नहीं॥ स
वेदा अद्वैत सत्ता अपणे आप विषे स्थित है॥ तिस विषे ज
न्म मरण बंध मुक्ति कैसे होवे॥ जेती कछु बंध मुक्ति की क
लना भासती है॥ सो वास्तव तें कछु नहीं॥ आत्मा के अज्ञान क
रके भासती हैं॥ हे रामजी अवर जगत कछु उपजा नहीं॥
अपणी कलना ही जगत रूप हो भासती है॥ अरु प्रमाद
करके सत हो रही है॥ निवृत्त होणा कठन भासता है॥ अरु
नेत नेत शब्द जो कहते हैं॥ सो भी अर्थ है॥ इनों वचनों कर तो
जगत दूर नहीं होता॥ हे रामजी युक्ति रूप वचनों विना दृश्य
भ्रम निवृत्त नहीं होता॥ अरु पुन्य तप तीर्थ स्नान दान करके
जगत भ्रम दूर कीया चहते हैं॥ सो मूर्ख हैं॥ इस प्रकार तो दृ
ढ होता है॥ जहां जावेगा तहां इसको देश काल क्रिया नेतपं
चभौतिक सृष्टि ही दृष्ट आवेंगी॥ तांते इनका नाश न होवेगा
अरु जो जगततें उपरत होकर समाधि लगाइ बैठेगा॥ तो
भी चिरकालतें उतरें बहुड़ इसकों जगत के दृष्ट अर्थ भास
आवेंगे॥ जो बहुड़ अनर्थ रूप संसार भासया॥ तो भी समा
धि का क्या सुख हूआ॥ जब लग समाधि विषे रहेगा॥ तब ल
ग सुखी न रहेगा॥ तांते इनों उपावों कर जगत भ्रम दूर नही
होता॥ जैसे कमल की डोडी विषे बीज होता है॥ जब लग उ
स बीज का नास नही होता॥ बहुड़ बहुड़ उतपत होता है॥
जो वृक्ष के पात तोड़ीये॥ तो वृक्ष का नास नही होता॥ जब ल
ग अज्ञान रूपी बीज नष्ट नही होता॥ तब लग जगत रूप
भ्रम है॥ जब अहं रूपी बीज नष्ट होवेगा॥ तब जगत रूपी वृ
क्ष का अभाव हो जावेगा॥ अवर जो उपाव हैं॥ सो पातों का तो

रणा है॥ सो अवर उपावों कर अक्षय पद प्राप्त नहीं होता॥
अरु समाधि भी नहीं होती॥ हे रामजी ऐसी समाधि तो किसी
कों नहीं प्राप्त होती॥ जो सिला की न्यांई हो जावे॥ मयतो सम
स्यान देखे हैं॥ अरु जो ऐसी होवे तो भी संसार की सत्तता नि
वृत्त न होवेगी॥ काहे तें जो अज्ञान रूपी बीज निवृत्त नहीं भ
या॥ इह समाधि ऐसी है॥ जैसे जागृत तें सुषुप्त हो जावे॥ जैं
से अज्ञान रूपी वासनों कर सुषुप्त तें जाग आवता है॥ तैसे अ
ज्ञान रूपी बीज वासनों कर के भी समाधि तें जाग आवता है
उसकों वासनां खैंच ले आवती है॥ हे रामजी तप समाधि आ
दिकों कर संसार भ्रम निवृत्त नहीं होता॥ जैसे कांजी कर के
क्षुधा किसी की निवृत्त नहीं होती॥ तैसे तप समाधि कर के
चित्त रूपी वृत्त एकाग्र होती है॥ पर संसार निवृत्त नहीं होता
जब लग चित्त समाधि विषे लागा है॥ तब लग सुखी होता
है॥ बहुर नाना प्रकार के अर्थ अनर्थ संयुक्त जगत भासआ
वता है॥ हे रामजी अज्ञान कर के जगत भासता है॥ अरु वि
चार कीए तें नष्ट हो जाता है॥ जैसे बालिक को अपणी पिछां
वें विषे अज्ञान कर के वैताल भासता है॥ अरु ज्ञान कर के
निवृत्त हो जाता है॥ तैसे इह जगत अविचार कर के भासता
है॥ अरु विचार कर के निवृत्त हो जाता है॥ हे रामजी वास्तव
तें जगत कछु उपजा नहीं॥ असत्य रूप है॥ जो कछु वास्तव
तें उपजा होता॥ तो निवृत्त न होता॥ विचार कीये तें निवृत्त हो
जाता है॥ तां तें जानीता है॥ जो बण्या कछु नहीं॥ जो वस्तु स
त्य होती है॥ सो निवृत्त नहीं होती॥ अरु जो असत्य है॥ सो इ
स्थिर नहीं रहती॥ हे रामजी सत्य रूप आत्मा है॥ सो तिस का
अभाव कदाचित नहीं होता॥ अरु असत्य रूप जो जगत है
सो इस्थिर नहीं रहता॥ इह जगत आत्मा विषे आभास रू
प है॥ आरंभ परणाम कर कछु उपजा नहीं॥ जड़ हो चेतन अ
ण होता है॥ तहां तिरष्टां भी होती हैं॥ काहे तें जो त्रिष्टां अभा
स रूप है॥ आत्म रूप आदर्श है॥ तिस विषे अनंत तिष्टां
प्रतिबिंबित होती हैं॥ अरु आदर्श विषे प्रतिबिंब भी तब
होती है॥ जब आदर्श निकट होता है॥ अरु आत्मा के नि

कर दूसरा कोऊ नहीं॥ अरु प्रतिबिंब होती यां हैं॥ काहे
तें जो अनात्म मात्र हैं॥ एक ही आत्म सत्ता चेतनता कर के
चेतन की न्याई होता सती है॥ अवर कछु बण्या नहीं॥ जैसे
फूल विषे सुगंध होती है॥ अरु तिलों विषे तेल होता है॥
अरु अग्नि विषे उष्णता होती है॥ जैसे मनोराज की सृष्ट
होती है॥ तैसे आत्मा विषे जगत है॥ जैसे मनोराज की सृष्ट
मनोराज तें भिन्न नहीं॥ तैसे इह जगत आत्मा तें भिन्न न
हीं॥ ॥इति श्री उतपतप्रकरणे बोधवर्ननं नाम स
र्गः॥ १ ॥ वसिष्टोवाच॥ हे रामजी एकग्र का संजोग अ ज
ग्यान है॥ अबलों का भूषण है॥ अरु बोध का कारण है॥ अ
का सजनाम एक ब्राह्मण होत भया है॥ सो कैसा ब्राह्मण
है॥ शुध चिदाकास तें तिसकी उतपति होत भई है॥ पर फिरइष्टनिमवे वाला
मेष्टी है॥ अरु सदा आत्मा विषे इस्थित रहता है॥ अरु भ
लीप्रकार गऊ जा की पालना करता है॥ अरु चिरंजीवी है॥ त
ब मृत्यु देवता विचार करते भया॥ जो मय अविनासी हों॥
अरु अवर जीव उपजे हूये हैं॥ तिनको मय मारता हों॥ प
र इह ब्राह्मण जो है॥ तिसको मय भोजन नहीं कर सक
ता॥ मेरी शक्ति इस पर कुंठित हो जाती है॥ जैसे खड्ग की धा
रा पथर पर चलाई कुंठित हो जाती है॥ तैसे मेरी शक्ति ब्रा
ह्मण पर कुंठित हो जाती है॥ हे रामजी ऐसे विचार कर के
मृत्यु ब्राह्मण के भोजन निमित उठ्या॥ जैसे कोष्ट पुरुष
अपणे आचार को नहीं त्यागते॥ तैसे मृत्यु अपणे कर्म को
विचार कर चल्या॥ जब ब्राह्मण के ग्रह विषे मृत्यु प्रवेश
कीया॥ तब मृत्यु के जलावणे को अग्नि उठ देनई॥ जैसे महा
प्रलय विषे तेज संयुक्त सर्व पदार्थों को जलावती है॥ तैं र्अगान
से मृत्यु को अग्नि जलावणे लागी॥ तब मृत्यु दौड कर आ
गे गया॥ जहां ब्राह्मण बैठा था॥ अंतह पुर विषे तहां जाय
कर पकडने लागा॥ पर ब्राह्मण को पकड न सके॥ जैसे ब
डे बली भी अवर के संकल्प पुरुष को पकड नहीं सकते
तैसे मृत्यु ब्राह्मण को पकड न सके॥ तब मृत्यु बडे धर्म
राज के ग्रह में आवत भया॥ ॥अक कहा॥ हे भगवन जो॰

कोऊ उपजा है॥ तिसको मय भोजन करता हों॥ पर एक ब्राह्म
ण आकाश तें उपजा है॥ तिसके मय वस नहीं कर सकता
इह का कारण है॥ यमोवाच॥ हे मृत्यु किसी को तूं मा
र नहीं सकती॥ जो कोऊ मरता है॥ सो अपने कर्मों कर म
रता है॥ जो कोऊ कर्मों का करता है॥ तिसके मारणे को तूं स
मर्थ होवेंगा॥ अरु जिसका कर्म कोऊ नहीं॥ तिसके मार
णे को तूं समर्थ न होवेंगा॥ तातें जायकर ब्राह्मण के कर्म
खोजो॥ जब उसके कर्मों को पावेगा॥ तब उसके मारणे को
समर्थ होवेंगा॥ अन्यथा समर्थ न होवेंगा॥ हे रामजी जब
इस प्रकार यम कहा॥ तब तिसके कर्म खोजणे के निमित्त मृ
त्यु चला॥ कर्म नाम है वासना का॥ ऊहां जायकर ब्राह्मण
के कर्म ढूंढणे लागा॥ दसों दिसा देषीयां॥ ताल समुद्र ब
गीचे देखे॥ द्वीप द्वीपांतर देखे॥ इत्यादिक सब स्थान देष
ता फिरा॥ पर ब्राह्मण के कर्मों की प्रतिमा कहूं न पाई॥ हे रा
मजी मृत्यु बड़ा बलवान है॥ पर ब्राह्मण के कर्म न पाए॥ त
ब मृत्यु धर्मराजा के पास आया॥ कैसा धर्मराजा है॥ जो सं
पूर्ण संज्ञायों का नास करता है॥ सदा ज्ञान स्वरूप है॥ तिसको
मृत्यु कहत भया॥ हे संज्ञायों के नाश करता तिस ब्राह्मण
के कर्म मुझको कहूं नहीं दृष्ट आवते॥ बहुत प्रकार ढूंढ
रहा हों॥ जो कोऊ शरीरधारी है॥ सो सब कर्मों संयुक्त है॥ इ
सका जो कर्म कोऊ नहीं॥ सो क्या कारण है॥ यमोवाच॥
हे मृत्यु इस ब्राह्मण की जो उत्पत्ति है॥ सो शुद्ध चिदाकास तें
हूई है॥ तहां न कोऊ कारण है॥ न कोऊ कर्म था॥ जो पदार्थ
कारण बिना है॥ सो जिस विषे नास या है॥ सो ई रूप है॥ हे मृ
त्यु शुद्ध आत्मा आकाश तें जो इसका होवणा हूया है॥ तो इ
ह भी उही रूप है॥ तातें इह ब्राह्मण भी शुद्ध चिदाकाश रू
प है॥ इसका चेतन्य ही वपु है॥ इसका कर्म कोऊ नहीं॥ अ
रु न कोऊ कर्म कीया है॥ शुद्ध चिदाकाश रूप है॥ अपने
आप तें इसका होणा हूया है॥ इस कारण तें इसका नाम
स्वयंभू है॥ अरु सदा अपने आप विषे इस्थित है॥ इस

कोजगतकछुनहीभासता॥सदाअद्वैतरूपभासताहे॥
मृत्योवाच॥ हेभगवनजोइहआकाशरूपहे॥तोआ
काररूपकिंउदृष्टआवताहे॥यमोवाच॥हेमृत्युइह
सदानिराकारचैतन्यवपुहे॥इसकेसाथआकारकोकुनही
अहंभावभीइसविषेनही॥बहुरइसकानासकैसेहोवे॥
अहंत्वंकोतोजानताहीनही॥अरुजगतकानिश्चयभीइ
सविषेनही॥इहआत्मासर्वदाअचेतचिन्मात्रजानता
हे॥जिसकेमनविषेपदार्थोंकासतभावहोताहे॥तिसका
नासभीहोताहे॥अरुजिसकोंजगतभासताहीनही॥ति
सकानाशकैसेहोवे॥हेमृत्युकोउबडाबलीभीहोवे॥अ
रुजंजीरजेवडेभीहोवें॥तोभीआकाशकोबंधनसकेगा
तांतेआत्माभीआकाशरूपहे॥इसकानाशकैसेहोवे
तांतेइसकेनाशकरणेकाउद्यमत्यागकर॥अवरदेहा
दिकोकोजामार॥इहतुजसोंनमरेगा॥हेरामजीऐसेसुणे
करमृत्युआश्चर्यवानहूया॥अरुअपणेगृहविषेआ
या॥रामोवाच॥हेभगवनइहतोहमारेवडेपितामाब्र
ह्माजीकीवार्तातुमोकहीहे॥वसिष्ठोवाच॥हेरामजी
वार्तातोब्रह्माजीकीकहीहे॥परमृत्युअरुयमकेसंवाद
निमितमयतुजकोंश्रवणकराईहे॥इसप्रकारजबबहु
तकालव्यतीतभया॥अरुकल्पकाअंतआया॥तबसर्व
लोकोंकोंमृत्युभोजनकरलीया॥बहुरब्रह्माजीकेभोज
नकरणेकोंगया॥जैंसेकिसीकाकर्महोताहे॥अरुएक
वारसिधनभया॥तबछोडनहीदेता॥बहुरउद्यमकरता
हे॥तैसेमृत्युभीब्रह्माकेसन्मुखभया॥तबधर्मराजेकहा
हेमृत्युइहजोब्रह्माहे॥सोआकाशरूपहे॥अरुआकाश
होइसकाशरीरहे॥तोआकाशकेपकडनेकोंतैंकैसेस
मर्थहोवेगा॥इहतोपंचभौतकशरीरतेंरहितहे॥जैंसेसं
कल्पपुरुषहोताहे॥तोउनकाआकाशहीवपुहोताहे॥तै
सेइहआकाशरूपहे॥आदिअंतमध्यतेंरहितहे॥अहं
लेउलेखतेंरहितहे॥अचेतचिन्मात्रहे॥इसकेमारणेको

ईतर.

तिना सर्वतोमु
...

तें कैसे समर्थ होवेगा ॥ अरु इह जो इसका वपु भासता है ॥ सो
ऐसे है ॥ जैसे सिलपी के मन विषे थंभे की पुतलीयां होती
हैं ॥ सो कछु हूई नहीं थंभा ही है ॥ तैसे स्वरूप तें इसका होणा
नहीं ॥ इह तो ब्रह्मस्वरूप है ॥ हमारे तुमारे मन विषे इसकी प्र
तिभा हूई है ॥ इह तो निर्वपु है जो पुरुष देहवान होता है ॥
तिसको ग्रहण करणा सुगम है ॥ अरु बंध्या के पुत्र को ग्रहण
करणे को समर्थ नहीं हूवीता ॥ काहे तें जो निर्वपु है ॥ इसके मा
रणे को त्याग ॥ अरु अवर देहादिकों को जा मार ॥ ३५ ॥ इति
श्री उतपत प्रकरणे प्रथमसृष्टिवर्णनं नाम सर्गः ॥ २ ॥
॥ वसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी इस प्रकार मृत्यु कों यम कहा ॥ ब्र
ह्माजी आकाशरूप है ॥ द्वैत कलनां तें रहित है ॥ हे रामजी शु
ध चिन्मात्र सत्ता सूक्ष्म है ॥ जिस विषे आकाश भी पर्वत की न्या
ई स्थूल है ॥ तिस चित संवित्त विषे जो अहं अस्मि चेतउन्मु
ख हूया है ॥ तिस कर अपणे साथ देह को देषता है ॥ सो दे
ह भी आकाशरूप है ॥ हे रामजी शुध चिन्मात्र विषे चेतका
उलेख किसी कारण कर नहीं हूया ॥ स्वतह ही ऐसे उलेख
आन फुरता है ॥ तिसका नाम स्वयंभू ब्रह्मा हूया है ॥ तिस ब्र
ह्मा को सदा ब्रह्म ही निश्चय है ॥ ब्रह्मा अरु ब्रह्म विषे भेद
कछु नहीं ॥ जैसे फूल अरु सुगंध विषे भेद कछु नहीं ॥ जैं
से आकाश अरु शून्यता विषे भेद कछु नहीं ॥ तैसे ब्रह्मा
अरु ब्रह्म विषे भेद कछु नहीं ॥ जैसे जल ही द्रवता कर के त
रंग रूप हो भासता है ॥ तैसे आत्मसत्ता चेतनता कर के ब्रह्मा
रूप होकर भासती है ॥ ब्रह्मा दूसरी वस्तु कछु नहीं ॥ सदा चेत
न्य आकाश ही है ॥ पृथवी आदिक तत्वों तें रहित है ॥ हे राम
जी न कोऊ इसका कारण है ॥ न कर्म है ॥ श्रीरामोवाच ॥ हे
भगवन तुमों कहा जो पृथवी आदिक तत्वों ते रहित ब्रह्मा
जी का वपु है ॥ अरु संकल्पमात्र है ॥ तो स्मृत संस्कार इसका
कारण किउ न होवे ॥ जैसे हम को स्मृत है ॥ तैसे ब्रह्माजी को भी
होवे ॥ श्री वसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी संस्कार स्मृति उसका
कारण होती है ॥ जो आगे भी देहवान होता है ॥ जो पदार्थ आ

गोइ द्रष्टा होता है॥ तिसका स्मृतसंस्कार भी होता है॥ अरु जो द्र
ष्टा नही होता॥ तिसका स्मृतसंस्कार भी नही होता॥ सो ब्रह्मा
जी अद्वैत अज है॥ आदि अंत मध्य तें रहित है॥ तिसकी स्मृ
ति कारण कैसे होवे॥ इह तो बोधस्वरूप है॥ अपने आप तें इ
सका होणा हूया है॥ इसतें इसी का नाम स्वयंभू है॥ शुध बो
ध विषे चेतन का उल्लेख हूया है॥ सो आत्मतत्व ब्रह्मारूप हो
कर इस्थित हूया है॥ अरु अपनी चितसंवित कारण है
अवर इसका कोरण कोऊ नहीं॥ सदा निराकार है॥ अरु सं
कल्परूप इसका सरीर है॥ अवर पृथवी आदिक भूतों तें
रहित है॥ शुध अतिवाहक इसका वपु है ॥रामोवाच॥
हे मुनीश्वर जेते कछु जीव हैं॥ तिनके दुइ दुइ शरीर हैं॥ ए
क अतिवाहक अरु दूसरा आधिभौतिक शरीर है॥ तो
ब्रह्माजी का अतिवाहक कैसे हूया॥ एवार्ता स्पष्ट करक
हो ॥वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी सकारणरूप जो जीव हैं॥
तिनके दो दो शरीर हैं॥ अरु ब्रह्माजी का वपु अकारण है
इस कारण तें इसका एक अतिवाहक है॥ हे रामजी सब
नों जीवों का कारण ब्रह्मा है॥ इस कारण तें जीव दो दो शरी
र धारते हैं॥ अरु ब्रह्माजी का कारण कोऊ नहीं॥ अपने
आप तें उपजा है॥ इस कारण तें इसका नाम स्वयंभू है॥
आदि जो इसका प्रादुर्भाव [प्रगट] हूया है॥ सो अतिवाहक शरी
र है॥ अपने स्वरूप का विस्मरण नहीं भया॥ सदा अप
णे वास्तव स्वरूप विषे इस्थित है॥ तांतें अतिवाहक है॥ स
रीर अरु दृश्य को अपने संकल्पमात्र जानता है॥ अरु जि
नको दृश्य विषे दृढ प्रतीत है॥ तिसको आधिभौतिक श
रीर कहीता है॥ जैसे सरदी करके जल गाढा हो जाता है॥ तै
से दृश्य की दृढता करके आधिभौतिक हो जाता है॥ हे राम
जी जेताक कछु जगत तुझको दृष्ट आवता है॥ सो सब आ·
काशरूप है॥ किसी पृथवी आदिक भूतों तें नहीं हूया॥ ने
म करके आधिभौतिक भासता है॥ जैसे स्वप्ननगर आकाश
रूप होता है॥ किसी कारण सों नहीं उपजा॥ अरु न किसी पृ
थवी आदिक तत्वों तें उपजा है॥ सब आकाशरूप है॥ निद्रा
दोष कर आधिभौतिक हो भासता है॥ तैसे इह जागत जाग

तनी अज्ञानकरके अधिभौतिक भासता है॥ जैसे स्वप्नसृष्टि अ-
ज्ञानकरके अर्थाकार भासती है॥ तैसे जाग्रतजगत भी अज्ञा-
नकरके अर्थाकार हो भासता है॥ हे रामजी इह संपूर्ण जगत
संकल्पमात्र है॥ अवर कछु बण्या नही॥ जैसे मनोराज क-
रके पर्वत आकास पृथ्वी होकर भासती है॥ तैसे इह जग-
त भी जान॥ वास्तव तें बण्या नही॥ सभ जगत मनोराज संक-
ल्प कर उपजा है॥ जैसे बीज तें देस काल कर अंकुर उपज-
ता है॥ तैसे सर्व द्रिस्य मन तें उपजी है॥ सो मन ही ब्रह्मा है॥ अ-
रु ब्रह्मा ही मन है॥ तिसके संकल्प विषे जगत इस्थित है॥ सो
सभ मन का रूप है॥ अधिभौतिक कोऊ नही हूया॥ हे रामजी
अधिभौतिक जगत जो आत्मा विषे भासता है॥ सो भ्रममा-
त्र है॥ जैसे बालिक कों परछावें विषे वैताल भासता है॥ तै-
से अज्ञानी कों अधिभौतिक जगत भासता है॥ सो भ्रममात्र
है॥ वास्तव तें अधिभौतिक हूया नही॥ हे रामजी जेते कछु
जीव हैं॥ सो सभ अतिवाहक हैं॥ पर अज्ञानी को अतिवाहक-
ता नही भासती॥ अधिभौतिकता द्रिड होइ रही है॥ अरु जो
ज्ञानवान पुरुष है॥ सो अतिवाहक रूप है॥ अरु अतिवा-
हक दरसी है॥ आत्मदरसी है॥ हे रामजी जिन पुरषों कों
प्रमाद नही हूया॥ सो सदा आत्मस्वरूप विषे इस्थित हैं॥ सो
आत्मदरसी हैं॥ अरु अतिवाहक रूप हैं॥ अरु सभ जग-
त भी आकासरूप है॥ जैसे संकल्पपुर होता है॥ जैसे गंध-
र्व नगर होता है॥ जैसे स्वप्नपुर होता है॥ तैसे इह जगत है॥
जैसे थंभे विषे सिलपी पुतलीयां कल्पता है॥ जो एती पुतली-
यां इस थंभे विषे हैं॥ सो पुतलीयां उपजी कछु नही॥ जिं उ-
इस्थित का त्यों थंभा है॥ पुतलीयां का सदभाव सिलपी के मन विषे
होता है॥ स्वरूप तें कछु बणी नही॥ तां तैसे सभ द्रिस्य ही मनरू-
प है॥ जैसे तरंग ही जलरूप है॥ अरु जल ही तरंग रूप है
हे रामजी जब लग मन का सदभाव है॥ तब लग द्रिस्य है॥
द्रिस्य का बीज मन है॥ जैसे कमल के डोडे का सदभाव उस-
के बीज विषे होता है॥ तिस तें कमल डोडे की उतपति होती
है॥ तैसे जगत का बीज मन है॥ सभ जगत मन तें उतपति

होता है॥ हे रामजी जब तुजको स्वप्ना आवता है॥ तब तेरा
चित्त ही दृश्यरूप बण जाता है॥ अवर उहां तौ कारण कोऊ न
हो॥ तैसे इह जगत भी जाण॥ इह तैं अनुभव की वार्त्ता
कही है॥ काहे तें जो नित्य ही तुज कों अनुभव होता है॥ हे
रामजी मन ही जगत का कारण है॥ अवर कोऊ नहीं॥ ज
ब मन ही उपशम होवेगा॥ तब दृश्यभ्रम मिट जावेगा॥
जब लग मन उपशम नहीं होता॥ तब लग दृश्यभ्रम नि
वृत्त नहीं होता॥ अरु जब लग दृश्य निवृत्त नहीं होती॥
तब लग शुध बोध नहीं होता॥ अरु आत्मानंद भी नहीं
पावता॥ ॥इति श्री उत्पत्ति प्रकरणे बोधहेतवर्णनं
नाम सर्गः॥ ३ ॥वाल्मीकोवाच॥ इस प्रकार मुनि
शार्दूल कहि कर तूष्णी भया॥ सर्व श्रोता वसिष्टजी के व
चनों कों श्रवण करके तिसके अर्थ विषे इस्थित भए॥
इंद्रीयों की चपलता कों त्याग कर वृत्ति कों इस्थित क
र्त भये॥ तब वसिष्टजी बोले॥ अब जो कछु कहिणा था
सो कहा है॥ बहुड़ कछु काल कहेंगे॥ तब राजे कहा ऐ
से ही॥ तब राजे वसिष्टजी का अर्घ पाद्य कर पूजन कीया
अवर जो राजरिषि ब्रह्मरिषि थे तिनका यथा योग पूजन
कीया॥ तब वसिष्टजी उठ खडे हूये॥ परस्पर नमस्कार की
या॥ अरु अपणे अपणे स्थानों को चले॥ आकाशचारी
सिध आकाश कों गए॥ राजऋषि ब्रह्मऋषि बन कों ग
ए॥ पाताल वासी पाताल कों गए॥ अरु रामजी तें आदि स
भ श्रोते विचारपूर्वक रात्रि कों व्यतीत करत भए॥ तब
सूर्य की किरणों सहित सभ श्रोता आन इस्थित भए॥
सभ अपणे अपणे स्थानों पर बैठ गए॥ अरु परस्पर
नमस्कार कीया॥ तब पूर्वले प्रसंग कों पाय कर रामजी
प्रश्न करत भए॥ श्रीरामोवाच॥ हे भगवन ऐसा जो म
न है॥ संसाररूपी मंजरी दुखों की जिसतें बढी है॥ तिसका
स्वरूप मुज कों कहो॥ जो क्या है॥ श्रीवसिष्टोवाच॥ हे रा
मजी इस मन का रूप कछु देखणे में नहीं आवता॥ इह

मननाममात्रहै॥वास्तवइसकारूपकछूनही॥आकाशकी
न्यांईशून्यहै॥जैसेआकाशशून्यहै॥तैसेमनशून्यहै॥
हेरामजीआत्माविषेमनकछूउपजानही॥जैसेसूर्य
विषेतेजहै॥जैसेवायुविषेस्पंदहै॥जैसेजलविषेत
रंगहै॥जैसेस्वर्णविषेभूषणहै॥तैसेआत्माविषेमनहै
जैसेआकाशविषेदूसराचंद्रमाकछूनही॥तैसेमनवा
स्तवतेंकछूनही॥हेरामजीइहआश्चर्यहै॥जोवास्तवतें
कछूउपजानही॥अरुआकाशकीन्यांईसभघटौंविषे
वर्तताहै॥अरुसंपूर्णजगतमनहीकरभासताहै॥अरु
सत्यहोकरभासताहै॥तिसकानाममनहै॥हेरामजीआ
त्माशुधअद्वैतहै॥तिसविषेद्वैतरूपजगतमनकरभा
सताहै॥अरुसंकल्पविकल्पजोफुरतेहैं॥सोमनकारूप
है॥जहांजहांसंकल्पफुरताहै॥तहांतहांमनजान॥जैसेज
हांजहांतरंगउपजताहै॥तहांतहांजलहै॥तैसेजहांजहां
संकल्पफुरताहै॥तहांतहांमनहै॥अवरभीमनकेनाम
हैं॥स्मृतकहीयेअविद्याकहीयेमलिनताकहीये॥त
मकहीये॥इहसभमनकेनामहै॥सोज्ञानवानजानतेहैं॥
हेरामजीजेतेकछूजगतजालभासतेहैं॥सोसभमनतें
उतपतभयेहैं॥अरुसभदृश्यमनरूपहै॥काहेतेंजोमन
कीकलपीहुईहै॥वास्तवतेंकछूउपजीनही॥हेरामजीम
नरूपीजोदेहहै॥तिसकानामअतिवाहकशरीरहै॥सोसं
कल्परूपहै॥सर्वजीवोंकाआदिवपुइहीहै॥तिसकौदृश्यवि
षेजोदृढअभ्यासभयाहै॥तिसकरअधिभौतिकभास
नेलागाहै॥अरुआदिस्वरूपकाप्रमादभयाहै॥हेरामजी
इहजगतसभसंकल्पमात्रहै॥अरुस्वरूपकेप्रमादकर
सनपिंडाकारभासतेहैं॥जैसेस्वप्नदेशआकाशरूपहो
ताहै॥तहांपृथ्वीआदिकतत्वोंकाअभावहोताहै॥अरु
अज्ञानकरअधिभौतिकभासताहै॥सोमनहीकासंस
रणहै॥तैसेइहजगतमनकेफुरणेकरभासताहै॥हे

रामजीजहांमनहै॥तहांदृश्यहै॥जहांदृश्यहै॥तहांमनहै
जबमननष्टहोवे॥तबदृश्यभीनष्टहोवे॥सुधबोधमात्र
विषेजोदृश्यभासतीहै॥सोमनहै॥जबलगदृश्यभास
तीहै॥तबलगमुक्तिनहीकहीती॥जबदृश्यभीमनन
होवेगा॥तबसुधबोधकोप्राप्तहोवेंगा॥हेरामजीद्रष्टा
दर्सनदृश्यइहजोत्रिपुटीभासतीहै॥सोमनकरभास
तीहै॥जैसेस्वप्नेविषेत्रिपुटीभासतीहै॥अरुजाग्रेतेत्रि
पुटीकाअभावहोजाताहै॥अरुअपणांआपहीभास
ताहै॥तैसेआत्मसत्ताविषेजाग्रेहूएतेअपणाआप
अद्वैतभासताहै॥जबलगबोधनहींप्राप्तहूया॥तबल
गदृश्यभ्रमनिवृत्तनहीहोता॥तबद्रष्टाहीदृश्यहोभास
ताहै॥अरुदृश्यकोसत्यजानकररागद्वेषकल्पनांपडा
करताहै॥अरुजबमनआत्मपदकोप्राप्तहोताहै॥तब
दृश्यभ्रमनिवर्त्तहोजाताहै॥तांतेमनरूपीदृश्यइसको
बंधनकाकारणहै॥रामोवाच॥हेभगवनइहदृश्य
रूपीविसूचकारोगहै॥तिसकीनिवृत्तकैसेहोवे॥सोकृ
पाकरकहो॥श्रीवसिष्ठोवाच॥हेरामजीसंसाररूपी
वैतालइसकोलागाहै॥तिसकीनिवृत्तएकसमात्रक
रहोतीहै॥प्रथमतोविचारकरजगतकोभ्रमरूपजाणे
तिसतेअनंतरजबआत्मपदविषेविश्रांतहोवेगी॥त
बतेआत्माहोवेंगा॥अरुदृश्यभ्रमनिवृत्तहोजावेगा॥
हेरामजीदृश्यभ्रमजोतुजकोंभासताहै॥तिसकोमयउ
तरकरकेनिवृत्तकरोंगा॥इसविषेसंदेहनहीं॥सोसुण
इहदृश्यमनतेउपजाहै॥इसकासत्यभावभीमनतेहू
याहै॥जैसेकमलफोदेकाउपजणाहोताहै॥सोकमल
फोदेकेबीजविषेहै॥तैसेसंसारकाउपजणास्मृततेहो
ताहै॥सोस्मृतअनुभवआकाशविषेहोतीहै॥हेरामजी
स्मृतितिसपदार्थकीहोतीहै॥जिसकाअनुभवसतभा
वकरग्रहणहोताहै॥तांतेजेताकछूजगततुजकोंभा

सत्ता है॥ सो संकल्परूप है॥ कोऊ पदार्थ सत्यरूप नहीं॥ जो
वस्तु सत्यरूप है॥ तिसका अभाव कदाचित नहीं होता॥
भासता तातें जेता कछु प्रपंच है॥ सो सब असत्यरूप है॥ मनके उ
पजाए कर उतपत्त हूया है॥ जब मन फुरणेतें रहित हो
वे॥ तब जगत भ्रम निवृत्त हो जाता है॥ हे रामजी पृथ्वी
पर्वतादिक जगत सब असत्यरूप है॥ जो असत्यरूप
न होता॥ तो मुक्ति भी कोऊ न होता॥ मुक्ति जो होएगा है॥ सो
दृश्य भ्रम के नष्ट हूए होएगा है॥ जो दृश्य भ्रम नष्ट न हो
ता॥ तब मुक्ति कोऊ कैंसे होता॥ सो तो ब्रह्मऋषि राजऋष
बहुत मुक्त हूए है॥ इस कारणतें कहीता है॥ जो दृश्य
असत्यरूप है॥ मनके संकल्प विषे इस्थित है॥ जब म
न निहसंकल्प हूया॥ तब दृश्य भ्रम नष्ट हो जाती है॥ हे
रामजी एक मनको स्थित कर देष॥ जो बहुत तुजको
अहंत्वइदं जगत कछु न भासेगा॥ चित्तरूपी आदर्श
विषे दृश्यरूप मलिनता है॥ जब इह मलिनता दूर हो
वे॥ तब आत्मपद प्राप्त होवेगा॥ हे रामजी इह दृश्य भ्रम
मिथ्या उदै हूया है॥ जैसे गंधर्वनगर होता है॥ जैसे स्वप्न
पुर होता है॥ तैसे इह जगत है॥ जैसे सुध आदर्श विषे
पर्वतका प्रतिबिंब होता है॥ सो आकाशरूप है॥ कछु उ
पजा नहीं॥ जैसे बालिककौ पिछावें विषे वेतालबु
धि होती है॥ तैसे अज्ञानीको जगत भासता है॥ वास्तव
तें जगत कछु उपजा नहीं॥ हे रामजी न कछु मन उ
पजा है॥ न कछु जगत उपजा है॥ दोनों असत्यरूप है॥
जैसे आकाश विषे दूसरा चंद्रमा भासता है॥ तैसे आ
त्मा विषे जगत भासता है॥ जैसे आकाश आपनी शून्य
ता कर के इस्थित है॥ जैसे समुद्र आपणे आप विषे
स्थित है॥ तैसे ब्रह्मसत्ता अपणे आप विषे स्थित है
फुली है॥ जिस विषे जगतका अत्यंताभाव है॥ रामो-
वाच॥ हे भगवन इह वचन तुमारे ऐसे है॥ जैसे क

हीये जो वंध्या के पुत्र पर्वत चूर्ण कीये हैं॥ अरु आकाश को अं
ग सुंदर हैं॥ अरु वालू विषे तेल निकसता है॥ अरु प
थर का ग्लानि नृत्य करती है॥ तैसे तुमारे वचन मुज कों
भासते हैं॥ तुम तो कहते हो जो दृश्य कछु उपजी नहीं॥ अ
रु है भी नहीं॥ अरु मुज को जरा मृत्यु आदिक विकार स
हित प्रतक्ष भासता है॥ तां ते तुमारे वचनों का सदभास
इ स्थित नहीं होता॥ अरु जदिप तुमारे निश्चे विषे इसी
प्रकार है॥ तो आपणों निश्चय मुज को भी जनावो॥ श्री
वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी इह जो हमारे वचन हैं सो यथा
र्थ हैं॥ हमों ने असत्य कबहूं नहीं कहा॥ तूं विचार कर दे
ष॥ जो जगत आडंबर है॥ सो कारण बिना है॥ जब महाप्रल
य होती है॥ तब पाछें शुध चैतन्य संवित रहती है॥ तिस
विषे कारण कार्य कल्पना कोऊ नहीं॥ तिस विषे जो ब
हुड जगत फुरता है॥ सो कारण बिनां फुरता है॥ जैसे सु
षुप्त सों स्वप्न की स्रिष्ट फुरती है॥ जैसे स्वप्न स्रिष्ट अका
रण है॥ तैसे इह स्रिष्ट भी अकारण है॥ हे रामजी जिस
का समुवाय कारण अरु निमित्त कारण न होवे॥ अरु
गत दृष्टि भी भासे॥ तो जानीये जो भ्रम मात्र है॥ जैसे नित्य
नुज को स्वप्न आवता है॥ तिस विषे नाना प्रकार के प
दार्थ कारण कार्य सहित भासते हैं॥ पर कारण बिना हैं
तैसे इह जगत भी कारण बिनां भासता है॥ तां ते आदि
कारण बिनां जगत उपजा है॥ जैसे गंधर्व नगर भासता
है॥ जैसे संकल्प पुर भासता है॥ जैसे आकाश विषे दूस
रा चंद्रमा भासता है॥ तैसे इह जगत भासता है॥ कोऊ
पदार्थ सत्य नहीं॥ जैसे स्वप्नपुरु विषे राजे पत्तन भास
ता है॥ अरु नाना प्रकार के पदार्थ भासते हैं॥ सो किसी का
रण तें नहीं उपजे॥ तां ते आकाश रूप हैं॥ मन के संसरणे
कर के भासते हैं॥ जैसे स्वप्न तें अवर स्वप्न भासता है॥ जै
सेउह जागत भासता है॥ तैसे जागत जगत भी मन की क

लनोंकरकेभासताहै॥हेरामजीजैसीकछुशरीरकीक्रि
याअरु रागद्वेषआदिकभासतेहैं।सोसभमनकेफुर
णेकरहोतेहैं॥आत्माविषेकोउविकारनही॥जबम
नउपशमहोताहै॥तबमनकेफुरणेंनिवर्तहोजातीहै॥
तांतेसंसारकाकारणमनहै॥ ॥इतिश्रीउतपतप्रक
रणेबोधहेतवर्णनंनामसर्गः॥४ ॥श्रीरामोवाच
हेभगवनमनकारूपक्याहै॥इहतोमायामयहै॥इस
काहोवणाजिसतेंहै॥सोकवनपदहै॥श्रीवसिष्टोवा
च॥ हेरामजीजबमहाप्रलयहोतीहै॥तबसभजगतका
अभावहोजाताहै॥पाछेंजोशेषरहताहै॥सोसत्यहै॥अरु
आदिसर्गकेभीसततरूपहोताहै॥तिसकानासकबहूं
नहीहोता॥सदाप्रकाशरूपअविनाशीहै॥शुधपरमा
त्मतत्वअद्वैतहै॥जिसकोवाणीनहीकहिसकती॥सोप
दजीवनमुक्तिपावतेहैं॥हेरामजीआत्मआदिकजोश
ब्दहै॥सोभीतिसपदविषेकल्पितहै॥उहांकोउशब्दनही
प्रवर्तता॥शेषकेजनावणेनमित्तशास्त्रकारोंनेकेते
नांउकल्पेहैं॥मुख्यतौपुरुषकरकहतेहैं॥अरुवेदांत
ईश्वरवादी
वादीब्रह्मकरकहतेहैं॥एकनिर्मलरूपकहतेहैं॥ज्ञान
वादीतिसकोज्ञानरूपकरकहतेहैं॥सुन्यवादीशून्यक
रकहतेहैं॥एकप्रकाशरूपकहतेहैं॥जिसकरसूर्यआ
दिकप्रकाशतेहैं॥एकवेदांकावक्ताकहतेहैं॥इकस्म
तकरताकहतेहैं॥जोसभकछुउसकोइछाकरहूया
है॥अरुसर्वात्माहै॥हेरामजीइत्यादिकसंज्ञातिसकीशा
स्त्रकारोंनेकहीहै॥सर्वकाजोअधिष्टानहै॥सोपरमदेव
है॥उदयअस्तिकेविचारतेंरहितहै॥शुधचेतन्यसूर्य
वतप्रकाशरूपहै॥सोदेवजगतविषेपूर्णहोरहाहै॥हेरा
मजीआत्मरूपीसूर्यहै॥ब्रह्माविष्णुरुद्रादिकउसकी
किरणाहै॥अरुब्रह्मरूपीसमुद्रहै॥तिसविषेजगतरू
पीतरंगबुदबुदेउतपतअरुलीनहोतेहैं॥सर्वपदार्थ

सांख्य

आत्मा के प्रकाश कर प्रकाशते हैं॥ अरु सर्व को सत्ता दे
ता हारा उही है॥ हे रामजी वृत्ति जो अर्थ को जाते हैं॥ सो आ
त्मसत्ता कर जाते हैं॥ प्रकाश विषे प्रत्यक्षता तिसही करी
है॥ अरु पवन विषे स्पर्श तिनही कीया है॥ अरु जल विषे
द्रवता तिसही करी है॥ अग्नि विषे उष्णता तिसही करी है
इत्यादिक सर्व पदार्थों की सत्ता उही है॥ मोर के पंखों उप
र जो रंग है॥ सो आत्मसत्ता कर हूया है॥ पथर विषे जडता
तिसही करी है॥ स्थावर जंगम रूप जगत का अधिष्टान रूप
ब्रह्म है॥ हे रामजी आत्मा रूपी चंद्रमा है॥ तिसकी किरणों
सें ब्रह्मांड रूपी त्रिसरेणु उतपत होते हैं॥ सो कैसा चंद्र
मा है॥ शीतल अरु अमृत कर पूर्ण है॥ ब्रह्म रूपी मेघ है
तिसतें जीव रूपी बूंदां आवती हैं॥ जैसे विद्युली का प्रकाश
होता है॥ अरु छिप जाता है॥ तैसे ब्रह्मसत्ता सें जगत उतप
त होता है॥ अरु लीन हो जाता है॥ सन का अधिष्टान आ
त्मसत्ता है॥ सो नित्य शुध परमानंद स्वरूप है॥ अरु सन
कृष्ट अर्थ तिसी कर प्रसिध होते है॥ हे रामजी जिसकी स
ता कर जड पुर्यष्ट का चैतन्य होकर चेष्टा करती है॥ जैसे
चमक पथर की सत्ता कर लोहा चेष्टा करता है॥ तैसे चेत
न कर सन की चेष्टा होती है॥ आत्मा नित्य शुध सन का क
रता है॥ तिसका करता अवर कोऊ नहीं॥ हे रामजी जो पुरु
ष तिस देव को साक्षात करता है॥ तिसकी सन क्रिया नष्ट
होजाती है॥ चिजडग्रंथ भेदी जाती है॥ केवल बोध रूप हो
ता है॥ जब मन सत्ता वासना विषे इस्थित होता है॥ तब मनतु
को सनमुख देखकर वैकल्य नही होता॥ इति श्री उतप विकूल निरमैं
त्ती प्रकरणे देवरूप वर्ननं नाम सर्गः॥ ५॥ श्री वसि
ष्ठोवाच॥ हे रामजी इह देव किसी स्थान विषे नही रहता
अरु कछू दूर भी नही॥ अपने आप विषे इस्थित है॥ हे रा
मजी घट घट विषे देव है॥ अरु अज्ञानी को दूर भासता है
स्नान दान तप आदिक कर नही प्राप्त होता॥ ज्ञानवता ही
कर प्राप्त होता है॥ जैसे मृगतृष्णा की नदी भासती है॥ सो क

स्वकरनिवर्तनहींहोती॥ज्ञानकरनिवर्तहोतीहै॥तैंसे
जगतभीआत्मज्ञानकरनिवर्तहोताहै॥हेरामजीकहीत्व
सोईहै॥जोज्ञातव्यरूपहै॥श्रीरामोवाच॥हेभगवन॥
जिसदेवकेजाणेतेंपुरुषजन्ममरणकोंबहुडनहीप्राप्त
होता॥सोतिसदेवकोंकिसप्रकारजाणीये॥सोकहो॥श्री
वसिष्टोवाच॥हेरामजीकिसीतपकरकेदेवकोंनही
प्राप्तहुवीता॥अपणेपुरुषप्रयत्नकरप्राप्तहुवीताहै॥ति
सकोंइसबिनांआत्मपदकीप्राप्तनहीहोती॥हेरामजीप
रमऔषधसतसंगअरुसतशास्त्रोंकाविचारहै॥जि
सकरदृश्यरूपीविसूचकारोगनिवर्तहोवे॥अरुआत्म
पदकीप्राप्तहोवे॥गणमेइसकाआचारशास्त्रोंकेअनु
सारहोवे॥अरुभोगरूपीगर्तविषेभीनगिरे॥संतोषवा
नयथालाभसंतुष्टरहे॥अरुशास्त्रोंअनुसारअनिषि
तभोगकाभीत्यागकरे॥ऐसाजोउदारात्माहै॥तिसकों
शीघ्रहीआत्मपदकीप्राप्तहोताहै॥हेरामजीआत्मपद
पावणेकाकारणसतसंगअरुसतशास्त्रहैं॥संतकौन
हैं॥जिसकोंआत्मअभ्यासहोवे॥अरुशास्त्रसोईहैं॥जि
सविषेब्रह्मनिरूपणहोवे॥तबशीघ्रहीआत्मपदकीप्रा
प्तहोतीहै॥जबइहपुरुषश्रुतविचारद्वाराअपणेपरम
स्वभावविषेइस्थितहोताहै॥तबब्रह्माविष्णुरुद्रभीइस
कीदयाचहतेहैं॥काहेतेजोइहपुरुषपरब्रह्महोताहै॥
हेरामजीसतसंगअरुसतशास्त्रोंकाविचारइसकों
निर्मलकरताहै॥अरुदृश्यरूपमैलकोंनाशकरताहै
जैसेनिर्मलीकरजलकीमैलदूरहोतीहै॥अरुपरमनि
र्मलहोताहै॥तैंसेइहपुरुषनिर्मलहोताहै॥परमचैतन्य
होताहै॥ ॥इतिश्रीउतपतप्रकरणेमोक्षसूत्रउप
देशोनामसर्गः॥६॥श्रीरामोवाच॥हेभगवनइ
हदेवजोतुमकहा॥जिसकेजानणेकरसंसारबंधनतेमु
क्तिहुवीताहै॥सोदेवकहांस्थितहै॥अरुकिसप्रकारति
सकीप्राप्तहोतीहै॥श्रीवसिष्टोवाच॥हेरामजीइहदे

वहु दूर नहीं॥ शरीर विषे इस्थित है॥ तिस चिन्मात्र स्वरूप है॥ स
र्व विषे पूरण है॥ अरु सर्व दृश्य तें रहित है॥ अरु चंद्रमा म
स्तक विषे धारे कीये जो सदाशिव है॥ सो भी चिन्मात्र रूप
है॥ अरु कमलजा ब्रह्मा भी चिन्मात्र रूप है॥ अरु विष्णु जी
भी चिन्मात्र रूप है॥ अरु इंद्रादिक भी सभ चिन्मात्र रूप
हैं॥ अरु सभ जगत भी चिन्मात्र रूप है॥ रामोवाच॥ हे भ
गवन इह तो अज्ञानी बालिक भी जानते हैं॥ जो आत्मा चि
न्मात्र है॥ अरु तुमारे उपदेस कर क्या सिध हूया॥ श्रीव
सिष्टोवाच॥ हे रामजी इह विश्व जो तें चिन्मात्र जानता
है॥ इस जानणे तें संसार समुद्र नहीं लंघ्या जाता॥ इस चेत
न का नाम संसारी है॥ इह चेतन जीव है॥ इस जानणे कर ज
नम मरण तरंग नहीं मिटते॥ इह दृश्य दुःख रूप है॥ काहे
तें जो (आतमा) ग्रेह अरूप है॥ हे रामजी चेतन होकर जो चेतता है॥
सो अनर्थ का कारण है॥ अरु चेतन तें रहित जो चेतन है
सो परमात्मा है॥ तिस परमात्मा को जानकर मुक्ति होता
है॥ अरु चेतता मिट जाती है॥ हे रामजी परमात्मा के जाणे
तें हृदय की चिज्जड ग्रंथ छुट जाती है॥ अर्थ इह जो अहं
मम मिट जाती है॥ अरु सर्व संशय छेदे जाते हैं॥ अरु स
र्व कर्म क्षीण हो जाते हैं॥ श्रीरामोवाच॥ हे भगवन चित्त
तें रहित चेतन उनमुखत्व तब होता है॥ जो आगे दृश्य होती
न हो॥ सो इह दृश्य तो स्पष्ट पडी भासती है॥ इसके होते
चित्त के रोकणे को कैसे समर्थ होता है॥ अरु किस प्रका
र दृश्य निवृत्त होती है॥ श्रीवसिष्टोवाच॥ हे रामजी दृ
श्य संयोगी जो चेतन है॥ सो जीव है॥ जन्मों रूपी जंजाल वि
षे भटकता भटकता थक पडा है॥ इस चेतन को जो चे
तन कहते हैं॥ सो पंडित भी मूर्ख है॥ ए तो संसारी जीव है॥
इसके जाणे तें मुक्ति कैसे होवे॥ मुक्ति परमात्मा के जाने तें
डुवीता है॥ अरु सर्व दुःख भी नाश होते हैं॥ जैसे विष विस
चका उतम औषध कर निवर्त होती है॥ तैसे परमात्मा के

जाणेते मुक्ति होवीता है ॥ श्रीरामोवाच ॥ हे भगवन परमा
त्मा का क्या रूप है ॥ जिसके जाणेतें मोहरूपी समुद्र को त
र जाईता है ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी देशतें देशां
तर को निमेष विषे वृत्त जाती है ॥ तिसके मध्य विषे जो ज्ञा
न संवित है ॥ सो परमात्मा का रूप है ॥ अरु जहां संसार का
अत्यंताभाव होता है ॥ तिसके पाछे बोधमात्र होता है ॥
सो परमात्मा का रूप है ॥ हे रामजी जहां द्रष्टा दर्शन दृ
श्य का अभाव होता है ॥ ऐसा जो आकाश है ॥ सो परमात
मा का रूप है ॥ अरु जो अशून्य है शून्य की न्याईं स्थित
है ॥ जिस विषे स्रिष्टीं का समूह शून्य है ॥ ऐसा जो अद्वै
त सत्ता है ॥ सो परमात्मा का रूप है ॥ हे रामजी महाचेतन स्व
रूप बडे पर्वत की न्याईं स्थित है ॥ सो रूप परमात्मा का
है ॥ अरु अंतर बाह्य सर्व के स्थित है ॥ अरु अजड जड
की न्याईं स्थित है ॥ सो रूप परमात्मा का है ॥ हे रामजी जैसे
सूर्य प्रकाश रूप है ॥ अरु जैसे आकाश शून्य रूप है ॥ तैं
से इह जगत आतम रूप है ॥ रामोवाच ॥ हे भगवन जो
सर्व का आतमा तु ही है ॥ तो जाण्या किंउ नहीं जाता ॥ ए तो
जगत ही भासता है ॥ वह किंउ नहीं भासता ॥ श्रीवसिष्ठो
वाच ॥ हे रामजी इह जगत भ्रम करके भासता है ॥ वास्तव
तें कछु उपजा नहीं ॥ जैसे आकाश विषे नीलता भासती
है ॥ तैसे आत्मा विषे जगत भासता है ॥ जब जगत का अ
भाव होवे ॥ तब परमात्मा का साक्षात्कार होवे ॥ अवर
कैसी उपाव कर साक्षात नहीं होता ॥ जब दृश्य का अत्यं
ताभाव निश्चय होवेगा ॥ तब परमात्मा भासेगा ॥ हे राम
जी चित्तरूपी जो आदर्श है ॥ सो दृश्य के प्रतिबिंब बिना
नहीं रहता ॥ जब लग दृश्य का अत्यंताभाव नहीं होता ॥ तब
लग साक्षात्कार आत्मा का नहीं होता ॥ श्रीरामोवाच ॥
हे मुनीश्वर इह दृश्य जाल मन विषे कैसे स्थित हूया है ॥
जैसे सरसों के दाणे विषे सुमेर का आवरण आश्चर्य है ॥

तैसे मन विषे जगत का आवर्ण आश्चर्य है ॥ श्रीवसिष्ठो
वाच ॥ हे रामजी कछुक एक दिन तूं खेद तें रहित होकर स्थि
त हो ॥ सतसंग अरु शास्त्र परायण हो ॥ इक क्षण विषे दृ
श्य रूपी मैल दूर हो जावेगी ॥ जैसे सूर्य की किरणां जाणें
तें मृगजल का अभाव हो जाता है ॥ तैसे दृश्य भ्रम तेरा अ
भाव हो जावेगा ॥ जब दृश्य भ्रम का अभाव कीया ॥ तब दृष्टा
भी शांति हो जावेगा ॥ जब दोनों का अभाव कीया ॥ तब पाछे
शुद्ध आत्मा तत्व पद प्रकाशेगा ॥ हे रामजी जब लग दृष्टा है
तब लग दृश्य है ॥ जैसे एक की अपेक्षा कर दो कहीते हैं ॥ ए
क है तब दो भी हैं ॥ इक न होवे तो कहां होवें ॥ तैसे एक के अ
भाव कीये दोनों का अभाव होता है ॥ दृष्टा की अपेक्षा कर दृ
श्य है ॥ अरु दृश्य की अपेक्षा कर दृष्टा है ॥ एक के अभाव कीए
दोनों का अभाव होता है ॥ हे रामजी अहंता तें आदि लेकर
जो दृश्य है ॥ सो तेरी मार्जन कर देवोंगा ॥ आत्मसत्ता तें जो इ
तर भासता है ॥ सोई मल है ॥ तिस तें रहित कीया चित्त रू
पा दर्पण निर्मल होता है ॥ जो पदार्थ असत्य है ॥ सो कदाचि
त वस्तु नहीं होता ॥ जो वास्तव सत्य न होवे ॥ तिसका मार्जन कर
णा क्या यत्न है ॥ हे रामजी जब इह जगत आदि उत्पत्ति न
हीं कीया ॥ जो कछु दृश्य भासती है ॥ सो नाममात्र है ॥ अरु स
र्व ब्रह्म निर्मल चैतन्य है ॥ जैसे स्वर्ण तें भूषण होता है ॥ सो स्व
र्ण तें भूषण भिन्न नहीं ॥ तैसे ब्रह्म अरु जगत विषे भेद न
हीं ॥ हे रामजी दृश्य रूपी मल के मार्जन के अर्थ अब बेऊंत
प्रकार की युगतां तुजको विस्तार कर कहोंगा ॥ तिस कर तु
जको अद्वैत सत्ता भान होवेगी ॥ इह जगत जो तुजको भास
ता है ॥ सो किसी कारण द्वारा उपजा नहीं ॥ जैसे मारुस्थल की
नदी अणहोती भासती है ॥ जैसे आकाश विषे दूसरा चंद्र
मा भासता है ॥ तैसे इह जगत कारण बिना भासता है ॥ जैसे
मारुस्थल की नदी नहीं ॥ जैसे बंध्या का पुत्र नहीं ॥ जैसे आका
श विषे वृक्ष नहीं होता ॥ तैसे इह जगत है नहीं ॥ जो कछु दि
खाता है ॥ सो निरामय ब्रह्म है ॥ सो अपने आप विषे स्थित

है॥ सो इह तुज कों वाणीमात्र नहीं कहा॥ अनुगत पूर्वक क
हा है॥ हे रामजी गुरों की कही युक्त को जो मूर्ख जान कर के
त्याग करता है॥ तिन को सिधांत प्राप्त नहीं होता॥ ॥ इ
ति श्री उतपतप्रकरणे दृश्य असत्य प्रतिपादनं नाम
सर्गः॥ ७ ॥ रामोवाच॥ हे मुनीश्वर इह [illegible] युक्त कव
न है॥ अरु कैसे प्राप्त होती है॥ सो कहो॥ [illegible] ॥ वसि
ष्टोवाच॥ हे रामजी मिथ्या ज्ञान विसूचका जगत नाम
नी बहुत काल की आरूढ हो रही है॥ सो बिचार रूपी मं
त्र कर शांति हो जाती है॥ हे रामजी बोध की सिधता अर्थ
तुज कों आख्यान कहता हों॥ सो सुण॥ तब तूं मुक्तात्मा
होवेंगा॥ जो अर्थ प्रबुध होकर तें उठ जावेंगा॥ तो तिर्य
गादिक धर्म को प्राप्त होवेंगा॥ हे रामजी जिस पदार्थ के
पावणे की इच्छा करता हैं॥ तिसके अनुसार यत्न कर
तो अवश्य मेव तिस कों पावेंगा॥ जो थक कर फिर नहीं
तो तें सतसंग अरु सतशास्त्र परायण होवो॥ जब तूं इ
न के अभ्यास विषे दृढ अभ्यास करेंगा॥ तब के ते दिनों
विषे परमपद को पावेंगा॥ रामोवाच॥ हे भगवन आ
त्मबोध का कारण कवन शास्त्र है॥ जिसके जाणे तें ह
र्ष शोक तें रहित होवों॥ अरु आत्मपद की प्राप्त होवे॥
श्रीवसिष्टोवाच॥ हे रामजी महामते आत्मबोध का
जो कारण है॥ सो मेरा शास्त्र है॥ महारामायण॥ जिस वि
ष वडे इतिहास हैं॥ जिस कर परमबोध की प्राप्त होती
है॥ हे रामजी इह सर्व इतहासों का सार है॥ सो मय तुज
कों कहता हों॥ जिसको सुण कर धारें तो जीवन्मुक्ति हो
वेंगा॥ अरु जगत ऐसे नासेगा॥ जैसे स्वप्ने के जाग्रतें
स्वप्ने के पदार्थ नासते हैं॥ तैसे जगत नासेगा॥ इस शा
स्त्र को सब बुधिवान विज्ञान भंडार कहते हैं॥ जो पुरुष
इस को अर्थ सयुक्त श्रवण करे॥ अरु विचारे॥ तब उ
स की बुधि उदार होवे॥ अरु परमबोध को प्राप्त होवेगा
इस विषे संशय नहीं॥ अरु जिस को इस विषे रुच नहीं

सोपापात्माहै॥उसकोचाहियै॥जोग्रंथअवरसच्छास्त्रोंकों
विचारै॥तिसकेअनंतरइसकोविचारै॥तबजीवनमुक्ति
कोपावैगा॥जैसेउत्तमऔषधकररोगशीघ्रहीनिवृत्त
होताहै॥तैसेइसशास्त्रकेश्रवणविचारसेतैंशीघ्रहींअ
ज्ञाननष्टहोताहै॥अरुआत्मपदकोपावताहै॥हेरामजी
आत्मपदकीप्राप्तिवरशापकीन्याईनहीं॥जोवरकरआ
त्मज्ञानप्राप्तहोवै॥अरुशापकरनष्टहोजावै॥सोऐसे
नहीं॥जबश्रवणकरविचारअभ्यासकरै॥तबआत्मज्ञान
प्राप्तहोताहै॥अन्यथाप्राप्तनहींहोता॥इतिश्रीउत्प
त्तिप्रकरणेसतशास्त्रनिर्णयनामसर्गः॥८॥श्री
वसिष्ठोवाच॥हेरामजीजिसपुरुषकाचित्तआत्मावि
षेहै॥अरुप्राणोंकीचेष्टाभीआत्माविषेहै॥अरुपरस्पर
बोधभीआत्माकाहै॥अरुकहताभीआत्माकोहै॥अरु
तृप्तभीआत्माकरहै॥रमताभीआत्माविषेहै॥ऐसाजो
ज्ञाननिष्ठजीवनमुक्तिहै॥सोबहुरविदेहमुक्तिहोताहै
॥श्रीरामोवाच॥हेमुनीश्वरजीवनमुक्तिअरुविदेह
मुक्तिकाक्यालक्षणहै॥जोउसकोदृष्टलेकरमैंभीउ
सीप्रकारकरों॥श्रीवसिष्ठोवाच॥हेरामजीजोपुरुष
शुभनेविचारव्यवहारकरताभीहै॥अरुहृदेविषेद्वैतने
मशांतभयाहै॥सोजीवनमुक्तिहै॥अरुअंतरतेआका
शकीन्याईनिर्लेपरहताहै॥सोजीवनमुक्तिहै॥जोपुरु
षसंसारकीओरतेंसुषुप्तभयाहै॥अरुस्वरूपविषेजा
ग्रतभयाहै॥अरुजगतभ्रमजिसकानिवृत्तभयाहै॥
सोजीवनमुक्तिहै॥इष्टकीप्राप्तिविषेजिसकीकांतिवध
तीनहीं॥अरुअनिष्टकीप्राप्तिविषेघटतीनहीं॥सोपुरु
षजीवनमुक्तिहै॥जिसपुरुषकोअहंममकाअभाव
भयाहै॥अरुबुद्धिकिसीविषेलिपायमाननहींहोती
चाहेकर्मकरे॥अथवानकरे॥सोजीवनमुक्तिहै॥हेराम
जीजिसपुरुषकोमानअपमानभयक्रोधविषेविका
रकोउनहींउपजता॥आकाशकीन्याईप्रसन्नहैविकार
जिसके॥सोजीवनमुक्तिहै॥जोपुरुषजानताहैइष्टआ

वता है ॥ अरु अंतर तें आमोक्ष है ॥ सो जीवन मुक्ति है ॥ अ
रु लोकों तें उद्वेगवान नही होता ॥ अरु लोक भी जिस तें
उद्वेगवान नही होता ॥ सो जीवन मुक्त है ॥ हे रामजी जो पु
रुष चित्त के फुरणे कर जगत की उतपति जाणता है ॥ अ
रु चित्त के अफुरने हूए जगत का प्रलय जानता है ॥ अरु
सर्व विषे समबुध है ॥ सो जीवन मुक्त है ॥ हे रामजी जिस
पुरुष को सभ जगत आकाश रूप भासता है ॥ अरु नि
र्वाण बुध है ॥ सो जीवन मुक्ति है ॥ काहे तें जो सदा आत्म स्व
भाव विषे इस्थित है ॥ अरु सभ जगत को ब्रह्म स्वरूप
जानता है ॥ रामोवाच ॥ हे भगवन जीवन मुक्त की तुम
कवन गति कही है ॥ इष्ट अनिष्ट विषे समबुधि किस
कर होता है ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी इष्ट अनिष्ट
जगत अज्ञानी को भासता है ॥ ज्ञानवान को सभ आत्म
स्वरूप भासता है ॥ अरु अवरों को चेष्टा करता द्रिष्ट
आवता है ॥ पर जगत की ओर तें उह सुषुप्त भया है ॥ हे
रामजी जीवन मुक्ति को ऊ काल कर हि कर जब शरीर
को त्यागता है ॥ तब ब्रह्म पद को प्राप्त होता है ॥ जैसे प
वन स्पंदता को त्याग कर निस्पंद होता है ॥ तैसे जीवन
मुक्ति पद को त्याग कर विदेह मुक्ति होता है ॥ तब ऐसे
हो कर इस्थित होता है ॥ जो सूर्य हो कर तपावता भी उही
है ॥ अरु चंद्रमा हो कर अमृत कर पूर्णी भी उही करता
है ॥ ब्रह्मा हो कर उतपत्त उही करता है ॥ विष्णु हो कर प्र
तिपाल उही करता है ॥ अरु रुद्र हो कर संहार उही क
रता है ॥ अरु प्रिथवी हो कर सभ जीवों को धारता है ॥ अ
षध अन्न आदि को को उतपत उही करता है ॥ पर्वत
हो कर प्रिथवी को उही रोकता है ॥ जल हो कर सभ को
रस देता है ॥ अग्नि हो कर उष्णता को धारता है ॥ पवन
हो कर पदार्थों को सुकावता है ॥ आकाश हो कर सर्व
पदार्थों को ठौर देता है ॥ चंद्रमा हो कर सर्व अउषधों को

पुष्ट करता है॥ मेघ होकर वर्षा करता है॥ स्थावर जंगम
जेता कछु जगत है॥ सब विषे आत्मा स्थित है॥ श्रीरा ह
मोवाच॥ हे भगवन विदेहमुक्ति भी शरीर के धारणे वि
षे ज्ञानवान होते हैं॥ कि नहीं होते॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥
हे रामजी जगत अज्ञानी के लिये विषे स्थित है॥ ज्ञान
वान को सब चिदाकाश भासता है॥ विदेहमुक्ति भी सो
ई रूप होता है॥ जहां उदे अस्ति की कलना कोऊ नहीं॥
केवल शुध बोधमात्र है॥ हे रामजी इह जगत आदि उ
पजा नहीं॥ अज्ञान कर उपजा भासता है॥ मय ते सब
जगत आकाशरूप है॥ जैसे आकाश विषे नीलता भा
सता है॥ जैसे मारूथल विषे जल भासता है॥ तैसे आत्मा
विषे जगत भासता है॥ हे रामजी जैसे स्वर्ण विषे भूषण उ
पजा नहीं॥ जैसे जल विषे तरंग नहीं॥ तैसे आत्मा विषे
जगत नहीं॥ सब मन के फुरणे विषे जगत जाल भासते
हैं॥ स्वरूप ते बणाया कछु नहीं॥ ज्ञानवान को सर्वदा एही
निश्चय रहता है॥ बहुर उ जगत होन उसे कैसे भासे॥
श्रीरामोवाच॥ हे भगवन जगत के अत्यंताभाव रूपण
बिनां आत्मबोध की प्राप्त नहीं होती॥ दृष्टा दृश्य मिथ्या
भ्रम उदे हूया है॥ जब दोनों विषे एक का अभाव होवे॥
तब दोनों का अभाव हो जाता है॥ तब शुध बोधमात्र शे [जब दोनों का अभाव हूआ]
ष रहता है॥ जिस प्रकार जगत का अत्यंताभाव होवे॥
सोई युक्त मुजकों कहो॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी
चिरकाल का जगत दृढ हो रहा है॥ मिथ्या ज्ञान विषूच
का रोग है॥ सो विचाररूपी मंत्र कर निर्मल हो जाता है॥
जैसे पर्वत पर चढनां अरु उतरण सनें सनें कर होता
है॥ तैसे अविद्या भ्रम चिरकाल का डिढ हो रहा है॥ वि
चार तें भ्रम की निवृत्त होती है॥ जगत के अत्यंताभाव
बिनां आत्मबोध नहीं होता॥ सो अत्यंताभाव के निमित्त
युक्त कहता हों॥ तिसके समझ लेकर जगत भ्रम नष्ट

हो जावेगा॥ अरु जीव न मुक्ति होकर तें विचरेगा॥ हे राम
जो बंधमान सोई होता है॥ जो उपजा होता है॥ अरु मुक्ति
मान सोई होता है॥ जो उपजा होता है॥ इह जगत जो तुझको
भासता है॥ सो उपजा नहीं॥ जैसे आकाश विषे नीलता भा
सती है॥ सो उपजी नहीं॥ भ्रम करके भासती है॥ तैसे आ
त्मा विषे जगत भासता है॥ सो उपजा नहीं॥ भ्रम करके भा
सता है॥ हे रामजी जब महाप्रलय होती है॥ तब स्थाव
र जंगम देवता दैत्य मनुष ब्रह्मा विष्णु रुद्रादिक का
अभाव हो जाता है॥ तिसके अनंतर जो शेष रहता है॥ सो
ई है॥ सो तेरा स्वरूप है॥ सो न सत है॥ न असत है॥ न शून्य है
न अशून्य है॥ न प्रकाश है॥ न तम है॥ न दृष्टा है॥ न दृश्य है
न केवल है॥ न अकेवल है॥ न चैतन्य है॥ न जड है॥ न ज्ञा
न है॥ न अज्ञान है॥ न सहकार है॥ न निराकार है॥ सर्व शब्दों
तें रहित है॥ तिस विषे वाणी की गम्य नहीं॥ अरु जो है सो
चेतनतें रहित चैतन्य है॥ आत्मत्व मात्र है॥ जिस विषे अहं
त्व की कलना कोऊ नहीं॥ सोई सत्ता जगतरूप होकर भा
सती है॥ अवर जगत तिस विषे कछु उपजा नहीं॥ जैसे
मारुस्थल विषे जल भासता है॥ तैसे आत्मा विषे जगत
भासता है॥ हे रामजी जब चित्त शक्ति स्पंदरूप होती है॥
तब जगताकार हो भासती है॥ अरु जब निस्पंद होती है
तब जगत का अभाव हो जाता है॥ अरु आत्मसत्ता सदा
एकरस है॥ हे रामजी चैतन्य का जानना भी तब होता है
जब संवेदन स्पंदरूप होती है॥ जैसे आकाश विषे शून्य
ता भासती है॥ जैसे अग्नि विषे उष्णता भासती है॥ तैसे
आत्मा विषे जगत भासता है॥ सो अनन्यरूप है॥ जैसे ज
ल द्रवता करके तरंगरूप भासता है॥ तैसे आत्मसत्ता
जगतरूप हो भासती है॥ सो स्वतह आकाशवत है॥ अ
रु सर्व इंद्रियों तें रहित है॥ शब्द स्पर्श रूप रस गंध तें
रहित है॥ सर्व क्रिया करता भी उदासी है॥ अरु अकर्ता

सत जो है सो विषे का विषय है सो हि रूप है असत जो है न विषय का विषे है सो स्वरूप ते नहीं

भाउ हाहै॥ आत्मारूप सूर्यकी किरणों विषे जलरूपी त्रि
लोकीयां फुरती हैं॥ जैसे जलविषे चक्रावर्त फुरते हैं
सो जलतें इतर नहीं॥ तैसे जगत आत्मातें भिन्न नहीं॥
आत्मरूप है॥ आत्माही जगतरूप होकर भासता है॥
रसनां नहीं अरु बोलता है॥ भोगता है अरु अभोगी है
अरु अफुर है सो फुरता भासता है॥ निराकार है सोई
सहकार होकर भासता है॥ अद्वैत है सोई द्वैतरूप होभा
सता है॥ हे रामजी आत्मा सर्व शब्दोंते रहित है॥ सोई स
र्व शब्दों सहित भासता है॥ अनंत शिष्टि होकर भासता
है॥ अरु इतर द्वूया कछु नहीं॥ सदा आत्मस्वरूप है॥ जै
से स्वर्ण विषे भूषण होते हैं॥ सो स्वर्णतें इतर कछु नहीं
तैसे सर्व जगत आत्मस्वरूप है॥ आकाशतें भी निर्मल
बोधमात्र है॥ जब तिस विषे तूं स्थित होवैगा॥ तब ज
गत भ्रम मिट जावेगा॥ इति श्री उतपतप्रकरणे प
रमकारणवर्णनंनामसर्गः॥ श्रीरामोवाच॥ हे
भगवन जब महाप्रलय होता है॥ तब सर्व पदार्थ नष्ट
हो जाते हैं॥ तिसके पाछे जो शेष रहता है॥ सो शून्य कही
ये॥ अशून्य कहीए॥ अथवा तम कहीए॥ प्रकाश कही
ए॥ चैतन्य कहीए॥ जड कहीए॥ बोध कहीए॥ अबोध क
हीए॥ सत असत किंचित अकिंचित इनो विषे कौउ
ता होवेगा॥ तुम कैसे कहते हो जो वाणी की गम्य नहीं॥
॥श्रीवसिष्टोवाच॥ हे रामजी इह तुजें बडा संशय की
या है॥ इस संशय को मय विना यत्न नाश करैंगा॥ जै
से सूर्य के उदे हूए सर्व अंधकार नष्ट हो जाता है॥ तैसे
तेरे संशय का नाश करैंगा॥ हे रामजी जब महाप्रलय
होती है॥ तब संपूर्ण विश्व का अभाव हो जाता है॥ पाछे
जो शेष रहता है॥ सो शून्य नहीं॥ दृश्य का आभास सदा
उस विषे रहता है॥ जैसे थंभे विषे सिलपी पुतलीयां
कल्पता है॥ तैसे मनरूपी सिलपी आत्मारूपी थंभे वि
षे जगत कल्पता है॥ जो आत्मा न होवै तो किस विषे

कल्पे ॥ जैसे थंभे विषे पुतलीयां थंभे रूप हैं ॥ तैसे सभ ज
गत आत्म रूप है ॥ आत्मा तें इतर कछु नही ॥ हे रामजी स
त्य भाव जो होता है ॥ सो सत्य तें होता है ॥ अरु असत्त भाव
जो होता है ॥ सो भी सत तें सिध होता है ॥ असत विषे नही
होता ॥ तातें जगत का सत भाव अरु असत भाव आत्मा
विषे है ॥ काहे तें जो जिस कर सूर्य आदिक प्रकाशते हैं
सो तम कैसे होवैं ॥ आत्म प्रकाश बिनां सूर्य आदिक तम
रूप हैं ॥ तातें न शून्य है ॥ न अशून्य है ॥ न तम है ॥ न प्रकाश
है ॥ केवल आत्मत्व मात्र है ॥ जैसे थंभे विषे पुतलीयां
कछु हूई नही ॥ तैसे आत्मा विषे जगत कछु हूया नहीं ॥
जैसे बिल अरु बिल की मजा विषे कछु भेद नही ॥ तै
से आत्मा विषे कछु भेद नही ॥ जैसे जल विषे तरंग हो
ता है ॥ ॥ ॥ ॥ जैसे मृत्त का विषे घट होता है ॥ सो कर्म
कर होता है ॥ अरु आत्मा विषे जगत फुरणे मात्र है ॥ तां
वस्त तें आकाश रूप है ॥ तिस तें जगत कछु भिन्न नही ॥ उही
रूप है ॥ रूप अवलोक जेता कछु जगत भासता है ॥ सो स
भ तेही रूप है ॥ आत्म सत्ता ही फुरले कर जगत रूप हो
भासती है ॥ जगत कछु दूसरा वस्त नही ॥ जैसे सूर्य की कि
रणें विषे जल भासता है ॥ तैसे आत्मा विषे जगत भास
ता है ॥ हे रामजी जिस विषे इह जगत भासता है ॥ तिस को
शून्य कैसे कहीये ॥ चेतन कहें तो भी नही ॥ काहे तें जो
चेतन जानणा भी तब होता है ॥ जब चित्त कला फुरती है
जहां फुरणा ही न होवे ॥ तहां चेतन कैसे कहीये ॥ मरचां
कौ खाईता है ॥ तब तिस की कौड़ाई भासती है ॥ तैसे चेत
न जानणा भी स्पंद कला विषे होता है ॥ आत्मा चेतन तें र
हित चिन्मात्र है ॥ अत्य सुखपति रूप है ॥ तिस को तु
रीया पद कहते हैं ॥ सो ज्ञेय ज्ञान कर गम्य है ॥ हे रामजी
जो पुरुष इस विषे इस्थित हूए हैं ॥ तिस को संसार रूपी
सर्प दंस नही सकता ॥ उह अचेत चिन्मात्र होते हैं ॥ अरु
जिस को आत्मा विषे इस्थित नही ॥ तिस को इह रूप

रूपीसर्पदेखताहै॥ अरुआत्मसत्ताविषेतोद्वैतकछु
कृयानही॥ आत्मसत्ताआकाशतेंभीसूक्ष्महै॥ द्र
ष्टादर्शनदृश्यइनकीसंवितजोअनुसत्ताहै॥ सोआ नव
त्माकारूपहै॥ अभ्यासकरतिसकोप्राप्तहूजीताहै॥ हे
रामजीतिसविषेद्वैतकलनाकछुनही॥ अद्वैतमात्र
है॥ नदृश्यहै॥ नजीवहै॥ नकोऊविकारहै॥ अद्वैतसत्ता
अपनेआपविषेइस्थितहै॥ जोइहफुरणआदिन
होकृया॥ तोजीवकैसेहोवै॥ जोजीवनही॥ तोबुधिकैसे
होवै॥ जोबुधिनहींतोमनदेहइंद्रीयांकैसेहोवें॥ जो
इहनहींतोजगतकैसेहोवै॥ हेरामजीआत्मसत्ताबि
बेस्थितहूएंसभकलनामिटजातीहै॥ अचेतचिन
मात्रअवाचपदशेषरहताहै॥ सोसूक्ष्मतेंसूक्ष्मआका
शतेंभीसूक्ष्महै॥ रामोवाच॥ हेभगवनइहजोअचे
तचिन्मात्रपदार्थसत्तातुमकही॥ तिसकारूपबोधके
निमितबहुडकहो॥ श्रीवसिष्टोवाच॥ हेरामजीजब
महाप्रलयहोतीहै॥ तबसभजगतनष्टहोजाताहै॥ पर
जलसत्ताशेषरहतीहै॥ मनरूपीजोडलाहै॥ जबमन
रूपीवृत्तिक्षीणहोतीहै॥ तबपाछेंजोशेषरहताहै॥
सोनिहचलसत्ताअनंतआत्माहै॥ तिसकोसतअस
तनहीकहिसकीता॥ हेरामजीजबजागतकाअभाव
होताहै॥ अरुसुषुप्तनहीप्राप्तभई॥ उहजोरूपहै॥ सोप
रमात्माकारूपहै॥ शरीरकोजोशीतउष्णहोताहै॥ ति
सकेअनुभवकरणेहारीआत्मसत्ताहै॥ हेरामजीचेत
नजोहैजीव॥ अरुजडजोहैदेहादिक॥ जिसविषेदोनों
नहीं॥ ऐसाजोअचेतचिन्मात्रहै॥ सोपरमात्माकारू दृष्टी
पहै॥ जैसेदर्शनदृश्यविषेजोसुखहोताहै॥ सोआत्म
सत्ताहै॥ अरुजोसन्नअवहारपडाकरताहै॥ अरुअं
तरजिसकाआत्मस्वरूपविषेइस्थितहै॥ ऐसाजोस
ताहै॥ सोआत्माकारूपहै॥ शून्यहै॥ परशून्यतातेंरहित
है॥ हेरामजीदृष्टादर्शनदृश्यजिसविषेतीनोंप्रतिबिं
बितहोतेहैं॥ ऐसीजोसत्ताहै॥ सोपरमात्माकारूपहै॥

स्थावरजंगमविषेजोआपरहाहै॥मनबुधिइंद्रीयां।
जिसकोंनहींपाइसकतीं॥ऐसीजोसत्ताहै॥सोपरमात्मा
कारूपहै॥हेरामजीजैसाविदमुरूइंइजहांइनकाअ
भावहेजाताहै॥तिसकेपाछेजोशेषरहताहै॥जिसवि
षेविकल्पकोउनहीं॥ऐसीजोअचेतचिन्मात्रसत्ताहै
सोपरमात्माकारूपहै॥ ॥इतिश्रीउतपतप्रकरणे
परमस्वरूपवर्ननंनामसर्गः॥१०॥श्रीरामोवाच
हेमुनीश्वरइहदृश्यजोस्पष्टभासतीहै॥सोमहाप्रलय
विषेकहांजातीहै॥श्रीवसिष्ठोवाच॥हेरामजीवं
ध्याइस्त्रीकापुत्रकहांजाताहै॥अरुकहांतेआवताहै
जैसेआकाशविषेबननहै॥तैसेइहजगतहै॥श्रीरा
मोवाच॥हेमुनीश्वरवंध्यास्त्रीकापुत्रअरुआकाश
विषेबनतीनोंकालनहींहोता॥शब्दमात्रहै॥उपजाक
छुनहीं॥अरुइहजगततोस्पष्टभासताहै॥श्रीवसि
ष्ठोवाच॥हेरामजीजैसेवंध्याकापुत्रअरुआकाशवि
षेबनउपजानहीं॥तैसेइहजगतउपजानहीं॥जैसेसंक
ल्पपुरुहोताहै॥जैसेस्वप्नपुरभासताहै॥परआकाशरू
पहै॥तैसेइहजगतआकाशरूपहै॥उपजाकछुन
हीं॥जैसेजलअरुतरंगविषेभेदनहीं॥जैसेअग्निअ
रुउष्णताविषेभेदनहीं॥तैसेब्रह्मअरुजगतविषेभे
दनहीं॥जैसेचंद्रमाअरुशीतलताविषेभेदनहीं॥तैसे
आत्माअरुजगतविषेभेदनहीं॥हेरामजीजगतक
छुउपजानहीं॥आत्मसत्ताअपनेआपविषेइस्थित
है॥तिसविषेअज्ञानकरजगतभासताहै॥जैसेआका
शविषेदूसराचंद्रमाभासताहै॥जैसेमारुस्थलविषेज
लभासताहै॥तैसेआत्माविषेअज्ञानकरजगतभासता
है॥रामोवाच॥हेभगवनदृश्यकेअत्यंताभावबि
नाबोधकोप्राप्तनहींहोती॥~~तांतेजगतस्पष्टभासताहै~~
द्रष्टाअरुदृश्यजोनामकरजुदेकह्येहैं॥जोएकहै॥तो
भीदोनोंहैं॥जबदोनोंविषेएककोअभावहोवे॥तबदो

नोंतें मुक्त होवे॥ काहेतें जो जहां द्रष्टा है॥ तहां दृश्य भासती है
जैसे शुध आदर्श बिना प्रतिबिंब नही रहता॥ तैसे द्रष्टा
दृश्य बिनां नही रहता॥ अरु दृश्य द्रष्टा बिनां नही होती
हे मुनीश्वर जब दोनों विषे एक नष्ट होवे॥ तब दोनों नि
र्वाण हो जावें॥ तांतें सोई उपाव कहो॥ जिसकर दृश्य का अ
संता भाव होवे॥ अरु आत्मबोध की प्राप्त होवे॥ अरु ए
क अैसे भी कहते हैं॥ जो दृश्य आगे थी अब नाश हूई है
जैसे सत्य बीज विषे वृक्ष होता है॥ तैसे स्मृत बहुड़े संस
कार को दिखावेगी॥ अरु तुम कहते हो॥ जो जगत का अ
संत अभाव है॥ अरु इसका कारण कोऊ नही॥ आभास
मात्र है॥ उपजा कछु नही॥ हे मुनीश्वर जिसका असंता
भाव होता है॥ उह वस्त वास्तव नही होती॥ जैसे दृश्य न हो
वे॥ तो बंधन भी किसी को न होवे॥ सब मुक्त हूए॥ इह ज
गत प्रत्यक्ष भासता है॥ तांतें सोई उपाव कहो॥ जिसक
र जगत का अत्यंताभाव होवे॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥
हे रामजी दृश्य के असंताभाव निमित एक कथा तुज
कों श्रवण करावता हों॥ जिसके अर्थ समझे हूए तें दृश्य
भ्रम नाश हो जावेगा॥ बहुड़ संसार कदाचित न उपजेगा
जैसे समुद्र विषे धूड़ नही उपजती॥ तैसे तेरे चिदे विषे
संसार न उपजेगा॥ हे रामजी इह जगत जो तुजको भास
ता है॥ सो अकारण है॥ इसका कारण कोऊ नही॥ जिस
का कारण कोऊ न होवे॥ अरु भासे॥ तिसको भ्रम मात्र जा
णीए॥ जैसे स्वप्न विषे सृष्टि भासती है॥ सो किसी कारण
कर उपजी नहीं॥ संवित मात्र है॥ हे रामजी जो पदार्थ कार
ण बिनां भासे॥ तो जिस विषे भासता है॥ वस्तु सोई है॥ अ
धिष्ठान रूप है॥ जैसे तुजको स्वप्ने विषे स्वप्न नगर हो भा
सता है॥ अवर पदार्थ तो ऊहां कोऊ नही॥ आभास रूप
है॥ संवित ही ज्ञान चेतनता करके नगर रूप हो भासती है
तैसे विश्व अकारन आभास मात्र आत्मसत्ता हो कर भा
सती है॥ जैसे जल विषे द्रवता है॥ जैसे अग्नि विषे प्रका:

आहे॥ तैसे आत्मा विषे चित्त संवेदन है॥ जब चित्त संवेदन
संवित रूप होती है॥ तब जगत रूप होकर भासती है॥ अ
वर जगत कोऊ वस्तु नही॥ तांते आत्म सत्ता सर्वदा अपणे
आप विषे इस्थित है॥ वही जगत रूप होकर भासती है॥
जैसे स्वर्ण विषे भूषण रूप होता है॥ तो भूषण कछु उपजा
नही॥ तैसे ब्रह्म सत्ता जगत रूप हो भासती है॥ जैसे अनुभ
व संवित स्वप्न रूप हो भासती है॥ तैसे इह जगत आत्म रू
प है॥ दूसरी वस्तु कछु नही॥ सदा ब्रह्म सत्ता अपणे आप
विषे इस्थित है॥ जेता कछु स्थावर जंगम रूप जगत हो
भासता है॥ सो सभ आकाश रूप है॥ ॥इति श्री उत्प
त्ति प्रकरणे परमार्थ रूप वर्णन नाम सर्गः॥ ॥११॥
श्री वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी आत्म सत्ता नित्य शुध
है॥ अजर है॥ अमर है॥ सदा अपणे आप विषे इस्थित है
तिस विषे स्त्रिष्टि उदे भई है॥ सो सुण॥ तिसके जाणे ते ज
गत कलना मिट जावेगी॥ हे रामजी भाव अभाव ग्रहण
त्याग स्थूल सूक्ष्म जन्म मरण पदार्थों कर जीव पडे छि
दते हैं॥ सो तिसते तूं मुक्ति होवेंगा॥ जैसे चूहा सुमेर पर्व
त को चूर्ण नही कर सकता॥ तैसे संसार के भाव अभाव
पदार्थ तुझ को वस न कर सकेंगे॥ हे रामजी आदि शुध
देव अचेत चिन्मात्र रूप है॥ तिस विषे चेतना वसदा
रहता है॥ काहे ते जो चेतन्य स्वरूप है॥ जैसे वायु विषे स्पंद
शक्ति है॥ तैसे चिन्मात्र विषे चित्त का फुरणा सदा रहता
है॥ अहं अस्मि इस भाव को जो प्राप्त हूया है॥ इस कारण
ते तिसका नाम चेतन्य है॥ हे रामजी चेतन्य संवित जो अ
पणे स्वरूप की ओर नही आवती॥ तब लग इसका ना
म जीव है॥ संकल्प का बीज चित्त संवित है॥ तिसते सर्व
भूत जात उतपत हूए हैं॥ तांते सभ का बीज चित्त संवि
त है॥ जीव संवित जब चित्त को चेतती है॥ तब प्रथमे आ
अकाश हूया॥ तिस विषे शब्द गुण हूया॥ तिस आदि शब्द त
न्मात्रा ते पद वाक्य प्रमाण सहित वेद उपजे॥ जेते कछु

आकाश

जगत विषे शबद हैं॥ तिसका बीज शबद तन्मात्रा है॥ जिस बहुड़ रस रूप तन्मात्रा हूई
तें सन वायु स्पर्श होवणा है॥ बहुड़ रूप तन्मात्रा हूई॥ जि
सतें सूर्य अग्नि आदिक प्रकाश का होवणा है॥ बहुड़ रस
तन्मात्रा हूई॥ जिसतें सभ जल का होवणा है॥ जलों का बी
ज उहा है॥ बहुड़ गंध तन्मात्रा हूई॥ जिसतें संपूर्ण पृथवी
हूई है॥ हे रामजी इस प्रकार पांचो भूत हूए हैं॥ पृथवी अ
प तेज वायु आकाश इह जगत हूया है॥ सो भूत पंचीकृत अ
भीए हैं॥ अरु पंचीकृत भी हूए हैं॥ अरु भूत शुध चिदाका
श रूप नहीं॥ काहेतें जो संकल्प मेल संयुक्त हूए हैं॥ इसप्र
कार चिदण विषे सृष्टि भासीया है॥ जैसे बट बीज विषे ब होता
टों का विस्तार है॥ तैसे चिदण विषे सृष्टि है॥ कहूं क्षण वि
षे युग भासता है॥ कहूं युग विषे क्षण भासता है॥ चिदण
विषे अनंत सृष्टि पड़ीयां फुरतीयां हैं॥ जब चित संवित
चेत उनमुखत्व होती है॥ तब अनेक सृष्टि हो भासती है॥
अरु जब चित संवित आत्मा की ओर आवती है॥ तब आ
त्मा के साक्षात होवणे कर सभ सृष्टि पिंडाकार हो जाती
है॥ अर्थ इह जो सभ आत्म रूप हो जाती है॥ तांते इस ज
गत का बीज सभ भूत हैं॥ अरु उनका बीज चिदण है॥
हे रामजी जैसा बीज होता है॥ तैसा वृक्ष होता है॥ तांते सभ
जगत चिदाकाश रूप है॥ संकल्प करके इह जगत अडं
बर होता है॥ संकल्प के मिटे तें सभ चिदाकाश हो जाता
है॥ जैसे संकल्प आकाश रूप है॥ तैसे जगत आकाश रू सभ
प है॥ जो आत्मा अनुभव आकाश स्वरूप है॥ तांते चोण
विषे आकाश रूप हो जाता है॥ जैसे संकल्प नगर अरु
स्वप्नपुर होता है॥ तैसे इह जगत है॥ हे रामजी इस जग
त का मूल पंच भूत हैं॥ अरु तिनका मूल संवित है॥ तिस
का रूप चिदाकाश है॥ तांते सभ जगत चिदाकाश है॥ अ
वर कछु नहीं॥ ॥इति श्री उतपत प्रकरणे जगत उ
तपत वर्ननं नाम सर्गः॥ ॥१२॥ श्री वसिष्ठोवाच॥ हे रा
मजी परब्रह्म सम है॥ सत्ता रूप है॥ स्वच्छ है॥ अनंत है
निरमल

जीव परमातमा

समष्टी सो अहं
प्रलाहं वाला

जगत ब्रह्म

चिन्मात्र है ॥ सर्वदा काल अपने आप विषे इस्थित है ॥ तिस विषे सम अरु असम रूप जगत फुर्या है ॥ सम कहीए सजातीय रूप ॥ असम कहीये विजातीय रूप ॥ सो किंउ कर हूया है ॥ सो सुण ॥ प्रथम जो तिस विषे फुरणा हूया है ॥ तिस का नाम जीव हूया है ॥ तिस ने दृस्य को चेत्या है ॥ तिस कर तन्मात्रा शब्द स्पर्श रूप रस गंध उपजे हैं ॥ तिन तें पृथवी अप तेज वायु आकाश पंच भूत उपजे हैं ॥ तिन का पंच भूत रूपी वृक्ष हूया है ॥ तिस वृक्ष साथ ब्रह्मांड रूपी फल लागे हैं ॥ तां ते जगत का कारण पंच तन्मात्रा ही हैं ॥ अरु तन्मात्रा का बीज आदि संवित आकाश है ॥ तां ते सभ जगत ब्रह्म रूप हूया है ॥ हे रामजी जैसा बीज होता है ॥ तैसा फल होता है ॥ जो इस का बीज परब्रह्म है ॥ तो इह भी परब्रह्म हूया ॥ आदि जो अचेत चिन्मात्र है ॥ सो परम आकाश है ॥ अरु तिस चेतन्य संवित विषे जगत भास्या है ॥ सो जीव आकाश है ॥ सो इह भी शुध निर्मल है ॥ काहे तें जो पृथवी आदिक तत्वों ते रहित है ॥ हे रामजी इह जगत जो तुझ को भासता है ॥ सो सन चिदाकाश रूप है ॥ अवर द्वितीय कछु बना नही ॥ इह तुझ को ब्रह्म आकाश अरु जीव आकाश कहा है ॥ अब जिस कर शरीर ग्रहण हूया है ॥ सो सुण हे रामजी शुध चिन्मात्र विषे जो चेतन उनमुखत्व हूया है ॥ अहं अस्मि ॥ तिस अहं भाव कर के आप को जीव जानत भया ॥ अपना जो वास्तव स्वरूप था ॥ तिस तें अन्य भाव की न्याई हूया ॥ तिस जीव जब रूप देखणे की इछा करी ॥ तब चक्षु इंद्री प्रगट भई ॥ जब स्पर्श की इछा करी ॥ तब त्वचा इंद्री प्रगट करी ॥ जब रस लेणे की इछा करी ॥ तब जिका इंद्री प्रगट भई ॥ जब गंध लेणे की इछा करी ॥ तब नासका इंद्री प्रगट करी ॥ जब शब्द सुणने की इछा भई तब कर्ण इंद्री प्रगट करी ॥ तिस विषे जब अहं भाव दृढ हूया ॥ तिस का नाम अहंकार हूया ॥ तिस अहंकार की दृढता कर निश्चयात्मक बुधि भई ॥ तिस के आगे स

कल्पविकल्पसहीमनहूया॥जबमनसंसरणेलागाद
दृश्यकीऔर॥तबश्रवणइंद्रीहूई॥जबगंधकीइछाक
री॥तबनासकाइंद्रीभई॥इसीप्रकारदेहइंद्रीयांचेत
ताकरकेभासीयां॥तिनविषेअहंप्रतीतकरणेलागा॥
हेरामजीजैसेदर्पणविषेपर्वतकाप्रतिबिंबहोताहै॥
सोपर्वतबाह्यहोताहै॥तैसेदेहइंद्रीयांबाह्यरूपहैं॥
अरुआपणेआपविषेभासतीयांहैं॥तिसकरतिनवि
षेअहंप्रतीतहोतीहै॥जैसेकूपविषेमानुषआपको
देखे॥तैसेआपकोदेखताहै॥जैसेदर्पणविषेरत्नहोता
है॥तैसेदेहविषेआपकोदेखताहै॥सोईचिदणदेह
साथमिलकरदृश्यकोरचताहै॥तिसदेहविषेइह। अभेरूप
क्रियाभासलागतीहै॥जैसेस्वप्नविषेदौडताजावे॥तै ले
सेआत्माविषेस्पंदक्रियाभासतीहै॥सोचित्तसंवितहू
ईहै॥तिसकानामस्वयंभूब्रह्माहूया॥जैसेसंकल्पक
रदूसराचंद्रमाभासताहै॥तैसेमनोमात्रकरजगतभा
सताहै॥जैसेससेकेसिंगहोतेहैं॥तैसेइहजगतहै॥कछु
उपजानही॥जैसेजैसेचित्तफुरीयाहै॥तैसेतैसेस्थाव
रजंगमजगतकीमर्यादाहोतीगईहै॥तातेसभजग
तसंकल्परूपहै॥संकल्पतेइतरजगतकाआकारक
छुनही॥जबसंकल्पस्पंदहोताहै॥तबआगेदृश्यभा
सतीहै॥जबसंकल्पनिस्पंदहोताहै॥तबदृश्यकाअ
भावहोजाताहै॥हेरामजीइसप्रकारकेईब्रह्मानिर्वा
णहूएहैं॥बहुडअवरउपजेहैं॥तातेसभजगतसंक
ल्पमात्रहै॥जैसेनटयापरकेओलेनानाप्रकारकेसां लेआव
गधारताहै॥तैसेमनजगतकासांगधारताहै॥तातेदे
खसनमायामात्रहै॥हेरामजीजबचित्तचेतकीओर
संसरताहै॥तबदृश्यकाअंतनहीआवता॥अरुजब
अंतरमुखहोताहै॥तबसभजगतआत्मरूपहोजाताहै
तोचित्तकेनिस्पंदहोणेकरएकक्षणविषेनिवृत्तहो
ताहै॥काहेतेजोसंकल्पहीरूपथा॥तातेजोकछुजगत

भासता है॥ सो आकाशरूप है॥ उपजा कछु नहीं॥ आत्मस
त्ता ही जिउं की तिउं अपने आप विषे स्थित है॥ जैसे स्व
प्न विषे पर्वत नदीयां भ्रम करके देखता है॥ तैसे भ्रम क
रके जगत भासता है॥ जैसे स्वप्न विषे आपको मृआ देख
ता है॥ सो भ्रममात्र है॥ तैसे इह जगत भ्रममात्र है॥ हे राम
जी स्थावर जंगम जेता कछु जगत तुझको भासता है॥ सो
रूप सब चिदाकाश है॥ हमको तो सदा चिदाकाश भासता है
आदि विराट ब्रह्मा भी कछु उपजा नहीं॥ तो जगत को म
य कैसे उपजा कहों॥ जैसे स्वप्न विषे नाना प्रकार के दृश्य
कालव्यवहार दृष्ट आवते हैं॥ तैसे इह जगत आभास
मात्र भासता है॥ अकारणरूप है उपजा कछु नहीं॥ का
रणकार्य सहित भासता है॥ पर उपजा कछु नहीं॥ हे रा
मजी हमको तो जगत ऐसे भासता है॥ जैसे स्वप्न ते जा
ग्रत हूए स्वप्न के पदार्थ भासते हैं॥ तैसे इह जगत भास
ता है॥ जैसे स्वप्नपुरु भासता है॥ जैसे संकल्पनगर भास
ता है॥ तैसे इह जगत तो ज्ञान॥ आदि विराट आत्मा है॥ सो
अंतवाहकरूप है॥ पृथवी आदिक तत्वों तें रहित है॥ आ
काशरूप है॥ तो इह जगत अधिभौतिक कैसे होवे॥ स
भ आकाशरूप है॥ ॥इति श्री उतपतप्रकरणे स्वयं
भू उतपत वर्णनं नाम सर्गः॥ १३॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥
हे रामजी इह दृश्य मिथ्या असत्यरूप है॥ जो निरामय ब्र
ह्म है॥ सो ब्रह्म आकाश जीव की न्याई हूआ है॥ जैसे समुद्र
द्रवता करके तरंगरूप होता है॥ तैसे ब्रह्म जीवरूप भ
या है॥ आदि जो संवित स्पंदरूप हूई है॥ सो ब्रह्मारूप हू
या है॥ तिस ब्रह्मा तें आगे जीव हूए हैं॥ जैसे एक दीपक
तें बहुते दीपक होवें॥ जैसे एक संकल्प तें बहुते संक
ल्प होवें॥ तैसे आदि जीव तें बहुते जीव हूए हैं॥ जैसे थं
भे विषे सिलपी पुतलीयां कल्पता है॥ जो एती पुत
लीयां इस थंभे विषे हैं॥ सो सिलपी के मन विषे हैं॥ अ
रु थंभा जिउं का तिउं है॥ तैसे मन ने आत्मा विषे पदा

र्थी कलंप्पे हैं॥ वास्तवतें जिउ का तिउ आत्मा है॥ इन पुतली
यों विषे वडी पुतली ब्रह्म है॥ अवर जीव छोटीयां पुत
लीयां हैं॥ सो संकल्प कर के जगत भासता है॥ अरु संक
ल्प के मिटे तें जगत कलनां मिट जाती है॥ श्रीरामो
वाच॥ हे भगवन एक जीव तें बहुते जीव हूए हैं॥ सो पर्व
त विषे पाषाणों की न्याई उपजते हैं॥ जो पर्वत विषे अ
नेक पिंडाकार होते हैं॥ सो काई जीवों को खाए है जो एते
जीव उतपत होआवते हैं॥ अथवा मेघ के बूंदों की न्याई
हैं॥ अरु एक जीव कवन है॥ जिसतें संपूर्ण जीव उपजे हैं
॥श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी न एक जीव है॥ न अने
क जीव हैं॥ इह वचन तेरे ऐसे हैं जैसे कोऊ कहे॥ जो मय
ससे के सिंह उनने देषे हैं॥ तैसे एक जीव भी उपजा नही
तो अनंत कैसे कर होए॥ शुध आतमसत्ता आपने आप
विषे स्थित है॥ अरु अनंत आत्मा है॥ तिस विषे भेद क
लनां कोऊ नही॥ हे रामजी जो कछु तुझ को भासता है॥
सो सन आकाश रूप है॥ कोऊ पदार्थ उपजा नही॥ संक
ल्प के फुरणे कर जगत भासता है॥ जीव ब्रह्म इत्य अरु जी
व आदिक अर्थ आत्मा विषे कोऊ नही॥ इह कलनां आ
भ्रम मात्र कर के भासती है॥ आत्मसत्ता ही जगत की न्यां
ई हो भासता है॥ उस विषे न एक जीव है॥ न अनेक जीव
हैं॥ उपजा कैसे कहो॥ हे रामजी आदि जो विराट आत्मा
है॥ सो आकाश रूप है॥ तिस विषे अवर जगत उपजा
कैसे कहो॥ जगत विराट रूप है॥ अरु विराट जीव रूप
है॥ अरु जीव सो आकाश रूप है॥ बहुड़ अवर जगत
क्या कहो॥ अरु जीव क्या कहो॥ इह जगत सन चिदाका
श रूप है॥ इह जेते जीव भासते हैं॥ सो सन ब्रह्मस्वरूप
हैं॥ अवर वस्तु कछु नही॥ श्रीरामोवाच॥ हे मुनीश्वर
तुम कहते हो॥ जो आदि जीव कोऊ नही॥ तो इन जीवों कों
पालणेहारा कवन है॥ जिसकी आज्ञा विषे इह पडे विच
रते हैं॥ सो प्रेरक कोन है॥ अरु जो कोऊ नही॥ तो सर्व तें अ
लिप्त कैसे हूए हैं॥ एक विषे इह कैसे भेद हूए हैं॥ श्री

वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी जिसको तूं आदि जीव कहता
हैं॥ सो ब्रह्मस्वरूप शुद्ध अनंत शक्ति है॥ अरु अपने
आप विषे इस्थित है॥ जगत कलना कोऊ नहीं॥ हे राम
जी शुद्ध चिदाकाश अनंत शक्ति है॥ तिस विषे आदि
चित्त वन् हूया है॥ शुद्ध चिदाकाश ब्रह्मसत्ता ही जीव
की न्याई भासणे लागी है॥ स्वप्न द्वारा हूए की न्याई भा
सती है॥ स्वरूप तें इतर हूया कछु नहीं॥ चेतन संवित आ
दि स्पंदता कर विराट आत्मा होकर इस्थित भई है॥ ति
सने आगे संकल्प कर के जगत रचा है॥ तिस विषे शुभ
अशुभ कर्म रचे हैं॥ तिन कर नेत रची है॥ जो इह शुभ है
इह अशुभ है॥ जैसे आदि नेत रची है॥ तैसे महाप्रलय
पर्यंत जिउ की तिउ चली जाती है॥ हे रामजी इह जो देव है
सो अनंत शक्ति है॥ तिस विषे जैसे आदि फुरणा हूया है
तैसा ही इस्थित है॥ जो सर्वत्र फुरता है॥ सो सर्वत्र है॥ जो अ
ल्पत फुरता है॥ सो अल्पज्ञ है॥ जैसा आदि फुरणा हूया
है॥ तैसे ही है॥ हे रामजी इन जगत के जो पदार्थ हैं॥ तिन
विषे नेत शक्ति प्रधान है॥ तिन के लंघणे को समर्थ कोऊ
नहीं॥ जैसे रची है॥ तैसे महाप्रलय पर्यंत रहती है॥ हे रा
मजी आदि जो विराट वपु रूप है॥ सो अंतिवाहक रूप है॥
पृथवी आदिक तत्वों ते रहित है॥ संकल्प रूप है॥ जैसे
मनोराज का नगर होता है॥ तैसे इह जगत भी जान॥ हे
रामजी इस सर्ग का निमित्त कारण कोऊ नहीं॥ अरु स
नी मवाय कारण कोऊ नहीं॥ जो पदार्थ समवाय कारण
अरु निमित्त कारण बिना दृष्ट आवे॥ सो भ्रममात्र जानी
ये॥ जो कोऊ पदार्थ उपजता है॥ सो दोइ कारणों कर उप
जता है॥ सो जगत का कारण कोऊ नहीं॥ ब्रह्मसत्ता नित्य
शुद्ध अद्वैत रूप है॥ तिस विषे कारन कार्य की कल्पना
कैसे होवै॥ हे रामजी इह जगत अकारन है॥ भ्रम कर के
पड़ा भासता है॥ जब तुज को आत्म विचार उपजेगा॥ त
ब इह रूप भ्रम मिट जावेगा॥ जैसे दीपक हाथ ले कर अं
धकार को देखीये॥ तो नष्ट हो जाता है॥ तैसे विचार के

रके॥ जगत जो मनष्ट होजाता है॥ जगत जो मन के फुरणे
कर उदै हूया है॥ तांते संकल्प मात्र है॥ संकल्प के लीन
हूए लीन होजाता है॥ हे रामजी सन का अधिष्ठान ब्रह्म
सत्ता है॥ सो सत नाम रूप ब्रह्मसत्ता विषे कल्पित हैं।
अरु षट विकार भी ब्रह्मसत्ता विषे फुरते हैं॥ अरु स
मतें रहित है॥ शुध चिदाकाशरूप है॥ अरु जगत भी
उही रूप है॥ जैसे समुद्र विषे द्रवता करके तरंग बु
दबुदे फुरते हैं॥ तैसे आत्मा विषे जगत फुरते हैं॥ जै
से आदि चित विषे पदार्थसत्ता द्रड हूए हैं॥ तैसे ही इ
स्थित है॥ इतर न होई॥ सन चिदाकाशरूप है॥ इ
छा भी आकाशरूप है॥ देवता दैत सन आकाश रू
प हैं॥ समुद्र सन द्रष्ट आकाशरूप है॥ हे रामजी हम
को तो सन चिदाकाश भासता है॥ आत्मसत्ता ही मन
रूप होकर जगत को रचती है॥ अरु बुध रूप हो भा
सती है॥ सन जगत उही होकर भासती है॥ जब चेतन उ
मुखत्व होती है॥ तब भासती है॥ निस्पंद होती है॥ तब
नही भासती जैसे वायु स्पंद होती है॥ तब भासती है॥
जब निस्पंद होती है॥ तब नही भासती॥ तैसे जब चित
संवेदन स्पंद होती है॥ तब जगत भासता है॥ जब चित
निस्पंद होता है॥ तब जगत मिट जाता है॥ हे रामजी वि
मात्र विषे जो चित का अनुभव हूया है॥ इसी का नाम
जगत है॥ जब चेतन तें रहित हूया॥ तब जगत भ्रम मि
ट जाता है॥ जब जगत ही न रहा॥ तब भेदकलना आ
त्मा विषे कैसे होवे॥ तांते न कोऊ कारण है॥ न कोऊ का
र्य है॥ न जगत है॥ अरु जो भासता है॥ तो आत्मा का आभा
स है॥ हे रामजी इह जगत सन ब्रह्मसरूप है॥ अर
अज्ञानी को भिन्न भिन्न भासता है॥ अरु जन्म मरण
विकार भासते हैं॥ अरु ज्ञानवान को सन आत्मस्वरूप
भासता है॥ पृथ्वी अप तेज वायु आकाश सन आत
मा के आश्रय फुरते हैं॥ अरु चित शक्ति ही ऐसे हो

भासती है। जैसे वसंत रुत आवती है। तिस विषे वल्ल
वली सम प्रफुलित हो आवती है। तैसे चित्त शक्ति
स्पंद कर के जगत रूप हो भासती है। जैसे समुद्र तरंग
रूप हो भासता है। तैसे आत्मा जगत रूप हो भासता
है। हे रामजी जीव रूपी रत्न हैं। जगत तिसका चमत्का
र है। अरु चेतन रूपी अग्नि है। जगत रूपी उष्मता है।
हे रामजी चेतन का प्रकाश भूतक प्रकाश होकर भा
सता है। चेतन सत्ता ही इह शून्य आकाश हो भासती
है। चेतन रूपी घन अंधकार है। तिस विषे जगत रूपी
श्यामता है। चेतन्य रूपी काजर का पहाड है। तिस विषे
जगत रूपी श्यामता है। चेतन रूपी सूर्य है। तिस विषे ज
गत रूपी दिन है। आत्मा रूपी समुद्र है। तिस विषे जग
त रूपी तरंग है। आत्म रूपी फूल है। तिस विषे जगत
रूपी सुगंध है। आत्म रूपी बरफ है। तिस विषे जगत
रूपी शीतल श्वेतता है। आत्मा रूपी स्वर्ण है। तिस वि
षे जगत रूपी भूषण है। आत्म रूपी गंना है। तिस विषे
जगत रूपी मधुरता है। आत्म रूपी दुग्ध है। तिस
विषे जगत रूपी घृत है। हे रामजी इस प्रकार देख जो स
र्व ब्रह्म है। नित्य शुद्ध परमानंद स्वरूप है। सर्वदा अप
ने आप विषे स्थित है। भेद कल्पना कोऊ नही। जैसे
जल द्रवता कर के तरंग रूप हो भासता है। तैसे ब्रह्म
जगत रूप हो भासता है। अरु सब जगत को धार रहा
है आकाश की न्याई। अवर वास्तव तें शांति रूप है। द्वै
त कछु नही। जो कछु है सो ब्रह्म सत्ता ही है। इतर
कछु नही ॥ वाल्मीकि उवाच ॥ हे भारद्वाज इस प्रका
र मुनिशार्दूल वसिष्ठ जी कहा। तब सायंकाल का स
मा हूया। सभा परस्पर नमस्कार कर के अपने अप
ने आश्रम को गए। बहुर सूर्य की किरणों साथ अ
पने अपने स्थान पर आन बैठे ॥ ॥ इति श्री उत

पतंगकरणेसर्वब्रह्मप्रतिपादनंनामसर्गः ॥ ४ ॥ श्रीव
सिष्टोवाच ॥ हेरामजी आत्माविषेजगतकछुउपजानही
भ्रमकरकेपडाभासताहै ॥ जैसेआकाशविषेतिरवरेभा
सतेहैं ॥ तैसेअज्ञानकरजगतभासताहै ॥ जैसेसुमेरस्थू
लहै ॥ तैसेचिदणतेंत्रिसरेणइस्थूलहै ॥ जैसेसूक्ष्म
चिदणविषेइहजगतपडाफुरताहै ॥ सोक्याहै ॥ आभास
हीरूपहै ॥ उपजाकछुनहीजोकछुअनुभवविषेआव
ताहै ॥ तोभीअसत्यहै ॥ जैसेस्वप्नस्त्रिष्टअनुभवहोतीहै ॥
तोभीअसत्यहै ॥ तैसेइहजगतभीउपजाकछुनही ॥ शु
द्धनिर्विकारसत्ताआपणेआपविषेइस्थितहै ॥ तिस
सत्ताकोत्यागकरजोअवयवअवयवीकेसंकल्पउठा
वतेहैं ॥ तिनकोधिकारहै ॥ इहसभजगतआकाशरूप
है ॥ अरुअधिभौतिकजगतजोभासताहै ॥ सोगंधर्वन
गरअरुस्वप्नपुरकीन्याईभासताहै ॥ हेरामजीपर्वतों
सहितजोजगतभासताहै ॥ सोहैकछुनही ॥ भ्रमकरके
भासताहै ॥ जैसेसंकल्पकामेघहोताहै ॥ तैसेइहजग
तहै ॥ जैसेससेकेसींगअसत्यरूपहैं ॥ तैसेइहजगतअ
सतरूपहै ॥ जैसेमृगत्रिष्णाकीनदीअसतरूपहै ॥ तैसे
इहजगतअसतरूपहै ॥ असम्यकज्ञानकरकेभास
ताहै ॥ अरुसम्यकज्ञानकरनष्टहोजाताहै ॥ शुधचेत
न्यसत्ताविषेजबचितसंवेदनफुरतीहै ॥ तबउहीसंवे
दनजगतरूपहोभासतीहै ॥ परकछुहूयानही ॥ जैसे
समुद्रतरंगरूपहोभासताहै ॥ परइतरकछुनही ॥
तैसेब्रह्मसत्ताजगतरूपहोभासतीहै ॥ जैसाबीजहो
ताहै ॥ तैसाअंकुरहोताहै ॥ तैसेआत्मसत्ताजगतरूप
होभासतीहै ॥ सोआत्माहीआपणेआपविषेइस्थित
है ॥ इतरकछुनही ॥ चितसंवेदनस्पंदताकरकेजग
तरूपहोभासतीहै ॥ तिसऊपरमंडपआख्यानतुझ
कोकहताहों ॥ सोसुण ॥ जिसकेसमझेतेंसनसंसेमिट
जावें ॥ अरुविश्रांतकोप्राप्तहोवो ॥ श्रीरामोवाच

78

हेब्राह्मणमेरेबोधकीदृढतानिमितमंडपआख्यानजैसे
हूयाहै॥तैसेसंक्षेपतेंकहो॥श्रीवसिष्ठोवाच॥हेराम
जीइसपृथ्वीपरएककथाहोतभईहै॥सोतंसुण॥अ
थकथालीलाकीलिख्यते॥हेरामजीइसपृथ्वीप
रएकपद्मनामराजाहोतभयाहै॥सोकैसाथा॥कुलका
कमलप्रफुल्लितथा॥अरुसंपदवानथा॥बडीलक्ष्मी
करसंपन्नथा॥अरुसमुद्रवतमर्यादाधारणहाराथा
अरुदुष्टोंरूपीतमकानाशकरतासूर्यथा॥अरुसतो
रूपीगुणोंकामानसरोवरथा॥अरुदोषरूपीतृणोंका
नाशकरताअग्निथा॥अरुप्रजाकेपालणेकोअरुश
त्रूयेंकेनाशकरणेकोविष्णुजीथा॥संपूर्णराजसोसा
लकीगुणोंकरसंपन्नथा॥इकलीलानामतिसकीइ
स्त्रीथी॥मानोंलक्ष्मीआनअवतारलीयाहै॥सोराजा
कीप्रसन्नताकोलेकरआपभीप्रसन्नहोवे॥राजाकेसा
थबागोंअरुमंदरोविषेविचरे॥रतनअरुमणीयों
केजडेहूयेस्थानोंविषेविचरें॥बिलासकरें॥श्लोक
बणाकेआपसमोंचर्चाकरें॥परस्परसनेहआपस
मोंकरें॥प्रीतबहुतबढीहूई॥दोनोंयौवनवानपरस्प
रअत्यंतकप्रीत॥अरुराणीपतिव्रताभरताकोंअप
लेप्राणोंकीन्याईपिआरासावे॥जोराजाअजरअमर
रहे॥इसकानाशनहोवे॥सोईउपावकरों॥ऋषीश्वरों
मुनीश्वरोंसोंपूछतभई॥हेमुनीश्वरोअजरअमर
किंउकरहूवीताहै॥जिसप्रकारहोवीताहै॥सोप्रकारमु
जकोंकहो॥विप्रऋषीश्वरोवाच॥हेदेवीजपतप
आदिकोंकरसिधलाभप्राप्तहोतीहै॥परअमरनहीहू
वीता॥सभजगतनाशरूपहै॥इसशरीरकरकिसी
स्थिरनहीरहणा॥हेरामजीजबइसप्रकारब्राह्मणों
कहा॥तबसुणकरभरताकेहृदयकरविचारकरतभ
ई॥जोभरतासोंमयप्रथममरों॥तोमेरेबडेभाग्यहैं॥

बयोजतें

जोप्रथमराजामृत्युहोवे॥तोमयकष्टपावोंगी॥तांतेसोई
उपावकरों॥जिसकरराजाकाजीवमेरेग्रहविषेरहे॥
बाहिरनजावे॥मयदर्शनकरतीरहों॥तांतेंमयसरस्व
तीजीकीसेवाकरों॥हेरामजीऐसेविचारकरलीलारू
पजोसरस्वतीहै॥तिसकापूजनकरतीभई॥तब(कारण)त्रयरा
त्रिअरुत्रइदिननिराहाररहे॥चोथोदिनउपारणाक
रे॥जिसप्रकारशास्त्रविषेहै॥तिसीप्रकारकरे॥देवताब्रा
ह्मणोंकीपूजाकरे॥स्नानदानतपध्याननितप्रतिकर
इहनेमकीया॥जिसप्रकारग्रहविषेक्रियाकरतीथी॥
उसीप्रकारकरतीरहे॥भरताकोलखावेनही॥इसप्रका
रकलेशतेंरहिततपकरतीरही॥जबत्रयसइदिनव्य
तीतभया॥तबप्रीतिसंयुक्तहोकरहोमकीया॥तबसर
स्वतीजीआई॥तबउसकीपूजाकरी॥तबवागेश्वरीप्रस
न्नहोकरदर्शनदेतभई॥अरुकहा॥हेपुत्रीतुमभर
ताकेनिमित्तजोइष्टवरहै॥सोमांग॥लीलोवाच॥हेदे
वीतेरीजयहोवे॥मयअनाथतेरीशरणआईहों॥मेरी
रक्षाकरो॥इहजन्ममरणरूपीजोअग्निहै॥सोबहुत
प्रकारकरकेजलावतीहै॥तिसकेशांतिकरणेंकोतुम
चंद्रमाहो॥अरुरिदेविषेजोतमहै॥तिसकेनाशकरणे
कोतुमसूर्यहो॥हेमातामुजकोदोवरदेवो॥एकइहव
रहै॥जोजबमेराभरतामृत्युहोवे॥तबइसकाजीवजोहै
पुर्यष्टिकासोबाहिरनजावे॥अंतहपुरविषेहीरहे॥अ
रुदूसरावरइहहै॥जोजबमेरीइछातुमारेदर्शनकोंहो
वे॥तबदर्शनदेवो॥सरस्वतीयोवाच॥हेलीलेऐसे
हीहोवेगा॥हेरामजीइसप्रकारसरस्वतीजीवरदेकर
अंतरध्यानहोतभई॥जैसेसमुद्रविषेतरंगउपजक
रलीनहोताहै॥तैसेदेवीअंतरध्यानहोतभई॥ऐसेव
चनसरस्वतीकेसुणकरलीलाबहुतप्रसन्नभई॥अरु
कालरूपीचक्रजोफिरतारहताहै॥जिसकोछणपल
रूपीआरेलागेहूएहैं॥तिसकेदिनरूपीत्रयसेसठ

किल है॥ वर्षपर्यंत बहुड उसी भोड आवते हैं॥ ऐसा जो
कालचक्र है॥ तिसकर राजा पद्मरण भूमि का तंकटता
हूया गृह विषे आनपडा॥ अरु मृत्यु भया॥ जैसे कमल
नी जल बिन कुमलाइ जाती है॥ जैसे सर्के पत्रसों रस
निकस जाता है॥ तैसे पुर्यष्टका के निकसणे कर राजा का
शरीर कुमला गया॥ तब राणी राजा के मरणे कर बहुत
शोकवान भई॥ मुख की कांति जाती रही॥ जैसे चकवे के
वियोग कर चकवी शोकवान होती है॥ तैसे शोकवान
मूर्छी होत भई॥ कबहूं ऊंची पुकार कर रुदन करे॥ कब
हूं चुप कर रहे॥ राजा के वियोग कर बहुत शोकवान भ
ई॥ व्याकुल होकर प्राण त्यागणे लागी॥ तब सरस्वती जी
दया करके आकाशवाणी करी॥ हे सुंदरी इह जो तेरा
भरता मृत्यु भया है॥ तिसको तूं सर्व ओर तें फलों कर ढां
प राख॥ बहुड तुज को भरता की प्राप्त होवेगी॥ अरु इह
फल भी न कुमलावेंगे॥ तेरे भरता को ऐसी अवस्था है॥
जैसे आकाश की निर्मलता है॥ अरु तेरे ही मंदर वि
षे है कहूं गया नहीं॥ हे रामजी जब इस प्रकार देवी जी कृ
पा कर वचन कहे॥ तब लीला कछुइक शांतिवान भई॥
तब लीला ने भरता को सर्व ओर तें फलों साथ ढांप्या॥
उसके साथ आपनी शोकवान होकर बैठ रही॥ अरु रु
दन करणे लागी॥ बहुड देवी जी का आराधन कीया॥ त
ब अर्धरात्रि के समे देवी जी आन प्राप्त भई॥ अरु कहा॥
हे सुंदरी तुझ मेरा स्मरण किस निमित्त कीया है॥ अरु तूं
शोक किस निमित्त करती हैं॥ इह तो सभ जगत भ्रम मा
त्र है॥ जैसे मृगतृष्णा की नदी होती है॥ तैसे इह जगत है
अहं त्वं इदं तें आदि ले कर जो जगत भासता है॥ सो स
भ जगत कल्पना मात्र है॥ भ्रम करके भासता है॥ आत्मा
विषे हूया कछु नही॥ तूं किस का शोक करती है॥ ली
लोवाच॥ हे परमेश्वरी मेरा भरता कहां स्थित है॥ अ

रूका रूप धारता है॥ तिसकौं मुझे मिलावो॥ तिस बिना म
य अपणा जीवणा नहीं देखती॥ देव्युवाच॥ हे लीले
आकाश तीन हैं॥ एक भूताकाश है॥ एक चित्ताकाश है
एक चिदाकाश है॥ इह जो आकाश है॥ सो भूताकाश है
चित्ताकाश के आश्रय है॥ अरु चित्ताकाश चिदाकाश
के आश्रय है॥ तेरा भरता अब भूताकाश कौं त्याग क
र चित्ताकाश विषे गया है॥ सो चित्ताकाश चिदाकाश के आ
श्रय है॥ जब तूं चिदाकाश विषे इस्थित होवेगी॥ तब तु
झकौं सर्व ब्रह्मांड प्रत्यक्ष भासेगा॥ तिस विषे प्रति बिं
बित होते हैं॥ तहां तुझकौं भरता का जगत भासेगा॥ हे ली
ले देश देशांतर कौं हलण विषे वृत्त जाती है॥ तिसके म
ध्य विषे जो अनुभव सत्ता है॥ सो चिदाकाश है॥ जब तूं
संकल्प कौं त्याग करें॥ तिसतें जो शेष रहे॥ सो चिदाका
श है॥ हे लीले जो जीव विचरते हैं॥ सो सभ पृथ्वी के आ
श्रय हैं॥ पृथ्वी आकाश के आश्रय है॥ तातें सभ जीव
जो विचरते हैं॥ सो भूताकाश के आश्रय हैं॥ अरु इह
चित्त जो विचरता है॥ इक हलण विषे देश देशांतर कौं जा
ता है॥ जिसके आश्रय इह जाता है॥ सो चिदाकाश है॥
हे लीले जब इह रूप का अत्यंत अभाव होता है॥ तब परम
पद की प्राप्त होती है॥ सो चिरकाल के अभ्यास कर प्रा
प्त होती है॥ अरु मेरा इह वर है॥ जो तुझकौं शीघ्र ही प्रा
प्त होवेगी॥ हे रामजी जब इस प्रकार कहि कर देवी अं
तरध्यान भई॥ तब लीला राणी निर्विकल्प समाधि वि
षे स्थित भई॥ अरु चित्त सहित देह का अहंकार त्याग
कर उडी॥ जैसे पंखेरणी अपने ग्रह कौं त्याग कर आ
काश कौं गमन करती है॥ तैसे राणी चिदाकाश कौं उ
डी॥ तब एक हलण विषे चिदाकाश कौं प्राप्त भई॥ जो नि
त्य शुद्ध अनंतात्मा है॥ परम शांतिरूप सर्व का अधि
ष्ठान रूप है॥ तिस विषे जाकर भरता कौं देखती भई॥
इस्पंद की कलना कौं लेगई थी॥ तिसकर अपने म

रताकों देखती भई ॥ अरु बडे तें मंडलेश्वर सिंहासनों
पर देखे आकाश विषे ॥ अरु बडे सिंहासनों पर बैठे दे
ख्या नरताकों ॥ अरु चारों ओरतें जय जयकार शब्द हो
ता है जो राजा तेरी जय होवे जय होवे ॥ अरु बहि सुंदर मं
दरों को देखती भई ॥ राजा के पूर्व दिशा को देखे ॥ तब ब्रा
ह्मण रिषीश्वर तपीश्वर अनेक बैठे हैं ॥ अरु पाठ प
डे करते हैं वेदों धुनों सहित ॥ अरु दक्षिण दिशा की ओ
र देखे ॥ तब सुंदर इस्त्रीयां बैठीयां है ॥ अरु नाना प्रका
र के भूषणों सहित हैं ॥ अरु उत्तर दिशा की ओर देखे ॥ त
ब हस्ती घोडे रथ पिआदा चारो प्रकार की सेना है ॥ पश्चि
म की ओर मंडलेश्वर हैं ॥ चारों दिशा की ओर चारे मंड
लेश्वर हैं इसके आश्रय हैं ॥ शत्रुह को जीत कर विराज
ते हैं ॥ ऐसे देख कर आश्चर्य को प्राप्त भई ॥ अवर नग
र देख्या ॥ अरु प्रजा देखी ॥ सब अपणे अपणे ब्यवहार वि
षे स्थित हैं ॥ बहुड राजा की सभा विषे जा बैठी ॥ राणी स
नको देखे ॥ अरु राणी को कोऊ न देखे ॥ जैसे अवर के सं
पुरु कल्प को नहीं देख सकीता ॥ तैसे राणी को कोऊ न देख स
के ॥ तब राणी राजा के अंतःपुर जा देख्या ॥ जहां गा कु
र धारा बणाया हूया है ॥ देवत्यों की पूजा होती है ॥ अरु
धूप करके सुगंध पसरी है ॥ सो त्रिलोकी कों मगन कर
ती है ॥ राजा का जस बडेतें होता देख्या ॥ तब पूर्व दिशातें
हरकारा आया ॥ तिन कहा ॥ हे राजन पूर्व दिसा सों ओर
राजा का होम हूया है ॥ बहुड उत्तर दिशातें हरकारा
आया ॥ अरु कहा ॥ हे राजन उत्तर दिशातें ओर राजा का
होम हूया है ॥ अरु दक्षिण दिशातें हरकारा आया ॥ अ
रु कहा ॥ हे राजन दक्षिण दिशातें ओर राजा का होम हू
या है ॥ बहुड पश्चम दिशातें हरकारा आया ॥ अरु क
हा ॥ हे राजन पश्चम दिशातें ओर राजा का होम हूया
है ॥ बहुड अवर आया ॥ तिसनें कहा ॥ सुमेर पर्वत देव
त्यों सिद्धों कें स्थान मध्य होम हूया है ॥ बहुड हस्ती च
रिषिएके

ल पर्वत मों चूर्ण भूया है ॥ तब राजा की आग्या मों बहुत
सेना आन इस्थित भई ॥ जैसे बडे मेघ की बडी घटा आव
ती है ॥ तैसे सेना आई ॥ जेते मंत्री टहलवे थे ॥ अवर रिषी
श्वर मुनीश्वर थे तिन को भी लीला देखती भई ॥ जेते नृ
प थे ॥ सो सभ बडी तेर हित खेत बादलों की न्याई स्वेत ब
स्त्र देखती भई ॥ अरु बडे बेद पाठी ब्राह्मण देखती भई
हे रामजी इस प्रकार सभन को देखती भई ॥ पूर्व जैसे सभन
को देखती भई ॥ देखकर आश्चर्यमान भई ॥ चित बि
बे इह हमां का उपली ॥ जो मेरा भरता ही मूआ है ॥ कि संपू
र्ण जगत मृत्यु होकर परलोक विषे आया है ॥ तब दे
खा ॥ जो मध्याह्न का सूर्य सिर पर उदे है ॥ अरु राजा सुं
दर षोडश वर्ष का है ॥ जरा अवस्था को त्याग कर नौ
तन शरीर को धार बैठा है ॥ ऐसे आश्चर्य को देख क
र राणी बहुड अपलोग हकों आवत भई ॥ तब देखा
जो अर्ध रात्र का समा है ॥ अपनीयां सहेलीयां को
सोया हूया देखती भई ॥ सहेलीयां को जगाया ॥ अरु
कहा ॥ जिस सिंहासन पर मेरा भरता बैठता था ॥ तिस
को साफ करो ॥ बिछावलो करो ॥ मय तिस के ऊपर बैठ
ती हों ॥ जिस प्रकार तिस के निकट मंत्री भरत आन बै
ठते थे ॥ तिसी प्रकार करो ॥ सहेलीयां इह बात सुण के
र मंत्रीयों को जगाया ॥ अरु कहा ॥ तब मंत्रीयों सभनों को
जगाया ॥ तब झाडू कर के जल की वर्षा करी ॥ सिंहास
न ऊपर वस्त्र बिछाए ॥ मसालां जगायां ॥ बडा प्रकाश
हूया ॥ इस प्रकार मंत्री टहलूए पंडित बालिक भर
ता विनां देखकर बडे आश्चर्य को प्राप्त भई ॥ जो एक
आदर्श के अंतर बाहिर दोनों ओर तिष्टां भासती हैं ॥
इस प्रकार अंतर की वार्ता उनकों न जनावत भई ॥ ब
डे अंतर आकर कहत भई ॥ बडा आश्चर्य है ॥ ईश्व
र की माया जाली नहीं जाती ॥ इह क्या है ॥ अरु उह क्या
है ॥ इस प्रकार आश्चर्यवान होकर सरस्वती का अ

राधनकीया॥ तबसरस्वतीकुंआरीकन्याकारूपधार
करआई॥ तबलीलाकहा॥ हेभगवतीमयवारंवा
रपूछतीहों॥ सोतुमउदवेगवाननहीहोवणा॥ बडें
काएहीस्वभावहे॥ जोशिष्यवारंवारपूछेतोखेदवा
ननहीहोते॥ अबमयइहपूछतीहों॥ उहजगतक्या
हे॥ अरुइहजगतक्याहे॥ दोनोंविषेकृतमक्याहे॥ अ
रुअकृतमक्याहे॥ देवीयोवाच॥ हेलीलेतुमहीक
हो॥ जोकृतमकोनहे॥ अरुअकृतमकोनहे॥ पाछेंम
यतुजकोंकहोंगी॥ लीलोवाच॥ जहांतुमहमबै
ठेहें॥ सोअकृतमहे॥ अरुउहजोमेरेभरताकास्वर्ग
हे॥ सोकृतमहे॥ काहेतेंजोअन्यस्थानविषेउहसृष्ट
हूईहे॥ देवीयोवाच॥ हेलीलाजैसाकारणहोता
हे॥ तैसाकार्यभीहोताहे॥ जोकारणसतहोताहे॥ तो
कार्यभीसतहोताहे॥ सततेंअसतनहीहोता॥ अर
असततेंसतनहीहोता॥ कारणतेंअन्यथाकार्यन
हीहोता॥ तांतेजैसेइहजगतहे॥ तैसेउहजगतहे
॥ लीलोवाच॥ हेभगवतीकारणतेंअन्यथाभीका
र्यहोताहे॥ काहेतेंजोमृत्तिकाजलकेउठावणेकोंस
मर्थनहीहोती॥ अरुजबमृत्तिकाकाघटबणताहे
तबजलकोंउठावताहे॥ तोकारणतेंअन्यथाका
र्यकीसत्ताहोईकिंउ॥ देवीयोवाच॥ हेलीलाका
कारण रणतेंअन्यथाकार्यकीसत्तातबहोतीहे॥ जोसहका
रीभिन्नाभिन्नहोवे॥ जहांसहकारीनहीहोता॥ तहांका
रणतेंअन्यथाकार्यकीसत्तानहीहोती॥ तेरेभर
ताकीसृष्टजोभासतीहे॥ सोकारणविनांभासतीहे
उसकाजीवजोपुर्यष्टकाथी॥ सोआकाशरूपथी॥
तहांकोउसमवायकारणभीनथा॥ अरुनिमित्त

कारणभीकोऊनथा॥ तिसकोहूतमकैंसेकहीए॥
जोकिसीकाकीयाहोवे॥ तोहूतमकहीए॥ इहतोऽ
काशरूपहै॥ पृथ्वीऽआदिकतत्वोंतेरहितहै॥ जि
सकासमवायकारणनहोवे॥ तिसकानमित्तकार
णकैंसेहोवे॥ तांतेउहजोतेरेभरताकास्वर्गहै॥ सोऽ
कारणहै॥ लीलोवाच॥ हेदेवीउसस्वर्गकाजोस्मृ
तसंस्काररहै॥ सोईकारणकिंउनहोवे॥ देवीयोवा
च॥ हेलीलाइहस्मृतितोकोऊवस्तुनहीं॥ ऽआकाश
रूपहै॥ स्मृतनामसंकल्पकाहै॥ सोसंकल्पऽआकाश
रूपहै॥ ऽअवरवस्तुकछुनहीं॥ लीलोवाच॥ हेदेवी
उहसंकल्पमात्रऽआकाशरूपहै॥ तोइहभीऽआका
शरूपहै॥ अहंतुमहमबैठेहैं॥ जैसेउहहै तैसेइह
है॥ दोनोंतुल्यहूए॥ देवीयोवाच॥ हेलीलाजैसेतू
कहतीहैं॥ तैसेहीहै॥ ऽअहंत्वेइदेइहउहसंपूर्णजग
तऽआकाशरूपहै॥ भ्रममात्रभासताहै॥ उपजाकछु
नहीं॥ ऽआभासमात्रहै॥ स्वरूपतेइनकासद्भावक
छुनहीं॥ जोपदार्थसतनहोवे॥ तिसकीस्मृतिकैंसे
सतहोवे॥ लीलोवाच॥ हेदेवीजीऽमूर्तिवंतमेरा
भरताथा॥ सोमूर्तिवंतकैंसेहूया॥ ऽअरुतिसकोजग
तभासणेलागा॥ तिसकास्मृतिकारणहै॥ किकिसी
ऽअवरप्रकारहै॥ इहमेरेहृदयभ्रमकेनिवृत्तऽअर्थ
मुजकोकहो॥ देवीयोवाच॥ हेलीलाउहभीभ्रम
रूपहै॥ इहभीभ्रमरूपहै॥ जोइहसत्यहोवे॥ तोइसकी
स्मृतिभीसत्यहोवे॥ सोइहजगतभीऽअसत्यरूपहै॥
ऽअरउहजगतभीऽअसत्यरूपहै॥ जैसेइहभ्रमतुज
कोभीस्याहै॥ सोसुण॥ एकमहाचिदाकाशहै॥ तिसका
कचनचिदणुहै॥ तिसकेकिसीऽअंसविषेजगतहै॥
सोजगतरूपीवृक्षहै॥ सुमेरतिसकाथंभहै॥ सप्तलो
कतिसकेडासहै॥ ऽआकाशउसकोछिरवाहै॥ ऽअरु

सप्तसमुद्र तिस विषे रस हैं ॥ तीनों लोक तिस के फल
हैं ॥ तिस विषे सिध गंधर्व देवता दैत्य मानुष मत्स्य र
रूप हैं ॥ तारागण समूह तिस के फल हैं ॥ तिसी ब्रह्मांड के किसी
कोण विषे एक देस है ॥ तिस विषे एक पर्वत है ॥ तिस
के तले एक नगर बसता है ॥ तहां एक नदी का प्रवाह
चलता है ॥ तहां एक वसिष्ट नाम ब्राह्मण था ॥ सो बड़ा
धर्मात्मा था ॥ सदा अग्निहोत्र करता था ॥ धन अरु विद्या
कर संपूर्ण था ॥ जैसे खेचर वसिष्ट है ॥ विद्या अरु कर्म
धन पराक्रम तिस के समान था ॥ पर ज्ञान विषे भेद था
जैसे खेचर वसिष्ट का ज्ञान है ॥ तैसे भूचर वसिष्ट का
ज्ञान न था ॥ तिस की इस्त्री का नाम अरुंधती था ॥ सो प
तिव्रता थी ॥ इस अरुंधती का मुख भी चंद्रमा की न्याईं
था ॥ तिस अरुंधती की विद्या पराक्रम समान था ॥ अ
रु ज्ञान न समान था ॥ अवर सभ लक्षण भी एक समान
थे ॥ उह आकाश की अरुंधती है ॥ इह भूमि की अरुंधती
थी ॥ एक काल में वसिष्ट ब्राह्मण पर्वत के शिखर पर
बैठा था ॥ एक राजा उस पर्वत के निकट सिकार खेल
ने के निमित्त सभ सैना सहित चल्या जाता था ॥ सो बहुत
सुंदर नाना प्रकार के भूषणों सहित भूषित कीया हू
या ॥ अरु सीस पर चमर होता जाता था ॥ अरु ध्वजा भी
रमणीक अरु मंडलेश्वर भी साथ हैं ॥ हस्ती घोड़ा रथ
पयदा चारों प्रकार की सैना आगे पाछे चली जाती है
अरु नौबत निगारे बाजते जाते हैं ॥ अरु सिर पर छत्र
छाया करी जाता है ॥ तिस को देख कर वसिष्ट ब्राह्मण
चितवता भया ॥ जो राजा कों बड़ा सुख प्राप्त होता है ॥ जो
सन नसो आपता कर राजा संपन्न होता है ॥ इस प्रकार
का राज मुझ को भी प्राप्त होवे ॥ इह वांछा करत भया ॥
अरु मय कब दसों दिशों को जीतोंगा ॥ अरु मेरे यश नाम
पदसों दिशा कब पूर्ण होवेगी ॥ ऐसा छत्र मेरे सिर

परका बस लेगा ॥ अरु चारों प्रकार की सेना मेरे आगे पा
छे कब चलेगी ॥ अरु सुंदर मंदरों विषे क ब चेष्टा क
रोंगा ॥ हे लीला इस प्रकार उह ब्राह्मण संकल्प को धा
रता भया ॥ अरु जो कछु अपणे कर्म हैं ॥ सो नीके तोर
हे ॥ पर कामनां रिदे विषे इस्थित हो रही ॥ तब ब्राह्मण
को जरा अवस्था आन प्राप्त भई ॥ शरीर जरजरीभाव
हूया ॥ अरु मृत्यु का समा निकट आया ॥ तब तिसकी
इस्त्री भरता की मृत्यु निकट देषकर कष्टवान भई
तब उसने मेरी आराधना करी ॥ जैसे तुं जु करी है ॥ तैसे
उह करती थी ॥ तब मुज सों वर मांगता भई ॥ हे देवी मु
ज कों इह वर देवो ॥ जो मेरा भरता मृत्यु होवे ॥ तब इसका
जीव मेरे ग्रह तें बाहिर न जावे ॥ तब मय कहा ॥ ऐसे ही
होवेगा ॥ हे लीला जब बहुत काल ब्यतीत हूया ॥ तब
ब्राह्मण मृत्यु भया ॥ तब उसका जीव मंदर ही विषे र
हा ॥ हे लीला जब आकाशरूप हो गया ॥ अरु उसकी
पुर्यष्टिका विषे जो राजा का दृढ संकल्प था ॥ तब उस
कों उह संकल्प आन फुरता ॥ जैसे बीज तें अंकुर फुर
आवता है ॥ तैसे आन फुरया ॥ तिस कर अपणे राज
को देषत भया ॥ मेरा त्रिलोकी का राज है ॥ अरु परम
सोभाग्यती करके संपन्न हों ॥ अरु दशों दिशा मेरे ज
स कर पूर्ण हैं ॥ ब्राह्मणों अरु अर्थीयों का कल्पवृक्ष
हैं ॥ अरु इस्त्रीयों कों प्रीतम भासे ॥ इत्यादिक जो सात्व
की राजसी गुण हैं ॥ तिन करके संपन्न है ॥ तिसकी इस्त्री
तिसको मृत्यु हूया देषकर बहुत शोकवान भई ॥ उ
ह भी शरीर कों त्यागकर अतिवाहक शरीर कर भर
ता कों जा प्राप्त भई ॥ अरु ब्राह्मण के जो पुत्र थे पिता
माता की क्रिया करने लागे ॥ अरु उस ब्राह्मण अरु
ब्राह्मणी कों मृत्यु हूए आठ दिन हूए हैं ॥ सो वसिष्ठ
ब्राह्मण तेरा भरता पद्म राजा हूया है ॥ अरु तिसकी
इस्त्री अरुंधती तूं लीला आन हूई हैं ॥ इह जे नीक

बृहगाकाश पर्वत समुद्र पृथ्वी त्रिलोकी है॥ सो बसि
ष्ट ब्राह्मण के अंतहपुर विषे एक कोण में स्थित है॥
ऊहां तुमको आठ दिन व्यतीत हूये हैं॥ सूतक भी न
हीं गया॥ अरु इहां तुमको सहस्र वर्ष राज कीया है॥
नाना प्रकार के भोग भोगे हैं॥ हे लीला इस प्रकार तुम
जन्म लीया है॥ सो मय सम कहा है॥ सो क्या है संकल्प
मात्र है॥ अरु जेता कछु जगत तुझको भासता है॥ सो
संकल्प कर के पडा फुरता है॥ वास्तव तें कछु उपजा
नहीं॥ हे लीला जो इह जगत सत न हूया॥ तो तिस को स्मृ
ति सत कैसे कहीए॥ इह सम तुम हम उसी ब्राह्मण के
मंदर विषे स्थित हैं॥ लीलोवाच॥ हे देवी जी तुमा
रे वचनों को असत्य कैसे कहों॥ जो तूं कहती है॥ उस ब्रा
ह्मण का जीव अपणे गृह विषे रहता है॥ जहां तुम ह
म बैठे हैं॥ अरु देश देशांतर पर्वत समुद्र लोकालो
क पर्वत उसही गृह विषे हैं॥ सो कैसे उस विषे समावते
हैं॥ इह वचन तुमारे असे हैं॥ जैसे कहीये सरसों के दा
ने विषे उनमत्त हस्ती बांधे हूए हैं॥ अरु सिंहां सा
थ मछर युद्ध करते हैं॥ अरु सिंह मछरों ते भागे जा
ते हैं॥ अरु कमल के फोली विषे सुमेर पर्वत समाइ ग
या है॥ तिस कमल ऊपर भौंरा आन बैठा॥ तिस क
मल को पान कर गया॥ अरु स्वप्न के मेघों ने सर्व जग
त प्रलय कर दीया है॥ जैसे इह वार्ता असंभव हैं॥ तैं
से तुमारा कहणा मुझको असंभव भासता है॥ देवी
योवाच॥ हे लीला मैं तुझको झूठ नहीं कहा॥ हमा
रा कहणा कदाचित असत नहीं॥ काहे तें जो आदि प
रमात्मा की इह नेत है॥ महापुरुष असत्य नहीं कहते
इसी कारण तें हम असत नहीं कहते॥ हम तो धर्म के
प्रतिपादन करणे हारे हैं॥ जहां धर्म की हानि होती है
तहां हम धर्म की प्रतिपाल करते हैं॥ जो हम धर्म की
प्रतिपाल न करें॥ तो धर्म को अवर कैसे मानै॥ हे ली

लाजैसेसोएहूएंस्वप्नेविषेत्रिलोकीभासआवतीहै
सोअपनेअंतरहोतीहै॥ तैसेइहजगतभीसभतुमा
रेसंकल्पविषेहै॥ अरुजैसेस्वप्नेतेंजागतहोताहै
तैसेमरणाभीजान॥ जहांमृत्युहोताहै॥ तहांजीवपुर्य
ष्टिकाआकाशरूपहोजातीहै॥ बहुडवासनाकेअ
नुसारतिसकोंजगतफुरआवताहै॥ जैसेस्वप्नेविषे
जगतभासआवताहै॥ सोआकाशहीरूपहै॥ तैसेइह
जगतभीजान॥ हेलीलाइहसभजगततेरेउसीअंत
हपुरविषेहै॥ काहेतेजोजगतचितआकाशविषेहै॥
जैसेआदर्शविषेप्रतिबिंबहोताहै॥ तैसेचितविषे
इहजगतहै॥ अरुचितआकाशरूपहै॥ जोचितअंत
हपुरविषेहूया॥ तोजगतभीहूयाकिंउ॥ हेलीलाज २९
गतजोतुजकोंभासताहै॥ सोआकाशरूपहै॥ जैसेस्व
प्ननगरभासताहै॥ जैसेसंकल्पपुरभासताहै॥ तैसे
इहजगतभासताहै॥ जैसेमृगत्रिष्णाकाजलभासता
है॥ तैसेइहजगतभीजान॥ हेलीलाबालवतैकोऊपरा
थेउपजानहीं॥ भ्रमकरकेपडेभासतेहैं॥ जैसेस्वप्नेतें
स्वप्नांतरभासताहै॥ बहुडअवरस्वप्नाआवताहै॥ तैसे
तुमकोइहसिष्टभ्रमभास्याहै॥ हेलीलाइहजगतआ
त्मरूपहै॥ जहांजहांचिदणुहै॥ तहांतहांजगतहै॥ पर
काहै॥ आकाशरूपहै॥ जैसेउहजगतआकाशरूपहै
तैसेइहभीआकाशरूपहै॥ जिसप्रकारइहचेतताहै
तिसीप्रकारहोभासताहै॥ तातेसंकल्पमात्रहै॥ जैसेस्व
प्नपुरभासताहै॥ जैसेसंकल्पनगरभासताहै॥ तैसेइह
जगतहै॥ तातेइसकीकलनाकोत्यागकर॥ लीलोवा
च॥ हेदेवीतिसवसिष्टब्राह्मणकोमूएहोएंआठदिन
बीतेहैं॥ अरुहमकोईहांसाठसहस्रवर्षबीताहै॥ इह
वार्तासतकैसेजानीए॥ इहथोडेकालविषेबहुताकाल
किंउकरसमायाहै॥ देव्योवाच॥ हेलीलाजैसेथोडे
देशविषेबहुतदेशसमावताहै॥ तैसेथोडेकालविषे

84

बहुतकाल आवता है॥ जैसे एक पलक के स्वप्ने विषे
सहस्र वर्षों का अनुभव होता है॥ तैसे थोडे काल विषे
बहुत काल आवता है॥ जब इह जीव मृतक होता है॥ त
ब मूर्छा हो जाता है॥ बहुड मूर्छा तें चेतनता फुर आ
वती है॥ तिस विषे इह भास आवता है॥ जो इह आधार
है॥ इह आधेय है॥ इह मेरा शरीर है॥ इह मेरा हाथ है॥ इह
पांव है॥ इह मेरी माता है॥ इह मेरा पिता है॥ इसका मय पु
त्र हों॥ अब एते वर्ष का मय हूया हों॥ इह मेरे बांधव हैं॥
तिनां साथ सनेह करता है॥ इह मेरा ग्रह है॥ इह मेरा कु
ल है॥ चिरकाल का चल्या आवता है॥ मरणे के अनंत
र एते भ्रम को देषता है॥ हे लीला इस प्रकार इह देषता
है॥ क्षण विषे और का और भासता है॥ जो इह जगत चे
तन्य का किंचन है॥ जैसे चैतन्य विषे चेतता होता है॥ तैसा
जगत हो भासता है॥ जैसे स्वप्ने विषे द्रष्टा दर्शन दृश्य भा
सता है॥ तैसे आत्मा विषे जगत भासता है॥ सो आभास
मात्र है॥ भ्रम करके भासता है॥ जैसे स्वप्ने विषे कारण
विनां नाना प्रकार का जगत भासता है॥ सो क्या है॥ आका
श रूप है॥ भ्रम करके भासता है॥ तैसे इह जगत भ्रम क
रके भासता है॥ स्वप्न जगत अरु जाग्रत जगत अरु पर
लोक जगत एक समान है॥ इन विषे भेद कछु नहीं॥ जैसे
उह भ्रम मात्र है॥ तैसे इह भ्रम मात्र है॥ वास्तव तें कछु उ
पजा नहीं॥ जैसे समुद्र विषे तरंग होता है॥ सो जल तें इत
र कछु नहीं॥ तैसे आत्मा विषे जगत हूया कछु नहीं॥
जैसे ससे के सिंह असत्य है॥ तैसे जगत असत्य है॥ उप
जा कछु नहीं॥ हे लीला जब इह पुरुष मृतु होता है॥ तब मू
र्छा तें अनंतर क्षण विषे सन कलनां भास आवती है॥
तैसे कारण विनां इह जगत भास्या है॥ तो द्रष्टा दर्शन दृ
श्य को उह न हूया किंउ॥ इह जो देश काल क्रिया देह इंद्री
यां प्राण मन बुधि सन भ्रम करके भासते हैं॥ आत्मा के

ऐसे परलोक कारण बिना नानाप्रकारका जगत भासता है ८

प्रमादकरकेजगतभासताहै॥ हेलीलाभ्रमविषेक्यानहीहोता जैसेहरीचंद्रकोएकरात्रविषेद्वादशवर्षकाअनुभवभया॥ तैसेइसकोथोड़ेकालविषेउरकोऔरभावभासताहै॥ जैसेस्वप्नविषेमूयेकोजीवतादेखताहै॥ अरजीवतेकोमूयादेखताहै॥ अवरकालविषेअवरकालदेखताहै॥ नांनेदेख॥ जोसभभ्रममात्रहै॥ परआत्मदेवतेंअतरकछूनही॥ नबंधहै॥ नमोक्षहै॥ नजन्महै॥ नमरणहै॥ जैसेमरचांविषेतीक्षणताहै॥ तैसेआत्माविषेजगतहै॥ जैसेथंमेविषेसिल्पीपुतलीयांकल्पताहै॥ तातेमनरूपासिलपीनेजगतरूपीपुतलीयांकल्पीयांहै॥ परजिउकोतिउआत्मसत्ताअपणेआपविषेइस्थितहै॥ तिसशुधआजरअमरअपणेआपस्वभावविषेइस्थितहै॥ ॥इतिश्रीउतपतप्रकरणेमंडपआख्यानवरमार्थगतिपादनंनामसर्गः॥१५॥ देवीयोवाच॥ हेलीलाजबइहमरणकरमूर्छीहोतीहै॥ तिसतेंअनंतरशीघ्रहीकुलजन्मभासआवताहै॥ परवादेसकालक्रियाद्रव्यपरवारभासआवताहै॥ परवास्तवतेंकछुहूआनही॥ इसकीस्मृतभीअसतहै॥ एकस्मृतिअनुभवतेहोतीहै॥ अरुएकस्मृतिअनुभवविनाहोतीहै॥ परदोनोंस्मृतिमिथ्याहैं॥ जैसेस्वप्नेविषेअपणामरणादेखताहै॥ सोअनुभवभीअसत्यहै॥ किसीअपणेमरणेकीस्मृतकरनहीभासया॥ सोतिसमरणेकीस्मृतभीअसत्यहै॥ जैसेस्वप्नेविषेकोउपदार्थदेख्या॥ तिसकोजाग्रतविषेस्मरणकरणाइहभीमिथ्याहै॥ तैसेइहजगतभीअसत्यरूपहै॥ नइहस्मिष्टसत्यहै॥ नउहस्मिष्टसत्यहै॥ लीलोवाच॥ हेदेवीजीजोइहस्मिष्टभ्रममात्रहै॥ तोउहविदूरथकीस्मिष्टइससृष्टिकेसंस्कारकरहूईहै॥ अरुइहउसब्राह्मणअरुब्राह्मणीकीस्मृतसंस्कारतेहूईहै॥ तोब्राह्मणअरुब्राह्मणीकीस्मिष्टकिसकीस्मृतिविषेहूई॥ देवीयोवाच॥ हेलीलाउहजोवसिष्टब्रा

ऽजैसेआत्माविषेमनकल्पनाजगतहै ५

ऽभ्रमसंकल्पमात्रहै ६

८५

85

ह्मण का सृष्टि है॥ सो ब्रह्मा के संकल्प विषे हूई है॥ अरु
ब्रह्मा ब्रह्म के संकल्प विषे फुरा है॥ पर वास्तव तें ब्रह्मा
हीं उपजा नहीं॥ तौ जगत तिस का क्या कहें॥ इहां जेती क
छु सृष्टि दिषाती है॥ सो उस ब्राह्मण के संकल्प विषे है
वास्तव तें कछु हूई नहीं॥ सभ संकल्प रूप मन के फुरणे
पडी कर पडी भासती है॥ जैसा जैसा संकल्प फुरता है॥ तैसा
तैसा हो भासता है॥ इह सृष्टि जो तेरे भरता कों भास आ
ई है॥ सो थोडे काल विषे बहुता काल होइ भासया है॥ जै
से एक क्षण के स्वप्ने विषे हजारों वर्षों का अनुभव हो
ता है॥ तैसे तेरे भरता कों थोले काल विषे बहुता काल
भासया है॥ लीलोवाच॥ हे देवी जी जहां ब्राह्मण कों
मृत्यक हूए आठ दिन व्यतीत हूए हैं॥ तिस सृष्टि कों
हम किसी प्रकार देखें॥ देव्योवाच॥ हे लीला जो तूं
अभ्यास योग करें तब देखें॥ अभ्यास योग विना देख
णें कों समर्थ न होवेंगी॥ काहे तें जो उह सृष्टि चिदाका
श विषे फुरी है॥ जब तूं अभ्यास करके चिदाकाश वि
षे प्राप्त होवेंगी॥ तब तुझ कों सभ सृष्टि भास आवेंगी
इह जो सृष्टि है॥ सो अवर के संकल्प विषे है॥ जो तूं उस
के संकल्प विषे प्रवेश करें॥ तब उस की सृष्टि भासेगी
अन्यथा नहीं भासती॥ जैसे एक के स्वप्ने को दूसरा न
हीं जान सकता॥ तैसे अवर की सृष्टि अवर कों नहीं भा
सती॥ जब तूं अतिवाहक रूप होवें॥ तब उस सृष्टि कों
देषें॥ जब लग आधिभौतिक पंच तत्वों के शरीर विषे
अभ्यास है॥ तब लग उस कों न देखेंगी॥ काहे तें जो निरा
कार कों निराकार ही ग्रहण करता है॥ निराकार को
आकार नहीं ग्रहण करता॥ तां ते इह आधिभौतिक
देह जो भ्रम रूप है॥ इस को त्याग कर चिदाकाश सत्ता
विषे स्थित होवो॥ जैसे पंखी आलणे कों त्याग कर आ
काश विषे उडता है॥ तब जहां इछा होती है॥ तहां चला

जाता है॥ तैसे चित्तको एकाग्र करके स्थूलशरीरको त्याग
करि चिदाकाश विषे अभ्यासके बलकर इस्थित होवे
गी॥ तब आवर्णते रहित होवेगी॥ बहुरि जहां इच्छा करें
गी तहां चली जावेंगी॥ जो देख्या चाहेंगी सो देखलेवेंगी॥
हे लीला हम सदा तिस चिदाकाश विषे स्थित रहते हैं
हमारा वपु भी चिदाकाश है॥ इस कारणते हमको आ
वरण कोऊ नहीं॥ हम सारखे जो उदारात्मा हैं॥ तिनको
सदा स्वरूप विषेइ स्थित हैं॥ अरु सदा निरावर्ण हैं॥ को
ऊ कार्य हमको आवर्ण नहीं करता॥ जहां चल्ये जावें त
हां चल्ये जावें॥ सदा अतिवाहकरूप हैं॥ अरु तूं अब
लग आधिभौतिक हैं॥ इस कारणते उह स्रिष्ट तुजको
नहीं भासती॥ अरु उहांतें जा भी नहीं सकती॥ हे लीला
अपणाही संकल्प मनोराज होता है॥ तिस विषे चितकी
वृत्ति स्थित हो जाती है॥ तिस काल विषे अपणा सरीर न
हीं भासता॥ तो अवरका कैसे भासे॥ जब तुजको अति
वाहकका दृढ अभ्यास होवे॥ अरु आधिभौतिक विस
र्जन होवे॥ तब भासे॥ काहेते जो आगेंही समाहितां आ
तिवाहक विषे हैं॥ संकल्पका दृढता करके आधिभौति
क पडा भासता है॥ जैसे जल दृढ शीतलता कर गडा हो
जाता है॥ तैसे अतिवाहकतें आधिभौतिक होता है॥ प्रमा
द रूप संकल्प करके॥ उहा संकल्प उलट कर सूक्ष्म अति
वाहक की ओर आवे॥ तब आधिभौतिकता मिट जावे॥
अरु अतिवाहकता आन उदै होती है॥ जब इस प्रकार
तुजको निरावर्णता उदै होवेगा॥ तब देखले अरु जावणे
विषे यत्न कछु न होवेगा॥ सहकार साध्य निराकारको
ग्रहण नहीं कर सकीता॥ निराकारकी एकता निराका
र साध्य होती है॥ जब तूं अतिवाहकरूप होवेंगी॥ तब उ
सके संकल्प दृश्य विषे तेरा प्रवेश होवेगा॥ हे लीला इह
जगत संकल्पमात्र है॥ वास्तव तो कछु हूया नहीं॥ एक
अद्वैत आत्मसत्ता अपणे आप विषे इस्थित है॥ द्वैत

अरु अभ्यास योग करके आत्मसत्ता विषे स्थित हो॥
जबे आधिभौतिकको त्यागै

कछु क्रिया नही ॥ लीलोवाच ॥ हे देवी [illegible] जी जो एक
अद्वैत आत्मसत्ता है । तो कलनां दूसरी वस्तु क्या हुई
सो कहो ॥ देव्योवाच ॥ हे लीला जैसे स्वर्ण विषे भू
षण कछु वस्तु नही । जैसे जेवडा विषे सर्प नही । तैसे आ
त्मा विषे कलनां भी कछु वस्तु नही । एक अद्वैत आत्म
सत्ता जिउं की तिउं स्थित है । तिस विषे जो दृश्य भासती
है सो भ्रममात्र है । वास्तव तें सभ अपणा आप अनुभव
सत्ता है ॥ लीलोवाच ॥ हे देवी जी जो एक अनुभव सत्ता
है । अरु मेरा अपणा आप है । तो मैं एता काल किउं भ्र
मती फिरी हों ॥ देव्योवाच ॥ हे लीला तूं अविचार क
रके भ्रमती रही हैं । विचार कीये तें भ्रम शांति होजाता है
सो भ्रम अरु विचार दोनों तेरा स्वरूप हैं । तुझ ही तें उप
जे हैं । पर जब तुझ कों अपणा विचार होवे । तब भ्रम नि
वर्त होजावेगा । जैसे दीपक के प्रकाश करि अंधकार न
ष्ट होजाता है । जैसे जेवडी के जाणे तें सर्प भ्रम नष्ट होजा
ता है । तैसे आत्मा के विचारे तें आधिभौतिक भ्रम नाश
होजाता है । जब दृश्य का अत्यंताभाव करि दृढ वैराग्य
करीये । अरु आत्मस्वरूप का दृढ अभ्यास करीये । त
ब आत्मा का साक्षात्कार होवे । अरु भ्रम शांति होजावे
हे लीला जब दृश्य भ्रम का वैराग्य होता है । तब वासनां क्ष
य होजाती है । तब आत्म शांति प्रकाश होती है । हे लीला
तां ते तूं आत्मसत्ता का अभ्यास कर । तब जगत भ्रम शां
ति होजावेगा ॥ ॥ इति श्री उत्पत्तिप्रकरणे विश्रांत
वर्णनं नाम सर्गः ॥ १६ ॥ देव्योवाच ॥ हे लीला जेते क
छु शरीर तुझ कों भासते हैं । सो सभ स्वप्नपुर की न्याई हैं
जैसे स्वप्न विषे शरीर भासता है । जागे तें स्वप्न भ्रम शांति
होजाता है । तैसे बोधकाल विषे देह शरीर शांति होजा
ता है । जैसे मनोराज के त्यागे तें मनोराज का शरीर शांति
होजाता है । तैसे आत्मा के जाणे तें देह शरीर शांति होजा

ताहै॥ जैसे स्वप्नका शरीर शांति होजाता है॥ अपने आपजा
गेपतें॥ तैसे वासनाके निवर्त हूए आत्मस्वरूप प्रकाशता
है॥ जिस पुरुषकी वासनां नष्ट भई है॥ सो पुरुष जीवनमु
क्तिपदको प्राप्त होता है॥ जब उस विषे वासनां दृष्ट आवे॥
तब उह वासनां भी निर्वासना है॥ उह सर्व कलनां ते रहित
है॥ तिसका नाम सत्तासमान है॥ हे लीला जिस पुरुषने वा
सनां त्यागी है॥ अरु अज्ञानकी निद्रा कर आवर्या हूया है
तब उसको जडसुषुप्तरूप जाण॥ अरु जिसकी वासनां प्र
गट है॥ जगत विषे तिसको अधिक मोह कर आवर्या हूया
जान॥ अरु जो पुरुष चेष्टा करता दृष्ट आवता है॥ अरु अं
तरतें वासनां उसकी नष्ट भई है॥ तिसको तुर्यापद वासी
जान॥ हे लीला जो पुरुष प्रसन्न हो चेष्टा करता दृष्ट आवता है
अरु अंतर वासनां ते रहित है॥ सो जीवनमुक्ति है॥ जिस पु
रुषका चित्त सत्तपदको प्राप्त भया है॥ तिसको जगतकी
वासनां नष्ट होजाती है॥ वासनां फुरती भी भासती है॥ तउ
भी सत्त जानकर नही फुरती॥ जब शरीरकी वासनां नष्ट
होती है॥ तब अधिभौतकता नष्ट होजाती है॥ अरु अति
वाहकता प्राप्त होती है॥ जैसे बरफकी पुतली सूर्यके तेज
कर जलरूप होजाती है॥ तैसे अधिभौतिकता क्षीण होजा
ती है॥ अतिवाहकता प्राप्त होती है॥ जब अतिवाहकता प्रा
प्त भई॥ तब इसका स्वरूप चित्तस्वरूप होजाता है॥ अरु पू
र्वका ज्ञाता होता है॥ बीती अरु आगे होणी अरु वर्तमान
समेका ज्ञाता होता है॥ जहां आवणे जावणेकी इछा करे
तहां जा प्राप्त होता है॥ पर अतिवाहक बिनां इह शक्ति न
ही फुरती॥ जब इस देहसों अहंभाव उठेगा॥ तब सत्त जग
त तुजको पडा भासेगा॥ हे लीला अधिभौतिक शरीरकी
वासनां नष्ट होती है॥ तब अतिवाहक देह होती है॥ जब
अतिवाहक विषे स्थित होती है॥ तब अवरके संकल्प
की छिष्ट भी भासती है॥ तांते वासनां नष्ट होणेका यत्न क
र॥ जब वासनां नष्ट होजावेगी॥ तब तूं जीवनमुक्तिपद

कोप्राप्तहोवेंगी॥ जबलगपूर्णबोधरूपीचंद्रमातुजकोन
हीप्राप्तभया॥ तबदेहकोईहांस्थापनकरकेउहस्लिष्टच
लकरदेष॥ हेलीलाजैसेंअनुभवहोताहे॥ तैसेदृस्थित
होताहे॥ इहवार्ताबालिकभीजानतेहें॥ जोइहवरखाप
कीन्याईनहीं॥ जबअपणेअभ्यासकरेगी॥ तबबोधकोप्रा
प्तहोवेगी॥ हेलीलासनेजगतअतिवाहकरूपहे॥ अर्थइह
जोअतिवाहकरूपसंकल्परूपहे॥ अज्ञानरूपसंकल्पके
अभ्यासकरकेअधिभौतिकहोगयाहे॥ तिसकरसंसार
कीवासनादृढभईहे॥ जन्ममरणआदिकजोविकारहें॥
सोचित्तविषेपडेफुरतेहें॥ अरुजीवनजन्मताहे॥ नमरता
हे॥ जैसेस्वप्नेविषेजनममरणभासताहे॥ तैसेजन्ममृत्यु
भ्रमकरकेभासतेहें॥ जबआत्मपदकाअभ्यासकरें॥ त
बइहविकारमिटजावें॥ अरुआत्मपदकाप्राप्तहोवे॥ ली
लोवाच॥ हेदेवीतुमपरमनिरमलउपदेशमुजकोकी
याहे॥ तिसकेजाणेतेंदृश्यविसूचकानिवर्तहोताहे॥ सोअ
भ्यासक्याहे॥ अरुबोधकासाधककेसेहोताहे॥ अरुअ
भ्यासपुष्टकेसेहोताहे॥ अरुपुष्टहूएतेंफलक्याहोताहे
॥ देवीयोवाच॥ हेलीलाजोकछुकोऊकरताहे जिसका
लविषे॥ सोअभ्यासविनासिधनहींहोता॥ सनकासाधक
अभ्यासहे॥ तांतेंतूंब्रह्मअभ्यासकर॥ हेलीलाचित्तविषे
आत्मपदकीचितवनाहोवे॥ वचननीआत्माकाहोवे॥ अरु
परस्परचर्चाभीआत्मबोधकीहोवे॥ प्राणोंकीचेष्टाभीआ
त्माविषेहोवे॥ अरुमनननीआत्मपदकाहोवे॥ इसकोना
मब्रह्मअभ्यासकहतेहें॥ अरुबुधिवानभीतिसकोकह
तेहें॥ गुरुहूंअरुशास्त्रोंतें जोमहावाक्यश्रवणकीएहें॥
तिनकोयुक्तपूर्वकविचारणा॥ अरुपरस्परचर्चावारता
करणी॥ तिसकानामब्रह्मअभ्यासकहतेहें॥ अरुबुधि
वानअध्यात्मशास्त्रोंकीचितवनाविषेरात्रिदिनकोव्य
तीतकरतेहें॥ तिनकोब्रह्मअभ्यासीजान॥ उहब्रह्मअभ्या
सविषेदृस्थितहें॥ हेलीलातिसपुरुषोंनेंजगतकोनाश

श्री

वेत्ताजाणता है॥ अर्थ इह जो आदि उतपत होया न हीं॥ तिनको
ब्रह्म अभ्यासी जान॥ जो पुरुष रागद्वेष तें रहित अरु अहं
त्वं तें भी रहित हूए हैं॥ तिनकों ब्रह्म अभ्यासी जान॥ अरु
जिसको द्रिस्य विषे अभाव भावनां प्राप्त भई है॥ तिस
को ज्ञेय जो परमात्म तत्व है॥ तिसका ज्ञान प्राप्त होता है॥
तिसको ब्रह्म अभ्यासी जान॥ अरु ब्रह्मवेत्ता जान॥ सो तीन
प्रकार के हैं॥ एक उत्तम हैं॥ एक मध्यम हैं॥ एक कनिष्ठ अधम
हैं॥ उत्तम अभ्यासी उह है॥ जिनकों बोध कला उतपत्त भ
ई है॥ अरु द्रिस्य का अभाव हूया है॥ अरु मध्यम उह है॥ जि
सकों द्रिस्य का अत्यंताभाव नहीं हूया॥ अरु बोध कला
भी नहीं उपजी॥ तिसके अभ्यास विषे इस्थित है॥ सो मध्य
म है॥ अरु जिसको द्रिस्य का अभाव भी नहीं हूया॥ अरु दि
देकर इछा राखता है॥ जो किसी प्रकार द्रिस्य का अभाव हो
वै॥ यतन करता है॥ सो कनिष्ट जिज्ञासी है॥ हे लीला बोध
का साधन अभ्यास है॥ अरु अभ्यास ज्ञानसत्ता अरु गुरों कर
होता है॥ अरु पुरुष प्रयत्न कर होता है॥ तब आत्मपद की
प्राप्त होती है॥ ताते प्रथम तुज को जिस प्रकार आत्म अभ्या
स कहा है॥ ऐसा अभ्यास करें॥ तब तुजकों आत्मपद की
प्राप्त होवेगी॥ श्रीवसिष्टोवाच॥ हे रामजी अज्ञानरूपी
निद्रा विषे इह जीव शयन कर रहा है॥ तिस कर के जगत
को नाना प्रकार देखता है॥ तैसे अविद्यारूपी निद्रा तें ली
ला को विवेकरूपी जल की वर्षा कर देवी जगाया॥ तब
अज्ञानरूपी निद्रा तिसकी नष्ट हो गई॥ वाल्मीकोवा
च॥ हे भारद्वाज जब इस प्रकार मुनीश्वर कहा॥ तब सा
यं काल का समा हूया॥ तब सर्व सभा परस्पर नमस्कार
कर के इस्नान को गए॥ सूर्य की किरणां उदे भई॥ तब बै
ठ आन इस्थित भए॥ इति श्री उतपत्त प्रकरणे ली
ला अभ्यास वर्णनं नाम सर्गः॥ १८॥ श्रीवसिष्टोवा
च॥ हे रामजी इस प्रकार अर्ध रात्रि के समे देवी अरु ली
ला का संवाद हूया॥ सभ लोक सहेली बाहिर सोय पडे
थे॥ लीला का भरता पलों विषे ढांका पडा था॥ तिसके

पास दिव्य वस्त्र पहिरे हूए चंद्रमा की न्याई क्रांति है जि
स की ऐसीयां सुंदर देवीयां सर्व कलनों को त्याग कर अं
गों को संकोचन कीया॥ अरु समाधि विषे स्थित भईयां॥
मानो रतनों के थंभे सों पुतलीयां उकारीयां स्थित हैं॥ अ
नह पुरुषी जिसके प्रकाश कर प्रकाशता भया है॥ बडु
ड कैसीयां हैं॥ मानो कागज ऊपर मूर्ती लिख छोडी हैं॥ इ
स प्रकार सभने दृश्य की कलनों त्याग कर निर्विकल्प समा
धि विषे इ स्थित भईयां॥ जैसे कल्पवृक्ष की लता दूसरी
रुत के आए तें अगली रुत के रस को त्याग कर दूसरी
रुत के रस कों ग्रहण करती है॥ तैसे दृश्य भ्रम कों त्याग
कर आत्मतत्व विषे स्थित भईयां॥ तब अहंता तें लेक
र जो दृश्य भ्रम है॥ सो तिस का शांति होगया॥ दृश्य रूपी
पिशाच के शांत हूए निर्मल भाव कों प्राप्त भईयां॥ श्री
वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी इह जगत सशो के फिंग की
न्याई असत है॥ जो आदि भी न होवे॥ अरु अंत भी न रहे
वर्तमान दृष्ट आवे॥ तो भी असत्य जाणीये॥ जैसे मृग
तृष्णा की नदी असत है॥ तैसे इह जगत असत है॥ ऐ
से जब सखीयां सत्ता विषे स्थित भईयां॥ तब अन्य सखि
ष्ट देखणे का जो संकल्प था॥ सो आन फुरता॥ तिस फु
रणे कर आकाशरूपी देह साथ चिदाकाश विषे उडी
यां॥ सूर्य चंद्रमा के मंडल को लंघ गईयां॥ दूर तें दू
र गईयां॥ अनंत योजन प्रमाण स्थान लंघीयां॥ निर्म
ल आकाश भयां॥ तिसतें भी आगे गईयां॥ जहां चंद्र
मा सूर्य का प्रकाश होन ही॥ कहूं चंद्रमा का प्रकाश है
देवते विमानों पर आरूढ फिरते हैं॥ विद्याधर किंनर
गंधर्व गायन करते हैं॥ कहूं सिद्ध उतपत होती है॥ क
हूं प्रलय पडी होती है॥ कहूं शोखाधारी तारे उपद्रव
करते उदे हूये हैं॥ कहूं प्राणी अपने व्यवहार विषे
लागे हूए हैं॥ कहूं महां पुरुष अपने [illegible] विषे
ध्यान

स्थित हूए हैं॥ कहूं हस्ती विचरते हैं॥ कहूं अवर पंखी
विचरते हैं॥ कहूं दैत्य दानव विचरते हैं॥ कहूं जोगणी
लीला करती हैं॥ कहूं गंधर्व गुंजार हते हैं॥ कहूं वरुण कु
बेर इंद्र यम आदिक लोकपाल बैठे हैं॥ अरु बडे
पर्वत सुमेर मंदराचल आदिक देखे॥ कहूं अनेक
योजनों पर्यंत वृक्ष ही चले जाते हैं॥ कहूं अनेक योज
नों पर्यंत अविनाशी अंधकार है॥ कहूं जल कर पू
र्ण स्थान हैं॥ कहूं सुंदर पर्वतों सों गंगा के प्रवाह चल
ते हैं॥ कहूं सुंदर वेली बागीचे वाले ताल हैं॥ कहूं क
ल्पवृक्षों के वन हैं॥ कहूं चिंतामणी अनगनत हैं॥ क
हूं प्रलय स्थान हैं॥ कहूं देवतों अरु दैत्यों के युध पडे
होते हैं॥ कहूं नक्षत्र चक्र पडे फिरते हैं॥ कहूं गलय
पडी होती है॥ देवते विमानों सहित पडे गिडते हैं॥ क
हूं स्याम कार्तिक के मोरों के समूह पडे विचरते हैं॥
कहूं यम के वाहन महिषों के समूह पडे विचरते हैं
कहूं पंखों सहित पर्वत उडते फिरते हैं॥ कहूं भैरव
के गण नृत्य करते हैं॥ कहूं पर्वत रत्नों कर शोभते
हैं॥ हे रामजी इत्यादिक जगतों के जाल तिन देवी
यों ने देखे॥ जीवरूपी मच्छर त्रिलोकी रूपी गूलर
के फल अनंत ... देखे॥ तिसते अनंतर भूमंडल
को देखकर महीतल विषे आन प्रवेश कीया॥ +
॥ इति श्री उत्पत्तप्रकरणे लीलोपाख्याने गमन
वर्णनं नाम सर्गः॥ १८॥ श्री वसिष्ठोवाच॥ हे राम
जी तब देवीयां नेतल ग्राम विषे आवत भईयां॥ ब्र
ह्मांड खपर विषे प्रवेश कीया॥ कैसा ब्रह्मांड है॥ त्रिलो
की रूपी कमल है॥ तिसकीयां अष्ट पंखडीयां हैं॥
तिस विषे पर्वतरूप केसरी हैं॥ चेतनता सुगंध है॥ न
दीयां समुद्र तिसके कण हैं॥ जब रात्रिरूपी भवरे
आन विचरते हैं॥ तब उह कमल मुकुच जाता है॥

पातालरूपी विकट विषे लागा है॥ तिस कमल के पत्र
रूपी मानुष देवता हैं॥ दैत्य राक्षस तिसके कंटक हैं॥
अरु फेनी उसकी शोभना है॥ जब उह हलता है॥ त
ब भूचाल आवता है॥ दिनकर के प्रकाशता है॥ ऐसा
जो कमल है॥ तिसका इस प्रकार विस्तार है॥ एक लक्ष
योजन जंबूदीप है॥ तिसके परें खारा समुद्र है॥ तिस
जल कर दीप आवर्ण कीया है॥ जैसे हाथों विषे कंक
न होता है॥ तिसके आगे दोणा कारव दीप है॥ तिससों
दूणा क्षीर समुद्र है॥ तिस कर वेष्टित है॥ तिसके आगें
दूणी पृथवी है॥ तिसका नाम कुस दीप है॥ तिसतें दो
णा घृत का समुद्र है॥ तिस कर वेष्टित है॥ बहुड दोणी
पृथवी है॥ तिसका नाम क्रौंच दीप है॥ सो दोणा दधि के
समुद्र कर वेष्टित है॥ बहुड शाल्म दीप है॥ तिसते दो
णा मद्य का समुद्र है॥ बहुड गोमोदक दीप है॥ तिस
तें दोणा माखी का समुद्र है॥ बहुड दोणां पुष्कर दीप
है॥ तिसतें दोणां मीठे जल का समुद्र है॥ इस प्रकार स
प्त समुद्र हैं॥ तिसतें परें दश कोटि योजन कंचन की
पृथवी प्रकाशमान है॥ तिसतें आगें लोकालोक पर्व
त है॥ तिस ऊपर बड़ा शून्य वन है॥ तिसतें परें एक ब
डा समुद्र है॥ तिसतें परें दोणी अग्नि है॥ अग्नि तें आ
गें दशगुण वायु है॥ वायु तें परें दशगुण आकाश है॥
आकाश तें परें लक्ष योजन प्रमाण घन रूप ब्रह्मांड
की कंध है॥ तिसको देखकर दोनों देवीयां फिर आ
ईयां॥ ॥ इति श्री उत्पत्ति प्रकरणे भूलोक वर्न
नं नाम सर्गः॥२॥ श्री वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी त
हां तें फिर कर वसिष्ठ ब्राह्मण अरुंधती
का मंडप देखत भईयां॥ बहुड़ आकाश गाह की
शोभा न देखी॥ जो जाती रही है॥ जैसे कमलों ऊपर रा
ड की वर्षा होवे॥ अरु कमलों की शोभा जाती रहै॥

तैसे गाम अरु गृह की शोभा को अभाव देखत भईयां
जो कछु प्रथम शोभा थी सो जाती रही है॥ सब गृहवाले
रुदन करते हैं॥ तब लीला रानी जिसने चिरकाल प
र्यंत ज्ञान का अभ्यास कीया था॥ तिसको इह इछा उप
जी॥ जो मुज को अरु देवी को मेरे बांधव देखें॥ तब ली
ला के सत संकल्प कर के बांधव लोक देखते भए॥ त श्रे२
ब उनों देखकर कहा॥ जो इह बनदेवी गौरी लक्ष्मी आ
ई है॥ इनको नमसकार करीए॥ हे रामजी जैसे ज्येष्ट स
रमा जो वसिष्ट ब्राह्मण का बड़ा पुत्र था॥ सो फलों कर
दोनों के चरण पूजे॥ अरु कहा॥ हे देवीयो तुमारी जय हो
वे॥ हे देवीओ ईहां ब्राह्मण अरु ब्राह्मणी रहते थे॥ तिनको
परस्पर सनेह था॥ सो मेरे पिता अरु माता थे॥ सो अब दो
नों काल के वस हूए हैं॥ तिस कर हम बहुत शोकवान
हूए हैं॥ हमको त्रैलोक शून्य भासते हैं॥ हम सब ही रुद
न पडे करते हैं॥ बन के दरखत पंखी नदीयां कमल फूल
मानो इह भी रुदन करते हैं॥ सब हम शोक को प्राप्त भए
हैं॥ हे देवीओ तुम हमारा शोक निवर्त करो॥ काहेते जो महा
पुरुषों का दर्शन देणा शोक को निवर्त करता है॥ निंफ
ल नहीं होता॥ अरु महापुरुषों का शरीर भी परउपका
र के निमित है॥ हे रामजी जब इस प्रकार देवसरमा ने क
हा॥ तब लीला कृपा कर उसके ऊपर हाथ रखा॥ ली
ला के हाथ राखले कर उसका सनताप नष्ट होगया
अंतहकरण शांति को प्राप्त भया॥ जैसे ज्येष्ट आषाढ
के दिनों विखे पृथ्वी तपती है॥ अरु तिस ऊपर मेघ की
वर्षा होती है॥ तब शीतल होजाती है॥ तैसे उसका अंतह
करण शीतल होत भया॥ अरु उहां के लोक निर्धन थे
सो तिन के दर्शन कर लक्ष्मीवान भए॥ अरु शांति को प्रा
प्त भए॥ सो शोक नष्ट होगया॥ जो वृक्ष उसके हूए थे॥ सो
फलों कर पूर्ण होगए॥ श्रीरामोवाच॥ हे भगवन ली
ला का पुत्र जो ज्येष्टसरमा था॥ उसको लीला माता कर

९०

पहोकरदर्शनकिंउनदीया॥ सोकारणकहो॥ श्रीवसि
ष्ठोवाच॥ हेरघुनंदनरामजी शुद्धआत्मसत्ताविषे
जोसंवेदनफुरा है॥ सोसंवेदनभूतोंकापिंडाकारहो
भासती है॥ अरुवास्तवतें आकाशरूप है॥ भ्रांतिकर
के पृथवीआदिकतत्व भासते हैं॥ जैसे बालिककों पि
शाचविषेवैताल भासता है॥ तैसेसंवेदनकेफुरणेक
र पृथ्वीआदिकभूत भासते हैं॥ जैसेस्वप्नेकेनगरस्व
प्नकालविषे अर्थाकार भासते हैं॥ अरुजागेतेंशून्य
होजाते हैं॥ तैसेअज्ञानकेनिवृत्तहूएइहजगतभी
आकाशरूप भासता है॥ जैसे संकल्पनगर भासता
है॥ तैसेइहजगत भ्रमकरकेभासता है॥ अरुजोज्ञा
नवान हैं॥ तिनकोसनचिदाकाशभासता है॥ जगतकी
कलनाकोउनहीफुरती॥ तातेलीलाउसकोंपुत्रजा
नकर अरुआपकोमाताजानकरकैसेदेखे॥ उसका
अहंममभाव नष्टहोगयाथा॥ जैसेसूर्यकेउदेहूए
अंधकार नष्टहोजाता है॥ तैसे लीलाकाअहंममभा
व नष्टहोगयाथा॥ सनजगतउसकोचिदाकाशही
भासताथा॥ इसकारणतें आपकोमाताभावनजा
नतीभई॥ उसविषेकछुममत्वहोता तबमाताभाव
करदेषती॥ परउसको अहंममभावनथा॥ तातेंआप
कोदेवीदिखाया॥ अरुसिरपरहाथराखा॥ अर्थइ
हजोसंतोंकादयालुस्वभाव है॥ तातेमातापुत्रकीभा
वनाउसकोकछुनथी॥ केवलआत्मरूपजगतउस
कोभासयाथा॥ ॥इतिश्रीउतपतप्रकरणेलील
उपाख्यानेसिधदर्सहेतुकथनंनामसर्गः॥२०॥
श्रीवसिष्ठोवाच॥ हेरामजीतिसपर्वतऊपरजोति
सबसिष्टब्राह्मणकागृहथा॥ तिसअंतहपुरसोंली
लाअरुदेवीदोनोंअंतर्धानहोगईयां॥ तबउहांके
लोककहिनेलागे॥ जोवनदेवीयांहमारेऊपरखरी

कृपा करके दुःखनाश कीया है॥ अरु अंतरध्यान भै
यां हैं॥ हे रामजी तब तिनों देवीयों की कृपा कर उहां के
लोक सभ दुःखों ते रहित भए॥ अरु उहां जो देवीयां
थीयां सो आकाश विषे आकाशरूप अंतर्ध्यान भ
ईयां॥ अरु परस्पर संवाद करते भयां॥ जैसे स्वप्ने वि
षे संवाद होता है॥ जैसे संकल्पपुर विषे संवाद होता
है॥ तैसे परस्पर उनका संवाद भया॥ देवी कहा हे ली
ला जो कछु तुजको जानणा था सो जान्या है॥ जो क
छु देखणा था सो देख्या है॥ इह परब्रह्म की शक्ति है
अवर कछु पूछणा होवे तो पूछ॥ लीलोवाच॥ हे
देवी जो मेरा राजा मरता है तिस पास मय गई॥ तब उन
ने मुजको किंउ न देख्या॥ मेरी इच्छा तो थी॥ अरु ईहो
ज्येष्टसरमा ब्राह्मणने कि मुजको देख्या॥ सो कारण
कहो॥ देवीयोवाच॥ हे लीला तब तेरा द्वैत न
ष्ट न भया था॥ अरु अद्वैत को अभ्यास कर प्राप्त न भ
ई थी॥ जैसे धूप विषे बैठे हूए छाया का अनुभव
नही होता॥ तैसे तुजको अद्वैत का अनुभव न भया
था॥ हे लीला ज्येष्ठ आषाढ व्यतीत होता है॥ अरु व
र्षा आई नही॥ तैसे तुम भी॥ जो संसार सागर को लंघी
थी॥ पर अद्वैत को प्राप्त न भई थी॥ तिस कर आत्म
सक्ति तुजको प्रतक्ष न भासी थी॥ तां ते तेरा आगे स
त संकल्प न था॥ अरु अब तूं सत संकल्प भई हैं॥ अ
ब तुज जो ज्येष्टसरमा के देखणे का संकल्प कीया
था॥ तब तुजको देखते भए हैं॥ अब तें विदूरथ को
ने कि टडावें॥ तब पूर्ववत तेरे साथ व्यवहार होवे॥
लीलोवाच॥ हे देवी इस मंडप आकाश विषे मेरा
भरता वसिष्ठ ब्राह्मण हूया॥ बहुड मत्तु हूया॥ पद
म नाम राजा होत भया॥ चिरपर्यंत उस चार दीप को
राज कीया॥ बहुड मत्तु हूया॥ तब इसी मंडप आका
श विषे उसको जगत भासया॥ अरु पृथ्वीपति हू

या॥ तिसका नाम विदूरथ भया॥ हे देवी इसी मंडप आकाश
विषे जरजरी नाका अरु जन्म मरण को प्राप्त हूया है॥ अ
रु अनंत ब्रह्मांड इस विषे इस्थित हैं॥ जैसे संपट विषे
सरतों के दाणे अनेक होवें॥ तैसे इस विषे ब्रह्मांड मुझ
को दृष्ट आवते हैं॥ भरता की स्त्रिष्टी अब मुझको अं
तरज्ञासी है॥ अब जो कछु तुम आगे कहो॥ सो मय क
रों॥ देवी उवाच॥ हे अरुंधती तेरे जन्म तो
बहुत व्यतीत भए हैं॥ अरु अनेक तेरे भरता हूए हैं॥
तिनों विषे इह जो तेरा भरता है॥ सो इस मंडप विषे ती
न तेरे भरता हैं॥ एक वसिष्ट ब्राह्मण था॥ सो मृतु हूया
है॥ तिसका सरीर तो भस्म हो गया है॥ बहुड पदम रा
जा हूया॥ जो तेरे मंडप विषे सोया पडा है॥ अरु तीस
रा भरता मंडप विषे वसुंधापति विदूरथ हूया है॥ सो
संसार रूपी समुद्र विषे भोग रूपी कलोलों करे तिस
की चैतन्यता व्याकुल है॥ कैसा सो जो संसार समुद्र का के
छ हूया है॥ अरु राजकार्य विषे चतुर हूया है॥ अरु
आत्मपद ते बेमुख है॥ अहंता न कर के जानता है॥ जो
मय ईश्वर हों॥ मेरी आज्ञा सभ न पर चलती है॥ अरु मै म
य बडे भोगों के भोगणे हारा हों॥ मय सिध बलवान
हों॥ ऐसे संकल्प विकल्प रूपी जेवडे साथ बांध्या हू
या है॥ अब तूं किस भरता के पास चलती हैं॥ जहां ते
री इछ्या होवे॥ तहां मय तुझ को ले चलों॥ जैसे सुगंध को
वायु ले जाती है॥ तैसे मय तुझ को ले जावों॥ हे लीला॥
जैसे संसार मंडप को तें समीप कर हती है॥ सो विद्याका
श की अपेक्षा कर समीप भासता है॥ अरु स्त्रिष्टों की
अपेक्षा कर अनंत कोट्या जनों का भेद है॥ अरु आ
काश रूप है॥ ऐसीयां स्त्रिष्टां पडी फुरती हैं॥ समुद्र
मंदराचल अनंत अनंत हैं॥ अरु गमाणें विषे अ
नंत स्त्रिष्टां चिदाकाश के आश्रय पडी फुरती हैं॥
चिदाकाश चिदाकाश विषे बडे आरंभ कर स्त्रिष्टों

भ्रमकरकेपड्यांफुरत्यांहैं॥ अरुविचारकरकेतोली
लां॥ तोएकचावलकेसमानभीनहीहोतीयां॥ हेलीलाना
नाप्रकारकेरतनोंकरपर्वतपूर्णदृष्टआवतेभीहैं॥
पर आकाशरूपहैं॥ जैसेस्वप्नेविषेनानाप्रकारकेज
गतदृष्टआवतेहैं॥ तैसेइहजगतभीभासताहै॥ अरु
आकाशरूपहै॥ कछुउपजानहीं॥ हेलीला आत्मसत्ता
ज्यिंउकीतिंउअपणेआपविषेइस्थितहै॥ तिसविषे
जगतआभासउपजताभीहै॥ अरुमिटभीजाताहै॥
जैसेनदीविषेनानाप्रकारकेतरंगउपजतेभीहैं॥ अरु
मिटभीजातेहैं॥ तैसेआत्माविषेअनंतजगतउपज
तेहैं॥ अरुमिटभीजातेहैं॥ अरुआकाशरूपहैं॥ अ
रुआत्माहीदोनोंविषेएकरसहै॥ लीलोवाच॥ हेमा
ता अबपूर्वलीमुजकोस्मृतहूईहै॥ प्रथमतोमैंराज
सीजन्मपायाहै ब्रह्मतें॥ तिसतेंआदिलेकरनानाप्र
कारकेमैंअष्टसइजन्मपायेहैं॥ सोसमस्तमुजकों
दृष्टआवतेहैं॥ प्रथमजोचिदाकाशतेंमैंराजन्महू
याहै॥ सोविद्याधरकीइस्त्रीभईहों॥ तिसजन्मविषेजो
कोऊकर्मकूयाहै॥ तिसकरमैंभूतलविषेआनइ
स्थितभईहों॥ मानुषकीइस्त्रीहूई॥ कदंबबनविषे
विचरतेलागी॥ बहुड़बनलताभई॥ तहांगुछेहीमें
रहतनथे॥ अरुपत्रहाथथे॥ तहांएकरूषीश्वरमुज
कोहाथकरस्पर्शकीया॥ तिसकीकुटीकेनिकटभ
यलताथी॥ बहुड़तिसकीपुत्रीभई॥ तहांजोमुजसों
कर्महोवै॥ सोपुरुषहीकाहोवै॥ तिसतेंमैंबडोलक्ष्मी
करसंपन्नराजाभई॥ तहांमुजसोंदुष्टकर्महूए॥ तिस
करकेमैंपनोलीभई॥ कुष्टअंगोंकरअष्टवर्षमैं
कहांरही॥ बहुड़मैंबलदभई॥ मुजकोंखेतीकेह
लोंविषेजोवें॥ तिसकरदुःखीभई॥ बहुड़पंखीभई॥
तहांजालविषेफसी॥ तिसकरदुःखपाया॥ बहुड़भौ
मरीभई॥ कमलोंविषेजाकरसुगंधलेवों॥ बहुड़मग

णीभई॥ चिरपर्यंत बनविषे विचरी॥ बहुड एक देशका
राजा भई॥ सउ वर्ष उहां सुख भोगे॥ बहुड कहूं को जन्म
लीया॥ बहुड राजहंस हूया॥ हे देवी इत्यादिक अनेक स
उ जन्म पावती भई हों॥ संसार समुद्र विषे वासनों कर ध
कोये तकी न्याई भ्रमी हों॥ हे देवी अब मय निश्चय की
या है॥ जो आत्म ज्ञान विनो जन्मों का अंत कदाचित नही
आवता॥ तुमारी कृपा ते अब अभय सुख पद को प्राप्त भई
हों॥ इति श्री उत्पत्ति प्रकरणे लीलोपाख्याने जन्मां
तर वर्णनं नाम सर्गः॥ २१ ॥ श्री रामोवाच॥ हे भगव
न वज्र सार की न्याई ब्रह्मांड खपर था॥ अनंत कोटयोज
नों पर्यंत तिस का विस्तार था॥ ऐसे ब्रह्मांड को दोनो देवी
यां कैसे लंघती यां भई यां॥ श्री वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी
वज्रसार खपर कहां है॥ अरु कवन लंघीयां हैं॥ न कोऊ
वज्रसार ब्रह्मांड है॥ न कोऊ लंघया है॥ सन आकाशरूप
है॥ उसी पर्वत के कोन जो वसिष्ठ ब्राह्मण का गृह था॥ ति
सी मंडप आकाश विषे स्थितों का अनुभव करतीयां भ
ईयां॥ हे रामजी जब वसिष्ठ ब्राह्मण मृतक भया॥ तब
उसी मंडप आकाश की कोण विषे आपको चतुर समु
द्र पर्यंत पृथवी का राजा जानत भया॥ जो राजा पदम है
अरु अरुंधती को लीला देखत भया॥ जो इह मेरी इस्त
त्री है॥ बहुड मृतक भया॥ तब उसी मंडप आकाश वि
षे उस को अवर जगत का अनुभव भया॥ आपको राजा
विदूरथ जानत भया॥ सो तें देख कहां गया है॥ अरु का
रूप है॥ उसी मंडप आकाश विषे उसको स्थित का अनु
भव भया है॥ तां ते जो स्थित हैं॥ सो उसी वसिष्ठ ब्राह्मण के
चित्त विषे स्थित हैं॥ तब देवी ज्ञप्ति स्वरूप है॥ तिस की
कृपा ते आपने हीरिदया काश विषे लीला उडी है॥ अति
वाहक देह जो आकाश रूप है॥ तिस कर के उडी है ब्रह्मां
ड को लंघ कर बहुड उसी गृह विषे आई हैं॥ जैसे स्वप्ने ते
स्वप्नांतर को प्राप्त होवीए॥ तैसे देख आई हैं॥ तां ते गईयां

कहां॥ अरु आईयां कहां॥ एक ही स्थान विषे इस्थित होक
र एक स्त्रिष्टि ते अनंत स्त्रिष्टि को देख आईयां हैं॥ हे रामजी
इन को ब्रह्मांड के लंघ जावणे विषे यतन भी नहीं॥ काहे
ते जो उनका शरीर अतिवाहक है॥ हे रामजी मन कर के लं
घीया चाहीये तो लंघ जाईता है॥ तां ते उह प्रसन्न हो लंघ गा
ईयां हैं॥ काहे ते जो सत संकल्प हैं॥ अरु वास्तव ते कहें तो
जैसे स्वप्ने की स्त्रिष्टि नाना प्रकार की भासती है॥ अरु आ
भास मात्र है॥ कछु उपजी नहीं॥ तैसे इनो भी जगत देखे हैं
न कोऊ ब्रह्मांड है॥ न कोऊ जगत है॥ केवल चैतन्य को कं
चन है॥ अवर कछु बण्या नहीं॥ जैसे चित संवेदन फुर
ती है॥ तैसा आभास होकर भासती है॥ केवल वासना मा
त्र जगत है॥ प्रथवी आदिक भूत कोऊ उपजा नहीं॥ निरा
वर्ण ज्ञान आकाश अनंत रूप स्थित है॥ जैसे स्पंद अरु
निस्पंद दो रूप पवन है॥ तैसे फुरणा अफुरणा रूप आ
त्मा ही है॥ कछन विषे भी जिउं का तिउं अजर है॥ समस्थि
ति रूप है॥ सर्व रूप चिदाकाश है॥ जब चित कछन होता
है॥ तब आपही जगत रूप हो भासता है॥ अवर कछन
ही॥ जिन पुरुषों आत्मा को जाण्या है॥ तिन को जगत भी
आकाश ते सूक्ष्म भासता है॥ अरु जिनों आत्मा को नही
जाण्या तिन को जगत वज्रसार की न्याई दृढ भासता है॥
जैसे स्वप्न नगर सत्य हो भासता है॥ तैसे इह जगत भास
ता है॥ अरु ज्ञानवान को इह जगत मृगजल की न्याई भा
सता है॥ जैसे स्वर्ण विषे भूषण भासते हैं॥ तैसे आत्मा वि
षे जगत भासता है॥ हे रामजी इस प्रकार देवी अरु लीला
नाना प्रकार के स्थान देखती भईयां॥ आवलीयां सुंदर
ताल बगीचे व हृद देखे॥ तिन विषे पंखी शब्द करें॥ मा ध्यान
नो स्वर्ग हीं लागा है॥ ॥ इति श्री उत्पत प्रकरणे ली
लोपाख्याने गृहग्राम कुटी वर्णनं नाम सर्गः॥ २२॥
श्री वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी इस प्रकार देख कर दोनों
शीतल चित आश्रम विषे प्रवेश करत भईयां॥ चिरकाल
जो लीला आत्म अभ्यास कीया था॥ तिस कर प्रबुध ज्ञानन

९३

93

प होत भई॥ अरु त्रिकालज्ञान कर संपन्न भई॥ तिस कर
पूर्वलीस्मृत होत भई॥ जो कछु गर्भ धरती के शरीर कर की
याथा॥ सो भी देवी को कहत भई॥ हे देवी तुमारी कृपा ते पू
र्वलीस्मृत भी मुज को भई है॥ जो कछु इस देह मय कीया
था॥ सो अब प्रगट भासता है॥ एक ईहां ब्राह्मणी थी॥ तिस
का शरीर वृध होत भया॥ नाडीयां पडी हुई दृष्ट आवें॥ अरु
भरता को बहुत पिआरी थी॥ अरु पुत्रों की माता थी सो म
य हों॥ हे देवी जी देवता अरु ब्राह्मणों का मय पूजा करती
थी॥ ईहां मय दूध राषती थी॥ अरु ईहां अन्नादिक के बा
सन राषती थी॥ अरु मेरे पुत्र पुत्रीयां घवाई दुहित्रे दुहि
त्रीयां बैठते थे॥ ईहां मय बैठती थी॥ अरु नतों को कहती
थी॥ जो शीघ्र ही कार्य करो॥ हे देवी ईहां मय रसोई करती
थी॥ अरु भरता मेरा गौवां ले आवता था॥ दुग्ध नीचोवता
था॥ सर्व कार्य करता था॥ अरु इह मेरे हाथों कीयां बूटी
यां लाईयां होईयां हैं॥ अरु इह वृक्ष मेरे लगाए हूए हैं॥
कछु फल इन सों मय लीये थे॥ अब रहते हैं कछु॥ हे दे
वी भरता मेरा सर्व कर्मों विषे प्रबुध था॥ अरु आत्मपद
ते भ्रष्ट था॥ हे देवी इह मेरा मंडप आकाश है॥ इस विषे मे
रे भरता का जीवाकाश है॥ हे माता इह जो शरीर है॥ तिस
की नाभि कमल ते दश अंगुल ऊर्ध्व हिरदयाकाश है॥ सो
अंगुष्ट मात्र हिरदा है॥ तिस विषे उसका संवित आकाश
है॥ तिस विषे जो राजे सी वासना थी॥ तिस कर तिस सों चा
का र समुद्रों पर्यंत पृथवी राज करया है॥ जो मय राजा हों अ
रु ईहां आठ दिन मनुष्यें बतीते हैं॥ अरु उहां चिरका
ल का अनुभव करत भया है॥ हे देवी जी थोरे काल विषे
बहुत काल का अनुभव करत भया॥ अरु हमारे ही मंड
प विषे उह सोया पडा है॥ अरु तिस की पुर्यष्टका विषे
अवर जगत फुरया है॥ तिस विषे आप को राजा विदूर
थ जानता भया है॥ इस राजे के संकल्प कर उस का संवि
त इस मंडप आकाश विषे इस्थित है॥ जैसे आकाश विषे

गंधकोंलेकरपवनस्थितहोवे॥ तैसेउसकोचैतन्यसंवि
तसंकल्पकोंलेकरइसमंडपआकाशविषेइस्थित
है॥ उसराजाकीसृष्टिभुजकेकोटियोजनोंपर्यंतभास
तीहै॥ पर्वतमेघोंकेस्थानअनेकयोजनोंपर्यंतलंघ
तीजावों॥ तबमरताकेनिकटप्राप्तहोवों॥ अरुविदा
काशकोअपेक्षाकरअपनेंनिकटहीपडीभासतीहै
अरुस्थूलदृष्टकरकोटियोजनोंपर्यंतहै॥ तांतेचलो
जहांमेरानरताविदूरस्थहै॥ दूरहै॥ तोभीनिश्चेवानको
निकटहै॥ श्रीवसिष्टोवाच॥ हेरामजीइसप्रकारक
हिकरदोनोंमंडपआकाशविषेउडीयां॥ जैसेपखीउड
ताहै॥ तैसेउडीयां॥ जैसेखड्गकीधाराश्यामहोतीहै॥ जैं
सेविष्णुजीकेअंगश्यामहोतेहैं॥ तैसेआकाशश्यामहै
ताहै॥ तिसआकाशविषेअतिवाहकशरीरकरके
उडीयां॥ मेघोंकेस्थानलंघीयां॥ बडेपवनकेस्थानलं
घीयां॥ सूर्यचंद्रमाकेस्थानलंघकरब्रह्मलोकपर्यंत
जोदेवतोंकेस्थानथे॥ अरुजोलोकथे॥ तिनकोंलंघी
यां॥ इसप्रकारदूरतेंदूरगईयां॥ शून्यस्थानविषेऊ
र्धजाकरदूरतेंदेखतभईयां॥ जोसूर्यचंद्रमाआदि
ककोऊनहींभासता॥ तबलीलाकहा॥ हेदेवीइहजो
सूर्यआदिकप्रकाशथा॥ सोकहांगया॥ ईहांतोमहाअं
धकारहै॥ ऐसाअंधकारहै॥ मानोमुष्टकरग्रहणहो
ताहै॥ देवीयोवाच॥ हेलीलाहमममहाआकाशविषे
आईहैं॥ ईहांमहांअंधकारहै॥ सूर्यचंद्रमाआदिक
कैंसेहोवें॥ हमबहुतऊर्धकोआईयांहैं॥ लीलोवा
च॥ हेदेवीजीबडाआश्चर्यहै॥ जोहमदूरतेंदूरआ
ईयांहैं॥ जहांसूर्यचंद्रमाकाप्रकाशभीनहीं॥ इसतें
आगेंहमकहांजाणाहै॥ देवीयोवाच॥ हेलीलेइस
तेंआगेंब्रह्मांडकपाटकाआवरणहै॥ सोबडावज्र
सारहै॥ अरुअनंतकोटियोजनोंपर्यंततिसकाबि
स्तारहै॥ जिसकोधूडकाकिणकाभीइंद्रकेवज्रसमा

=अधहको

नहे॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी इस प्रकार देवी कहः
तीजाती थी॥ जो आगे ब्रह्मांड किवाट आया॥ महा वज्र
सार को छिद्र योजनों पर्यंत तिसका विस्तार है॥ तिसको नां
घ गईयां॥ अरु केलेश कछु न भया॥ काहेतें जो जैसा
हो जैसा किसीको निश्चय होता है॥ तैसा तैसा तिसकों भास
ता है॥ निरावर्ण आकाश रूप जो देवीयां हैं॥ सो ब्रह्मांड
कवाट को लंघ गईयां॥ तिसतें परें दशगुण जल का आ
वर्ण है॥ तिसतें दशगुण अग्नि का आवर्ण है॥ तिसतें प
रें दशगुण वायु है॥ तिसतें परें दशगुण आकाश है॥ ति
परें सतें आदि अंत को ऊनहीं॥ शुद्ध अनंत रूप है॥ अपणे
आप विषे स्थित है॥ हे रामजी तिसके अंत लेणे कों
महाशिव मन के वेग कर कल्प पर्यंत धावे॥ तो भी अंत
न आवेगा॥ अरु विष्णुजी गरुड पर आरूढ होकर कल्प
पर्यंत धावे॥ तो भी तिसका अंत न पावेगा॥ जो रूप वन अं
तलीया चाहे॥ तो भी न पावेगा॥ आदि अंत मध्य की क
लनां तें रहित बोधमात्र है॥ ॥इति श्री उत्पत्तिप्रक
रणे पुन्य आकाश वर्ननं नाम सर्गः॥२२॥ श्रीव
सिष्ठोवाच॥ हे रामजी पृथ्वी अप तेज वायु आकाश
का आवर्ण लंघ गईयां॥ तब प्रमाण तें रहित परम आ
काश उनको भासया॥ तिस विषे ब्रह्मांड थूड के किणके
की न्याई भासया॥ जैसे सूर्य की किरणों विषे त्रिसरेणु
भासते हैं॥ सो महाशून्य के धारणे हारा परम आकाश
है॥ ऐसा महाचिदसमुद्र है॥ तिस विषे कोई अर्ध को जा
ऊ ते हैं॥ कोई ऊर्ध्व को जाते हैं॥ कोई तिर्यग गति को पावते
हैं॥ हे रामजी चित्त संवित विषे जैसा जैसा स्पंद फुरता
है॥ तैसा तैसा आकार हो भासता है॥ वास्तवतें न कोऊ
अर्ध है॥ न ऊर्ध्व है॥ न कोऊ आवता है॥ न कोऊ जावता
है॥ केवल जिउ की तिउं आत्मसत्ता अपणे आप विषे
स्थित है॥ जैसे बालक का संकल्प उपज उपज कर
नष्ट हो जाता है॥ तैसे चैतन्य संवित विषे जगत फुर

कर नष्ट होजाते हैं ॥ श्रीरामोवाच ॥ हे भगवन अ
र्ध क्या होता है ॥ अरु ऊर्ध क्या होता है ॥ अरु तिर्यग
क्या है ॥ अरु इहां क्या स्थित है ॥ सो कहो ॥ श्रीवसि
ष्ठोवाच ॥ हे रामजी परम आकास जो श्रांतिरूप है
सो आवर्ण ते रहित है ॥ अरु बोधरूप है ॥ तिस विषे जग
त ऐसे भासता है ॥ जैसे आकाश विषे भ्रम कर तिरव
रे भासते हैं ॥ तिस विषे अधह ऊर्ध कलना भ्रममात्र
है ॥ जैसे बलोहुडके बटेके चौफेर कीरीयां फिरती मन
हैं ॥ अरु उनके विषे अर्ध ऊर्ध पडा भासे ॥ तैसे उनके
मन विषे अर्ध ऊर्ध कलना हूई है ॥ हे रामजी इह जग
त आत्मा का आभासरूप है ॥ जैसे पर्वत ऊपर हस्ती
यों के समूह विचरते हैं ॥ तैसे आत्मा विषे अनेक जग
तों के समूह फुरते हैं ॥ जैसे मंदराचल पर्वत के आगे
हस्ती होवे ॥ तैसे आत्मा के आगे जगत है ॥ पर वास्तव
तें सन ब्रह्मस्वरूप है ॥ कर्ता कर्म करण संप्रदान उ
पादान अधिकरण सर्व ब्रह्म ही है ॥ इह जगत ब्रह्म
समुद्र के तरंग हैं ॥ तिन जगतों को देवीयां देखत भई
यां ॥ कैसे कैसे जगत ब्रह्मांड उनोंने देख्ये हैं ॥ सो सुण ॥ हं
के स्रिष्टी उतपत होतीयां हैं ॥ के प्रलय होतीयां हैं ॥ कें
उपतण को आरंभ होता है ॥ कहूं जल ही जल है ॥ कहूं
अंधकार है ॥ कहूं प्रकाश है ॥ कहूं सर्व व्यवहार होता
है ॥ कहूं अपूर्व वेद शास्त्र हैं ॥ कहूं आदि ईश्वर ब्रह्मा
है ॥ तिस तें स्रिष्ट हूई हैं ॥ कहूं आदि ईश्वर विष्णु है ॥ ति
स तें स्रिष्टी हूई हैं ॥ कहूं आदि ईश्वर सदाशिव है ॥ तिन
तें स्रिष्टी हूई है ॥ अरु कहूं अवर प्रजापतों कर स्रिष्टी
हूई है ॥ कहूं नास्तक कोउ नहीं मानते अनीश्वरवादी हैं ॥ अरु
कहूं ईश्वरवादी हैं ॥ कहूं देवते हैं ॥ कहूं दैत्य हैं ॥ कहूं मानुष
हैं ॥ कहूं तिर्यग योनी हैं ॥ हे रामजी इस प्रकार अनेक स्रिष्टी
चिदाकाश विषे देवीयां देखत भईयां ॥ तिन की संख्या
करणे को कोउ समर्थ नहीं ॥ चिदात्मा का भास पडीयां

भासतीयां हैं॥ जैसे फुरणा होता है॥ तिसके अनुसार
स्त्रिष्टापडी यों भासतीयां है॥ ॥इति श्री उतपत प्र
करण ब्रमांड वर्ननं नाम सर्गः॥ २४॥ श्री वसिष्ट उवा
च॥ हे रामजी इस प्रकार दोनों देवीयां उमन कर राजा के
जगत विषे आईयां॥ तहां आपणे मंडप स्थान को देख
त भईयां॥ जैसे सोया हूआ जाग कर देषता है॥ तैसे आपणे
मंडप विषे प्रवेश कीया॥ तब क्या देष्या॥ जो राजा फूलों सा
थ ढापया पडा है॥ अर अर्धरात्रि का समा है॥ सर्व लोक
भी गृह मों सोए पडे हैं॥ अर राजा पदमस वके पास लीं
ला का सरीर पडा है॥ अंतहपुर विषे धूप चंदन क
पूर अगर की सुगंध भर रही है॥ तब विचार करत भई॥
जो उहां चली ए जहां राजा विदूरथ राज करता है॥ तब उस
भरता की जो पुर्यष्टका थी॥ जिस विषे विदूरथ का अनुभ
व हूया है॥ तिस संकल्प के अनुसार विदूरथ की स्त्रिष्ट देषणे
को देवी के साथ लीला चली॥ अतिवाहक शरीर साथ आ
काश मार्ग को उदी॥ जाते जाते ब्रमंड कि वाट को लंघ गईयां॥
तब विदूरथ के जगत को देखत भई॥ जैसे तलाव डी विषे
सिवाल होता है॥ तैसे जगत को देषत भईयां॥ सपतद्वीप दे
खे॥ नवखंड देखे॥ सुमेर आदिक पर्वत देखे॥ सप्त समुद्र
आदिक रचना देषत भईयां॥ तिस विषे जंबूद्वीप भरतखं
ड देख्या॥ तिस विषे विदूरथ राजे का मंडप स्थान देखत भ
ईयां॥ अरु तहां राजे सिंध को देखत भईयां॥ तिसने कब
विदूरथ राजे की हद दबा लीबी लेकर युध के नमित सेना के
ले आया॥ अरु राजा विदूरथ भी सुण कर अपनी सेना को
ले धाया॥ दोनों सेना मिलकर युध करने लागी॥ अरु त्रिलो
की युध का कौतुक देषणे आई॥ देवता सिध चारण गंध
र्व विद्याधर युध देषणे को आए हैं॥ सो आकाश विषे इस्थि
त हैं॥ जो जो सूरमा युध विषे प्राणों को त्यागेगा॥ तब हम तिस
को स्वर्ग विषे ले जावेंगे॥ असे विचार कर विद्याधरीयां
आन इस्थित भईयां॥ अरु रक्त मांस के भोजन करणे को
भूत राक्षस पिशाच यो गिनी भी आन इस्थित भईयां॥

हे रामजी जो पुरुष सूरमे हैं॥ सो स्वर्ग के भूषण हैं॥ अरु उत्तम
स्वर्ग को भोगेंगे॥ जिनका मरणा धर्म पंथ के निमित्त होवे
गा॥ संग्राम विषे तेई स्वर्ग जावेंगे॥ श्रीरामोवाच॥ हे भग
वन सूरमा किसको कहते हैं॥ अरु युध करके स्वर्ग कौन
ही प्राप्त होते सो कवन हैं॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी
जो शास्त्रोक्त युध नही करते माया के अर्थ युध करते हैं
सो नरक को प्राप्त होवेंगे॥ अरु जो पुरुष धर्म के निमित्त यु
ध करते हैं। सोई सूरमे हैं॥ ते स्वर्ग लोक को प्राप्त होवेंगे॥ अ
रु जो राजपालना के निमित्त युध करते हैं। सो भी मृत्यु हूए
स्वर्ग को प्राप्त होते हैं॥ उनका यश स्वर्ग विषे भी बहुत होता
है॥ अरु जो पुरुष धर्म के निमित्त युध करते हैं॥ सो अवश्य
स्वर्ग कौं प्राप्त होते हैं॥ अरु जो माया के निमित्त युध करते
हैं। सो नरक को प्राप्त होते हैं॥ हे रामजी जो पुरुष कहते हैं
जो युध विषे मूए हूये स्वर्ग पईता है॥ ते मूरिख हैं॥ स्वर्ग कौं
उही जाते हैं। जिनका मरणा धर्म के निमित्त होता है॥ ॥
इति श्री उतपतप्रकरणे लीलोपाख्याने युधवर्ने
ने नाम सर्गः॥ २५॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी
तब दोनों देवीयां रणसं ग्राम को देखन गईयां॥ क्या दे
खें जो महाशून्य बन है॥ तिस विषे दोनों सेना जुरी है॥ जैं
से द्वै समुद्र उछलकर परस्पर मिलते हैं। तैंसे सेना
मिली॥ तिसको देखकर संकल्प के दुइ विवान रचे॥ तिसप
र आरूढ होकर युध को देखणे लागीयां॥ तब क्या देखें जो
योधे आन इस्थित हूए हैं॥ मच्छव्यूह गरुडव्यूह चक्रव्यूह
इस प्रकार की सेना के भाग भिन्न भिन्न हूए॥ अरु दोनों
सेना के योधे एकत्र मिलकर युध करने लागे॥ प्रथम पर
स्पर देखकर कहे हैं। जो प्रथम बाण तूं चलाउ॥ उह कहे प्र
थम बाण तूं चला॥ क्रोध दृष्ट कर स्थित हूये॥ मानो मूरता
लिख छोडी हैं॥ तिनके अनंतर अवर योधे दोनों सेना के
आए॥ मानो प्रलय के मेघ उछले हैं॥ तिनके आवणे क
र एक एक योधे की मर्यादा दूर हो गई॥ एकत्र ही युध

करणे लागे ॥ वदेशास्त्रों कर प्रहार करणे लागे ॥ कहूं खड्गों
के प्रहार होवें ॥ कहूं त्रिशूल मूसल बरछी कटारी छुरी
चक्र गदा आदिक शस्त्र चलने लागे ॥ जैसे वर्षाकाल के
मेघ वर्षा करते हैं ॥ तैसे शस्त्रों की वर्षा होवणे लागी ॥ अरु
बडे शस्त्र चलावें ॥ अरु शब्द करें ॥ हे रामजी जेते कछु प्रल
य काल के उपद्रव थे ॥ सो एकठे आन हूये ॥ जो योधे थे सो
धाण कर युध की ओर धावें ॥ अरु जो कोइ रथे सो भाग नी
गजावें ॥ ऐसा युध हूया जो कैयों के सिर काटे गए ॥ किनों
के धड काटे ॥ किनों की भुजा काटीयां ॥ ऐसा युध हूया जो
रुधिर की नदीयां चलीयां ॥ तिस विषे प्राणी वहते जावें ॥
अरु बडे शब्द करें ॥ तिन के शब्दों के आगे मेघों के शब्द नी
तुछ भासें ॥ हे रामजी दोनों देवीयां संकल्प के विवानों पर
आकाश विषे स्थित हूयां ॥ क्या देखे जो ऐसा युध हूया
है ॥ जैसे महाप्रलय विषे समुद्र एकठे हो जाते हैं ॥ अरु
विधली की न्याई शस्त्रों का चमत्कार होता है ॥ ऐसा युध
हूया है ॥ जो सूरमा युध विषे मृतक होवे ॥ तिन कों विद्या
धरीयां स्वर्ग ले जावें ॥ अरु देवगण उस्तति करें ॥ जो इह
सूरमां स्वर्ग को प्राप्त भया है ॥ चिरकाल स्वर्ग कों भोगेगा ॥
हे रामजी सूरमे स्वर्गलोक के सुख चितवें ॥ हर्ष सों युध करें
नाना प्रकार के शस्त्र चलावें ॥ धीर्य धार कर ऐसे संगा
म विषे योधे घाइल पडे होवें ॥ बडे युध के संमुख हो
वें ॥ हे रामजी बहुत जीव इस प्रकार नासता कों प्राप्त हो
वें ॥ इसो दिसा युध कर पूरण होरई ॥ ॥ इति श्री उत
पत प्रकरणे लीलोपाख्याने युधवर्ननं नाम सर्गः
॥ २६ ॥ श्री वसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी इस प्रकार बडा
युध हूया ॥ तब सूरमों के रुधिर का प्रवाह चल्या ॥ जै
से गंगाजी का प्रवाह तीक्षण होता है ॥ तैसे तीक्षण प्र
वाह चल्या रुधिर का ॥ तिस प्रवाह विषे हस्ती घोडा मा
नुष वहते जावें ॥ अरु सेना शून्यता को प्रापत होती जा

वे॥ हे रामजी बडा क्षोभ उदे आन हूया॥ तब राक्षस पिशा
चादिक भोजन करणे लागे॥ मांस खावें अरु रुधिर पा
न करें॥ उनको उत्साह भया॥ जैसे मंदराचल पर्वत कर
क्षीरसमुद्र क्षोभमान होता है॥ तैसे युधसंग्राम विषे
क्षोभ आन हूया है॥ हे रामजी जैसे प्रलयकाल की अ
ग्नि विषे जीव पडे जलते हैं॥ तैसे योधा रणभूमिका वि
षे मृत्यु को प्राप्त होवें॥ जैसे दीपक विषे पतंग प्रवेश क
रते हैं॥ तैसे रणभूमिका विषे योधे प्रवेश करें॥ हे रामजी
दोनों राजों के सहाइता के निमित अनेक राजे आए॥ पू
र्व दिशा के आए॥ मालवा देश के आए॥ काशी मघा दे
श के आए॥ मिथिला देश के आए॥ किरांत देश के आ
ए॥ मलेछ देश के आए॥ पारसी देश के आए॥ कश्मीर
देश के आए॥ तुरक देश के आए॥ हिमालय पर्वत के आ
ए॥ इत्यादिक अनेक देशपाल आए॥ घोडे के मुखवाले
आए॥ श्वान के मुखवाले आए॥ त्रियँराजवाले आए॥ सु
मेर पर्वतवाले आए॥ कैलाश पर्वत के आए॥ जेते क पृ
थवी के राजे थे॥ सो सभ युध के निमित आए॥ जैसे महा
प्रलय के समुद्र उछलते हैं॥ तैसे सेना कर सभ स्थान पू
र्ण होगए॥ दोनों ओरतें युध करनें लागे॥ चक्रवाले सा
थ चक्रवाला युध करे॥ खड्गवाले साथ खड्गवाला युध
करे॥ कुहाडेवाले साथ कुहाडेवाला युध करे॥ त्रिशूल
वाले साथ त्रिशूलवाला युध करे॥ घोडेवाले साथ घो
डेवाला युध करे॥ रथवाले साथ रथवाला युध करे॥ पि
यादे साथ पियादा युध करे॥ हे रामजी तिस काल में ऐ
सा युध होवणे लागा॥ जो कहिणे विषे नही आवता॥ दौ
ड दौड कर योधे युध करें॥ जैसे अग्नि विषे घृत की आहू
ती भस्म हो जाती है॥ तैसे योधे रण विषे पडे नष्ट होवें॥ ऐ
सा युध हूया॥ जो रुधिर कीयां नदीयां चलीयां॥ हस्ती घो
डा मानुष बहि तेजावें॥ अरु संपूर्ण पृथवी रक्तमयी होत
नई॥ हे रामजी जो तिस काल विषे युध हूया है॥ सो कहणे
विषे नही आवता॥ सहस्रमुख जो शेषनाग है॥ इस युध

केकर्मउहगणोंतोभीसंपूर्णकहिणेकोंसमर्थनहोवे
गा॥ ॥इतिश्रीउतपतप्रकरणेलीलोपाख्यानेअ
संतयुधवर्ननंनामसर्गः॥२८॥श्रीवसिष्ठोवाच॥
हेरामजीजबइसप्रकारयुधहूया॥तबसूर्यभगवान
अस्तिहूया॥मानोउसकीकिरणोंभीशस्त्रोंकेप्रहारक
रअसस्पताकोप्राप्तभईहैं॥तबविदूरथराजाजोसेना
पतहैसोमंत्रीकोबुलाकरकहतभया॥हेमंत्रीअबयु
धकोशांतकरीये॥काहेतेंजोसूर्यभगवानभीअस्तभ
याहै॥अरुयोधेभीयुधकरतेथकेहैं॥अबरात्रिकोंअ
रामकरें॥बहुडदिनकोंयुधकरेंगे॥तातेंवस्त्रफेरो॥जो
अबयुधशांतिहोवे॥तबदोनोंसेनाकेमंत्रीमध्यविषे
ऊचेचढकेवस्त्रफेरया॥जोअबयुधकोंशांतकरो॥बहु
डदिनकोंयुधकरेंगे॥तबदोनोंसेनायुधकात्यागकीया
अरुअपणेअपणेसेनाविषेनौबतनिगारेबाजणेल
गे॥राजाविदूरथभीअपणेग्रहविषेआनस्थितहूया॥र
णभूमिकाशांतिहोतभई॥जैसेसरतकालविषेआका
शमेघोंतेरहितहोताहै॥तैसेरणभूमिकाशांतिकोंप्रा
प्तभई॥तबरात्रिकोदेखकरराक्षसपिशाचगिदडफा
किलीमांसखावें॥अरुरक्तपानकरें॥अरुजिनकेअंग
कटेहैं॥सोजीवतेपडेथे॥सोतिनिशाचरोंकोंदेखकरमत्य
कहोतभए॥अरुकेलोकमित्रोंकोंदेखतेफिरें॥हेरामजी
तबरात्रिविषेराजाविदूरथस्वर्णकेमंदरोंविषेशय्याऊ
परविश्रामकरतभया॥कैसीशय्याहै॥जोफलोंसहित
चंद्रमाकीन्याईशीतलअरुसुंदरहै॥तिसपरकिवाडो
कोंचढाइकरविश्रामकरतभया॥अरुमंत्रीसाथवि
चारकीया॥जोप्रातःकालकोंउठकरऐसेकरेंगे॥ऐसे
विचारकरकेराजाएकमहूर्तपर्यंतसोया॥बहुडचिंता
करकेजागबेगा॥अरुदोनोंदेवीयांभीआकाशतेंउलि
खकरग्रहविषेझरोखोंकेरंध्रोंसोप्रवेशकीया॥जैसेसं
ध्यासमयविषेकमलोंकेमुखमुंदजातेहैं॥तिनविषेवायु

प्रवेशकरजाताहै॥ तैसेमंदरामोंसूक्ष्मप्रमाणोंकेमा
र्गकरदेवीयांप्रवेशकीया॥ श्रीरामोवाच॥ हेभगवन्
नशरीरकेसाथप्रमाणोंकेरंध्रोंविषेकैसेप्रवेशकर्ते
भईयां॥ इहतोकमलकीतंततेंभीसूक्ष्महोतेहैं॥ बालके
अग्रतेंभीसूक्ष्महोतेहैं॥ तिसमार्गविषेकैसेप्रवेशक
रतभईयां॥ श्रीवसिष्टोवाच॥ हेरामजीभौतिकरकेजो
आधिभौतिकशरीरउदेहूयाहै॥ तिसआधिभौतिक
शरीरकरसूक्ष्मरंध्रोंविषेप्रवेशकोऊनहीकरता॥
अरुमनरूपीशरीरकोंरोककोऊनहीसकता॥ हेराम
जीदेवीअरुलीलाअतिवाहकशरीरथी॥ तिसतेंसूक्ष्
मप्रमाणोंकेमार्गउनकोप्रवेशकरणेकायतनकछु
नहीहोता॥ जोउनकोआधिभौतिकसरीरहोता॥ तोयत
नभीहोता॥ जहांआधिभौतिकनहोवे। तोयतनकिस
काहोवे॥ हेरामजीअवरशरीरभीचितरूपहैं॥ परजै
सानिश्चाचितविषेहोताहै॥ तैसाहीसिधहोताहै॥ अ
न्यथानहीहोता॥ जिसकेनिश्चयविषेइहशरीरआ
दिकआकाशरूपहै॥ तिसकोआधिभौतिककाअनु
भवनहीहोता॥ अरुजिसकेनिश्चयविषेआधिभौति
कताछिडभईहै॥ तिसकोअतिवाहककाअनुभव
नहीहोता॥ अरुजिसपुरुषकोपूर्वअपरकाज्ञाननं
हीहोता। तिसकोअधऊर्ध्वविषेगमननहीहोता॥ जै
सेवायुकाचलनाऊर्ध्वकोनहीहोता। तिलछास्पर्शीहो
ताहै॥ जैसेअग्निकाचलनाअधकोनहीहोता॥ अरु
जलकाचलनाऊर्ध्वकोऊर्ध्वकोनहीहोता॥ जैसेआ
दिसंवितविषेप्रवृत्तिभईहै॥ तैसेअबलगस्थितहै
तैसेजिसकोअतिवाहकशक्तिउदेभईहै॥ तिसको
आधिभौतिकतानहीरहिती॥ अरुजिसकोआधिभौ
तिकतादृढहै॥ तिसकोअतिवाहकशक्तिउदेनही
होती॥ हेरामजीजोपुरुषछायाविषेबैठाहोवे॥ तिस
कोधूपकाअनुभवनहीहोता॥ अरुधूपविषेछायाका
अनुभवनहीहोता॥ अनुभवभीतिसीकाहोताहै। जि

सकी चित्त विषे दृढता होती है॥ जब लग अवर प्रती
त नहीं होती। तब लग तैसी ही सिधता होती है॥ निश्चय
अवर होवे। अरु अनुभव अवर होवे सो कदाचित न
ही होता॥ हे रामजी जिनको दृढ आकाश संकल्प पुरु
की न्याई भासता है॥ सो आप भी आकाश रूप हूए हैं॥
जिनको ऐसा निश्चय होवे। तिसको रोक कोऊ न हो स
कता॥ अरु अवरों का चित मात्र शरीर है। पर जैसी जैसी
वेदना दृढ भई है॥ तैसा तैसा आप को जानते हैं॥ हे राम
जी आदि सर्ग ते फुरणा आत्मा ते हूया है॥ सो तो आकाश
रूप है॥ पाछे ते प्रमाद कर के द्वैत कार्य कारण हो कर भा
सता है॥ हे रामजी आकाश तीन हैं॥ एक चिदाकाश है॥
एक चित्ताकाश है॥ एक भूताकाश है॥ तिन विषे वास्त
व चिदाकाश है॥ तिस विषे भावना कर के भिन्न भिन्न क
ल्पना हूई है॥ आदि शुध चिदाकाश अचेत चिन्मात्र
विषे जो संवेदन फुरा है॥ तिसका नाम चित्ताकाश है॥
तिस विषे दृश्य संपूर्ण जगत हूया है॥ हे रामजी चित्त रूपी
जो शरीर है। सो सर्वगत हो कर स्थित भया है॥ जैसे जैसे स-
स्पंद तिस विषे होता है। तैसा तैसा हो कर भासता है॥ जे
ते कछु सर्व पदार्थ हैं। तिस सर्वों विषे व्याप रहा है॥ त्रि
सरेणु के अंतर भी ऊही सूक्षम भाव कर स्थित है॥ आ
काश के अंतर भी व्याप रहा है॥ जल विषे भी तरंग हो क
र स्थित है॥ पहाडों विषे भी एही स्थित है॥ मेघों कर भी
ऊही वर्षा करता है॥ जल ते बरफ भी चित ही होता है॥ अ
नंत प्रकाश रूप भी चित ही होता है॥ प्रमाण रूप भी एही
चित ही होता है॥ अंतर बाहिर सभ जगत के भी एही चित
है॥ जेता कछु जगत है सो सभ एही है॥ अरु वास्तव ते
आत्मा साथ अनन्य रूप है॥ जैसे समुद्र तरंग विषे भेद
नहीं॥ तैसे चित अरु आत्मा विषे भेद नहीं॥ जिस पुरुष को
अखंड सत्ता आत्मा का अनुभव हूया है॥ अरु सर्ग के
आदि ही ले कर चित नहीं जिसका सरीर है॥ आधिभौति

कर्ताको नही भासनया॥ सो महाआकाशरूप है॥ जिनको
पूर्वला स्वभाव स्मरण रहा है॥ इस कारणतें तिनको अ
तिवाहक शरीर है॥ हे रामजी जिस पुरुषको अतिवाह
क विषे अहंप्रत्यय है॥ तिसको सब जगत संकल्पमात्र
भासता है॥ जहां जावनेकी इच्छा उह करता है॥ तहां जा
गाम होता है॥ अवरको उह उसको रोक नही सकता॥ अ
रु जिसको आधिभौतिकता निश्चै है॥ तिसको अतिवा
हक शक्ति नही होती॥ हे रामजी सब ही अतिवाहकरू
प हैं॥ परंतु भ्रम करके आपको आधिभौतिक देखता है
जैसे मारूस्थल विषे जल भासता है॥ तैसे अतिवाहक
विषे जगत भासता है॥ जैसे जल सरदी कर बरफ होजा
ता है॥ तैसे प्रमाद कर अतिवाहकतें आधिभौतिक होजा
ता है ॥श्रीरामोवाच॥ हे भगवन चित्त क्या है॥ अरु कैसे
से होता है॥ अरु कैसे नही होता॥ अरु इह जगत कैसे वि
त रूप है॥ अरु क्षण विषे प्रणाम कैसे पावता है॥ श्री
वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी एक एक जीव प्रति चित्त होता
है॥ जैसा जैसा चित्त है॥ तैसी तैसी शक्ति है॥ अरु चित्त वि
त विषे जगत भ्रम होता है॥ क्षण विषे संपूर्ण जगत उ
दै हो आवता है॥ अरु क्षण विषे नाश होजाता है॥ किसी
को निमेष विषे कल्प होता है॥ किसीको कल्प विषा
निमेष होभासता है॥ हे रामजी जब मरणेकी मूर्छा हो
ती है॥ तब इसको नानाप्रकारका जगत फुर आवता
है॥ जैसे स्वप्न विषे स्रिष्ट फुर आवती है॥ तैसे मूर्छाते
अनंतर स्रिष्ट फुर आवती है॥ जैसे महाप्रलय के अ
नंतर आदि विराटरूप ब्रह्मा होता है॥ तैसे मृत्यु के अ
नंतर इसको अनुभव होता है॥ तब इह भी विराट हो
ता है॥ काहेतें जो इसका भी अतिवाहक शरीर होता है
॥श्रीरामोवाच॥ हे भगवन मृत्यु के अनंतर जो स्रिष्ट
होती है॥ सो स्मृत कर होती है स्मृत विनां नही होती॥ जो
स्मृत के अनंतर स्रिष्ट हूई॥ तो सकारण रूप हूई किं

३॥श्रीवसिष्ठोवाच॥हेरामजीजबमहाप्रलयहो
तीहै॥तबहरिहरादिकसमविदेहमुक्तिहोतेहैं॥तब
बडुइस्मृतकाअनुभवकैंसेहोवे॥हमआदिकजोबो
धआत्माहैं॥जबविदेहमुक्तिहूए॥तबस्मृतिकाअनु
भवकैंसेहोवे॥अरुअबकेजोजीवहैं॥तिनकाजोजन
ममरणस्मृतकारणकरहोताहै॥काहेतेंजोमोक्षनही
होते॥हेरामजीजबइहजीवमरताहै॥तबमृत्युमूर्छाक
रइसकीसंवितआकाशरूपहोतीहै॥तिसतेंबडुरेचि
तसंवेदनफुरआवतीहै॥तबनामकरकेंजगतहोभा
सताहै॥जबबोधरूपहोताहै॥तबतमात्राकालक्रि
याभावअभावस्थावरजंगमजगतआकाशहोजाता
है॥हेरामजीजिसकीसंवेदनदृश्यकीओरधावतीहै
तिसकोमृत्युमूर्छाकेअनंतरसंवेदनफुरतीहै॥तिस
करसरीरइंद्रीयांभासतीयांहैं॥आतिवाहकशरीर
है॥परचिरकालकीप्रतीतकरअधिभौतिकहोभास
ताहै॥तबइसकोदेशकालक्रियाआधारअधेयउ
दयहोकरस्थितभासतेहैं॥तबजानताहैजोमैंयहीं
हांउपजाहों॥जैसेस्वप्नेविषेस्वप्नअंगनाकाअनुभ
वहोताहै॥सोमिथ्याहै॥तैंसेजनमकरकेंआपकोंउप
जादेखताहै॥सोमिथ्याहै॥हेरामजीजबइहजीवमृ
त्युहोताहै॥तबजगतजनमदेखताहै॥वास्तवतेंजीवभी
आकाशरूपहै॥अरुजगतभीआकाशरूपहै॥पर
अज्ञानकरकेंआपकोंउपजामानताहै॥अरुआगे
जगतजनमदेखताहै॥इहसूर्यचंद्रमातारामंडलहै॥
इहजगतहै॥इहपदार्थहैं॥जन्ममरणआदिकव्या
धकरव्याकुलहोताहै॥भावअभावस्थूलसूक्ष्मचर
अचरपृथ्वीनदीयांनृतनविष्णुवर्तमानक्षयअ
क्षयजनमकोदेखताहै॥मैंयहउपजाहों॥अमुकेकापुत्र
हों॥इहमेराकुलहै॥इहमेरीमाताहै॥इहमेरापिताहै
एताधनमुजकोंप्राप्तभयाहै॥इत्यादिकवासनाजा

लविषे दुःखी होता है ॥ कहता है ॥ इह सुखत है ॥ इह दुः
खत है ॥ प्रथम मय बालिकप्या ॥ अब मय वडा हूया
हो ॥ इह मेरा वर्ण है ॥ इह मेरा आश्रम है ॥ इत्यादिक
कलना एक एक जीव को उदे होती है ॥ हे रामजी संसा
र रूपी वृक्ष है ॥ चित्त रूपी बीज है ॥ तारागण तिस के फ
ल हैं ॥ अरु मेघ पत्र हैं ॥ अरु जंगम जीव देवता मानुष
दैत्य आदिक पंखी बैठणे हारे हैं ॥ अरु रात्रि दिन ति
स के ऊपर धूड है ॥ अरु समुद्र तिसकी तलावडी है ॥
अरु अनुभव रूपी अंकुर है ॥ जहां एक जीव मरता है ॥ त
हां क्षण विषे अनेक जगत फुर आवते हैं ॥ हे रामजी
कई कोटि ब्रह्मा अरु विष्णु अरु रुद्र इंद्र सूर्य चंद्रमा
आदिक हैं ॥ काहे ते जो जहां सृष्टि हैं ॥ तहां इह भी है ॥ तां
ते चिदाणु चिदाणु विषे सृष्टि हैं ॥ जीव भी अनंत हैं ॥ ति
नो विषे सृष्टि भी अनंत हैं ॥ जब जीव चिदाणु विषे सृ
ष्टि का अंत नहीं ॥ तो परब्रह्म विषे सृष्टि का अंत कैसे
होवे ॥ पर वास्तव ते उपजा कछु नहीं ॥ जैसे थंभे विषे सि
लपी पुतलीयां कल्पता है ॥ पर हूई कछु नहीं ॥ तैसे आ
त्मा विषे जगत हूया नहीं ॥ हे रामजी जैसे तरंग जल रू
प है ॥ इतर नहीं ॥ तैसे मन अरु चित्त भी चिदाकाश रूप
हैं ॥ मननमात्र हैं ॥ हे रामजी दृश्य भी कछु भिन्न वस्तु
नही ॥ दृष्टा ही दृश्य की न्याई होभासता है ॥ जैसे स्वप्न में
एक आपका आप नाना होभासता है ॥ अरु हूया कछु नहीं
तैसे इह जगत हूया कछु नहीं ॥ सभ चिदाकाश रूप है ॥
हम को तो ऐसे होभासता है ॥ हे रामजी इसा तें कहा है
जो लीला अरु सरस्वती आकाश रूप थी ॥ स्वच्छ निरा
कार थी ॥ अरु सर्वत्र थी ॥ जहां जावें तहां जाइ प्राप्त होवें
जैसा इच्छा करें तैसी सिध होवे ॥ काहे ते जो जिसको चि
दाकाश का अनुभव हूया है ॥ तिसको रोक कोऊ नहीं
सकता ॥ उह अतिवाहक रूप हैं ॥ इति श्री उत्पत प्र

करणे लीलोपाख्याने स्मृतअनुभववर्णनं नाम स
र्गः ॥२५॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी जब दोनों देवी
यां राजा के अंतहपुर विषे प्रवेश कीया ॥ अरु संकल्प
के सिंहासन पर दुस्थित भईयां ॥ चंद्रमा की न्यांई कांति
जिनकी अरु निर्मल कल्पवृक्षों की सुगंध तिनों के शरी
रों की पसरी ॥ अरु बडा प्रकाश अंतहपुर विषे भ
या ॥ अरु शीतलता उनकी कर आधताप नष्ट भया ॥
जैसे नंदनवन होता है ॥ तैसे अंतहपुर भया ॥ जैसे प्रा
तःकाल विषे सूर्य प्रकाशता है ॥ तैसे देवीयों के प्रका
श कर अंतहपुर प्रकाशता भया ॥ मानो देवीयों का प्र
काश राजा ऊपर अमृत की वर्षा करता है ॥ तब राजा दे
षत भया ॥ जो मानो सुमेरु के शिखरतें दुइ चंद्रमा उदे
हूए हैं ॥ ऐसे देखकर विस्मय भया ॥ बडे उचितवनों
करत भया ॥ जो इह देवीयां हैं ॥ शय्यातें उठ खडा हूया ॥
जैसे शेषनाग की शय्यातें विष्णु भगवान उठता है ॥
तैसे उठकर वस्त्र उदेया ॥ अरु हाथों विषे पुष्प लेली
ये ॥ हाथ जोड के देवीयों के चरणों ऊपर चढाये ॥ अरु म
स्तक टेकया ॥ अरु पद्म आसन बांधकर पृथवी ऊपर
बैठा ॥ अरु कहत भया ॥ हे देवीयो तुमारी जय होवे ॥ ज
न्म दुःखरूपी तम के शांति करणे हारीयां तुम चंद्रमा
हो ॥ अरु अपूर्व सूर्य हो ॥ अर्थ इह जो पूर्व सूर्य के प्रका
श कर बाह्य का तम नष्ट होता है ॥ अरु तुम हृदे का त
म नष्ट करणे हारी हो ॥ तांतें अपूर्व सूर्य हो ॥ जब ऐसे
राजा पूजन कर रहा ॥ तिसतें अनंतर मंत्री जो राजा के
पास सोया पडा था ॥ तिसको भी देवीयों जगाया ॥ तब मं
त्री देवीयों का फलों कर पूजन कीया ॥ अरु राजा के स
मीप बैठ गया ॥ तब सरस्वती कहत भई ॥ हे राजन तूं क
वन है किसका पुत्र हैं ॥ अरु कब का जन्म लीया है ॥ हे
रामजी जब इस प्रकार देवीजी पूछा ॥ तब निकट जो
मंत्री बैठा था ॥ सो बोलत भया ॥ हे देवी तुमारी कृपा क

रराजाकाजन्मअरुकुलमयकहताहों॥ इक्ष्वाककीकु
लविषेएकराजाहोतभयाहै॥ कमलकीनियांईतिस
केनेत्रथे॥ अरुश्रीमानथ्या॥ तिसकानामककुद्रथभया
है॥ तिसकापुत्रबुद्रथहोतभया॥ तिसकापुत्रविश्वरथ
होतभया॥ तिसकापुत्रविद्रथहोतभया॥ तिसकापुत्र
सिंधरथहोतभया॥ तिसकाप्रोलरथहोतभया॥ तिसका
पुत्रकामरथहोतभया॥ तिसकापुत्रमहारथहोतभया
तिसकापुत्रविघ्मुरथहोतभया॥ तिसकापुत्रकलारथ
होतभया॥ तिसकापुत्रसूर्यरथहोतभया॥ तिसकापुत्र
ननरथहोतभया॥ तिसननरथकापुत्रबडेपुण्योकर
केविदूरथहोतभया॥ जैसेक्षीरसमुद्रसों चंद्रमानिकस
ताहै॥ तैससुमित्रामातातेंहमाराराजाजन्म्याहै॥ जैसेगो
रीतेंश्यामकार्तिकउपजाहै॥ तैसेमातासुमित्रातेंहमा
राराजाजन्म्याहै॥ हेदेवीजीइसप्रकारहमारेराजेकाज
न्महूयाहै॥ जबदशवर्षकाभयातबपिताइसको रा
जदेकरबनकोंआपगयाहै॥ तिसदिनतेंलेकरइस
धर्ममर्यादासाथपृथ्वीकोपालनांकरीहै॥ अरुब
डेबडेपुण्यकीयेहैं॥ तिसपुंन्यकाफलतुमारादर्शन
हूयाहै॥ हेदेवीजीतुमारेदर्शनकेनमित्तजोबडेतेव
बपुंण्यअरुतपकरतेहैं॥ तिसकोभीतुमारादर्शनक
ठनहै॥ तांतेइसपरबडीकृपाकरीहै॥ जोदर्शनदीया
है॥ तुमारेदर्शनकरइहपरमपदकोप्राप्तभयाहै॥ हेरा
मजीइसप्रकारमंत्रीकहिकरतूष्णींभया॥ तबदेवीजी
कृपाकरराजाविदूरथकेसीसपरहाथधरीरखतभई॥
अरकहा॥ हेराजनतूंअबअपलेपूरवजन्मकोविवे
कदृष्टकरदेख॥ जोतूंकवनहैं॥ तबइसप्रकारदेवीके
हा॥ तबराजाकेहिरदेविषेजोअज्ञानतमथ्या॥ तबदेवी
जीदेकहतेसाथनिवर्त्तहोगया॥ अरुहिदाप्रफुलित
होआया॥ जैसेसूर्यकेप्रकाशकरसूर्यमुखीकमलप्रफु
लितहोआवतेहैं॥ तैसेदेवीजीकेप्रसादकरराजाका

101

तेदाअप्फुलितहोआया॥ तबराजाकोपूर्वलीस्मृतफु
रआई॥ लीलाअरुपद्मराजाकावृत्तांतसंपूर्णस्मर
णकरकेकहतभया॥ हेदेवीजीबडाआश्चर्यदेख्या
है॥ जोमयराजापद्मथा॥ अरलीलामेरीस्त्रीथी॥ इक
दिनमुझकोमृत्युकहूएबीतयाहै॥ अरुईहांमयस
त्तरवर्षकाहूयाहों॥ सोमयभ्रमकरकेनहींजाणया
अबमयअस्त्येतजानताहों॥ अनेककार्यमयकीये
हैं॥ सत्तरवर्षोंविषेसोभीमुझकोस्मृतहैं॥ अरुपितापि
तामांभीस्मरणविषेआवतेहैं॥ अरुमित्रबांधवभी
स्मरणआवतेहैं॥ अपणीबालिकअवस्थाभीस्मर
विषे णआवतीहै॥ अरयोवनअवस्थाभीस्मरणविषेआ
वतीहै॥ इहबडाआश्चर्यहूयाहै॥ जोएकदिनमृत्युहू
एभयाहै॥ अरुएताभ्रमदेख्याहै॥ सरस्वतीयोवाच
॥ हेराजनजबइहमृत्युकहोताहै॥ तबबदाइसको
मृत्युमूर्छाहोतीहै॥ तिसमूर्छाकेअनंतरअबरलोक
नासआवताहै॥ एकमहूर्तविषेअनेकवर्षोंकाअनु
भवहोताहै॥ जैसेएकक्षणकेस्वप्नविषेअनेकवर्षों
काअनुभवहोताहै॥ तैसेतुझकोमृत्युमूर्छाकेअनं
तरइहलोकभ्रमभासयाहै॥ हेराजनतूंजोपद्मराजा
था॥ तिसकोअवलोमहविषेमृत्युहूएएकदिनबीता
है॥ अरुईहांतुझकोसत्तरवर्षोंकाअनुभवहूयाहै॥
अरुतिसतेभीजोपिछलावृत्तांतहै॥ सोसुण॥ हेराजन
ल। एकपर्वंडकेऊपरग्रामथा॥ तिसविषेएकवसिष्ठनाम
ब्राह्मणथा॥ अरुंधतीतिसकीस्त्रीथी॥ दोनोंमंदरवि
षेरहतेथे॥ अरुतिसअरुंधतीमुंजसोवरलीया॥ जो
मेराभरतामृत्युहोवे॥ तबउसकाजीवइसीमंदरआका
शविषेरहे॥ हेराजनजबउहब्राह्मणमृत्युभया॥ तबउ
सकापुर्यष्टकाउसहीमंदरविषेरही॥ तिसकासंवित
विषेराजकोद[illegible]उवासनाथी॥ तिसमंडपआकाशवि
षेतिसकोपद्मराजाकीस्थितिफुरआई॥ अरअरुंधती

स्त्री तिसको लीला होकर प्राप्त भई॥ अरु पद्म की राजधानी
उस ब्राह्मण के मंडप विषे स्थित है॥ बहुड़ तिस राज वि
षे भूपक भया॥ तब तेरा संवित विषे नाना प्रकार के
आरंभन संयुक्त तुझको इह जगत फुरया है॥ हे राजन
इह जो तेरा जगत है॥ सो पद्म राजे के हृदे विषे फुरया
है॥ अरु पद्म राजे के मंडप आकाश विषे स्थित है॥ सो
इह भी उसही वसिष्ठ ब्राह्मण के मंडप आकाश विषे इ
स्थित है॥ अरु उही वसिष्ठ ब्राह्मण तूं राजा विदूरथ भ
या हैं॥ सो कैसे स्थित हैं॥ जैसे आकाश विषे आकाश
स्थित है॥ हे राजन इह जगत सभ भ्रांति मात्र है॥ मन
को कलना करके भासता है॥ उपजा कछु नहीं॥ वि
दूरथोवाच॥ वडा आश्चर्य है॥ जैसे इह मेरा जन्म भ्र
म रूप भया है॥ तैसे इक्ष्वाकु की कुल भी भ्रम रूप भई॥ जो
तांते पिता पितामा अरु नृपीठ भी भ्रम रूप भई॥ जो
तिस विषे मय जन्म लीया॥ बालिक हूया॥ बहुड़ दश
वर्षों का भया॥ तब पिता मुझको राज देकर वनवास ली
या॥ बहुड़ दिग विजय करके प्रजा की पालना करी॥
सतर वर्षों का मुझको अनुभव होता है॥ अब मुझको
मारणे अवसर युध का आन प्राप्त हूया है॥ युध करके
मय गृह विषे आनइ स्थित भया हों॥ बहुड़ दोनों देवी
यां मेरे गृह विषे आईयां हैं॥ दोनों विषे एक देवी कृपा
करके मेरे सीस पर हाथ धारया है॥ तिस कर मुझको ज्ञा
न प्राप्त भया है॥ जैसे सूर्य के प्रकाश कर कमल प्रफु
लित होता है॥ तैसे मेरा हृदा देवी के प्रसाद कर प्रफुलि
त भया है॥ इनकी कृपा ते मैं यहलतलक्षन भया हों॥ अब
मेरा सब संताप नष्ट भया है॥ अरु परम निर्वाण सुख
को प्राप्त भया हों॥ सरस्वत्युवाच॥ हे राजन जो क
छु तुझको भास्या है॥ सो सब भ्रम मात्र है॥ नाना प्रकार
के व्यवहार भी अरु लोकांतर भ्रम मात्र हैं॥ काहे ते जो
उहां तुझको मृत्यु हूए एक दिन व्यतीत भया है॥ तिस
के अनंतर उसही मंडप आकाश विषे तुझको इह ज

भी

गत भास्या है ॥ अरु उह पद्म राजा की वशिष्ठ ब्राह्मण के
मंडप आकाश विषे इस्थित है ॥ तहां ही तुझ कों नदीयां
समुद्र पृथ्वी आदिक भूत संपूर्ण जगत भास्या है ॥ का
हे ते जो तेरी पुर्यष्टि का उस ही मंडप आकाश विषे ॥
स्थित है ॥ जैसे समुद्र विषे तरंग फुरते भासते हैं ॥ तैसे
तुझ को जगत भास्या है ॥ हे राजन मृत्यु मूर्छा के अनंत
र कब कूं उही जगत भासता है ॥ कब कूं और प्रकार भा
सता है ॥ कब कूं पूर्व अपूर्व मिश्रित भासता है ॥ सो सभ
मन की कल्पना कर भासता है ॥ वास्तव तें असत्यरूप
है ॥ पर अज्ञान कर के सत्य की न्यांई भासता है ॥ जैसे ए
क होण के स्वप्न विषे बहुत वर्षों के लोभ को देखता है
तैसे इह जगत का अनुभव भया है ॥ हे राजन अज्ञान क
र के मिथ्या कल्पना तुझ कों उपजी है ॥ वास्तव तें तं न म
तु भया है ॥ न जन्म्या है ॥ न इह जगत है ॥ तूं तो शुध विज्ञा
न घन शांति रूप है ॥ अपना आप जो आत्म पद है ॥ ति
स विषे स्थित होवो ॥ नाना प्रकार का जगत अज्ञान कर
भासता है ॥ अरु सम्यक ज्ञान कर के सभ आत्म रूप भा
सता है ॥ आत्म सत्ता ही जगत की न्यांई हो भासती है ॥ जैं
से इंद्रमणि का प्रकाश नाना प्रकार हो भासता है ॥ सो म
णि तें भिन्न नहीं ॥ तैसे आत्म सत्ता का कंचन जगत हो भा
अरु सता है ॥ जैता कछु जगत तुझ कों भासता है ॥ सो लीला रा
जा पद्म के मंडप आकाश विषे इस्थित है ॥ उह लीला अ
रु राजा पद्म की राजधानी उस वसिष्ठ ब्राह्मण अरु अ
रुंधती के मंडप आकाश विषे स्थित है ॥ हे राजन इह ज
गत अरु उह जगत वसिष्ठ ब्राह्मण के रिदे विषे पड़ा फु
रता है ॥ कैसा है इह मंडप जो आकाश विषे आकाश
इस्थित है ॥ न कोउ पृथ्वी है ॥ न जल है ॥ न अग्नि है ॥ न प
हाड़ नदीयां समुद्र हैं ॥ केवल शून्य विषे शून्य स्थित है ॥
न कोउ जगत है ॥ न कोउ देखणे वाला है ॥ इह सभ भ्रम
मात्र है ॥ विदूरथोवाच ॥ हे देवीयो जो ऐसे हैं ॥ तो मेरे

न्त्य भी अपणे अपणे आत्मा विषे इस्थित हैं ॥ अथवा
असत्य हैं ॥ देवी उवाच ॥ हे राजन् विदितवेद्य जो पु
रुष हैं ॥ सो शुध बोधरूप हैं ॥ तिनको जगत नहीं भास
ता ॥ सभ जगत तिसको चिदाकाश ही भासता है ॥ जैसे
जेवडी विषे सर्प भ्रम निवृत्त हूए तें जेवडी भासती है ॥ तै
से जिस पुरुष को आत्मबोध हूया है ॥ तिनको सभ आ
त्मा ही भासता है ॥ जैसे जिन मृगजल को असत्य जाण
या है ॥ बहुड़ सत्य नहीं देखता ॥ तैसे जिनको आत्मबो
ध हूया है ॥ सो जगत को असत्य जानता है ॥ हे राजन जैसे
स्वप्ने विषे अपनां सीस कटा देखता है ॥ अरु जागे तें
भ्रम जानता है ॥ तैसे ज्ञानवान को जगत असत्यरूप भा
सता है ॥ अरु जैसे स्वप्ने विषे अपनां मरणां सत्य भासता
है ॥ तैसे अज्ञानी को जगत भासता है ॥ अरु ज्ञानवान को
असत्य भासता है ॥ जैसे सरत काल का आकाश निर्मल
होता है ॥ तैसे बोधवान अहंत मल तें रहित है ॥ हे राज
न तूं अरु तेरे मन्त्री आदिक सभ जगत आत्मा ते फुरे
हैं ॥ अरु वास्तव तें कछु हूया नहीं ॥ केवल आत्मसत्ता
ही अपणे आप विषे इस्थित है ॥ अवर कछु हूया नहीं
॥ वालमीकोवाच ॥ हे भारद्वाज जब देवी अरु विदू
रथ का संवाद वसिष्ठ जी राम जी को कहा ॥ तब सूर्य भग
वान अस्त भया ॥ तब सायंकाल का समा हूया ॥ सर्व सभा
परस्पर नमस्कार करके स्नान को गए ॥ रात्रि व्यतीत भई
सूर्य की किरणों साथ अपणे अपणे स्थानों पर आइ बै
ठे ॥ ॥ इति श्री उत्पत्ति प्रकरणे लीलोपाख्याने अ
ज्ञोति विचारो नाम सर्गः ॥ २९ ॥ श्री वसिष्ठोवाच
हे राम जी जो पुरुष अबोधरूप है ॥ अर्थ इह जो तिस
पुरुष नें परम पद विषे इस्थिति नहीं पाई ॥ तिनको जग
त वज्रसार की न्याई दृड भासता है ॥ जैसे मूरख बालि
क को अपणे पिछावे विषे वैताल भासता है ॥ तैसे अ
ज्ञानी को असत्यरूप जगत सत्य भासता है ॥ जैसे जिन

को स्वर्ण विषे भूषण बुधि होती है ॥ तिस को भूषण सत्त हो भास
ता है ॥ तैसे अज्ञानी कों असत्त रूपी जगत सत्य हो भासता
है ॥ हे रामजी इह जगत दीर्घ काल का स्वप्ना है ॥ सो अत्यंत
कर दृड जाग्रत रूप हो भासता है ॥ वास्तव तें उपजा कछु
नहीं ॥ सर्वदा अचेत चिन्मात्र स्वरूप है ॥ सर्वरूप सर्वश
क्ति आत्मा ही भासता है ॥ जैसा जैसा स्पंद फुरता है ॥ तैसा
तैसा हो भासता है ॥ जैसे स्वप्ने विषे द्रष्टा दृश्य दर्शन हो
भासता है ॥ तैसे इह जगत हो भासता है ॥ हे रामजी सर्ग
के आदि जो शुद्ध आत्मसत्ता थी ॥ तिस विषे आदि संवेदन
स्पंद हूया है ॥ सो ब्रह्मा है ॥ तिस के संकल्प विषे इह जग
त संपूर्ण स्थित है ॥ तिस विषे तुम हम संपूर्ण जगत हो
भासता है ॥ जैसे स्वप्ने विषे स्वप्न नगर हो भासता है ॥ तैसे
आदिक इह जगत अहं त्वं हो भासता है ॥ सो भ्रम मात्र है ॥ श्री
रामोवाच ॥ हे भगवन स्वप्ने तें जब जागता है ॥ तब स्व
प्न पदार्थ असत्य रूप हो जाते हैं ॥ अरु इह जगत जिउं
का तिउं भासता है ॥ जब देखीये तब ऐसे ही भासता है
जाग्रत स्वप्ने को तुल्य कैसे कहीये ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥
हे रामजी जैसा स्वप्ना है ॥ तैसे इह जाग्रत है ॥ स्वप्ने अरु जा
ग्रत विषे भेद कछु नहीं ॥ स्वप्न नगर को भी असत्य तब
जानता है ॥ जब जागता है ॥ जब लग जाग्या नहीं ॥ तब ल
ग सत्य भासता है ॥ तैसे जब इह पुरुष आत्मपद विषे जा
ग्या नहीं ॥ तब लग सत्य पडा भासता है ॥ जब आत्मपद
विषे जागेगा ॥ तब इह जगत भी असत्य रूप हो भासेगा
हे रामजी इह जगत असत्य रूप है ॥ पर भ्रम कर के स
त्य की न्याई भासता है ॥ जैसे स्वप्ने की सृष्टी असत्य रूप
होती है ॥ अरु सत्य हो भासती है ॥ तैसे इह जगत भी सत्
रूप रूप भासता है ॥ अरु आत्मसत्ता सदा अद्वैत है ॥ पर जै
से जैसे चेतती है ॥ तैसे तैसे हो भासता है ॥ जैसे द्रव्य विषे
अनेक रत्न होते हैं ॥ जिस को चहता है ॥ सोई निकासले
ता है ॥ तैसे सर्वगत चिदाकाश है ॥ जैसे जैसे चेतता है

तैंसा तैंसा हो भासता है॥ हे रामजी अब तें पूर्व प्रसंग सु
ण॥ जब देवीजी विदूरथ ऊपर वचनोंकी वर्षा करी॥ त
ब उनके रिदे विषे विवेक रूपी अंकुर आन उतपतन
या॥ बहूड सरस्वती कहत भई॥ हे राजन जो कछु म
यतुजकों कहणा था सो कहा है॥ अरु तई इसें संगोम
विषे मत्यु होणा है॥ इह मय जानती हों॥ तुम मत्यु होकर
पद्म राजा के शरीर को पहिरणा हो॥ अब हम जाते हैं॥ ली
ला के दिखावणे निमित हम आई थी॥ सो दिखाया है॥
॥ श्रीवसिष्टोवाच॥ हे रामजी जब इस प्रकार मधुर वा
णी सों सरस्वतीजी कहा॥ तब बुधिवान जो विदूरथ है॥
सो कहत भया॥ विदूरथोवाच॥ हे देवी अब हम तु
मारा दर्शन कीया है॥ अरु बडों का दर्शन निरार्थ न
ही होता॥ महा फल के देणेहारा है॥ हे देवीजी मय भी ऐ
सा होता था॥ जो जब अर्थी मेरे ताई आन प्राप्त होवे॥ ति
सको मय निरार्थ करन न देता था॥ सन अर्थ संपूरण
कर देता था॥ ताते इह वर मुजकों देवो॥ जो इस देह कों
त्याग करलों॥ तो अंतर विषे पद्म राजा के सब देह विषे जा
इ प्राप्त होवों॥ जैसे स्वप्न ते स्वप्नांतर कों जाइ प्राप्त होता
है॥ तैसे मय प्रापत होवों॥ हे देवीजी जो भक्ति सरणें कों
आन प्राप्त होता है॥ बडे तिसका त्याग नही करते॥ उस
का अर्थ सिध कर देते हैं॥ ताते इह वर मुजकों देवो॥ जो
पद्म राजा के देह विषे जा प्राप्त होवों॥ मेरे मंत्री अरु भा
र्या लीला भी साथ होवे॥ सरस्वतीयोवाच॥ हे राजन
ऐसे ही होवेगा॥ पद्म राजा के सरीर विषे जा प्राप्त होवें
गा॥ अरु बोध सहित निहकंटक होकर राज विषे वि
चरेंगा॥ हमारी सेवा किसीको व्यर्थ नहीं जावती॥ जैसी
कामना कर कोऊ करता है॥ तैसे फल को पावता है॥ इ
ति श्री उतपत प्रकरणे लीलोपाख्याने स्वप्न असत्य
तावर्णनं नाम सर्गः॥ ३०॥ श्रीसरस्वतीयोवाच॥
हे राजन अब तूं रण विषे मत्यु होवेंगा॥ मत्यु होकर पूर्व

रूपी अंकुर

२०

लेपद्म राजाके सरीरकों जो प्राप्त होवेंगा ॥ अरु इह तुमा
रीमंत्री लीला अरु मंत्री भी ऊहां तुमारे पास होवेंगे ॥
हे राजन तुम ऐसे चल्ये जावोंगे ॥ जैसे वायु चली जाती
है ॥ अब हम जाते हैं ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी ज
ब इस प्रकार देवी कहा ॥ तब एक पुरुष आया ॥ अरु क
हतभया ॥ हे राजन शत्रु बहुत आए हैं ॥ अरु चक्र गदा
आदिक शस्त्रों की वर्षा करते आवते हैं ॥ जैसे प्रलय का
ल विषे मंदराचल अस्ताचल आदिक पर्वत वायु क
र उडते हैं ॥ तैसे शत्रु चल्ये आवते हैं ॥ अरु सर्व दिशा
सेना कर सर्व स्थान पूर्ण भए हैं ॥ जैसे महाप्रलय विषे
सर्व स्थान जल कर पूर्ण होते हैं ॥ तैसे सेना कर सर्व स्था
न पूर्ण भए हैं ॥ अरु बाण नदी के प्रवाह की न्याई चल्ये
आवते हैं ॥ अग्नि ऐसी लगीयां हैं ॥ जैसे प्रलय काल की
अग्नि समुद्र को जलावती है ॥ तब दोनों देवीयां अरु रा
जा अरु मंत्री ऊचे होकर झरोखेयां विषे बैठकर देखणे
लागे ॥ क्या देखें ॥ जैसे प्रलय काल का मेघ आवता है ॥ तै
से सेना चली आवती है ॥ अरु अग्नि जो उनों लगाई थी
तिस कर ग्राम मनुष्य पदार्थ पडे जलते हैं ॥ अरु ऐसे
शब्द करें ॥ हाइ भाई हाइ पिता हाइ माता हाइ पुत्र हाइ
इस्त्री इत्यादिक शब्दों कर नगरों का शब्द अछादया
गया ॥ ॥ इति श्री उतपत प्रकरणे लीलोपाख्याने
अग्नि दह वर्ननं नाम सर्गः ॥ ३१ ॥ श्रीवसिष्ठोवा
चा ॥ हे रामजी इस प्रकार राजा नगर को देखता भया ॥
जो उस पुरुष की लीला सहेलीयों सहित ऊहां आई जहां
राजा विदूरथ बैठा था ॥ जैसे कमलों की खाणि विषे ल
छमी आवे ॥ तैसे आई ॥ कोहली सहित सहेलीयों साथ
आई ॥ हे राजा जी तेरे नगर विषे शत्रु आन पसरे हैं ॥ ति
सकर हम राणी लीला कों ले आई हो ॥ जैसे इंद्र के नगर
विषे दैत्य आन परें ॥ अरु इंद्राणी को बचाइ कर इंद्र पा
स ले आवें ॥ तैसे हम लीला को बचा ले आए हैं ॥ हे रामजी

जब इस प्रकार राजा को सहेलीयों कहा ॥ तब राजा सरस्वतीजी को कहत भया ॥ हे देवीजी इह लीला तुमारी सरणि आई है ॥ अरु तुमारे चरणकमलों की नमरी है ॥ इनकी रक्षा तुम ही करणी ॥ मय अब युध करने को जाता हों ॥ हे रामजी जब इस प्रकार राजा कहिकर क्रोधसंयुक्त होकर युध करणे को गया ॥ जैसे सिंह कंदरा ते निकसकर सिकार को धावता है ॥ तैसे राजा चल्या ॥ तब दूसरी लीला सहेलीयों साथ देवीजी के आगे मस्तक टेक्या ॥ अरु कहा ॥ हे देवीजी तुमारी जय होवे ॥ तब बैठ रही ॥ तब देवी साथ जो प्रथम लीला थी ॥ सो देखत भई ॥ क्या देखे जो अपणी मूर्ति सुंदर आकार है ॥ जैसे आरसी विषे प्रतिबिंब होता है तैसे देखकर कहत भई ॥ प्रबुधलीलोवाच ॥ हे देवीजी इह मय किं उकर आन प्राप्त भई हों ॥ जब मय प्रथम आई थी ॥ तब मुज को मंत्री टहिलूए पुरवासी अनेक देष आए थे ॥ उह संसा मइ तुज सों निवर्तन कीया था ॥ बडुड इह जो मइ हों इस प्रकार कैसे आन स्थित भई हों ॥ इह द्रृषरूप कैसा आदर्श है ॥ जिसके अंतर बाह्य प्रतिबिंब होता है ॥ उही मंत्री टहिलूए हैं ॥ अरु मेरा स्वरूप भी उही है ॥ सो इह क्या है ॥ श्री हंद्रृष भाव किं उकर भासता है इह संसा मेरा दूर करो ॥ देवीयोवाच ॥ हे लीला जैसे चित्तसंवित विषे स्पंद फुरता है ॥ तैसे ही तात काल सिध होता है ॥ तिस अर्थ के चितवणे ही सरीर को त्यागता है ॥ तैसे ही अर्थ को जाप्राप्त होता है ॥ तिसी क्षण विषे देशकाल पदार्थ की दीर्घता नवीन होती है ॥ जैसे स्वप्न विषे फिर फुर आवता है ॥ तैसे परलोक फिर फुर आवता है ॥ हे लीला जब तेरा भरता मृतु होवणे लागा था ॥ तब इसका जो सनेह तेरे विषे अरु मंत्रीयों विषे बहुत था ॥ तब उही रूप सत होकर भासणे लागा है ॥ वासना के अनुसार जैसे संकल्पपुर भासता है ॥ जैसे स्वप्ननगर भासता है ॥ तैसे इह जगत भासता है ॥ हे लीला जो कछु पदार्थ स

त्यरूप होभासते हैं॥ सो अज्ञान काल विषे भासते हैं॥ अ
रु ज्ञान काल विषे असत्य होभासते हैं॥ जाग्रत विषे स्वप्न
जो व होभासता है॥ अरु स्वप्न विषे जाग्रत का अभाव हो
जाता है॥ जाग्रत सरीर मृत्यु करनाश होजाता है॥ अरु मृ
त्यु जन्म करि असत्य होजाती है॥ मृत्यु करि जन्म असत्य
होजाता है॥ जन्म विषे मृत्यु असत्य होजाती है॥ हे लीला
जब इस प्रकार चित्त करि विचार देखीये॥ तब सर्व अव
स्था भ्रांति मात्र है॥ वास्तव कोऊ नहीं॥ हे लीला सर्ग तें आ
दि महाप्रलय पर्यंत कूया कछु नहीं॥ सदा जिउ की तिउ
ब्रह्म सत्ता अपणे आप विषे इस्थित है॥ जगत कल्प
ना आभास मात्र है॥ अज्ञान करके सत्य होभासती है॥ जैं
से आकाश विषे तिरवरे भासते हैं॥ तैसे आत्मा विषे अ
ज्ञान करके जगत भासता है॥ जैसे समुद्र विषे तरंग उ
पज कर लीन होजाते हैं॥ तैसे आत्मा विषे जगतों के स
मूह उपज कर पड़े लीन होते हैं॥ तांतें अहं त्वं आदि भ्रम
मात्र है॥ हे लीला इह जगत मृगत्रिष्णा के जलवत है॥ इ
स विषे आस्था करणी अज्ञान है॥ काहे तें जो है नहीं॥
अज्ञान करके भासते हैं॥ अरु भ्रांति ही कछु वस्तु न
हीं॥ जैसे घन तम विषे यक्ष भासता है॥ सो कछु वस्तु न
हीं॥ तैसे ब्रह्म सत्ता अपणे आप विषे इस्थित है॥ जैं
से जल विषे तरंग होभासते हैं॥ तैसे जन्म मृत्यु मोहा
रूप दिक मिथ्या हैं॥ तैसे कछु अहं त्वं आदिक शब्द हैं॥ सो
स नम महाप्रलय विषे अभाव होजाते हैं॥ तिसके पाछे
शुध शांति रूप होता है॥ अब भी तैसे जान॥ जिउ की ति
उ ब्रह्म सत्ता स्थित है॥ हे लीला इह जो पृथ्वी आदिक
भूत भासते हैं॥ सो नत संवित रूप हैं॥ काहे तें जो जब
चित संवित स्पंद रूप होती है॥ तब जगत रूप होभा
सती है॥ इसी कारण तें सनद्ध रूप संवित रूप है॥ हे ली
ला जीव रूप जो समुद्र है॥ तिस विषे जगत रूपी तं
रंग पड़े उपजते हैं॥ अरु लीन भी होते हैं॥ पर स्वरूप

तें उही रूप हैं ॥ इतर कछु नहीं ॥ जैसे अग्नि विषे उष्णता होती
है ॥ तैसे जीवों विषे तूं रूप है ॥ हे लीला जैसे सूर्य का किरणों
विषे त्रिसरेणु भासते हैं ॥ तैसे आत्मा विषे जगत भासते हैं ॥
भाव अभाव ग्रहण त्याग सूक्ष्म स्थूल चर अचर सर्व ब्रह्म
के अवयव हैं ॥ हे लीला इह जगत जो साकार रूप है ॥ सो आ
त्मा तें भिन्न नहीं ॥ जैसे वृक्ष के अंग पत्र फल टास होते हैं ॥ सो
वृक्ष रूप हैं ॥ तैसे ब्रह्मसत्ता जगत रूप हो भासती है ॥ जैसे
चेतन संवित विषे स्पंद फुरता है ॥ तैसे हो कर भासता है ॥ सो
संवित आकाश रूप है ॥ जिउ की तिउ है ॥ तिस विषे अवरक
ल्पनां भ्रांति मात्र है ॥ हे लीला इह जगत जो तुज कों भासता है
सो सत है ॥ न असत है ॥ जैसे जेवडी विषे सर्प भासता है ॥ तैसे
आत्मा विषे जगत भासता है ॥ जिस कों असम्यक ज्ञान हो
ता है ॥ तिस कों जेवडी विषे सर्प भासता है ॥ तैसे तिस कों आ
त्मा विषे जगत भासता है ॥ अरु जिस कों सर्वं भासता हैं ॥ ति आत्मा
स को सम्यक बोध ज्ञान ॥ हे लीला जैसे चेतन विषे स्पंद फुर
ता है ॥ सोई भासता है ॥ तब इस कों क्षण विषे जगत हो भास हैं
ता है ॥ जब मृत्यु होता है ॥ किसी को अपूर्व रूप फुर आवता
है ॥ किसी कों पूर्व रूप फुर आवता है ॥ किसी कों मिश्रित रू
प फुर आवता है ॥ तिस कारण तें तेरे भरता कों उही सृष्टि अर
मंत्री वासना के अनुसार फुर आए हैं ॥ काहे तें जो आत्मा सर्व
गत है ॥ जैसा जैसा इस विषे स्पंद फुरता है ॥ तैसे तैसे हो भास
ता है ॥ हे लीला जैसे मनोराज विषे प्रतिभा उदे हो आवती है ॥
तैसी सत्य रूप हो भासती है ॥ तैसे इह जो लीला तेरे सन्मुख
बैठी है ॥ सो अैसे ही हूई है ॥ तेरे विषे तेरे भरता की दृढ भाव
ना थी ॥ तिस कर उस को तेरा प्रतिबिंब होकर आन प्राप्त भ
ई है ॥ तु जही जैसा सील अरु आचार कुल वपु इस को प्रा
प्त भया है ॥ हे लीला सर्वगत संवित आकाश है ॥ जैसा जैसा
उस विषे फुरणा होता है ॥ तैसे संवित रूप आदर्श विषे प्रति
बिंब भासता है ॥ सो आत्मा ही जगत रूप हो भासता है ॥ ॥
इति श्री उत्पत्ति प्रकरणे लीलोपाख्याने अग्निदाह

रात्रियुध जगत ब्रह्मवर्णनं नाम सर्गः ॥ ३२ ॥ देवीयो
वाच ॥ हे लीला तेरा जो भरता राजा विदूरथ है ॥ सो रण संग्रा
म विषे सरीर त्यागेगा ॥ उसही अंतहपुर विषे राजा पद्म का
शरीर धारकर राज करेगा ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे राम
जी जब इस प्रकार देवी कहा ॥ तब विदूरथ के पुर की जो ली
ला थी ॥ सो हाथ जोडकर देवी कों प्रणाम करत भई ॥ अरु
कहा ॥ द्वितीय लीलोवाच ॥ हे देवी मय भगवती ज्ञप्ति रूप
कों नित पूजती रहती हों ॥ बडेउ उस स्वप्न विषे मुझ कों दर्श
न दीया है ॥ जैसी उह ईश्वरी थी ॥ तैसी तुम मुझ कों दृष्ट आ
वती हैं ॥ तातें तुम मुझ पर कृपा करके मनवांछत फल को दे
वो ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी जब इस प्रकार विदूर
थ की लीला कहा ॥ तब अपलीन भक्ति पर प्रसन्न होकर कहे
त भई देवीजी ॥ देवीयोवाच ॥ हे लीला तुझ अनन्य होक
र मेरी भक्ति करी है ॥ अब मय तुझ पर प्रसन्न भई हों ॥ जो क
छु तुझ को वांछित है सो वर मांग ॥ द्वितीय लीलोवाच ॥ हे दे
वीजी जब मेरा भरता रण विषे देह को त्याग कर जावे ॥ तब
मय इसी सरीर साथ तिस की भार्या होवों ॥ देवीयोवाच ॥
हे लीला तुझ जो भली प्रकार मेरी सेवा करी है ॥ तातें ऐसे ही
होवेंगी ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी जब इस प्रकार
देवीजी कहा ॥ तब पूर्व लीली लीला कहत भई ॥ प्रबुध लीलो
वाच ॥ हे देवी तुम तो सत संकल्प सत काम ब्रह्म स्वरूप हैं
मुझ कों उसी शरीर साथ विदूरथ के गृह विषे किंउ न लेग
ई ॥ अरु वसिष्ठ ब्राह्मण की सृष्टि विषे भी न ले गई ॥ देवी
योवाच ॥ हे लीला मय किसी का कछु नहीं करती ॥ सर्व जी
वों की संकल्प मात्र देह है ॥ अरु मय ज्ञप्ति स्वरूप हों ॥ एक एक
जीव के अंतर चेतन्य मात्र देवता होकर स्थित हों ॥ जो जो
जीव जैसी जैसी भावना करता है ॥ तैसी तैसी तिस को सिध
ता होती है ॥ हे लीला जब तुम मेरा आराधन कीया था ॥ तब
इह प्रार्थना करी थी ॥ जो मेरे भरता का शरीर इसी मंडप
आकाश विषे रहे ॥ अरु ज्ञान की प्राप्त भी मुझ कों होवे ॥ त

वमयंतुजको ज्ञानउपदेश कीया॥ अरु तुजको ज्ञान प्राप्त हूया
अरु इस लीलानें इसहीन मित्त पूजन कीया है॥ तातें इसकों
एही प्राप्त भया है॥ जो देह साथ मरे ताके संग जावेगी॥ जेसा
जेसा चित्त संवित्त विषे दृढ स्पंद होता है॥ तैसी तैसी सिध्यता
होती है॥ हे लीला इह जो कोऊ तप करता है॥ तिसकी दृढताक
रके चिदात्मा देवता रूप होकर फलको देता है॥ जैसी जेसी
संकल्पकी तीव्रता किसीकों होती है॥ चैतन्य संवित तिसकों
तैसा फल देती है॥ चित्त संवित तें इतर किसीको कदाचित क
छू फल प्राप्त नही होता॥ तिसातें सभ किसीकों फल प्राप्त हो
ता है॥ आत्मा सर्वगति सर्वके अंतर स्थित है॥ जेसा तिस विषें चेतता का यतन
भावना करता है॥ तैसे प्राप्त होती है॥ ॥ इति श्री उतप होता है तैसा शुभ
त प्रकरणे सतकाम सत संकल्प वर्णनं नाम सर्गः॥ फल प्राप्त होता है
॥ ३३ ॥ श्रीरामोवाच॥ हे भगवन राजा विदूरथ जो देवीकों
कहिकर संग्राम विषे गया था॥ सो क्या करत भया॥ श्रीव
सिष्ठोवाच॥ हे रामजी जब राजा ग्रहतें निकस्या॥ अरु संपू
र्ण सेना कर संग्रांम भया॥ जैसे तारों विषे चंद्रमा शोभता है
तैसे सैना विषे शोभता भया॥ तब रथ पर आरूढ सेना सहि
त संग्राम विषे आया॥ कैसा रथ है॥ जो मोतीयों मालकों सा
थ पूर्ण है॥ रथ साथ आठ घोडे हैं॥ जो वायुतें तीव्र चल
ते हैं॥ अरु पंच ध्वजा हैं॥ ऐसे रथ पर आरूढ हूया॥ संग्राम
विषे आ पडा॥ जैसे सुमेर पर्वत परों सहित समुद्र विषे जाप
डे॥ तैसे जा पडा॥ तब दोनों सेना एकठी होगई॥ जैसे प्रलय
काल विषे समुद्र एकठे हो जाते हैं॥ तैसे सेना एकठी भई॥
बडा युध होवणे लागा॥ अरु पुहकर मेघों की न्याई योधों
के शब्द होवणे लागे॥ जैसे मेघतें बूंदों की वर्षा होती है॥ तैं
से योधों तें शास्त्रों की वर्षा होवणे लागी॥ चक्र गदा खड्ग त्रि
शूल मूसल कुहाडे तें आदि लेकर सस्त्रों की वर्षा परस्प
र योधे करणे लागे॥ जैसे प्रलयकाल विषे अग्नि प्रबल
होती है॥ तैसे शास्त्रों तें अग्नि निकसे॥ तिन शास्त्रों कर अनेक
जीव पडे घों धूरका इल होवें॥ बडा युध होवणे लागा॥ तब दोनों रा
जा आनके सन्मुख भए॥ परस्पर युध करणे लागे॥ ऐसे

अस्त्र चलावणे लागे॥ जिसतें वाडवा अग्निकी न्यांई अग्नि नि
कसे॥ बडा युध होणे लागा॥ तब विदूरथ की सेना कछु इक
निबल भई॥ अरु ऊर्ध जो देवीयां देखती थी॥ दिव्यदृष्ट साथ॥
तब दोनों लीला कहा॥ हे देवी जी तूं सर्व शक्ति हैं॥ अरु हमारे ऊ
परि तेरा दया नी है॥ हमारे भरता की जय किउं नही होती॥ इ
ह कारण कहो॥ देव्युवाच॥ हे लीले विदूरथ का जो श
त्रु है सिंध राजा॥ तिसनें चिरकाल पर्यंत मेरी पूजा करी है
जय के निमित्त॥ अरु तुमारे भरता जय के निमित्त पूजा नही
करी॥ मोक्ष के निमित्त पूजा करी है॥ तां ते राजा सिंध की जय हो
वेगी॥ अरु तुमारे भरता को मोक्ष की प्राप्त होवेगी॥ हे लीले।
जिस निमित्त हमारी सेवा कोऊ करता है॥ हम तिसको तैसा
ही फल देते हैं॥ तां ते राजा सिंध विदूरथ को जीत कर राज
करेगा॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी इस प्रकार देवी जी
कहती थी॥ जो दोनों राजों का परस्पर युध होवणे लागा॥ ऐ
से बाण चलावें॥ जो मानो दोनों विष्मुखडे हैं॥ एक बाण वि
दूरथ छोडया॥ तिसके सहस्र होगए॥ जब आगें गए तब
उही लाख होगए॥ तब सिंध राजे भी एक बाण चलाया॥
तिसके सहस्र होगए॥ जब आगें गए तब उहनी लाख हो
गए॥ बाण ही परस्पर युध करते टुकडे होकर गिड पडे॥
तब राजे सिंध मोहरूपी अस्त्र चलाया॥ तिसके आवणे
कर एक विदूरथ विनां सभ सेना मोहत भई॥ जैसे उनम
त को सुध कछु नही रहती॥ तैसे उनको सुध कछु न रही॥
नेत्रों को ऊपर कर देखते रहें॥ मानो मूरतां लिख छोडीआं हैं
तब राजा विदूरथ को भी मोह का अवेस होवणे लागा॥ त
ब राजा विदूरथ प्रबोधरूपी अस्त्र चलाया॥ तिसकर स
भनों का मोह निवृत्त होगया॥ सभनों के रिदे प्रफुलित हो
आए॥ जैसे सूर्य के उदे हूए सूर्यमुखी कमल प्रफुलित हो
आवते हैं॥ तब सिंध राजे नागरूपी अस्त्र चलाया॥ ति
सकर अनेक नाग निकस आए॥ ऐसे नाग आवें मानों
पर्वत उडते आवते हैं॥ सर्व दिशा नागों कर पूर्ण होगईयां
अग्निकी तिनके मुखों ते विष अरु ज्वाला निकसें॥ तिसकर विदू

रथकीसेनाबहुतकष्टपाया॥ तबराजाविदूरथगरुडनाम
अस्त्रचलाया॥ तिसकरअनेकगरुडप्रगटहोआए॥ ति
नोंकरसर्वनागनष्टहोगए॥ जैसेसूर्यकेउदेहूयेअंधका
रनष्टहोजाताहै॥ तैसेसर्वनागनष्टहोगए॥ नागोंकोनष्ट
करकेगरुडभीअंतरध्यानहोगए॥ जोकोऊसिंधराजाबा
णचलावे॥ तिसकोराजाविदूरथनष्टकरे॥ जैसेसूर्यदैत्यों
सोंयुधकरणेताईसावधानहोताहै॥ तैसेविदूरथसिंध
सोंयुधकरणेकोसावधानहोया॥ अरुबडीबाणोंकीव
र्षाकरी॥ तिसकरसिंधभीदीनताकोप्राप्तभया॥ तबदेवीहैं
लीलाकहा॥ हेदेवीजीअबमेरेभरताकीजयहोतीहै॥ तब
देवीसुणकरहिदेविषेमुसकानी॥ अरुकहा॥ जोजीवोंका
चित्तमहाचंचलहै॥ तबसिंधराजानेतमरूपीअस्त्रचला
या॥ तिसकरसर्वदिशातमहोगई॥ मानोकाजलकीसमष्टता
भईहै॥ तबराजेविदूरथप्रकाशरूपीअस्त्रचलाया॥ तिस
करसर्वतमनष्टहोगया॥ जैसेसरतकालविषेमेघघटा
नष्टहोजातीहै॥ शुधआकाशहीभासताहै॥ जैसेआत्म
ज्ञानीकोलोभकाअभावहोजाताहै॥ तैसेप्रकाशकरत
मनष्टहोगया॥ सर्वदिशानिर्मलभयां॥ तबसिंधवैताल
रूपीअस्त्रचलाया॥ तिसकरविदूरथकीसेनामोहकोपा
वतीभई॥ जिनकीमहाविकरालमूर्तिहै॥ उहजीवोंकोभय
देवें॥ जिनकेरहणेकेस्थानभ्रमसहैं॥ मंदरोंअरुअरूडी मून
योंविषेजोमलीनस्थानहैं॥ तिनविषेउहरहतेहैं॥ तबविदू
रथकुरूपकानामअस्त्रचलाया॥ तबमहाभयानकरू
पनखजिकाउदरहोगतिससमनोंकों वैतालोंकोभोज
नकरलीया॥ तबवैतालनष्टहोगए॥ अरुसिंधराजाक्रो
धकरकेराक्षसरूपीअस्त्रचलाया॥ तिसकरकोटिराक्ष
सनिकसआए॥ अरुभयानकरूपबडेहोकीन्याईववलि
नाका॥ आखोंविद्युलीकीन्याईचिमकें॥ ऐसेअनेकरा
क्षसपातालसोंनिकसआए॥ जोकोऊआगेआवेतिस
कोमुखविषेपाइलेवें॥ तिनकोदेखकरविदूरथकीसेना
भयकोप्राप्तभई॥ तबराजाविदूरथअपणीसेनाको

कष्टवान देखकर विष्णु अस्त्र चलाया॥ तिसकर सभ रा
क्षस नष्ट हो गए॥ बहुड़ राजा सिंध अग्नि नाम अस्त्र च
लाया॥ तब संपूर्ण दिशा विषे अग्नि हो गई॥ तिसकर लो
क जलने लागे॥ तब राजा विदूरथ वरुण रूपी अस्त्र च
लाया॥ अरु अग्नि का दाह सभ मिट गया॥ जैसे संतों के संग
कर अज्ञानी के तीनों ताप मिट जाते हैं॥ तैसे अग्नि का दा
ह नष्ट हो गया॥ तब सभ स्थान जल कर पूर्ण हो गए॥ अ
रु सिंध की सेना जल विषे वहती जावे॥ तब सिंध सोष
ता नाम अस्त्र चलाया॥ तिसकर सभ जल सूक गया॥
बहुड़ सिंध तेजनामा अस्त्र चलाया॥ तिसकर विदूरथ
की सेना गरमी कर व्याकुल भई॥ तब राजा विदूरथ मे
घनामा अस्त्र चलाया॥ तब मेघ वर्षणे लागा॥ तिसक
र गरमी नष्ट हो गई॥ जैसे आत्मा की ओर आए तें जीव का
संसरण नष्ट हो जाता है॥ तैसे विदूरथ की सेना शीतल
भई॥ तब सिंध वायुरूपी अस्त्र चलाया॥ तिसकर सूके
पत्र की न्याई विदूरथ का रथ फिरणे लागा॥ तब विदूर
थ पहाड़रूपी अस्त्र चलाया॥ तिसकर पहाड़ों की वर्षा
होवणे लागी॥ वायु का क्षोभ नष्ट भया॥ जैसे फुरणे तें रहि
त चित्त शांति हो जाता है॥ तैसे शांति होत भई॥ तब सिंध
वज्ररूपी अस्त्र चलाया॥ तब पर्वत सभ चूर्ण हो गए॥ अ
रु वज्र वर्षणे लागे॥ तब विदूरथ ब्रह्मरूपी अस्त्र चला
या॥ तब वज्र नष्ट हो गए॥ हे रामजी जब इनका परस्पर
युद्ध होत भया॥ जब सिंध अस्त्र चलावे॥ तब विदूरथ उ
सको विदारण करे॥ अरु जो विदूरथ अस्त्र चलावे॥ ति
सको सिंध विदारण करे॥ विदूरथ राजा ने एक अैसा अ
स्त्र चलाया॥ जो राजा सिंध का रथ चूर्ण कर डारता॥ घो
ड़े भी भस्म कर डारे॥ सिंध राजा रथ तें निकस खड़ा
होया॥ बहुड़ सिंध अैसा अस्त्र चलाया॥ जो विदूरथ
का रथ अरु घोड़े भस्म भये॥ तब दोनों ढालां अरु खड्
ग लेकर उतर पड़े॥ युद्ध करणे लागे॥ बहुड़ दोनों के
रथवाई और रथ ले आए॥ तिसके ऊपर आरूढ होके

रयुधकरणेलागे॥ विदूरथसिंधकोंनरछीचलाई॥ त
बउसकेरिदविषेलागी॥ अरुरुधिरचल्या॥ तबविदूर
थकीलीलादेवीजीकोंकहा॥ हेदेवीजीमेरेभरताकीजय
हूईहै॥ सिंधकोंमार्‍याहै॥ हेरामजीइसप्रकारलीलाक
हतीथी॥ जोबडूडसिंधनरछीचलाई॥ विदूरथकेरिद
विषेलागी॥ तिसकोंदेखकरविदूरथकीलीलाशोकवा
नभई॥ अरुकहतभई॥ हेदेवीजीमेराभरतातोमरताहै
सिंधदुष्टबडाकष्टदीयाहै॥ हेरामजीऐसेकहतीथी॥
जोसिंधखड्गचलाया॥ विदूरथकीटंगाकाटीगई॥ बडू
डगोदेकाटढाये॥ तोभीविदूरथयुधकरतारहा॥ बडू
डविदूरथकेसिरपरखड्गकाप्रहारकीया॥ तबविदूर
थमूर्छीहोकरगीडपडा॥ जैसेदेषकरविदूरथकीली
लामूर्छीहोतभई॥ विदूरथकाजोरथवाहीथा॥ सोरथकों
दौडाइकरग्रहकोंलेआवणेलागा॥ तबसिंधतिसके
पाछेंदोडता॥ जोइसकासीसमइकाटलेवों॥ जैसेबोतर
केपकडनेकोंसिंहदोडे॥ तैसेदोड्या॥ परपकिडनसक्या
जैसेअग्निविषेमछरप्रवेशनहींकरसकता॥ तैसेदेवी
जीकेगुननावकरपकिडनसक्या॥ ॥इतिश्रीउतप
तप्रकरणेविदूरथमर्लीनंनामसर्गः॥ ३५ ॥श्रीव
सिष्टोवाच॥ हेरामजीतबरथवाहीराजाविदूरकोंग
हविषेलेआया॥ स्त्रीबांधवकुटुंबीरुदनकरणेलागे
अरसिंधकीसेनालूटणेलागी॥ हस्तीघोडारथस्वामी
विनाफिरें॥ तबनगाराहोवणेलागा॥ जोराजासिंधकीजय
होवेजयहोवे॥ बडूडढिंढोराफिराया॥ शांतिभई॥ सिंध
राजेकेऊपरछत्रफिरणेलागा॥ सप्तपृथ्वीकाराजजेसिं
धराजाकाहूया॥ जैसेक्षीरसमुद्रतेंमंदराचलनिकसें
शांतभई॥ तैसेसर्वओरशांतिभई॥ हेरामजीजबविदू
रथराजागृहविषेआनपडा॥ घाइलहूया॥ तबदूसरी
लीलाकोंदेखकरप्रबुधलीलाकहतभई॥ हेदेवीजी
इहलीलाइससरीरसाथउहांकिंउकरप्राप्तहोवेगी॥ इ

इनो नरताको देखकर मलुरूप होगई है ॥ अरु राजा भीम सुके निकट पडा है ॥ कछु इक स्वास आवता है ॥ देवीयोवाच ॥ हे लीला जे ते अरिंन देखती हैं ॥ जो युध हूया है ॥ अरु नाना प्रकार का जगत है ॥ सो सभ भ्रम मात्र है ॥ अरु तेरा भरता जो राजा पद्म था ॥ तिस का रिदा जो मंडप आकाश विषे था ॥ सो वसिष्ट ब्राह्मण के मंडप आकाश विषे इस्थित है ॥ अरु उस वसिष्ट ब्राह्मण का मंडप आकाश के आश्रय इस्थित है ॥ हे लीला इह सभ जगत वसिष्ट ब्राह्मण के प्रकाश पुर्यष्टिका विषे इस्थित है ॥ सो कैसे इस्थित है ॥ आकाश विषे आकाश स्थित है कछु न होकर पडा फुरता है ॥ अरु आत्मसत्ता अपणे आप विषे स्थित है ॥ तिस आत्मसत्ता विषे अहं त्वं आदिक जगत भ्रम कर के भासता है ॥ उपजा कछु नहीं ॥ हे लीला तिस वसिष्ट ब्राह्मण के मंडप आकाश विषे नाना प्रकार के स्थान हैं ॥ अरु तिनों विषे प्राणी आवते जावते द्रिष्ट आवते हैं ॥ जैसे स्वप्न स्रिष्टि विषे नाना प्रकार के अरिंन द्रिष्ट आवते हैं ॥ सो असत्य रूप हैं ॥ तैसे इह जगत भी असत रूप है ॥ हे लीला न इह द्रिष्टा है ॥ न आगे द्रिश्य है ॥ सन्नो मात्र रूप है ॥ द्रिष्टा दर्शन द्रिश्य का भेद सरीर विषे है ॥ जो द्रिश्य नही ॥ तो द्रिष्टा कैसे होवे ॥ सन असत रूप है ॥ अरु जो इनों ते रहित परम पद है ॥ सो उदे अस्ति ते रहित है ॥ नित्य सुध अज अविनाशी अद्वैत रूप अपणे आप विषे इस्थित है ॥ जब तिस को जाणीता है ॥ तब द्रिश्य भ्रम नष्ट हो जाता है ॥ हे लीला द्रिश्य भ्रम कर के भासती है ॥ उपजी कछु नही ॥ जेते कछु सुमेर अरु पृथ्वी आदिक तत्व भासते हैं ॥ सन आकाश रूप हैं ॥ उपजे कछु नहीं ॥ जैसे स्वप्न स्रिष्टि भासती है ॥ पर उपजी कछु नही ॥ तैसे इह जगत भी जान ॥ हे लीला जीव जीव प्रति अपणी अपणी स्रिष्टि है ॥ पर तिस विषे सार कछु नहीं ॥ जैसे केले के थंभे विषे सार कछु नहीं तिस

सता॥जैसेस्वरूपविचारकरीयेतोसारकछुनहीनिकसता निषे
परचित्तसंवेदनकेफुरणेकरपडेभासतेहैं॥हेलीलाप
द्मराजाकीजोस्रिष्टहै।सोब्राह्मणकेमंडपआकाशविषे
इस्थितहै॥अरुतिसपद्मकेमंडपआकाशविषेविदूर
थकाजगतहै॥सोपद्मकेरिदेविषेइस्थितहै॥तहांतेरा
शरीरभीपडाहै॥अरुराजापद्मकाशरीरभीपडाहै॥हेली सव
लातेरेभरतापद्मकीजोस्रिष्टहै॥सोहमकोप्रदेसमात्र
है॥तिसप्रदेसमात्रविषेअंगुष्टप्रमाणरिदाकमलहै॥
तिसविषेतेरेभरताकाजीवाकाशहै॥तिसजीवाकाशा
विषेइहजगतपडाफुरताहै॥सोप्रदेसमात्रभीहै॥अरदू
रतेंदूरजोजनोंपर्यंतभीहै॥मार्गविषेवजोसारकीन्याई
तत्वोंकाआवर्णहै॥तिसतेंपरेतेरेभरताकीस्रिष्टहै॥ज
हांतेराशवपडाहै॥तिसकेपासउहलीलाजाप्राप्तभईहै॥
॥लीलोवाच॥हेदेवीजीऐसेमार्गकोलंघकरउहत्त
णविषेकैसेजाप्राप्तभई॥अरुजिसशरीरसाथजावणाथा
सोसरीरतोईहांपडाहै॥उहकिससरीरसाथप्राप्तभईहै
अरुउहांकेलोकउसकोंकैसेजाणतेदेखतेहैं॥सोसंक्षे
पतेंकहो॥देवीयोवाच॥हेलीलाइसलीलाकावृतां
तकथाकीन्याईनहीं॥इहवृतांतऐसाहै॥जिसकेध्या
रतेहूएइहजगतभ्रमनिवर्तहोजाताहै॥सोसंक्षेपतें
कहतीहों॥हेलीलाजेताकछुजगतभासताहै॥सोना
ममात्रहै॥इहनामरूपीजगतपद्मकेरिदेविषेफुरता
है॥तिसविषेविदूरथकाजन्मभीनाममात्रहै॥अरली
लाकाप्राप्तहोवणाभीनाममात्रहै॥संग्रामभीनाममा
त्रहै॥अरुविदूरथकामरणभीनाममात्रहै॥तिसके
नामरूपीजगतविषेतुमहमबैठेहैं॥सोइहलीलाभी
तूंभीराजाभीनाममात्रहै॥अरमयसर्वात्माहों॥मुजकों
सदाएहीनिश्चयरहताहै॥हमजोउदेहूएहैं॥उदेकी
न्याईहैं॥उदेनहीहूए॥हेलीलाजबतेराभरतामृतु
होवणेलागाथा॥तबतेरेविषेउसकासनेहबढ़ताथा

तिसकर मृत्यु हूए भी कमलनयन युवा अवस्था महा
सुंदर भूषणों को पहिरें हूए ॥ तुं जैसी वासना के अ
नुसार उसको प्राप्त भई ॥ हे लीला जब इह मृत्यक होता
है ॥ तब प्रथम इसको आतिवाहक सरीर होता है ॥ पा
छे तें प्रमाद कर अधिभौतिक हो जाता है ॥ तैसे तेरा भ
रता भी जब मृत्य भया ॥ तब प्रथम उसको अतिवाहक
सरीर था ॥ जब उस विषे सतत्व भावनां भई ॥ अरु पूर्व
ला सरीर भूला ॥ तब अधिभौतिक हो गया ॥ जब अधि
भौतिक हूआ ॥ तब मरण भी हूया ॥ अरु जन्म भी हूया ॥
अरु तेरा भरता जब मृतु हूया ॥ तब इसको अपना जे
न्म कुल भास आया ॥ जन्म को अर्थ इह ॥ जो जनों का स
मूह भास आया ॥ लीला का भी जन्म भास आया ॥ माता
पिता भास आए ॥ लीला साथ व्यवहार भास आया ॥ जैसे
तें पद्म को भास आई थी ॥ तैसे उह विदूरथ को भास आई
इत्यादिक नाम कर अपनी वासनों के अनुसार उस
को भास आया ॥ हे लीला आत्मसत्ता सर्वात्मा है ॥ जैसा जै
सा तिस विषे तीव्र संवेद होता है ॥ तैसा ही सिध हो आव
ता है ॥ अरु मय जो हों सो तम रूप चैतन्य शक्ति हों ॥ सो
तो मय चैतन अंसों कर पूजने योग्य हों ॥ हे लीला जैसी
जैसी इछा धारकर को उहम को सेवता है ॥ तिसको तैसी
सिधता प्राप्त होती है ॥ इसतें जो लीला मुजतें वर मांग्या
था ॥ जो भरता विनां न होवों ॥ इसी सरीर साथ भरता को
निकट जावों ॥ तब मय कहा ऐसे ही होवे ॥ तिसकर मृत्यु
मूर्छा के अनंतर तिसको अपणां सरीर भास आया ॥
अपणे सरीर साथ जहां तेरा भरता पद्म का सरीर शव प
डा है ॥ तिस ही मंडप विषे इस ही जैसे सरीर साथ उसके नि
कट जा प्राप्त भई है ॥ हे लीला उसको एही निश्चय रहा है
जो मय उस ही सरीर साथ आई हों ॥ ॥ इति श्री उत
पत्प्रकरणे लीलोपाख्याने मृत्यु मूर्छा अनंतर
प्रतिभा नाम सर्गः ॥ ३५ ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रा
मजी तिस प्रकार उह लीला पद्म राजे के आकाश विषे

जाग्रत भई है ॥ सो सुण ॥ जब वुह लीला मृत्यु मूर्छा कों प्राप्त भ
ई ॥ तिसके अनंतर उसकों पूर्वले सरीर की न्याईं वासना
के अनुसार अपणा सरीर भास आया ॥ अर वुह जानती
भई जो मैं यउसी सरीर साथ आई हौं ॥ पर देवी के वर कर
आई हौं ॥ कैंसा सरीर है ॥ अतिवाहक सरीर साथ आका
श विषे पंछी की न्याईं उडती जावे ॥ तब तिसकों अपणे आ
गे कुआरी दृष्ट आई ॥ तब लीला कहा हे देवी तूं कवन हौं ॥ त
ब देवी कहा। मय ज्ञप्त देवी की पुत्री हौं ॥ तेरे पहुचावणे कौं
आई हौं ॥ तब लीला कहा ॥ हे देवी जी मेरे ताईं मेरे भरता के
पास ले चलो ॥ हे रामजी तब वुह कुआरी आगे होई ॥ अरु
लीला पाछें लागी ॥ दोनों आकाश मार्ग को चिरकाल पर्यंत
पंखी की न्याईं निर्मल आकाश विषे उडती गईं ॥ आगे मेघों
के स्थान आए तिनकों लंघती गईं ॥ बहुड सूर्य का मंडल
आया ॥ तारामंडल आया ॥ बहुड लोकपालों के स्थान आ
ए ॥ तिनकों लंघ गईयां ॥ आगे ब्रह्मा का लोक आया ॥ तिन
कों भी लंघ गईयां ॥ बहुड विष्णु लोक आया। तिनकों भी लं
घ गईयां ॥ बहुड रुद्र लोक आया। तिनकों भी लंघ गईयां
आगे ब्रह्मांड किवाड वज्रसार की न्याईं आया। तिनकों लंघ ग
ईयां ॥ जैसे कुंभ विषे बरफ पाईए। तिसका सीतलता बाह्य
प्रगट होती है ॥ तैसे वुह ब्रह्मांड तैं बाहर निकस गईयां ॥ ति
स ब्रह्मांड तैं दसगुणे जल का आवर्ण आया ॥ तिसकों भी
लंघ गईयां ॥ इसी प्रकार अग्नि वायु आकाश तत्वों के आ
वर्ण कों भी लंघ गईयां ॥ तिसके आगे महाचेतन आकाश
आया ॥ तिसका को आदि अंत कहूं नहीं ॥ आदि अंत तैं र
हित है ॥ हे रामजी जो कोटि कल्प पर्यंत गरुड उडता जावे
तो भी तिसका अंत न पावे ॥ जैसे परम आकाश विषे गई
यां ॥ तहां इनकों कोटि ब्रह्मांड दृष्ट आए ॥ जैसे बन विषे
अनेक वृक्षों के फल होते हैं ॥ अरु परस्पर अज्ञात हैं ॥ तैं
से उनों लिंगों की परस्पर अज्ञात है ॥ तब एक ब्रह्मांड रु
पी फल विषे दोनों प्रवेश करतीं भईयां ॥ जैसे फल के मुख
मासिंग विषे कीडी प्रवेश कर जाती है ॥ तैसे उनों ने ब्रह्मां

डरूपीफलविषेप्रवेशकीया॥तिसविषेब्रह्मंडतहांब्रह्मावि
ष्णुरुद्रसहितत्रिलोकीयांदेखीयां॥तिनकोंभीलंघगईयां
तिनकेनीचेओरलोकपालोंकेस्थानलंघायां॥लंघकरत
लेआईयां॥जहांराजापद्मकानगरथा॥तिसराजापद्मका
जोमंडपआकाशथा॥तहांआनप्रवेशकीया॥जहांपद्मरा
जाफूलोंसाथढांपयापडाहे॥तहांआईयां॥तिसकोंदेखत
भईयां॥तबकुमारीअंतरध्यानहोतभई॥जैसेमायामय
पदार्थहोवे॥अरुअंतरध्यानहोजावे॥तैसेअंतरध्यानहो
गई॥अरुलीलापद्मराजाकेपासबैठरही॥अरुमनवि
षेविचारतभई॥जोइहमेराभरताहे॥जहांइससंग्रामकी
याथा॥सोअबसूरमेकीगतिकोंप्राप्तभयाहे॥इसपरलो
कविषेआयकेशयनकररहाहे॥तिसकेपासमयभीअ
पनेसरीरसाथदेवीजीकेवरकरआनप्राप्तभईहों॥मय
जैसाअबकोउनही॥मयअबबडेआनंदकोंप्राप्तभईहों॥
हेरामजीऐसेविचारकरकेपासचमरपडाथा॥तिसकों
हाथविषेलेकरभरताकोंचमरकरणेलागी॥जैसेचंद्रमा
किरणोंसाथसोभताहे॥तैसेचमरकरसोभापावे॥अरप्र
बुधलीलादेवीजीसोंपूछतीभई॥प्रबुधलीलोवाच॥
हेदेवीजीराजातोमृतकहोताहे॥इसकेस्वासअबछोडर
हतेहें॥जबईहांतेमृतकहोकरपद्मकेसरीरविषेजावे
गा॥तबराजेकेलोकपंहूएमंत्रीटहिलूएकैसेजाणेगे॥
देवीयोवाच॥हेलीलामंत्रीटहलूएजोहोवेंगे॥तिनको
इहदेखतकलेभीकछुनभासेगा॥जोआश्चर्यहूयाहे॥इस
वृत्तांतकोंनजाणेगी॥ओरकोउनजाणेगा॥काहेतेंजोउन
केसंकल्पकोंअवरकोउकैसेजाणे॥लीलोवाच॥हेदे
वीजीलीलाजोउहांजाप्राप्तभईथी॥सरीरतोईहांपडाहे
अरतुमाराउसकोवरभीथा॥इससरीरसाथकिंउनप्रा
प्तभई॥देवीयोवाच॥हेलीलाछायाभीकहीधूपवि
षेगईहे॥अरुसाचझूठभीकबीएकठेभएहें॥इहआ
देनेतहे॥जोजैसेआदिहूयाहे॥तैसेहीहोताहे॥अन्यथान
हीहोता॥हेलीलापिछानेंविषेजोचेतात्मककल्पनामिटी॥

तो पिछावां अरु वैताल एक वे नही होते ॥ तैसे नर्मरूप ज
गत का सरीर उस जगत विषे नही जाता ॥ जैसे स्वप्न के स
रीर साथ पुरुष जागत विषे नही आवता ॥ काहे ते जो इ
ह अवर है ॥ अरु उह अवर है ॥ तैसे उन के जगत विषे इ
न के संकल्प का सरीर नही प्राप्त होता ॥ अरु मेरे वर क
रण ते हूया ॥ जो जब मृत्यु मूर्छा प्राप्त भई ॥ तब उसको इ उसको
स ही जैसा सरीर भासया ॥ अरु उस का जो सरीर था ॥ सो
संकल्प विषे इस्थित था ॥ सो अपणा संकल्प उह साथ
ले गई है ॥ ऐसे आपको जाणती भई है ॥ तां ते उह अप
ले उसी सरीर साथ गई है ॥ जो मय उही लीला हों ॥ हे लील
आत्मसत्ता सर्वात्म स्वरूप है ॥ जैसी जैसी भावना आ
त्मसत्ता विषे दृढ होती है ॥ तैसा रूप इस का हो जाता है ॥
जिसको इह निश्चे हूया है ॥ जो मय पंच भौतक शरीर
हों ॥ तिसको ऐसे दृढ होता है ॥ जो मय उड नही सकता
हे लीला इह जो लीला थी सो अज्ञान सहित थी ॥ साधिभौ
तिक भ्रम इस का नही निवर्त भया ॥ अरु मेरा वर जो था
इस कारण ते उसको मृत्यु मूर्छा के अनंतर भास आया
है ॥ जो मय देवी जी के वर कर रचता जावणा है ॥ इस वास
ना की दृढता कर के जा प्राप्त भई है ॥ हे लीला इह जगत ना
म मात्र है ॥ जैसे जेवडी विषे सर्प नाम कर के भासता है ॥ तैं
से आत्मा विषे जगत नाम कर के भासता है ॥ सभ जगत
आत्मा विषे नाम मात्र है ॥ सर्व का अधिष्टान आत्मसत्ता आत्मस्वरूप
अपणा आप है ॥ अज्ञान कर के अवर भासता है ॥ हे ली
ला जो ज्ञानवान पुरुष हैं ॥ सो सदा आत्मसत्ता आनंद क
रत रहते हैं ॥ अरु जो अज्ञानी हैं सदा असांत रूप अ
त्रिप्त होते हैं ॥ जैसे जिसको ताप चड्या होता है ॥ तिसको अं
तर पडा जलता है ॥ अरु त्रिषा भी बहुत लागती है ॥ तैं
से जिसको अज्ञानरूपी ताप चड्या है ॥ तिसका अंतर पै रागद्वेष कर
डा जलता है ॥ अरु विषयों की त्रिष्णा रूपी त्रिषा भी बहुत
होती है ॥ अरु जिसका अज्ञानरूपी ताप नष्ट भया है ॥ सो
रागद्वेष ते नीरहित होया है ॥ तिसकी विषयों की त्रिष्णा

रूपी त्रिषा भी भ्रांति होती है ॥ ॥ इति श्री उतपतप्रक
रणे लीलोपाख्याने नाम सर्गः ॥ ३६ ॥ श्री देवीयोवाच
हे लीला जिस पुरुष ज्ञानी ने योगपद को नही जान्या जो
बडा पुंन्यवान होवे तो भी अतिवाहकता तिस को प्राप्त
नही होती ॥ पर अतिवाहक सरीर भी झूठ है ॥ काहे तें
जो उह भी संकल्प रूप है ॥ तां ते जेता कछु जगत तुज कों
भासता है ॥ सो उपजा कछू नही ॥ शुध चिदाकास सत्ता
अपणे आप विषे स्थित है ॥ लीलोवाच ॥ हे देवी जी
इह सर्व जगत संकल्प रूप है ॥ अभाव रूप है ॥ तो भाव
पंचरत्न रूप कैसे होते हैं ॥ अरु अभाव रूप कैसे होते हैं ॥ अगनि
उश्न रूप है ॥ अरु पृथिवी स्थिर रूप है ॥ जल सीतल रू
प है ॥ आकास सत्ता है काल सत्ता है ॥ कोई स्थूल पदार्थ
है ॥ कोई सूक्षम पदार्थ है ॥ ग्रहण त्याग जन्म मृत्यु होता
इत्यादिक सत्ता कैसे भासती है
है ॥ मं सुण्या बहुड जन्मता है ॥ देवीयोवाच ॥ हे ली
ला जब महाप्रलय होती है ॥ तब सर्व पदार्थ अभाव हो
जाते हैं ॥ अरु काल सत्ता भी नष्ट हो जाती है ॥ तिस के पा
छे अनंत चिदाकास सर्व कलना तें रहित बोध मात्र स
त्ता ही रहती है ॥ तिस चैतन्य मात्र सत्ता तें जब चित संवि
त चेतती है ॥ तब चैतन्य संवित आप को तेजअणु जाण
ती है ॥ जैसे कोउ आपकों स्वप्न विषे पंखी रूप उडता दे
खे ॥ तैसे देखती है ॥ तिस तें आपकों स्थूल देखती है ॥ सो
स्थूलता ब्रह्मांड रूप होती है ॥ तिस विषे तेजअणु आ
प को ब्रह्मा रूप जानती है ॥ जो मय ब्रह्मा हों ॥ बहुड ब्रह्म
रूप हो कर जगत को रचती है ॥ जैसे जैसे ब्रह्मा चेतता
जावे ॥ तैसे तैसे स्थिरता होती जावे ॥ आदि रचना कर जै
सा निश्चा धारता है ॥ जो इह ऐसे होवे ॥ अरु एता काल
रहे ॥ तिस का नाम नेत कृया है ॥ आदि रचना नेतकर
कृयी है ॥ सोई जिंउ की तिउ होती है ॥ तिस के निवारण कों
कोउ समर्थ नहीं ॥ काहे तें जो मन संकल्प मात्र है ॥ अरु
कालवतें आदि ब्रह्मा भी उपजा नहीं ॥ तो जगत का उप

जणाकैसेकहों॥ हेलीलास्वरूपतेंकछुउपजानहीं॥ पर
चैतन्यसंवितफुरणेकरजगतरूपहोभासतीहै॥ तिसा
विषेजैसानिश्चयधारताहै॥ तैसाइस्थितहै॥ अग्निउश्न
है॥ बरफशीतलहै॥ पृथवीस्थिररूपहै॥ जैसेस्वभावदि
खेउपजेहैं॥ तैसेहीस्थितहै॥ हेलीलाजोचेतनहै॥ तिसउ
परतीनितहै॥ जोउपदेशकाअधिकारीहै॥ अरुजोजड
है॥ तिसविषेजडहीस्वभावहै॥ जोआदिचित्तसंवितवि
षेआकाशकाफुरणाहूयाहै॥ तबआकाशरूपहोकर
स्थितहूयाहै॥ जबकालकोस्पंदफुरताहै॥ तबउहीसं
वितचैतन्यकालरूपहोकरस्थितहोतीहै॥ जबवायुकी
चेतनाहूई॥ तबवायुहोकरचैतन्यसंवितस्थितहोती
है॥ इसीप्रकारअग्निजलपृथवीहोकरस्थितभईहै॥
जैसेस्वप्नेविषेचैतन्यसंवितहीसर्वपदार्थहोकरस्थित
होतीहै॥ तैसेहीचैतन्यसंवितजगतरूपहोकरस्थितहो
तीहै॥ हेलीलाजैसेजैसेआदिनेतविषेपदार्थोंकासंक
ल्पधारताहै॥ तैसेहीस्थितहै॥ तिसकेनिवारणेकोसम
र्थकोऊनहीं॥ काहेतेंजोतीव्रअभ्यासचैतन्यसंवितकी
याहै॥ जबउहीसंवितउलटकरअवरप्रकारस्पंदहो
वे॥ तबविपरीतहोजावे॥ तातेंअन्यथानहीबणता॥ हे
लीलाइहजगतसत्यनहीं॥ जैसेस्वप्नपुरअसत्यहोताहै
जैसेध्याननगरअसत्यहोताहै॥ तैसेइहजगतभीअस
त्यरूपहै॥ अज्ञानकरकेसत्यकीन्याईहोभासताहै॥ जैं
सेस्वप्नकेपदार्थअसतहीसतहोभासतेहैं॥ तैसेइहज
गतअज्ञानकरकेअसतहीसतहोभासताहै॥ जैसेजन
ममृत्युकर्मोंकाफलहोताहै॥ सोसुण॥ हेलीलाबडाअ
रुछोटाजोहोताहै॥ सोदेसकालक्रियाद्रव्यकरहोता
है॥ एकबालिकअवस्थाविषेमृत्युहोतेहैं॥ एकयोवनअ
वस्थाविषेमृत्युहोतेहैं॥ जिसकीक्रियायथाशास्त्रहोती
है॥ तिसकीआयुभीयथाशास्त्रहोतीहै॥ अरुजिसकी

क्रियाआरम्भविरुधहोतीहै॥ तबआर्बलाभीतिसकीतैं
सीहोतीहै॥ एकक्रियाऐसीहोतीहै॥ जिसकरआयुव्र
धहोतीहै॥ अरएकक्रियाऐसीहोतीहै॥ जिसकरआयु
घटतीहै॥ इसीप्रकारदेसकालक्रियाद्रव्यआयुकेघटा
वणेवधावणेहारेहैं॥ तिनोंकरजीवोंकेसरीरछूटतेहैं॥
इहआदिनेतहूईहै॥ युगोंकीमर्यादाजैसीहूईहै॥ तैसी
हीइस्थितहै॥ एकदिव्यसउवर्षकलियुगकी॥ दोदिव्यस
उवर्षद्वापुरकी॥ त्रयदिव्यसउवर्षत्रेताकी॥ चारदिव्यस
उवर्षसतयुगकी॥ एदिव्यवर्षहैं॥ अरुलोकिकवर्षइस
प्रकारहैं॥ चारलक्षबत्रीसहजारकलियुगहै॥ अठलष
चौअठहजारद्वापुरहै॥ बाहरांलक्षछिनवेहजारत्रेता
है॥ सत्तारांलक्षअठाईहजारसतयुगहै॥ इसीप्रकारयु
गोंकीमर्यादाहै॥ तिसविषेजीवअपणेकर्मोंकेफलक
रआयुकोंभोगतेहैं॥ हेलीलाजोपापकरणेहारेहैं॥ जब
मृत्युहोतेहैं॥ तिनकोंमृत्युकालविषेभीवडाकष्टहोताहै॥
॥लीलोवाच॥ हेदेवीजीमृत्युहूयेंसुखअरुदुःखकैं
सेहोताहै॥ अरुकैसेभोक्ताहै ॥देव्योवाच॥ हेली
लातीनप्रकारकीमृत्युहोतीहैजीवोंकों॥ एकमूर्खकोंमृ
त्युहोतीहै॥ दूसरीधारणाअभ्यासीकोंमृत्युहोतीहै॥ तीस
रीज्ञानवानकोंमृत्युहोतीहै॥ तिनकाभिन्नभिन्नवृतांत
सुण॥ हेलीलाजोधारणाअभ्यासीहै॥ सोजिसइष्टदेवकी
उपासनाकरताहै॥ मृत्युकेअनंतरसरीरकोंधारकरति
सहीदेवताकोंप्राप्तहोताहै॥ इहधारणाअभ्यासीकीमृ
त्युकही॥ अरुजोब्रह्मअभ्यासीहै॥ तिनकासुखयनहीं
सरीरछूटताहै॥ जौंजागततेंसुषुप्तहोतीहै॥ अरुधारणा
अभ्यासीमृत्युकेअनंतरसुषदुःषकोंभोगकरफेरआ
त्मतत्वकोंप्राप्तहोताहै॥ अरुजबमूर्खमृत्युहोवणेलाग
ताहै॥ सोवडेकष्टकोंप्राप्तहोताहै॥ सोमूर्खकवनहै॥ जोआ
त्मांकासारविचारतानहीं॥ अरुकुसंगविषेरहताहै॥ अ

रसदा विषयों की ओर धावता है ॥ अरु जब विषयों का वि-
योग होता है ॥ तब बडे दुःख को पावता है ॥ उन विषयों के
वियोग का ॥ लीलोवाच ॥ हे देवी जी जब इह मृत्यु होता
है ॥ सरीर तो ईहां छोड जाता है ॥ तब कष्ट कैसे पावता है ॥
॥ देवीयोवाच ॥ हे लीला जो कछु इस जीव अहंभाव को
लेकर कर्म कीये हैं ॥ सो एकठे हो जाते हैं ॥ समें कर आन प्र-
गट होते हैं ॥ जैसे समे कर बीज बोया हूया फल देता है ॥
तैसे इसको कर्म वासना का फल प्राप्त होता है ॥ जब इसका
सरीर छूटता है ॥ तब पदार्थों के वियोग का बडा दुःख पा-
वता है ॥ हे लीला इह जन्म मरण भी जो तत कर के भासता है
आत्मा विषे कोऊ नहीं ॥ संवित मात्र विषे जो संवेदन फुर-
ती है ॥ सो आप स्वभाव सत्ता की न्याई हो कर स्थित होती है
तब जन्म मृत्यु तिस विषे भासते हैं ॥ जैसी वासना होती है ॥
तिसके अनुसार सुख दुःख का अनुभव करता है ॥ जैसे
कोऊ पुरुष नदी विषे प्रवेश करता है ॥ तिस विषे कहूं ब-
डा जल होता है ॥ कहूं छोटा जल होता है ॥ तैसे जैसी वास-
ना होती है ॥ तिसके अनुसार सुख दुःख का अनुभव होता
है ॥ वासना रूपी गर्त विषे बऊड गिरता है ॥ जैसे वल्ली वि-
षे गंढी होती है ॥ तैसे संवेदन विषे जन्म मरण कलनां हो-
ती है ॥ अरु चैतन्य मात्र विषे कोऊ कलना नहीं ॥ अनेक स-
रीर नष्ट पडे होते हैं ॥ अरु चैतन्य सत्ता जिउं की तिउं रहती
है ॥ जो चैतन्य सत्ता ही मृत्यु होवे ॥ तब एक के नष्ट हूए सब न-
ष्ट हो जावें ॥ सो ऐसे तो नहीं ॥ चैतन्य सत्ता कर अनेक का-
र्य सिध होता है ॥ सो कैसे मरे ॥ जो इह चैतन्यता न होवे तब कार्य
सिध कोऊ न होवे ॥ हे लीला चैतन्य सत्ता जो है ॥ सो न जन्मती
है ॥ न मरती है ॥ सर्व कलनां ते रहित चिन्मात्र रूप है ॥ तिसका
किसी काल विषे नास नहीं होता ॥ जन्म मरण की कलनां सं-
वेदन विषे होती है ॥ चैतन्य चिन्मात्र विषे कछु हूया नहीं ॥
हे लीला मृत्यु सोई होता है ॥ जिसके निश्चै विषे सद्भाव हो मृत्यु का
ता है ॥ जिसके रिदे विषे मृत्यु का सद्भाव नहीं ॥ सो कैसे मरे ॥
जब इसको मृत्यु का अत्यंताभाव होवे ॥ तब बंधनों ते मुक्ति.

होवे ॥ वासना ही इसकों बंधन का कारण है ॥ जब वासनां तें
मुक्ति होता है ॥ तब बंधन को ऊ नही रहता ॥ हे लीला आत्म
विचार करता न होता है ॥ अरु ता न करके दृश्य को असत्यं
ता नाव होता है ॥ जब दृश्य का असंता भाव हूआ ॥ तब वास
ना नष्ट हो जाती हैं ॥ का हे तें जो इह जागत उदे हूआ नहीं ॥ उ
दे हूये की न्याई भासता है वासना करके ॥ ता तें वासना का
त्याग कर ॥ जब वासनां निवृत भई ॥ तब बंधन को ऊ न र
हेगा ॥ ॥ इति श्री उतपत प्रकरणे मृत्यु विचारो नाम
सर्गः ॥ ३८ ॥ लीलोवाच ॥ हे देवी इह मृत्य कैंसे होता है
अरु जन्म कैंसे लेता है ॥ मेरे बोध की दृड़ता निमित सब कुछ
कहो ॥ देव्योवाच ॥ हे लीला इसके अंतर प्राण अपा
न की एक कला है ॥ तिसके आश्रय इह सरीर रहता है ॥ ज
ब लग प्रारब्ध करम होता है ॥ तब लग मो का है ॥ जब मृत्यु
होवने लागता है ॥ तब प्राण वायु अपने स्थान को त्यागती
है ॥ तब नाडी स्थल हो जाती है ॥ जब पुर्यष्टि का शरीर मों नि
कस जाती है ॥ तब प्राण कला भी टूट जाती है ॥ अरु चैतन्यता
जडीभूत हो जाती है ॥ तब इसकों लोक प्रेत कहते हैं ॥ अर्थ
इह ॥ जो शरीर थों परे हूया है ॥ ता तें इसको प्रेत कहते हैं ॥ हे
लीला इसके चित्त की चैतन्यता जडीभूत हो जाती है ॥ केवल
जो ब्रह्म सत्ता है सो जिंउ की तिंउ रहती है ॥ सो स्थावर जंगम ज
गत विषे व्यापर ही है ॥ आकास वायु अग्नि पृथिवी जल वि
षे व्यापी हूई है ॥ अरु उदे अस्ति तें रहित है ॥ हे लीला जब जी
व कों मृत्यु मूर्छा होती है ॥ तब प्राण पवन आकाश विषे इ
स्थित होती है ॥ तिस प्राण विषे चैतन्यता जडीभूत होती है ॥
पर चैतन्यता विषे वासनां होती है ॥ ऐंसी जो प्राण चेतना है
सो वासनां कों ले कर आकाश विषे आकाश रूप होइ के
स्थित होती है ॥ जैंसे गंध कों ले कर वायु स्थित होती है ॥ तैं
से वासनां को ले कर चैतन्यता स्थित होती है ॥ हे लीला अप
ने प्रदेश मात्र विषे स्थान सों अपनी वासना के अनुसार
जगत फुर आवता है ॥ तिस विषे मृत्यु हूये के अनंतर देस
काल क्रिया पदार्थ भासते हैं ॥ सो मृत्यु तीन प्रकार की है

एक पुन्यात्मा की मृत्यु है ॥ एक पापीयों की मृत्यु है ॥ जब बडा
पापी मृत्यु होता है ॥ तब जडीभूत हो जाता है ॥ घन पाषाण की
न्याई सहस्र वर्षों पर्यंत मूर्छा विषे रहता है ॥ अरु केई ऐसे
जीव हैं ॥ तिन कों मूर्छा विषे भी दुःख होता है ॥ जैसे बाह्यइं
द्रीयों को दुःख होता है ॥ तैसे अंतर तें दुःखी पडे होते हैं ॥ इ
सतें अनंतर उसकों चेतना फुरन आवती है ॥ अपणे साथ
सरीर कों देखता है ॥ पशु आदिक जूनी को भोक्ता है ॥ तिस
कों भोग कर मानुष सरीर कों पावता है ॥ महानीच गति निर्ध
नों के गृह विषे जन्म लेता है ॥ तहां भी दुःखों कर तपता रह
ता है ॥ मध्यम अधम पापी की मृत्यु सुण ॥ जब उह मृत्युक हो
ता है ॥ तब उह वृक्ष की न्याई मूर्छा हो जाता है ॥ कोई काटता है
तब अंतर दुःख कर पडा जलता है ॥ बहुड चेतना फुरन आव
ता है ॥ तब तिर्यग योनी कों भोगता है ॥ तिनकों भोग कर बहु
ड मानुष सरीर कों पावता है ॥ हे लीला जब अल्प पापी मृत्यु
होता है ॥ तब मूर्छा हो जाता है ॥ केते काल तें उनकों चेतना फु
रन आवती है ॥ पशु आदिक सरीर कों पाकर दुःख सुख भो
गता है ॥ बहुड वासना के अनुसार मानुष सरीर कों पावता
है ॥ तब सुख दुःख का भोगता होता है ॥ अरु जब पुण्यात्मा
मृत्यु होता है ॥ तब उनके निमित्त विमान आवते हैं ॥ तिन पर
आरूढ होकर स्वर्ग को जाता है ॥ जिस इष्ट देव की वासना
इसकों दृढ होती है ॥ सो तिसके लोक कों जाता है ॥ तहां जा
कर स्वर्ग सुख भोगता है ॥ जैसे कर्म कीये होते हैं ॥ तैसे सुख
भोगता है ॥ बहुड भोग कर उहां तें गिडता है ॥ किसी फल विषे
स्थित होता है ॥ तिस फल कों मानुष भोजन करते हैं ॥ तब वी
र्य जाइ होता है ॥ वीर्य होकर माता के गर्भ विषे जाता है ॥ ब
हुड मानुष जन्म कों पाकर संतजनों के संग प्राप्त होता कों
है ॥ अक्षय सुख कों पावता है ॥ अरु जगत के कलेषों तें छू
टता है ॥ हे लीला जब मध्यम पुन्यवान मृत्यु होता है ॥ तब सी
घ्र ही चेतना फुरन आवती है ॥ स्वर्ग सुख कों भोगता है ॥ अपने
पुण्य के अनुसार स्वर्ग सुख कों भोग कर गिडता है ॥ किसी
फल विषे इस्थित होता है ॥ उस फल कों पुरुष भोजन क
रता है ॥ तब वीर्य होकर माता के गर्भ विषे आवता है ॥ बा

सनोंके अनुसार मानुष जन्म लेता है॥ अरु सुखोंको भो
गता है॥ अरु अल्प धर्मों का मृत्यु होता है॥ तब उसको इह
फुर आवता है॥ मेरे बांधवों मेरी पिंड क्रिया करी है॥ मैं य
परलोक को चला जाता हों॥ तब परलोक को चल्या जाता
है॥ तब पितृलोक के सुख भोग कर गिरता है॥ तब धान्य
विषे आन इस्थित होता है॥ तब धान्य को पुरुष भोजन क
रता है॥ तब वीर्य द्वारा माता के गर्भ विषे आवता है॥ बहुड़
जन्म पाकर कर्मों के अनुसार सुख दुःख को भोगता है॥ हे
लीला जीव आत्मपद के प्रमाद कर इस प्रकार जन्म मर
ण को पावता है॥ बहुड़ बहुड़ गर्भ विषे आवता है॥ बालि
क यौवन वृद्ध अरु मृत्यु अवस्था को प्राप्त होता है॥ बहु
ड़ वासनों के अनुसार परलोक को देखता है॥ जैसे स्वप्ने वि
षे स्वप्नांतर को देखीता है॥ तैसे अपणी कल्पना कर जग
त भ्रम फुर आवता है॥ स्वरूप तें किसी को कछु भ्रम नहीं॥
आकाश रूपी ही आकाश विषे इस्थित है॥ भ्रम कर के ज
न्म मरण विकार भासते हैं॥ ॥लीलोवाच॥ हे देवी जी पर
ब्रह्म विषे इह जगत भ्रम कैसे उदे हूए हैं॥ मेरे बोध की दृ
ढता निमित्त कहो॥ ॥देव्योवाच॥ हे लीला वास्तव तें स
न आत्म स्वरूप है॥ पहाड़ वृक्ष पृथिवी आदिक आकाश
स्थावर जंगम जेताक कछु जगत है॥ सो सभ आत्म रूप है॥
हे लीला तिस आत्म संवित आकाश विषे जब संवेदन
आभास फुरता है॥ तिस कर जगत भ्रम भासता है॥ आदि
संवेदन जो संवित मात्र विषे फुरी है॥ सो ब्रह्मा रूप होकर
स्थित भया है॥ बहुड़ जैसे चेतता भया है॥ तैसे होकर स्थित
भया है॥ स्थावर जंगम जगत जेताक कछु चितव्या है॥ सो हूया
है॥ हे लीला सरीर जो हूया है॥ तिस विषे नाडी हैं॥ तिस नाडी
विषे छिद्र हैं॥ तिन छिद्रों विषे प्राण स्पंद रूप होकर विच
रता है॥ तिसको जीव कहीता है॥ जब बहुड़ जीव निकस
जाता है॥ तब सरीर मृतक कहीता है॥ हे लीला जैसे जैसे
आदि संवित मात्र विषे संवेदन फुरी है॥ तैसे अब लग।
स्थित है॥ जब चेतया जो मय जड़ होवों॥ तब जड़ रूप पृथि

वी अप तेत वायु आकाश पर्वत वृक्षादिक होकर स्थित
भई ॥ जडकी भावना कर जड हुई ॥ चैतन्यकी भावना कर
चैतन्यरूप होके इस्थित भई है ॥ हे लीला जिस विषे प्राण
क्रिया भासती है ॥ सो जंगमरूप बोलते चालते हैं ॥ अरु
जिस विषे प्राणस्पंद क्रिया नही पाईती ॥ सो स्थावररूप
हैं ॥ अरु आत्मसत्ता विषे दोनो तुल्य हैं ॥ जैसे जंगम हैं ॥ तै
से स्थावर हैं ॥ अरु दोनो चैतन्य हैं ॥ जैसे जंगमों विषे चैत
न्यसत्ता है ॥ तैसे स्थावरों विषे चैतन्यसत्ता है ॥ अरु जो तें
कहें ॥ जो स्थावरों विषे चैतन्यता भासती किउं नही ॥ तिस
का उत्तर सुन हे ॥ जैसे उत्तर दिशाके समुद्रवाले मानु
षोकी बोलीकों दक्षिण दिशाके समुद्रवाले नही समझ
ते ॥ अरु दक्षिण दिशाके समुद्रवाल्यों की बोली उत्तर
दिशाके समुद्रवाले नही समझते ॥ तैसे स्थावरों की बो
ली जंगम नही समझते ॥ अरु जंगमों की बोली स्थावर
नही समझते ॥ अरु अपणी विषे चैतन्य हैं ॥ उसका ज्ञान
उसको नही ॥ अरु उसका ज्ञान उसकों नहीं ॥ हे लीला आ
दि जो संवित विषे संवेदन फुरी है ॥ जैसे फुरी है तैसा रूप
होकर महाप्रलयपर्यंत इस्थित है ॥ अन्यथा नही होती
जब तिस संवित विषे आकाश संवेदन फुरी है ॥ तब आ
काश होकर स्थित भई ॥ जब उष्णता को चेतया ॥ तब अ
ग्निरूप हो स्थित भई ॥ जब द्रवता को चेतया ॥ तब जल
रूप होकर स्थित भई ॥ जब स्पंदता को चेतया ॥ तब वायु
रूप होकर स्थित भई ॥ जब गंध को चेतया तब पृथ्वी
होकर स्थित भई ॥ इसी प्रकार जिस जिसकों चेतती भई
सो सोई पदार्थ प्रगट भए ॥ आत्मसत्ता विषे प्रतिबिंबित
भये ॥ पर वास्तव तें न कोऊ स्थावर है ॥ न जंगम है ॥ केवल
ब्रह्मसत्ता जिउं की तिउं अपणे आप विषे इस्थित है ॥
तिस विषे जगत भ्रम पडा भासता है ॥ सो उपजा कछु नही
हे लीला अब राजा विदूरथकों देख ॥ जो मृतक होता है

خاک و باد و آب و آتش بنده اند
با من و تو مرده با حق زنده اند

बोली

॥ लीलोवाच ॥ हे देवी जी इह राजा पद्म शव सरीर वाले
मंडप विषे किस मार्ग कर जावेगा ॥ अरु इसके पाछें ह
म किस प्रकार जावैंगे ॥ देवीयोवाच ॥ हे लीला इह अ
पणी वासनां के अनुसार मानुष मार्ग के राह जावेगा ॥
है चिदाकाश रूप पर अज्ञान कर के इसकों दूर स्थान
भासेगा ॥ हम भी इसही के मार्ग इसके संकल्प साथ अ
पणा संकल्प मिलाकर नाले जावेंगे ॥ जब लग संकल्प
साथ संकल्प मिलता नहीं ॥ तब लग एकत्र भाव नहीं हो
ता ॥ इसी कारण ते इसी के संकल्प साथ संकल्प मिलाक
र इसही के मार्ग जावेंगे ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी
इस प्रकार देवीजी लीला कों उपदेश कीया ॥ कैसा उपदे
श है ॥ मानो बोध का सूर्य उदै हूया है ॥ ऐसे संवाद कर
ती थी जो राजा शरीरांत होवणे लागा ॥ ॥ इति श्री
उतपत्त प्रकरणे लीलोपाख्याने संसार मरण विचा
रो नाम सर्गः ॥ ३८ ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी इस
प्रकार देवी अर लीला देखती थी ॥ जो राजे के नेत्र फाट
गए ॥ अरु सरीर नीरस होगया ॥ अरु स्वास मुख नासका
के मार्ग निकस गए ॥ जैसे काटा हूया कमल नीरस हो
जाता है ॥ तैसे राजा का सरीर नीरस होगया ॥ जो कछु चित
की चैतन्यता थी सो शरीरांत हो गई ॥ मृत्यु मूर्छा अंधे के प
विषे राजा जा पड्या ॥ अर प्राण चेतना वासनां संयुक्त तिस
आकाश विषे जा स्थित भई ॥ जैसे वायु गंध कों लेकर स्थि
त होवे ॥ तैसे प्राण चेतना वासनां संयुक्त स्थित भई ॥ पर
दोनों देवीयां उसकों दिव्य दृष्ट साथ पडीयां देखें ॥ तब रा
जा एक मुहूर्त पर्यंत मूर्छा विषे रह्या ॥ बहुड़ उसकों चेत
नां फुर आई ॥ अपणे साथ सरीर भास आया ॥ अर जाणता
भया ॥ जो मेरे बांधवां मेरा दशगात्र पिंड क्रिया करी है ॥
तिस कर इह मेरा शरीर भया है ॥ अरु धर्मराजा के स्थान
कों मुझे दूत ले चल्ये हैं ॥ हे रामजी इस प्रकार अनुभव क

रताधर्मराजाकेस्थानकोंचल्याजावे॥तिसकेपाछेंदे
वीयांभीचल्यांजावें॥जैसेवायुकेपाछेंगंधचलीजाती
है॥तैसेचलीजावें॥तबराजाविदूरथधर्मराजाकेपास
जाप्राप्तभया॥धर्मराजचित्रगुप्तकोकहा॥इसकेक
र्मविचारकरकहो॥तबचित्रगुप्तकहा॥हेभगवनइ
सकोऊआपकर्मनहींकीया॥अरुबडेबडेपुण्यकीए
हैं॥अरुभगवतीसरस्वतीकाभीइसकोंवरहै॥इसका
जोशवसरीरफूलोंसाथढांप्यापडाहै॥तिसशरीर
विषेभगवतीकेवरकरजीवप्रवेशकरणाहै॥तांतेइस
कोऔरकछुनहींकहणा॥इहदेवीयांकेवरसाथबं
धाहै॥हेरामजीऐसेउनोंकहा॥तबराजाकोउनोंअ
पणेस्थानोंतेचलादीया॥तबराजाआगेचल्याजा
वे॥अरुदेवीयांपाछेंचल्याजावें॥तबतीनोंएकब्रह्मां
डतेंलंघगए॥जिसकाराजविदूरथकीयाथा॥तिसकों
लंघकरदूसरेब्रह्मांडविषेगए॥तिसकोलंघतेपद्मरा
जाकेदेशविषेआए॥जहांफूलोंसाथढांप्याहूयाश
वशरीरपडाथा॥एकछिणविषेदेवीयांआनमिल्यां
॥रामोवाच॥हेभगवनउहतोराजामृतकभयाथा
मृतकहोकरतिसमार्गकोकैसेपछानतभया॥जोआ
नप्राप्तभया॥श्रीवसिष्ठोवाच॥हेरामजीउहविदू
रथजोमृतकभयाथा॥सोउसकीवासनांतोनष्टनभ
ईथी॥उसआपणीवासनांकरआपणेस्थानकोंआन
प्राप्तभया॥हेरामजीइहजोंतिमात्रजोजगतहै॥सोचि
दणुजीवकेरिदेविषेहै॥जैसेबटकेबीजविषेअनंत
बटवृक्षहोतेहैं॥तैसेचिदणुविषेअनंतजगतहैंसो
आपणेअंतरस्थितहैं॥तिसकोंकिंउनदेखे॥जैसेको
ऊपुरुषकिसीस्थानविषेधनकोंदबआवे॥अरुआ
पदूरदेशकोजावे॥तबधनकोंवासनांकरपडादेख
ताहै॥तैसेवासनाकीदृढताकरविदूरथदेखताभया

अरु जैसे कोऊ जीव स्वप्ने भ्रमकर किसी बडे धनवान
के गृह विषे जाउपजता है॥ भ्रमके अभाव हूए तिस
का अभाव देखता है॥ तैसे अनुभव करता भया॥ रा
मोवाच॥ हे भगवन जिसकी वासनां पाछें पिंड दा
न क्रियाकी होती है॥ अरु मृतक भया है॥ तब कैसे उह
अपने साथ देहको देखता है॥ तिसकी पिंड क्रिया हू
ई नही॥ श्रीवशिष्ठोवाच॥ हे रामजी जिस पुरुषके पि
ता माता तें पिंड क्रिया श्रवण करी है॥ तब पिंडोंकी वा
सनां इनके रिदे विषे होती है॥ सोई वासनां इसको फल रू
प होकर भासती है॥ जो मेरे पाछें मेरे बांधव पिंड दान
क्रिया करी है॥ सो इसकर मेरा सरीर हूया है॥ अपनी वा
सनांके अनुसार इस प्रकार अनुभव करता है॥ हे राम
जी सदेह होवे अथवा विदेह होवे॥ अपनी वासनांके
अनुसार इसको अनुभव होता है॥ भावनांतें इतर अनु
भव नही होता॥ चित्तरूप देह इस पुरुषकी होती है॥ जो
चित्त विषे पिंडोंकी वासना द्रिड है॥ तो अपनां पिंडाकार स
रीर जानता है॥ जैसी भावनां होती है॥ तैसा ही भासती है॥ भा
वनांके वसतें असत ही सत्त हो भासता है॥ तातें पदार्थों
का कारण भावना ही है॥ कारण विना कार्य उदे नही होता
महाप्रलय पर्यंत कारण विनां कार्य होता देख्या नहीं॥
अरु सुण्या भी नहीं॥ तातें जैसी वासनां होती है॥ तैसे का
र्यका अनुभव होता है॥ श्रीरामोवाच॥ हे भगवन जि
स पुरुषकों अपने पिंड क्रियाकी वासनां नहीं॥ उह ज
ब मृतक होता है॥ तब प्रेत वासनां संयुक्त होता है॥ जो
मय इनसों परे हों॥ अरु पाछें तिनके बांधव उसके नमि
त पिंड दान क्रिया करते हैं॥ सो पिंड क्रिया उसको प्राप्त
होती है॥ अथवा नही होती॥ बांधवोंके मन विषे दृढ भा
वनां भई॥ जो उसको प्राप्त होवेगी॥ अरु उसके मन विषे भा
वनां नहीं॥ धनके अभावतें अथवा पुत्रादिकोंके अभा
वतें उह निरास है॥ अरु किसी प्रभावतें किसी मित्र

आदिकों क्रियाकरी है ॥ सोकैंसे उसकों प्राप्त होती है अ
थवा नहीं होती ॥ तुम तो कहते हो जो भावनां के वसतें
असत भी सत हो जाता है ५ हे क्या ॥ श्रीवसिष्ठोवाच
॥ हे रामजी वासनां जो होती है ॥ सो देशकाल क्रिया द्र
व्यसंपदा पांचों कर होती है ॥ जैसी किसी की भावना दृ
ढ होती है ॥ तैसी सिद्ध होती है ॥ जिसकी कर्तव्यता बली
होती है ॥ तिसकी जय होती है ॥ अरु देह पुत्र दारा आ
दिक जो बांधव हैं ॥ सो सब इसकी वासनां रूप हैं ॥ जो ध
र्म पर वासनां दृढ होती है ॥ तौ बुध विषे प्रसन्नता उप
जआवती है ॥ पूर्व भावनां नष्ट हो जाती है ॥ अरु शुभ ग
ति कों प्राप्त होता है ॥ तांते अपने कल्याण के निमित्त शु
भ अभ्यास कीया चहीता है ॥ श्रीरामोवाच ॥ हे भग
वन जो क्रिया देश काल द्रव्यसंपदा पांचो नहीं होते ॥
तिनकी वासनां नहीं होती ॥ तिस अद्वैत तत्व तें जगत
भ्रम कैसे होता है ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी म
हाप्रलय सर्ग के आदि विषे देश काल क्रिया द्रव्यसंप
दा कोऊ नहीं रहती ॥ निमित्त कारण समुवाय कारण का
भी अभाव होता है ॥ तांते चिदात्मा विषे जगत उपजा न
हीं ॥ अरु है भी नहीं ॥ वास्तवतें दृश्य का अत्यंताभाव
है ॥ अरु जो भासता है ॥ सो ब्रह्म का कंचन है ॥ सो ब्रह्म
सत्ता सदा अपने आप विषे स्थित है ॥ जैसे अनेक
युक्तों कर मय तुजकों कहोंगा ॥ अब तें पूर्व कथा सुण
हे रामजी जब उह दोनों देवीयां तिस मंदर विषे जा प्रा
प्त भईयां ॥ तब देख्या ॥ जो महाफूलों कर सुंदर शीतल
स्थान बण्या हूया है ॥ जैसे वसंत रुत विषे वन भूमिका
सोभती है ॥ तैसे स्थान शोभता है ॥ अरु प्रातःकाल की
समा है ॥ स्वर्ण के कुंभ जलसाथ भरे मंगल रूप पड़े
हैं ॥ दीपकों की प्रभा मिट गई है ॥ किवार चढे हूए हैं
अरु मंदर विषे लोक सोए हूए हैं ॥ तिनके स्वास आ
वते जाते हैं ॥ महा सुंदर झरोखे हैं ॥ जैसे संपूर्ण कलाक
र चंद्रमा शोभता है ॥ तैसे सुंदर स्थान शोभता है ॥ जि

सकमलतें ब्रह्माजी उपजा है ॥ जैसा उह कमल सुंदर
है ॥ तैसे सुंदर स्थान मंदर कौं देख्या ॥ ॥ इति श्री
उतपतप्रकरणे मरणानंतर अवस्था वर्ननं ना
म सर्गः ॥ ३९ ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी जब
दोनों देवीयां तिस शव के पास विदूरथ की लीला को
देखत भईयां ॥ जो उसके मृत्यु तें प्रथम भई हां आनप्रा
प्त भई है ॥ पूर्व जैसे वस्त्र भूषण पहिरे हूए ॥ पूर्व जैसे
आचार है ॥ पूर्व जैसा सुंदर सरीर है ॥ तिस लीला कौं दे
खत भईयां ॥ जो महा सुंदर फूलों के ऊपर बैठी है ॥ सो
लक्ष्मी के समान भासती है ॥ मानो विष्णु के समान रा
जा है ॥ तिस लीला कौं कछुइक चिंता सहित देखत भ
ईयां ॥ जैसे दिन के समे चंद्रमा की मध्यम प्रतिभा होती
है ॥ तैसे कछुइक चिंता सहित राजा के वामे और बैठी
है ॥ एक हाथ के आधार चिबक राखी है ॥ अरु दूसरे
हाथ कर राजा को चमर करती है ॥ तिस लीला को दोनों
देखत भईयां ॥ अरु उह लीला इनकों न देखत भई ॥ का
हे तें जो इह दोनों प्रबुधात्मा हैं ॥ अरु सत्य संकल्प हैं ॥
अरु उह लीला इनके समान प्रबुध न थी ॥ तिस कार
ण तें उह न देखती भई ॥ श्रीरामोवाच ॥ हे भगवन
तिस मंडप आकाश विषे जो पूर्व लीली लीला देह कों स्था
पन कर ध्यान विषे विदूरथ की सृष्टि देखणे को गई
सरस्वती साथ ॥ सो तिस देह का तुम वर्ननन कछु न कीया
जो उस देह की क्या दशा भई ॥ अरु कहां गई ॥ तिस का बृ
तांत कहो ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी लीला कहां
थी ॥ अरु लीला का सरीर कहां था ॥ तिस की सत्ता कहां
थी ॥ उह तो अरुंधती के मन विषे लीला का सरीर भ्रांति
प्रतिभा हूई थी ॥ जैसे मारुथल विषे जल की प्रतिभा हो
ती है ॥ तैसे लीला के सरीर की प्रतिभा हूई थी ॥ हे रामजी
इह आधिभौतिक अज्ञान कर के भासता है ॥ बोध कर

के आधिभौतिकता नष्ट हो जाती है ॥ जब तिस लीला कों
बोध विषै प्रणाम कीया ॥ तब तिसका आधिभौतिक निवृ
त्त होगया ॥ जैसे सूर्य के तेज कर बरफ का पुतला गल
जाता है ॥ तैसे ज्ञान कर के तिसकी आधिभौतिकता नष्ट
होगई ॥ अरु आतिवाहकता आन उदै भई ॥ हे रामजी जे
ता कछु जगत है ॥ सो सब आकाशरूप है ॥ जैसे जेवड़ी
विषै सर्प भ्रम कर के भासता है ॥ तैसे आतिवाहकता वि
षै आधिभौतिकता भासती है ॥ आदि सरीर आतिवाह
क है ॥ अर्थ यह जो आतिवाहक संकल्पमात्र है ॥ तिस
विषै जो दृढ भावना होगई ॥ तिस कर पृथ्वी आदिक त
त्वों का सरीर भासणे लागा ॥ वास्तव तें न कोऊ भूतादि
क तत्व हैं ॥ न कोऊ तत्वों का सरीर है ॥ इनका ञाष्ट अर्थ
ससे के सिंगों की न्याई है ॥ हे रामजी आतिवाहक विषै
अज्ञान कर के आधिभौतिकता भासती है ॥ जब आ
त्म बोध होता है ॥ तब आधिभौतिकता नष्ट हो जाती है
जैसे कोऊ पुरुष स्वप्ने विषै आपको हरण देखै ॥ अरु ज
ब जाग उठा ॥ हरण का सरीर कोऊ दृष्ट नहीं आवता
तैसे अज्ञान कर के आधिभौतिकता दृष्ट आई है ॥ अ
रु आत्मबोध हूए तें आधिभौतिकता दृष्ट नहीं आव
ती ॥ जब सत्त वस्तु का ज्ञान उदै होता है ॥ तब असत का
ज्ञान लीन हो जाता है ॥ जैसे जेवड़ी के अज्ञान तें सर्प भ्रम
होता है ॥ तैसे जेवड़ी के सम्यक ज्ञान तें सर्प भ्रम निवृत्त
हो जाता है ॥ तांतें संपूर्ण जगत मन तें उदै हूया है ॥ अरु
आत्म ज्ञान कर निवृत्त हो जाता है ॥ जैसे स्वप्ने विषै जग
त आधिभौतिक हो भासता है ॥ जाग्रत तें नष्ट हो जाता है
तैसे आत्मज्ञान कर आधिभौतिकता नष्ट हो जाती है ॥
अरु आतिवाहक सरीर भासता है ॥ श्रीरामोवाच ॥
हे मुनीश्वर जो योगेश्वर जो आतिवाहक सरीर साथ ब्रह्म
लोक पर्यंत आवते जाते हैं ॥ तिनके सरीर कैसे भासते हैं

॥श्रीवसिष्टोवाच॥ हेरामजी अतिवाहक सरीर ऐसे है जैसे कोऊ पुरुष स्वप्नेविषे होवे॥ तिसको पूर्वला सरीर जागत का स्मरण आवे॥ तब स्वप्नेका सरीर इसको दृष्ट नही आवता॥ तिनको अर्काश रूप जानता है॥ तैसे अधिभौतिक तत्वबोध करके नष्ट होजाती है॥ जैसे सरत काल के मेघ देखले मात्र होते हैं॥ तैसे योगेश्वर ज्ञानवान का सरीर देखणे मात्र होता है॥ उह अदृष्ट रूप है॥ अवर का सरीर भासता है॥ हेरामजी आत्मा विषे इह देहादिक नौ तक करके भासते हैं॥ अरु आत्मज्ञान करके निवृत होजाते हैं॥ जैसे जेवडी के अज्ञान करके सर्प भासता है॥ अरु जेवडी के ज्ञान कर सर्प भ्रम निवृत होजाता है॥ तैसे तत्वबोध के उदे हूए दोनो देह का अभाव होजाता है॥ केवल अद्वैत सत्ता भासती है॥ ॥श्रीरामोवाच॥ हे भगवन अतिवाहक ते अधिभौतिक होता है॥ अथवा अधिभौतिक ते अतिवाहक होता है॥ सो कैसे होता है सो कहो॥ ॥श्रीवसिष्टोवाच॥ हेरामजी मयतुजको बहुत बार कहा है॥ तुम मेरे कहने को धारते किंउ नही॥ जो जेते कछु जीव हैं॥ सो सर्व अतिवाहक हैं॥ अधिभौतिक कोऊ नही॥ आदि जो शुध संवित संवेदन ते आभास उठा है॥ तिस करके इस जीव का आदि सरीर अतिवाहक संकल्परूप हूया है॥ जब उस विषे दृढ अभ्यास हूया॥ तब उह संकल्प रूपी सरीर अधिभौतिक होकर भासने लागा॥ जैसे जल दृढ जडता करके बरफ रूप होजाता है॥ तिस अधिभौतिक के तीन लक्षण हैं॥ नारी सरीर॥ अरु कठोर॥ अरु स्थूल है॥ जब तिसविषे अहंप्रतीत होती है॥ इस कारण ते अधिभौतिक होजाता है॥ अरु जब तत्व का बोध होता है॥ तब उह अधिभौतिक आकाश रूप होजाता है॥ जैसे स्वप्ने विषे देह ते आदि लेकर जागत भासता है॥ जब स्वप्ने ते जागता है॥ तब देह ते आदि स्वप्न जागत का अभाव होजाता है॥ अर्थ इह जो संकल्परूप भासता है॥

तैंसे आत्मतत्वके बोधहूए तें आधिभौतिकसरीर निवृत्त
होजाता है॥ संकल्परूपपडा भासता है॥ हे रामजी आ
धिभौतिकता जो इसकों प्राप्तभई है॥ सो अबोधके अ
भ्यासकर प्राप्तभई है॥ जब उलटकर बोधका अभ्या
स होवे॥ तब आधिभौतिकता नष्ट होजावे॥ अरु आति
वाहकता उदे होआवे॥ हे रामजी अन्यसरीरकों जो
इह प्राप्त होता है॥ सो एकसरीरकों त्यागकर दूसराअं
गीकार करता है॥ जैसे स्वप्नतें स्वप्नांतरकों प्राप्त होता
है॥ अरु जब बोध होता है॥ तब सरीर भी अवर नहीं भा
सता॥ तुही आधिभौतिकसरीर शांतिरूप होजाता है॥ जैं
से स्वप्नतें जागे हूए स्वप्नसरीर शांति होजाता है॥ तैंसे बो
धहूए आधिभौतिक शांति होजाता है॥ हे रामजी जेता
कछु जगत तुझकों भासता है॥ सो सब स्वप्नमात्र है
अज्ञानकरके सतकी न्याई भासता है॥ जब आत्मबोध
होवे॥ तब सब आकाशरूप भासे॥ ॥इति श्री उत्प
त्तिप्रकरणे लीलोपाख्याने स्वप्नपदार्थनिरूपणं ना
मसर्गः॥ ५०॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी जब उह दे
नों देवीयां अंतहपुरविषे गईयां॥ तब प्रबुधलीला कह
तभई॥ लीलोवाच॥ हे देवीजी समाधविषे मुझकों ला
गे हूए केता काल व्यतीत भया है॥ अरु मय जो राजाकी
स्रिष्टविषे गई थी॥ मेरा सरीर जोई होपडा था सो कहां ग
या॥ देवीयोवाच॥ हे लीला अब तुझकों समाधविषे
लागे इकत्रीस दिन भए हैं॥ जब तूं ध्यानविषे लागीथी
तब तेरा पुर्यष्टका विदूरथकी स्रिष्टविषे विचरती फि
री॥ इस सरीरकी वासना तेरी निवृत्त होगई॥ तब इह
सरीर तेरा निर्जीव होके गिरपडा॥ जैसे रसतें रहित प
त्र सूक जाता है॥ तैंसे तेरा सरीर रसतें रहित भया था॥
जैसे काष्ट पाषाण होता है तैंसे होगया॥ अरु बरफकी
न्याई सीतल होगया॥ तब देखकर मंत्रीयों विचार की
या॥ जो इह मृतक पडी है॥ इसकों जलाईए॥ तब चंदन

अरु घनसाथ जलादीया ॥ अरु बांधवजन रुदन करने
लागे ॥ अरु पुत्रों पिंडक्रियाकरी ॥ हे लीला आगे जो तें ध्या
नतें उतरती थी ॥ तब तुजकों देखकर लोक आश्चर्यमा
बहुत न होता था ॥ अरु अब लोक देखकर आश्चर्यमान हो
वेंगे ॥ जो राणी परलोकतें फिर आई है ॥ अरु नरता कों
उदे भी ले आई है ॥ हे लीला तुजकों बोध हूया है ॥ तिसकर उ
स सरीरकी वासनां नष्ट भई है ॥ अरु अतिवाहक विष
दृढ निश्चा हूया है ॥ इसकारणतें उह सरीर निर्जीव भ
या ॥ अब भी जो उसके समान तेरा सरीर है ॥ सो इसका
रणतें है ॥ जो तुजको बोध हूया है सो लीला की वासनां
विष हूया है ॥ जो मय लीला हैं ऐसी जो तेरी वासनां भई
इसकर तेरा सरीर तैसा ही भया ॥ इस लीला सरीरकी
वासनां तेरी नष्ट नही भई ॥ इसकारणतें तूं निर्वाण न
भई ॥ नहीं तो तूं विदेहमुक्ति हो जाती ॥ अब तूं सत संकल्प
भई है ॥ जैसे तेरी इछा होवे तैसे अनुभव होता है ॥ अरु
तैसे ही होवेगा ॥ हे लीला जैसी वासनां जिसकों होती है
तिसके अनुसार तिसकों प्राप्त होता है ॥ जैसे बालिक
कों अंधकार विषे जैसी भावनां होती है ॥ तैसा अनुभव
होता है ॥ तैसे जेती कछु आधिभौतिकता भासती है ॥ सो
सब भ्रममात्र है ॥ सब जीवों का आदि अतिवाहक सरी
र है ॥ सो प्रमाद करके आधिभौतिक भासता है ॥ हे ली
ला एक लिंग सरीर है ॥ एक स्थूल सरीर है ॥ सो दोनों संक
ल्परूप हैं ॥ परएता भेद है ॥ लिंगसरीर संकल्परूप मन
है ॥ तिस विषे जिसकों आधिभौतिकता का अभ्यास हू
या है ॥ तिसको सरीरक गौर अरु रूप वर्ण आश्रम का अभिमा
न हूया है ॥ जिस पुरुषकों ऐसे अनात्मा विषे आत्म
अभिमान हूया है ॥ तिसकों आधिभौतिक देह कहीता
जो है ॥ अर्थ इहै तिसकी चितवनां सतन ही होती ॥ अरु जि
सकों आधिभौतिकता का अभिमान नहीं ॥ सो अतिवा
हक सरीर है ॥ उह जैसी चितवनां करता है ॥ तैसी सिध

होती है॥ हे लीला तें अतिवाहक विषे दृढ भई हैं॥ इ
सी कारण तें इह बपु उंडसा जैसा सरीर हूया है॥ आ
धिभौतिक बुध तेरी नष्ट भई है॥ पूर्व लीला आवे सरी
र तें ना गिड पडा था॥ जैसे गंध तें रहित फूल गिडे तैं
से तेरा सरीर गिड पडा था॥ तब जल्ला दीया॥ अरु
अब तूं सत संकल्प भई हैं॥ जैसी चितवनो करे तैं
सी सिध होवेगी॥ हे लीला इह जो कमलनयनी ली
ला है॥ जो तेरे भरता के पास बैठी है॥ तिस कों इह
अंतहपुर के लोक सहेलीयां जान नहीं सकते॥
काहे तें जो मय इन कों निद्रा कर मोहित कीया है॥
जब लग मेरा दर्शन इस कों न होवे॥ तब लग इस
कों कोऊ अवर न जान सकेगा॥ अब इह हम कों दे
खेगी॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी ऐसे विचार
कर देवी उस कों अपने संकल्प साथ सावधान क
रती भई॥ तब उस लीला देखा॥ जो अंतहपुर वि
षे बडा प्रकाश भया है॥ जैसे बडु तेज सूर्य का एक
त्र प्रकाश होवे॥ अरु चंद्रमा की न्याई शीतल प्रका
श॥ ऐसे प्रकाशवान दोनों देवीयों कों देखकर न
मस्कार कीया॥ अरु मस्तक टेक्या॥ अरु दोनों कों
स्वर्ण के सिंहासन पर बैठाया॥ अरु कहत भई॥
हे जीव के दाता तेरी जय होवे जय होवे॥ तुम मेरे ऊ
पर बडी दया करी है॥ तेरे प्रसाद कर मय ईहां आ
न प्राप्त भई हों॥ देवीयोवाच॥ हे पुत्री तूं ईहां किंउ
कर आन प्राप्त भई हैं॥ अरु का वृत्तांत तुझ देखा
है॥ सो कहो॥ विदूरथलीलोवाच॥ हे देवी जी जब
मेरा भरता संग्राम विषे मरया था॥ तिस कों देखकर घाइल
मय मूर्छा भई॥ अरु गिड पडी॥ मूर्छा भई पर मृत्यु न भ
ई॥ तिस तें अनंतर मुझ कों चेतना फुर आई॥ तब म
य अपने साथ ही सरीर देखती भई॥ तिस सरीर
साथ मय आकास मार्ग कों उडी॥ एक कन्या कुया

रीमुजकोंलेआईहे॥ जेंसेवायुगंधकोंलेआवतीहे॥ तैं
सेमुजकोंउडावतीउडावतीपरलोकविषेभरताके
पासआनबैठगयाहे॥ अरआपअंतरध्यानहोगई
हे॥ अरुमेराभरताजोसंग्रामकरथकाहे॥ सोआक
रसोइरहाहे॥ अरमयतुजकोंमार्गविषेसंभारती
आईहों॥ परमुजकोहेष्टककूंनआए॥ ईहांकृपाक
रकेतुमदर्शनदीयाहे ॥श्रीवसिष्टोवाच॥ हेराम
जीइसप्रकारदेवीजीसुणकरप्रबुधलीलाकोंक
हतभई॥ जोअबराजाकीजीवकलाकोंछोडतीहों
ऐसेकहिकरजीवकलाकोंछोडदीया॥ तबनास
काकेमार्गसोंजीवकलाप्रवेशकरगई॥ जैंसेवायु
कमलकेअंतरप्रवेशकरजावे॥ तैसेशरीरकेअंत
रजीवकलाप्रवेशकरगई॥ कैसीजीवकलाहे॥ जो
वासनाकरकेपूरणहे॥ जैंसेसमुद्रजलकरपूर्ण
होताहे॥ तैसेपुर्यष्टिकावासनाकरपूरणहे॥ ऐसी
जीवकलासरीरविषेप्रवेशकीया॥ तबसरीरकी
कांतिउजलहोआई॥ अंगोविषेप्राणवायुपसरग
ई॥ जैसेवसंतरुतविषेवृक्षपत्रफूलफलविषेर
सप्रवेशकरतीहे॥ तैसेप्राणवायुकरसंपइंद्रीयां
खिडआईयां॥ तबराजाफूलोंकीसय्यातेउठखं
डाहूया॥ जैसेसोयाहूयाविंध्याचलपर्वतउठखडा
होवे॥ तैसेराजाउठखडाहूया॥ तबदोनोंलीलाराज
केसन्मुखआइखडीयां॥ तबराजेकहा॥ मेरेआगेतु
मकौनखडेहो॥ तबप्रबुधलीलाकहा॥ हेस्वामीम
यतेरीपूर्वपटराणीहों॥ सदातेरेसंगरहीहों॥ जैसे
संग शब्दकेअर्थरहिताहे॥ तैसेमयतेरेसंगरहीहों॥ हे
राजनजबतंईहांसरीरत्यागकरपरलोकगयाथा
तबमेरेविषेतेरास्नेहबडुतथा॥ तिसवासनाकर
मेराप्रतिबिंबरूपलीलातुमकोंभासीथी॥ अबरक
थाजोवर्तनहे॥ सोतुजकोंपाछेंकहोंगी॥ हेराजन

मेरे ऊपर इस देवीजी कृपा करी है ॥ जो तुमारे सीस की
और स्वर्ण के सिंहासन पर बैठी है ॥ ए माता सरस्वती
सर्व की जननी है ॥ इस हमारे ऊपर बडी कृपा करी है
अरु परलोक तें तुज कों ईहां ले आई है ॥ हे रामजी ऐ
से सुणकर राजा प्रसन्न हूया ॥ अरु उठ खडो हूया ॥ अ
र सरस्वतीजी के चर्नों पर मस्तक राख्या ॥ अरु कह
त भया ॥ राजोवाच ॥ हे सरस्वतीजी तुज कों मेरा नम
स्कार है ॥ तेरी सदा जय होवे जय होवे ॥ तूं सभ की
हितकारी हैं ॥ अर मुझ पर बडा अनुग्रह कीया है ॥
अब कृपा कर मुज कों इह वर देवो ॥ जो मेरी चदी आ
र्बला होवे ॥ अरु निःकंटक राज करों ॥ लक्ष्मी भी ब
हुत होवे ॥ अरु रोग कष्ट भी कोऊ न होवे ॥ अरु मय
आत्मज्ञान करके भी संपन्न होवों ॥ अर्थ इह जो भो
ग अरु मोक्ष दोनों मुज कों होवें ॥ श्रीवसिष्ठोवाच
हे रामजी जब इस प्रकार राजे कहा ॥ तब देवीजी उसके सी
स पर हाथ राख्या ॥ अरु कहत भई ॥ देव्योवाच ॥ हे
राजन ऐसे ही होवेगा ॥ तेरी आर्बला भी वही होवेगी ॥ अ
रु तेरा शत्रु भी कोऊ न होवेगा ॥ निःकंटक राज कों तूं भो
गेंगा ॥ आपदा भी तुमको कोऊ न आवेगी ॥ अर तूं बहुत ल
क्ष्मी कर संपन्न होवेंगा ॥ तेरी प्रजा भी सुखी रहेगी ॥ तुजे
देखकर सभ प्रसन्न होवेंगे ॥ अरु तेरी प्रजा विषे भी आ
पदा किसी कों न होवेगी ॥ अरु तूं आत्मानंद करके भी
पूर्ण होवेंगा ॥ अरु तेरा सरीर भी अरोग रहेगा ॥ ॥ इ
ति श्री उतपत प्रकरणे राजाजीवन्मुक्ति वर्ननं ना
म सर्गः ॥ ४१ ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी इस प्र
कार कहि कर देवीजी अंतरध्यान होत भई ॥ तब प्रातः
काल का समा हूया ॥ सभ लोक जाग पड़े ॥ जैसे उदै हूए
सूर्य के सूर्यमुखी कमल खिड़ आवते हैं ॥ तैसे सभ लोक
खिड़ आए ॥ तब राजा दोनों लीला कों कंठ लगावत भया
क्रम करके ॥ अरु प्रसन्न भया ॥ तब तिस नगर विषे नगा
रे बाजणे लागे ॥ बहुड बहुड मंगल गावें ॥ वहा आनंद व

धया॥ अंगनां अनेक नित्त करणे लगीयां॥ विद्याधर दे
वता सिध फूलों की वर्षा करणे लागे॥ अरु लोक बडे
आश्चर्य कों प्राप्त भए॥ जो लीला परलोक तें बहुड़ आ
ई है॥ अरु नरता कों भी ले आई है॥ हे रामजी इह कथा
देशतें देशांतर कों चली गई॥ लोक श्रवण करके आ
श्चर्य कों प्राप्त होवें॥ जब इस प्रकार इह कथा प्रसिध
भई॥ तब राजे भी इह कथा श्रवण करी॥ जो मंय इस प्र
कार मरकर बहुड़ जीवीया हों॥ इह विचार करत भया
जो मंय फेर अभिषेक लेवों राज का॥ तब मंत्री अरु मं
डलेश्वरों नें उत्तर दक्षिण पूरब पश्चम चारों ओर तें
समुद्रों का जल मंगाया॥ सर्व तीर्थ अरु गंगा आदि कों
का जल मंगाया॥ तब राजा कों राज का अभिषेक दीया
तब चारों समुद्र के राजा पर राजा की आज्ञा चलनें ला
गी॥ निहकंटक राज करत भया॥ राजा अरु लीला पूर्व
ली कथा कों विचारें॥ अर आश्चर्य मान होवें॥ सरस्व
ती जी के प्रसाद और उपदेश कर अरु अपने पुरुषार्थ कों पा
कर राजा अरु दोनों लीला असी सहस्र वर्ष पर्यंत जी
वन्मुक्ति हो कर राज कीया॥ कैसा राज कीया जो मन स
हित षट इंद्रीयों कों वस कीया॥ अरु यथा लाभ विषे
संतुष्ट रहें॥ इस रूप भ्रम तिन का निवर्त भया॥ ऐसे जीव
न्मुक्ति हो कर राज करत भए॥ कैसा सुंदर राजा है॥ मानों
चंद्रमा भी उस की सुंदरताई का किणका है॥ बहुड़ कै
सा है॥ जिस के तेज के आगें सूर्य भी मानों किणका है॥ इ
स प्रकार राज करत भया॥ सर्वथा सभन कों भली प्रकार
प्रजा कों संतुष्ट करत भया॥ सभ प्रजा राजा कों देख क
र प्रसन्न होवें॥ बहुड़ विदेह मुक्ति कों तीनों प्राप्त भए
राजा अरु दोनों लीला विदेह मुक्ति भए॥ ॥इति
श्री उत्पत प्रकरणे लीलोपाख्याने निर्वाण वर्ननं
नाम सर्गः॥ ४२॥ समाप्तम्॥ ३॥ श्री वसिष्ठोवा
च॥ हे रामजी इह दोनों कथा विस्तार कर श्रवण क

राई है॥ एक अंगका सज आतमणकी ॥ दूसरी लीलाकी ॥
दृश्य दोषके निवर्त्त अर्थ कही हैं॥ हे रामजी दृश्यकी
जो दृढता हो रही है॥ तिसकों त्याग॥ अरु अबदी नेंइ
तहांसो कों संक्षेपतें श्रवण कर॥ इह जगत जो तुजकों भा
सता है॥ सो सम आकाशरूप है॥ आदितें कछु उपजा न
हीं॥ जो वस्तु सत्य होती है॥ तिसके निवर्त्त करणे विषे यत
न होता है॥ अरु जो वस्तु असत होवे॥ तिसके निवर्त्त हो
वणे विषे यतन कछु नहीं॥ इस कारण तें ज्ञानवान कों
सम जगत आकाशरूप हो जाता है॥ अरु हे रामजी आ
दि जो ब्रह्मसत्ता विषे आभास संवेदन फुरी है॥ सो ब्रह्म
रूप होकर स्थित भई है॥ सो ब्रह्मा पृथवी आदिक तत्तों
तें रहित है॥ जो आपही आभासरूप होवे॥ तिसतें उपजा
जगत कैसे सत होवे॥ हे रामजी ज्ञानवान पुरुष आका
शरूप है॥ जिसकों आत्मपद साक्षातकार हुया है॥ तिस
कों दृश्य भ्रमका अभाव हो जाता है॥ अरु जो अज्ञानी हैं॥
तिनकों जगत भ्रम स्पष्ट भासता है॥ शुधचिदाकाशका
एक अणु जीव है॥ एक तिस जीव अणु विषे इह जगत
भासता है॥ तिस जगतकी अवस्था मय तुजकों क्या कहों॥
वासनां क्या कहों॥ पदार्थ क्या कहों॥ इह तौ हैं ही नहीं॥ हे रा
मजी अवर जगत कछु उपजा नहीं॥ संवेदन के फुरणे क
र जगत हो भासता है॥ शुधसंवितरूप विषे संवेदनरूप न
दी चलती है॥ तिस विषे इह जगत पडा फुरता है॥ जब सं
वेदन कों यतन कर रोकीयेंगा॥ तब दृश्य भ्रम नष्ट हो
जावेगा॥ सो यतन करणा एही है॥ जो संवेदन कों अंतर
मुख करणा॥ जब लग आत्मा का साक्षातकार नहीं हो
ता॥ तब लग श्रवण मनन निदध्यासन कर दृढ अभ
्यास करीए॥ जब आत्माका साक्षातकार होवेगा॥ तब
दृश्य भ्रम नष्ट हो जावेगा॥ हे रामजी इह सर्व जगत जो तु
जकों भासता है॥ सो हमकों सर्व अखंड ब्रह्मसत्ता भास
ती है॥ जगत सब मायामात्र है॥ पर माया भी कछु अवर
वस्तु नहीं॥ ब्रह्मसत्ता ही अपणे आप विषे इस्थित है॥
श्रीरामोवाच॥ बडा आश्चर्य है बडा आश्चर्य है
हे मुनीश्वर तुम मुजकों परम दृष्ट कही है सो कैसा तुमा

राउपदेश है ॥ जो हदयरूपीत्रण कोनासकरता अ
ग्नि है ॥ अरु अध्यात्मक अधभौतिक अधिदैविक
तापोंकेनासकरता चंद्रमा है ॥ हे मुनीश्वर तुमारे उपदे
शकर मय तात तेय भया हों ॥ अरु पांच विकल्प मय
विचारते हैं ॥ जो इह जगत मिथ्या है ॥ अरु स्वरूपतें आ
इसकासुभा निर्वचनीय है ॥ आत्मा विषे आभासरूप प्रतिमा है ॥ अ
ज्ञान करके उपजा भासता है ॥ ऐसे जानकर मय शां
तात्मा ज्ञानवानों की न्याई भया हों ॥ अरु निर्वाण मु
क्तिवाल्यों की न्यांई भया हों ॥ हे मुनीश्वर अब रश्म्यों तें
तुमारा उपदेश आश्चर्यरूप है ॥ श्रवणरूपी पात्र तुमा
रे वचनरूपी अंमृत करके त्रप्त नही होते ॥ तांते इह संसा
मेरा दूर करो ॥ जो लीला के भरता को तीन सिष्टों का अ
नुभव कैसे भया ॥ जो प्रथम वसिष्ट ब्राह्मण बहुड पद
म राजे का बहुड विदूरथ का ॥ तिनों विषे काल का वि
तर्क मकैसे देखा ॥ जो कहूं एक दिन देखा ॥ कहूं मास
हूया ॥ कहूं वर्षों का अनुभव भया ॥ सो काल का वितर्क
म कैसे भया ॥ हे मुनीश्वर इह लोहड के वटे विषे जल न
ही ठहरता ॥ अरु कुंभ विषे इस्थित होता है ॥ तांते स्पष्ट
कर कहो ॥ जो थोडे काल विषे बहुत काल किंउ कर हू
या ॥ अरु बहुत काल विषे थोडा किंउ कर हूया ॥ जो तुमा
रे वचन मेरे रिदे विषे इस्थित होवें ॥ श्रीवसिष्ठोवाच
हे रामजी शुद्ध संवित मन का आपणा आप है ॥ तिस
विषे जैसी जैसी संवेदन फुरती है ॥ तैसा तैसा रूप हो भास
ता है ॥ कहूं क्षण विषे कल्पों के समूह बीते भासते हैं ॥
कहूं कल्पों विषे क्षण का अनुभव होता है ॥ हे रामजी
जिसकों विष विषे अंमृत की भावना होती है ॥ तिसकों
अंमृत हो भासता है ॥ अरु जिसकों अंमृत विषे विष की
३ भावना होती है ॥ तबौंही अंमृत विष हो जाता है ॥ किसी
पुरुष का शत्रु होता है ॥ अरु उस विषे मित्र की भाव
ना करता है ॥ अरु जिसकों मित्र विषे शत्रु भावना हो
ती है ॥ तब वह शत्रु हो जाता है ॥ हे रामजी जैसी जैसी

संवेदन फुरती है ॥ तैंसा तैंसा रूप हो भासता है ॥ जिसकी
संवेदन तीव्र अभ्यास कर निर्मल भई है ॥ तिसका संक
ल्प सत्त हो भासता है ॥ जैंसे चेतता है ॥ तैंसे ही सिध होता
है ॥ जो संवेदन की तीव्रता नई किंतु ॥ हे रामजी जो को
उ पुरुष रोगी होता है ॥ तिसको एक रात्रि कल्प के स
मान व्यतीत होती है ॥ अरु एक मुहूर्त के स्वप्ने विषे अने
क वर्षों का अनुभव होता है ॥ जानता है ॥ जो मय उपज्ञा
हां ॥ इह मेरे माता पिता हैं ॥ अब मय वडा हूया हों ॥ इ
ह मेरे बांधव हैं ॥ हे रामजी एक मुहूर्त विषे अनेक जन्
म देखता है ॥ अरु जाग्यें तें एक मुहूर्त भी नहीं होता ॥ ह
रीचंद्र कों एक मुहूर्त विषे बारां वर्षों का अनुभव हू
या था ॥ राजा लवण कों एक छिण विषे अनेक वर्षों
का अनुभव भया था ॥ तां तें जैसा जैसा रूप होती है ॥ संवेदनफुर
तैंसा हो कर भासता है ॥ हे रामजी ब्रह्मा के एक मुहू
र्त विषे मानुषों की आर्बला व्यतीत हो जाती है ॥ अरु
ब्रह्मा एक मुहूर्त का अनुभव करता है ॥ अरु मानुष
संपूर्ण आर्बला का अनुभव करता है ॥ अरु जो ब्रह्मा
जी आपणी संपूर्ण आर्बला का अनुभव करता है ॥
सो विष्णुजी का एक दिन होता है ॥ अरु ब्रह्मा की आ
र्बला व्यतीत होती है ॥ विष्णुजी कों एक दिन का अनु
भव होता है ॥ अरु विष्णुजी की सारी आर्बला व्यती
त होती है ॥ तब रुद्रजी का एक दिन व्यतीत होता है
जैसे जैसे संवेदन विषे दृढता होती है ॥ तैंसे तैंसे हो
भासती है ॥ हे रामजी जेताक जगत तूं देखता हैं
सो सब संवेदन फुरणे विषे इस्थित है ॥ जब संवेदन
स्थिर भूत होती है ॥ तब न दिन भासता है ॥ न रात्रि भास
ती है ॥ न कोऊ पदार्थ भासता है ॥ न अपणा सरीर भा
सता है ॥ केवल आत्मसत्यमात्र भासती है ॥ तां तें तूं दे आत्मसत्ता
ख ॥ जो सब जगत मन के फुरणे विषे स्थित है ॥ जैंसे जैं
से फुरता है ॥ तैंसे तैंसे हो भासता है ॥ कटुक विषे जि
सकों मधुर की भावनां होती है ॥ तब कटुक इसकों

मधुर होजाता है ॥ अरु मधुर विषे जिसकों कटुक
भावना होती है ॥ तब मधुर तिसकों कटुक होजाता
है ॥ अरु स्वप्न विषे अपने स्थान में नानाप्रकार के व्यव
हार होते भासते हैं ॥ अरु आप इस्थिर होता है ॥ अरु
स्वप्न विषे दौडता फिरता है ॥ तातें जैसा जैसा फुरणा
मन विषे होता है ॥ तैसा तैसा हो भासता है ॥ हे रामजी
जो पुरुष नौका विषे बैठा होता है ॥ तिसकों तट के वृ
क्ष दौडते भासते हैं ॥ अरु जो विचारवान है ॥ सो चलते
भी भ्रमण विषे भी स्थिर होता है ॥ अरु पुरुष फेरी लेता है
तिसकों स्थिर पदार्थ चलते भ्रमते भासते हैं ॥ जो वि
भ्रमते चारवान पुरुष हैं ॥ तिनकों भ्रमते विषे भी अचल बु
धि होती है ॥ तातें जैसा जैसा निश्चय होता है ॥ तैसा हो भा
सता है ॥ हे रामजी जो श्वेत पदार्थ होता है ॥ अरु किसी
के नेत्रों विषे दूषण होता है ॥ तिसकों पीतवर्ण भासता
है ॥ हे रामजी जैसे बालिक कों परछावें विषे वैताल भा
सता है ॥ सो असत हीं सतरूप हो भासता है ॥ अर्थ इहे
जो भयकों देता है ॥ अरु स्वप्नेवाले कों स्वप्ने का अनुभ
व होता है ॥ अरु जाग्रतवाले कों जाग्रत का अनुभव
होता है ॥ इत्यादिक पदार्थ विपर्यय होते भासते हैं ॥
सो सब भ्रमकरके भासते हैं ॥ जब मन फुरता है ॥ तब
भासते हैं ॥ सो लीला के भरता कों असे सृष्टि का अनु
भव भया है ॥ जैसे जाग्रत के एक मुहूर्त विषे स्वप्ने मों ब
हुकाल भासता है ॥ तैसे लीला के भरता कों भी भासा था
जैसे जैसे मन का फुरणा होता है ॥ तैसे तैसे रूप चेतन्य
संवित विषे भासता है ॥ अरु मुझ कों सदा ब्रह्मसत्ता
भासती है ॥ इतर नहीं भासता ॥ अरु जिसकों जगत भा
वना दृढ हुई है ॥ तिसकों जगत हीं पडा भासता है ॥ हे
रामजी जेता कछु जगत पडा भासता है ॥ सो आदि तें
कछु उपजा नहीं ॥ मन आकाशरूप है ॥ जैसे पथरे वि
षे उकेरे विना भी शिलपी पुतलीयां कल्पता है ॥ सो सि

लपाके मन विषे हैं। स्वप्ने विषे कछु बणी नहीं॥ तैसे आ
त्मा विषे चित्त जगत रूपी पुतलीयां कल्पता है। पर
हूयां कछु नहीं। आत्मसत्ता जिंउ की तिंउ ही अपणे
आप विषे इस्थित है॥ हे रामजी जैसे एक स्थान विषे
दो पुरुष सोए होवें॥ तिन विषे एक जागत होवे॥ दूस
रा स्वप्ने विषे होवे॥ जो स्वप्ने विषे है तिन कों वडे युध
होते पड़े भासते हैं॥ अरु जागते कों आकाश रूप हैं।
तैसे जो प्रबुध आत्मा ज्ञानवान है॥ तिन कों जगत सु
षुप्त की न्याई अभाव है॥ अरु जो अज्ञानी हैं॥ तिन कों
नाना प्रकार का जगत स्पष्ट भासता है॥ जैसे बसंत
रुत विषे पत्र फूल फल गुछे रस सहित भासते हैं॥
तैसे आत्मसत्ता चेतता करके जगत रूप हो भास
ती है॥ जैसे जल विषे द्रवता रहती है॥ तैसे आत्मा वि
षे जगत भास रहता है॥ पर जब संवेदन फुरती है॥
तब जगत भासता है॥ जब नहीं फुरती तब नहीं भा
सता॥ हे रामजी आत्मा अरु जगत विषे कछु भेद न
हीं॥ जैसे अवयवी अरु अवयवों विषे भेद कछु न
हीं॥ तैसे आत्मा अरु जगत विषे भेद कछु नहीं॥ जै
से सुगंध अरु फलों विषे भेद कछु नहीं॥ तैसे आत्मा
अरु जगत विषे भेद कछु नहीं॥ ब्रह्मसत्ता ही संवेद
न करके जगत रूप हो भासती है॥ अवर कछु बण
या नहीं॥ हे रामजी जब महाप्रलय होती है॥ तब ब्रह्मा
जी तो विदेह मुक्त होता है॥ बहुड़ इह जगत का कार
ण कैसे होवे॥ अरु जो तैं स्मृत कारण मानें॥ तो स्मृत भी
अनुभव विषे होती है॥ जो स्मृत ते जगत हूया॥ तो अ
नुभव रूप भया॥ श्रीरामोवाच॥ हे भगवन पद्म रा
जा के मंत्री टहलुए सन लोक विदूरथ को जा प्राप्त
भए। सो कैसे हूए॥ इह वार्ता बहुड़ कहो॥ श्रीवसि
ष्ठोवाच॥ हे रामजी केवल चैतन्य संवित सन का अ
पणा आप रूप है॥ जैसी जैसी तिस संवित के आश्रय सं
से

वेदन फुरती है ॥ तैसा तैसा रूप होभासती है ॥ हे राम
जी जब राजा विदूरथ मृत्यु होवणे लागा ॥ तब राजा की
वासना उसविषे बड़ी तथी ॥ अरु मंत्री टहिलूए रा
जा के अंग है ॥ इस कारण ते मंत्री टहिलूए उसकों
भासआए ॥ जैसे मरुमणि की किरणां महामणि के
अंग हैं ॥ तैसे मंत्री टहिलूए राजा के अंग हैं ॥ जैसे कों
उ स्वप्ने विषे आपकों देखे ॥ जो मय इस कुलविषे उ
पजा हों ॥ इह मेरा कुल आचार है ॥ मय राजा हों ॥ इह
मेरे मंत्री टहिलूए हैं ॥ तैसे ही मृत्यु कूं या राजा विदूर
थ देखत भया ॥ हे रामजी जैसी भावना संवेदन वि
षे दृढ होती है ॥ तैसा रूप होभासती है ॥ एक अचल
पदार्थ होते हैं ॥ एक चल पदार्थ होते हैं ॥ जो अचल
होता है ॥ तिसका प्रतिबिंब आदर्श विषे भासता है
अरु चलपदार्थ रहता नहीं ॥ तांते उसका प्रतिबिं
ब भासता नहीं ॥ तैसे जिस पदार्थ की तीव्र संवेग
भावना होती है ॥ तिसका प्रतिबिंब चैतन्यदर्पण
विषे भासता है ॥ अन्यथा नहीं भासता ॥ हे रामजी अ
नेक वासना जीव के हृदय विषे होती है ॥ पर जिसकी
तीव्रता होती है ॥ तिसकी जय होती है ॥ जो उसकों
सद्रूप थे ॥ मंत्री टहिलूए उही भासे ॥ हे रामजी जैसे
अनेक तरंग समुद्र विषे होते हैं ॥ तैसे अनेक सृ
ष्टि एक एक चिदणु विषे मन के फुरणे कर होती
है ॥ परवास्तव तें कछु नहीं ॥ चिदाकाश ही चिदाका
श विषे स्थित है ॥ अरु इह जगत जीतु जकों भास
ता है सो आकाशरूप है ॥ जैसे स्वप्नसृष्टि अनेक
रूप होकर भासती है ॥ पर आकाशरूप है ॥ तैसे अ
नंत सृष्टि आत्मा अनेक रूप होकर भासता है ॥ हे
रामजी इष्टादर्शन दृश्य तो त्रिकुटी भासती है ॥ सो
ज्ञानवान को एक आत्मा ही भासता है ॥ अरु अज्ञा
नी कों नानत्व भासता है ॥ कर्तृत्व अकर्तृत्व

कछुतमकछुप्रकाश देश काल क्रिया इत्यादिक
जगत भासता है॥ अरु तीनवानकों आदि अंततें
रहित आत्मसत्ता भासती है॥ तिसविषे जगत कछु
हूया नहीं॥ जैसे जलतें तरंग होते हैं॥ सो कछु हूये नं
हीं॥ तैसे अहंत्वं आदिक जगत भी सन बोधरूप है॥
तिसविषे द्वैत कलनां का अभाव है॥ ॥ इति श्री
उतपतप्रकरणे लीलोपाख्याने प्रयोजन वर्ननं
नाम सर्गः॥ ४३॥ श्रीरामोवाच॥ हे भगवन् अहं
त्वं आदिक जो द्वैतरूप भी तिन भासती है॥ सो कारण वि
ना आत्मातें कैसे उदे हूई है॥ सो कहो॥ श्रीवसिष्ठो
वाच॥ हे रामजी जेता कछु कारण कार्य जगत
भासता है॥ सो तिसका उदे होवणा आदि आत्मातें
सम ही हूया है॥ अर्थ इह जो संवेदन के फुरणे कर
एकठे ही पदार्थ फुर आए हैं॥ अरु सर्वदा काल स
र्व प्रकार सर्वात्मा ही आपणे आप विषे स्थित है॥ हे
रामजी इह सर्वज्ञ आदि अर्थरूप कलनां भासती है॥
सो सन ब्रह्म स्वरूप है॥ तिसतें इतर कछु हूया नहीं॥
अरु ब्रह्मसत्ता सर्वज्ञादि अर्थों की कलनां तें रहित
आपणे आप विषे स्थित है॥ जैसे स्वर्णतें इतर भूष
ण नहीं॥ तैसे ब्रह्मतें इतर कछु जगत नहीं॥ हे राम
जी ईश्वर जो आत्मा है॥ सो जगतरूप है॥ पर जगत
ईश्वररूप नहीं॥ जैसे स्वर्ण भूषणरूप है॥ पर भूष
ण स्वर्णरूप नहीं॥ अर्थ इह जो स्वर्णविषे भूषण
कल्पित हैं॥ तैसे जगत आत्मा का आभासरूप है
इतर कछु नहीं॥ जैसे अवयवीतें भिन्न अवयव
नहीं होते॥ तैसे आत्मा विषे संवेदन के फुरणे तें त
न्मात्रा फुरी है॥ आत्मा विषे इनका उपजणा सम हू
या है॥ पाछें विभाग कलनां हूई है॥ जो तिनतें भूत
हूये हैं॥ इत्यादिक सो जगतरूप हैं॥ पर आत्मा तें
अन्य नहीं॥ जैसे सिलाविषे चित्रे लापुतलीयां क

ल्पता है ॥ सो सिलारूप हैं ॥ तैसे अहंतं आदिक जग
त चिदघन आत्मा विषे मनरूपी चितेरे ने जगतरू
पी पुतलीयां कल्पी हैं ॥ सो चिदघनरूप ही हैं ॥ इ
तर कछु नहीं ॥ जैसे जल विषे तरंग होते हैं ॥ सो जल
ही रूप हैं ॥ तैसे आत्मा विषे जगत है ॥ अरु आत्मा जग
हे त के ग्राह्य अर्थ तें रहित है ॥ हे रामजी जगत परमात्मा
तें भिन्न नहीं ॥ अरु परमात्मा जगत तें भिन्न है ॥ अरु
जगत की न्याई भी नहीं ॥ केवल चिदाकाशरूप अप
णे आप विषे स्थित है ॥ जैसे वायु अरु स्पंद विषे भे
द नहीं ॥ तैसे ब्रह्म अरु जगत विषे भेद नहीं ॥ जब सं
वेदन कछु नरूप होती है ॥ तब जगतरूप होय भास
ती है ॥ अरु संवेदन तें रहित आत्मसत्ता सदा एक
रस अपणे आप विषे स्थित है ॥ हे रामजी जब सं
वेदन फुरणे तें रहित होती है ॥ तब आत्मपद विषे
स्थित होती है ॥ संकल्परूप जगत नासे ॥ तब भी आ
त्मरूप भासता है ॥ जब केवल संवितमात्र विषे संवे
दन होती है ॥ तब फुरणे विषे भी संवितमात्र ही भा
सती है ॥ हे रामजी जैसे रसतन्मात्रा विषे जल स्थित
होता है ॥ तैसे आत्मा विषे जगत स्थित है ॥ जैसे गंध
तन्मात्रा विषे संपूर्ण पृथ्वी स्थित है ॥ तैसे आत्मा वि
षे जगत स्थित है ॥ सो आत्मसत्ता निराकार चिन्मात्र
रूप है ॥ उदे अस्त तें रहित अपणे आप विषे स्थि
त है ॥ तिस विषे प्रपंच नाम कोऊ नहीं ॥ हे रामजी जो
ज्ञानवान पुरुष हैं ॥ तिनको दृढ जगत भी आकाशरू
प भासता है ॥ अरु जो अज्ञानी हैं ॥ तिनको आत्मा वि
षे जगत भासता है ॥ हे रामजी जैसी जैसी संवेदन चित्त
संवित विषे फुरती है ॥ तैसा तैसा रूप होय भासता है ॥
इह जेती तत्वों की तन्मात्रा है ॥ सो सब चित्त संवेदन के
फुरणे विषे स्थित है ॥ जैसा जैसा फुरणा तिन विषे
होता है ॥ तैसा ही होय भासता है ॥ काहे तें जो आत्मा सर्व

शक्ति है॥ जिस जिस पदार्थका फुरणा होता है॥ सोई
होभासता है॥ अरु जो पंच ज्ञान इंद्रीयां छटवां मन
का विषय है॥ सो सब असत आकाशरूप है॥ अरु आ
त्मसत्ता इनतें अतीत है॥ अरु विश्व भी ऐसे है॥ जैं
से समुद्र विषे तरंग होते हैं॥ तैसे आत्मा विषे जगत इ
स्थित हैं॥ जैसे तेज अरु प्रकाश अनन्यरूप है॥ तैसे
आत्मा अरु जगत अनन्यरूप है॥ जैसे मरचे अरु ती
क्षणता विषे कछु भेद नहीं॥ तैसे आत्मा अरु जगत
विषे कछु भेद नहीं॥ जैसे अग्नि अरु उष्णता विषे भेद
कछु नहीं॥ तैसे निराकार आत्मा विषे सृष्टां स्वता
विक स्थित हैं॥ हे रामजी इह जगत ब्रह्मरूपी रत्नका
प्रकाश है॥ सो ब्रह्मरूप है॥ इतर नहीं॥ हे रामजी चिद
णु के प्रमाण प्रमाण विषे सृष्टां भासती हैं॥ तिन सृ
ष्टां विषे जो प्रमाण हैं॥ तिन प्रमाणों के अंतर अवर।
सृष्टां हैं॥ तिनकी संख्या कछु नहीं॥ जैसे जल विषे अ
नेक तरंग होते हैं॥ तैसे चिदणु विषे सृष्टां हैं॥ हे राम
जी जब लग इसकी संवेदन दृश्य भ्रम साथ मिली हू
ई है॥ तब लग सृष्टों का अंत नहीं॥ जब चित्त उपश
म होवैगा॥ तब जगत भ्रम मिट जावेगा॥ जब जगत भ्र
म मिटा॥ तब सब जगत आत्मरूप हो भासता है॥ जैं
से समुद्र कों तरंग बुदबुदा सब अपणा रूप भासता
है॥ तैसे ज्ञानवान कों सब अपणा रूप भासता है॥ हे रा
मजी शुद्ध आत्मसत्ता विषे जो संवेदन फुरी है॥ सो आ
पकों ब्रह्मारूप जानत भई है॥ तिस ब्रह्माने आगें भा
वना करके संकल्परूप नाना प्रकार का जगत रचा है॥
तिसकों अंतर तें असतरूप अनुभव करत भया है॥
तिस करके कहूं नमेष विषे अनेक युगों का अंत॥ पड़ा
भासता है॥ कहूं उनमेष विषे अनेक युगों का अनुभ
व पड़ा होता है॥ ॥ इति श्री उतपतप्रकरणे जगत
कछन वर्ननं नाम सर्गः॥ ४४॥ श्री वसिष्ठोवाच॥

हे रामजी चिदगमाण विषे जो निमेष होती है॥ तिसके
लखवें भाग विषे जगतों के अनेक कल्प फुरते हैं॥ तिन
सृष्टों विषे जो अमाण हैं॥ तिनों विषे भी सृष्टां पडी फु
रती हैं॥ जैसे समुद्र विषे तरंग पडे फुरते हैं॥ तैसे आत्मा
विषे अनेक सृष्टां पडी भासती हैं॥ जैसे मारूथल वि
षे मृगजल की नदी भासती है॥ तैसे आत्मा विषे जगत
भासते हैं॥ जैसे स्वप्न विषे स्वप्न सृष्ट भासती है॥ तैसे
आत्मा विषे जगत भासते हैं॥ श्रीरामोवाच॥ हे ज्ञा
नवानों विषे श्रेष्ट जिस पुरुष कों विचार द्वारा सम्यक
ज्ञान हूया है॥ तिसकर निर्विकल्प आत्मपद की प्राप्त
भई है॥ तिसकों देह अपणे साथ कैसे भासती है॥ अरु
देह उसकी कैसी रहती है॥ श्रीवसिष्टोवाच॥ हे राम
जी आदि जो ब्रह्मसत्ता विषे संवेदन फुरी है॥ तिसका
नाम नेत हूया है॥ तिस विषे जैसी शक्ति धारी है॥ जो इ
ह पदार्थ ऐसे होवे॥ इसकर होवेगा॥ अरु एता काल
रहेगा॥ सो अनेक कल्प पर्यंत तैसे ही होता है॥ जेता का
ल उस धारना है॥ तेता काल ही रहेगा॥ इसका नाम नेत
है॥ महाशांति भी तिसकों कहीता है॥ महा चेतन भी ति
सकों कहीता है॥ महाशक्ति भी तिसकों कहीता है॥ महा
दृष्टा भी तिसकों कहीता है॥ महाकर्ता भी तिसकों क
हीता है॥ महाउदन्व भी तिसकों कहीता है॥ अर्थ इह
जो अनंत ब्रह्मांडों की उपजावणहारी है॥ जैसे उह फु
रणा श्रेष्ठ हूया है॥ तैसा रूप होकर स्थित है॥ इह स्था
वर हैं॥ इह जंगम हैं॥ इह देवता हैं॥ इह दैत्य हैं॥ इह ना
ग है॥ इह नागनी है॥ ब्रह्मा तें आदि तृण पर्यंत जैसे ति
स धारा है॥ तैसे ही स्थित है॥ स्वरूप तें ब्रह्मसत्ता ही है॥
अन्यथा कदाचित नहीं हूया सदा अपणे आप विषे
इस्थित है॥ अरु जो ज्ञानवान पुरुष हैं॥ तिसकों सभ
ब्रह्मस्वरूप ही भासता है॥ अरु जो अज्ञानी हैं॥ तिनकों
जगत भिन्न भिन्न भासता है॥ हे रामजी ज्ञानवान कों स

नब्रह्मस्वरूपभासता है॥ जैसेआकाशविषेवद्धाभास
ता है॥ तैसे ब्रह्मविषेजगतभासता है॥ अरुजो ज्ञानवा
नपुरुष हैं॥ तिनकोंजगतअरुनेतसभब्रह्मरूपभा
सते हैं॥ जैसेअवयवीकोंअवयवसभअपणारूपभा
सते हैं॥ तैसेब्रह्मसत्ताकोंजगतअरुब्रह्मासभअप
णारूपभासते हैं॥ हे रामजी इहजोपुरुषार्थकरता है
तिसकेअनुसारप्राप्त होता है॥ इसकारणकर इस
कानामनेत है॥ तिसहीकानामपुरुषार्थ है॥ तिसीका
नामदैव है॥ तिसकाजोफलप्राप्त हूया॥ तिसीकानाम
दैव है॥ हे रामजी जोपुरुषऐसेदैवपरायण हूया है॥
जोमुझकोंदैवभोजनकरावेगासोकरेगा॥ अरुमौ
नधारकरअक्रियहोबैठे॥ तिसकोंजोअन्नप्राप्त हो
वे॥ सोभीनेत है॥ अरुजोपुरुषभोगोंकेनिमित्तपुरुषा
र्थकरता है॥ सोभोगोंकोंभोगेगा॥ परअनेकसरीरोंकों
मोक्षपर्यंतधारेगा॥ इहभीनेत है॥ हे रामजी जोआदि
संवितविषेसंवेदनफुरकरविभुताधारी है॥ तिस
हीप्रकारस्थित है॥ तिसकानामभीनेत है॥ तिसनेतके
उलंघणेकोंब्रह्माविष्णुरुद्रादिकभीसमर्थनहीं॥ स
भनेतकेअनुसारचलते हैं॥ अबरकोउकैसेलंघस
के॥ हे रामजी जोपुरुषपुरुषार्थकोत्यागबैठे हैं॥ तिन
कोंफलनहींप्राप्त होता॥ इहभीनेत है॥ अरुजोपुरुष
फलनिमित्तपुरुषार्थकरता है॥ तिसकोंफलप्राप्त हो
ता है॥ इहभीनेत है॥ हे रामजी पुरुषार्थभीसफलही है
जोब्रह्मपदकेनिमित्त होवे॥ जबब्रह्मपदकीओरतीव्र
अभ्यास होता है॥ तबपरमपदकीप्राप्तअवश्य होती है
जबपरमपदप्राप्त भया॥ तबसर्वजगतचिदाकाश हो
भासता है॥ नेतआदिकजोविस्तारकहे हैं॥ सोभीब्रह्म
है॥ ब्रह्मसत्ताहीऐसे होभासती है॥ जैसेपृथ्वीविषेर
ससत्ताहीतृणवल्लीगुच्छेफलहोकरस्थित है॥ तैसे
नेतआदिकसभजगतब्रह्मही होकरस्थित होता है॥

अवरवस्तु कछु नहीं ॥ ॥ इति श्री उतपत प्रकर
णे देवदूत अर्थ विचारो नाम सर्गः ॥ ४५ ॥ श्री वसि
ष्ठोवाच ॥ हे रामजी इह जो तुझ कों जगत भासता है ॥
सो सर्व प्रकार सर्वदा काल सर्व और तें ब्रह्म तत्व सर्व
शक्ति सर्वात्मा होकर स्थित है ॥ सो अनंतात्मा है ॥ जब
तिस विषे चित्त शक्ति प्रगट होती है ॥ अर्थ इह ॥ जो शुध
चैतन्य मात्र विषे अहं का फुरणा होता है ॥ तब आगे ज
गत होभासता है ॥ कहूं उपजता भासता है ॥ कहूं उलास
भासता है ॥ कहूं किंचित भासता है ॥ कहूं निकिंचित भा
सता है ॥ कहूं प्रगट भासता है ॥ कहूं गुप्त भासता है ॥ क
हूं नाना प्रकार भासता है ॥ कहूं अनोना भासता है ॥ ज
हां जैसा तीव्र अभ्यास होता है ॥ तहां तैसा होकर भासता
है ॥ कहते जो आत्मा सर्वशक्ति सर्व रूप है ॥ जैसा फुर
णा तिस विषे द्रिड होता है ॥ सोई रूप हो भासता है ॥ इह
जो नाना प्रकार की संज्ञा कही हैं ॥ तिस तें इतर कछु न
हीं ॥ अरु बुधवानों नें समझावणे के निमित्त नाना प्रका
र के विकल्प जाल कहे हैं ॥ अरु आत्मा विषे विकल्प
जाल को ऊ नहीं ॥ जैसे जल तरंग विषे भेद को ऊ न
हीं ॥ तैसे आत्मा अरु संज्ञा विषे भेद को ऊ नहीं ॥ हे रा
मजी एक संवित है ॥ एक संवेदन है ॥ संवित जो है सो वा
स्तव है ॥ अरु संवेदन कल्पित है ॥ जब संवित चिन्मा
त्र विषे संवेदन फुरती है ॥ तब ऊह जैसे चेतती जाती
है ॥ तैसे आगे होकर स्थित होता है ॥ शुध चिन्मात्र सं
वित विषे अंतर बाह्य कलना को ऊ नहीं ॥ जब स्वभा
विकक्षेन रूप संवेदन होती है ॥ तब आगे दृश्य होभा
सती है ॥ नाना प्रकार के आकार हो भासती है ॥ सो अव
र कछु हूया नहीं ॥ सर्व ब्रह्म ही है ॥ हे रामजी सक्ति अरु
सक्ति वाले विषे भेद अज्ञानी देखते हैं ॥ परमार्थ तें
भेद कछु नहीं ॥ केवल ब्रह्मसत्ता अपने आप विषे इ
स्थित है ॥ तिस के आगे संकल्प जाल आभास होते हैं

जिससंकल्पकीतीव्रताहोतीहै॥ सतहोवेऽअथवाअ
सतहोवे॥ तिसहीकाभानुहोताहै॥ ॥इतिश्रीउ
त्पतप्रकरणेचित्तऽअवतारोनामसर्गः॥५६॥
श्रीवसिष्टोवाच॥ हेरामजीइहजोसर्वगतिदेव
परमात्माईश्वरहै॥ सोस्वछऽअनुभवरूपपरमानंद
ऽआदिऽअंततेंरहितहै॥ तिसशुधचिन्मात्रपरमानं
दतेंप्रथमजीवउपजतानया॥ तिसतेंचित्तउपजा॥
चित्ततेंजगतउपजा॥ श्रीरामोवाच॥ हेभगवनअ
नुभवप्रमाणकरकेजोशुधब्रह्मतत्वसर्वव्यापीदे
शतेंरहितहै॥ तिसविषेतुछरूपजीवकेंसेसतता स्थित
कोंपावतानया॥ श्रीवसिष्टोवाच॥ हेरामजीब्रह्म
सदाभासरूपहै॥ अर्थइह॥ जोअसतरूपजगत॥
जिसकाऽअभासहै॥ सोस्वछहै॥ निराकारनिर्विका
रनिर्मलहै॥ अर्थइह॥ जोआभासरूपजगततेंरहि
तहै॥ अरुमहतहै॥ सोमहततादोप्रकारकीहै॥ ए
कऽअविद्याकृतजगतकीवडाईहै॥ सोऽअविद्यक
वडाईहै॥ इहमिथ्याहै॥ अरुब्रह्मवडाईहै॥ सोसर्वा
त्मकरूपहै॥ सोसर्वदेससर्वकालसर्वसक्तिकरपू
र्णहै॥ सोज्ञानवानोंकाविषयहै॥ तांतेमहतहै॥ अ
रुपरमचैतन्यहै॥ अरुभैरवहै॥ अर्थइह॥ जोजिस
केभयकरचंद्रमासूर्यऽअग्निवायुजलऽअपणीम
र्यादामेंचलतेहैं॥ सोपरमानंदऽअविनासीहै॥ सर्व
ऽओरतेंपूरणहै॥ शुधहै॥ अचेतचिन्मात्रहै॥ ऐसा
जोशांतिपदहै॥ द्वैतभ्रमतेंरहितऐसीजोब्रह्मसत्ताहै
तिसकाजोस्पंदस्वभावहै॥ तिसकानामजीवहै॥ अ
र्थइह॥ जोशुधचिन्मात्रविषेऽअहंऐसेजोफुरणा
है॥ तिसकानामजीवहै॥ तिसऽअनुभवरूपीदर्पण
विषेऽअहंरूपीप्रतिबिंबकेफुरणेकानामजीवक
हीताहै॥ सोजीवऽअपणेसांतिपदकोंत्यागेकीन्यांई
स्थितहै॥ सोचिदात्माहीफुरणेद्वाराऽआपकोंजीव
नया

पजानतभयाहै॥ जैसेद्रवताकरकेसमुद्रहीतरंगरू
पहोभासताहै॥ समुद्रअरुतरंगविषेभेदकछुन
हीं॥ तैसेब्रह्मअरुजीवविषेभेदकछुनहीं॥ हेराम
जीचिद्रूपजोआत्मतत्वहै॥ सोअपणेस्वभावमायाम
यतेंजीवरूपकहीताहै॥ सोजीवआगेंफुरणेकरव
डेविस्तारकोंधारताभयाहै॥ जैसेईंधनकरअग्नि
वडेप्रकाशकोंप्राप्तहोतीहै॥ तैसेजीवफुरणेकर
जगतरूपहोभासताहै॥ जैसेआकाशविषेनीलमा
भासतीहै॥ तैसेजीवअहंभावकरजगतहोभासता
है॥ अहंकृतकोंअंगीकारकरकेकल्पितरूपकीन्याँ
ईस्थितहूयाहै॥ जैसेघनशून्यताकरकेआकाशमें
नीलमाभासतीहै॥ तैसेस्वरूपकेप्रमादकरकेदेस
कालकेपरिछेदसहितअहंकाररूपीजीवभासता
है॥ वास्तवतेंचिदाकाशहीचिदाकाशविषेस्थित
है॥ जैसेवायुकरसमुद्रतरंगरूपहोताहै॥ तैसेसंवे
दनकेफुरणेकरआत्मसत्ताजीवरूपहोतीहै॥ सोजी
वचेतउनमुखत्वकरकेएतीसंज्ञाकोपावताहै॥ चि
तकहीए॥ जीवकहीए॥ मनबुधिमायाप्रकृतअहं
कारकहीए॥ एसेनतिसीकेनामहैं॥ सोजीवसंकल्प
करपंचतन्मात्राकोंचेतताभया॥ तबतिनपंचतन्मा
त्राकेआकारतेंजअणरूपहोकरस्थितभये है॥
तातेंअणउपजाहीउपजेकीन्याँईभासणेलागा
है॥ बहुरउहचित्तसंवेदनतेंजअणकोंअंगीका
रकरकेजगतकोंरचतीभई है॥ जैसेबीजतेंअंगु
रवृत्तहोताहै॥ तैसेसंवेदनविस्तारकोंपावतीभई
है॥ प्रथमएकअंडरूपहोकरस्थितभई॥ बहुरआ
पहीतिसअंडकोंफोडतभई॥ तबतिसविषेजगत
भासणेलागा॥ जैसेगंधर्वनगरभासताहै॥ जैसेस्व
प्नपुरभासताहै॥ तैसेजगतभासणेलागा॥ तिसवि
षेभिन्नभिन्नदेहादिककल्पे॥ जैसेमतकाकीस

नाबालिककल्पताहे॥ तैसेस्थावरजंगमआदिक
नामकल्पनांकरीहे॥ इहपृथिवीहे॥ इहजलहे॥ अ
ग्निवायुआकाशहे॥ तिनपांचोंतत्वोंकीसृष्टिसंक
ल्पतेंउपजतभईहे॥ हेरामजीआदिजोब्रह्मतेंजी
वफुरताहे॥ तिसकानामब्रह्माहे॥ सोपरमात्माविषे
आत्मरूपहोकरस्थितहे॥ तिसनेंआगेंक्रमकर
केजगतकीयाहे॥ जैसेजैसेउहचेततानेया॥ तैसेतै
सेहोकरस्थिततनयाहे॥ जैसेसमुद्रविषे द्रवताक
रकेतरंगहोतेहें॥ तैसेब्रह्मविषेचितस्वभावकर
केजीवहोतेहें॥ सोजीवजबप्रमादकरकेअनात्म
स्वभावकोंधारणेलागा॥ तबकर्मोंकरबंधमान
होणेलागा॥ जैसेजलदृढजडताकोंअंगीकारकर
ताहे॥ तबबरफरूपहोताहे॥ तबजेवडेसाथबंधी
ताहे॥ तैसेजीवजबअनात्माविषेअभिमानकरता
हे॥ तबकर्मोंकेबंधनमोंबंधीताहे॥ हेरामजीकर्मों
काबीजसंकल्पहे॥ अरुसंकल्पजीवतेंफुरताहे॥
अरुजीवस्वभावइसकोंतबहोताहे॥ जबशुधचि
न्मात्रस्वरूपतेंइसकाउपजणाहोताहे॥ उपजणाइ
हे॥ जबप्रमादहोताहे॥ तबइसकोंजीवभावहोताहे
तबआगेंअनेककलनांफुरतीहे॥ तिससंकल्प
कलनांतेंकर्महोतेहें॥ कर्मोतेंजन्ममरणआदिक
नानाप्रकारकेविकारहोतेहें॥ जैसेबीजतेंअंकुर
होताहे॥ अंकुरतेंडालीपत्रहोतेहें॥ आगेंफलफ
लटासहोजातेहें॥ तैसेसंकल्पकर्मोतेंनानाप्रकार सू.क्र ११२
केविकारहोतेहें॥ जैसेजैसेकर्मजीवकरताहे॥ तिन
केअनुसारजन्ममरणअधःऊर्ध्वकोंप्राप्तहोताहे॥
हेरामजीकर्मनाममनकेफुरणेकाहे॥ अरुचित्त
नीफुरणेकानामहे॥ फुरणेहीकानामकर्महे॥ फुर
णेहीकानामदैवहे॥ तिसहीकरइसकोंशुभअशु
भगतिप्राप्तहोतीहे॥ परमनकाआदिकारणब्रह्म

है॥ तिसतें प्रथम मन उतपत्त भया है॥ तिस मन हीसें
पूर्ण जगतकी रचनां करी है॥ जैसे बीजतें अंकुर हो
ता है॥ बहुर फूल फल पत्र टास होते हैं॥ तैसे ब्रह्म
तें मन। मनतें जगत उपजा है॥ ॥इति श्री उतप
त प्रकरणे बीज अंकुर वर्णनं नाम सर्गः॥ ४८॥
॥श्री वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी आदि कारण ब्रह्म है
ब्रह्मतें मन उपजा है॥ अरु मन आत्मा विषे मनन
भाव करके स्थित है॥ तिस मनने भाव अभाव रूपी
जगत कल्प्या है॥ जैसे गंधर्व नगर होता है॥ तैसे म
न कर जगत होता है॥ हे रामजी आत्मा विषे द्वैत ए
ककी कलनां कछु नहीं॥ इस मन करके एती संज्ञा
भई है॥ ब्रह्म। जीव। मन। माया। कर्त्ता। करण। कर्म।
जगत। द्रष्टा। दर्शन। दृश्य। सब मनने द मन करके कृ
ए हैं॥ जैसे समुद्र विषे तरंग उपजते हैं॥ अरु बडे
विस्तारको प्राप्त होते हैं॥ तैसे संवितरूपी समुद्र वि
षे संवेदन करके नानाप्रकारका जगत विस्तारको
पावता है॥ सो जगत असतरूप है॥ काहेतें जो स्थिर
नहीं॥ सदा चलायमान है॥ अरु जो अधिष्ठानरूप
कर देखीये तो सतरूप है॥ ताते द्वैत कछु हूया नहीं
जैसे स्वप्नेका जगत चित्त करके सत असत भासता
है॥ तैसे मन करके सत असत जगत भासता है॥ पर
उपजा कछु नहीं॥ चित्तके भ्रम करके भासता है॥ जैं
से इंद्रजालकी बाजी विषे नानाप्रकारके पदार्थ भा
सते हैं॥ सो भ्रममात्र हैं॥ तैसे इह जगत भ्रममात्र है
हे रामजी इह जगत दीर्घ कालका स्वप्ना है॥ मनके
भ्रम करके सत हो भासता है॥ जैंसे अन्य स्थान वि
षे पुरुषको असम्यक ज्ञान करके चोर जानता है॥ तैं
से जीव अहं भाव करके जगत भ्रमको देखता है॥
जैंसे बालिक परछावें विषे बैताल कल्पता है॥ अ

रूनयपावताहै॥ तैंसेइहपुरूषचित्तकेसंयोगक
रवैतन्भ्रमकोंप्राप्तहोताहै॥ जैसेविचारकरवे
तालन्भ्रमनष्टहोताहै॥ तैंसेंआत्मज्ञानकरजग
तन्भ्रमनष्टहोजाताहै॥ हेरामजीआत्मअनादि
विश्वरूपहै॥ अंसअंसीभावतेंरहितहै॥ शुधचै
तन्यरूपहै॥ जबउहचैतन्यसंवितचेतउनमुख
वहोतीहै॥ जोचैतन्यताकालक्षणहै॥ तिसतेंजी
वकलनांहोतीहै॥ तिसजीवविषेअहंभावहोती
है॥ जोमयहो॥ जबअहंभावकूया॥ तबतिसतेंचि
तफुरताहै॥ चित्ततेंइंद्रीयांहोतीहैं॥ तिनइंद्रीयों
तेंदेहहोतीहै॥ तिसदेहन्भ्रमकरकैमोहितकूया
नरकस्वर्गबंधमोक्षकलनांहोतीहै॥ जैसेबीज
तेंअंकुरपत्रफूलफलहोतेहैं॥ तैंसेंअहंभाव
तेंजगतविस्तारहोताहै॥ हेरामजीजैसेदेहअर
कर्मविषेकछुभेदनहीं॥ तैंसेब्रह्मअरूचित्तवि
षेकछुभेदनहीं॥ तैंसेचित्तअरूजीवविषेकछुभे
दनहीं॥ जैसेजीवअरूचित्तविषेभेदनहीं॥ तैंसे
चित्तअरूदेहविषेभेदनहीं॥ जैंसेचित्तअरूदेह
विषेभेदनहीं॥ तैंसेदेहअरूकर्मविषेभेदनहीं
जैंसेदेहअरूकर्मविषेभेदनहीं॥ तैंसेचित्तअरू
देहविषेभेदनहीं॥ जैंसेचित्तअरूदेहविषेभेदन
हीं॥ तैंसजीवअरूईश्वरविषेभेदनहीं॥ जैंसेजीव
अरूईश्वरविषेभेदनहीं॥ तैंसेईश्वरअरूआत्मा
विषेभेदनहीं॥ जैंसेब्रह्मअरूआत्माविषेभेदनहीं
तैंसेजगतअरूब्रह्मविषेभेदनहीं॥ तातेहेराम
जीसर्वब्रह्महीहूयाकिंउ॥ भूतभविष्यतवर्तमान
विषेसदाअद्वैतसत्ताहीअपनेआपविषेइस्थित
है॥ द्वैतकछुहूयानहीं॥ ॥इतिश्रीउत्पत्तिप्रक
रणेजीवचित्तविचारोनामसर्गः॥४८॥ श्रीव
सिष्ठोवाच॥ हेरामजीइहजोनानात्वभासताहै

सोवास्तवतें एकब्रह्महीस्वरूपहै॥ चेतताकरकेए
ककाअनेकरूपहोभासताहै॥ जैसेएकदीपकतें
अनेकदीपकहोतेहैं॥ तैसेएकपरब्रह्मतेंअनेक
रूपहोभासतेहैं॥ हेरामजीइहअसतरूपीजगत
जिसविषेआभासहै॥ तिसकेजाणेतेंअहंभावन
ष्टहोजाताहै॥ तिसअहंभावकेनष्टहूंएसमस्तलो
कनष्टहोजातेहैं॥ हेरामजीइहपुरुषचित्तरूपहै
अरुचित्तहीविषेजगतहूयाहै॥ जबचित्तनष्ट
होवे॥ तबजगतभ्रमभीनष्टहोताहै॥ जैसेअपणे
चर्नोविषेचर्णदासीपाई॥ तबसर्वपृथिवीचर्मे
करलपेटीकीन्याईहोजातीहै॥ तैसेजबअपणें
चित्तशांतिकोंप्राप्तहोताहै॥ तबसर्वजगतशांति
रूपहोभासताहै॥ जैसेकेलेकाथंभाहोताहै॥ तिस
विषेपत्रोंतेंइतरकछुनहींनिकसता॥ तैसेसर्व
जगतआत्मस्वरूपहै॥ इतरकछुनहीं॥ हेरामजी
एताभ्रमचित्तकरकेहोताहै॥ जैसेबालिकअव
स्थामेंबालक्रीडाकरताहै॥ बहुरयौवनअव
स्थाकोंपाकरविषयोंकोंसेवताहै॥ वृधाअवस्था
चिंताविषेमग्नहोताहै॥ अरुजर्जरीभावकोंपा
वताहै॥ बहुरमृत्युकोंप्राप्तहोताहै॥ कर्मोकेअनु
सारनरकस्वर्गकोंचल्याजाताहै॥ हेरामजीइहस
भहीमनकाभ्रमणाहै॥ जैसेनेत्रदूषणकरकेआ
काशविषेदोचंद्रमाभासतेहैं॥ तैसेअज्ञानकरज
गतभ्रमभासताहै॥ हेरामजीजबचित्तद्वैतकोंन
हींचेतता॥ तबएकद्वैतकाभ्रममिटजाताहै॥ ज
बलगचित्तकीचेतनापडीफुरतीहै॥ तबलगना
नाप्रकारकाजगतपडाभासताहै॥ भ्रांतिकोंनहीं
पावता॥ जबघनचैतन्यकोंपावताहै॥ तबभ्रांतिवा
नहोताहै॥ अरुजगतभ्रममिटजाताहै॥ हेरामजी
जबचित्तफुरताहै॥ तबजगतभ्रमनानाप्रकारके

व्यवहार देखता है॥ अरु नामकरके जानता है॥ जो
मय उपजा हों॥ बन गया हों॥ बडे मरोगा॥ इत्या
दिक विकार अपणे विषे जानता है॥ अरु स्वरूप
तें चेतन्यता इतर नहीं नेई॥ केवल ब्रह्मसत्ता है
अपणे आप विषे इस्थित है॥ हे रामजी इह रूपरूपी
आधि व्याधि रोग इसकों लागा है॥ तिस रोग का ना
स करता आत्मसंवित मात्र है॥ जब चित्त सर्व वास
नाकों त्याग कर अंतर्मुख अपणे स्वभाव विषे इ
स्थित होवे॥ तब तिसी काल मुक्तात्मा शांतिवान हो
ता है॥ हे रामजी आत्मा के आगे अभिलाषा ही आ
वर्ण है॥ अभिलाखा के होवणे कर आत्मा नहीं भा
सता॥ जैंसे बदलों के आवर्णे कर सूर्य नहीं भास
ता॥ बदलों तें रहित सूर्य प्रकाशता है॥ तैंसे अ
भिलाषा के निवृत्त हूए आत्मा प्रगट भासता है॥
तांते निरभिलाषा होकर आत्मपद विषे इस्थित
होवो॥ अरु देहकर अपणे प्रकृत आचार कों भी
करो॥ अरु जो कछु त्यागणे योग्य है॥ तिसकों त्या
गो॥ पर रिदे विषे ग्रहण त्याग की बुधि न होवे॥ हे
रामजी जब तूं संपूर्ण इह रूप की इछा त्यागेंगा॥ तब
तुजकों प्रत्यक्ष आत्मपद पडो भासेगा॥ जैंसे हाथ
विषे बिलफल प्रत्यक्ष होता है॥ जैंसे नेत्रों के आगे
प्रतिबिंब प्रत्यक्ष भासता है॥ तैंसे अभिलाषा के
त्यागें आत्मपद तुजकों प्रत्यक्ष भासेगा॥ जैंसे मह
स्थल विषे सनजलमयी होती है॥ अवर कछू दृ
ष्ट नहीं आवता॥ तैंसे आत्मपद तें इतर कछु न भा
सेगा॥ आत्मतत्व का न जानणां इसी का नाम बंध
न है॥ अरु आत्मतत्व का जाणनां इसी का नाम मो
क्ष है॥ अवर मुक्ति कोऊ नहीं॥ ॥इति श्री उतप
त प्रकरणे इछा उपशम योगो नाम सर्गः॥ ४९॥
॥श्रीरामोवाच॥ हे भगवन मन किस [illegible] कर उत्प(

तकृया है॥ अरु क्या वस्तु है॥ अरु निवृत्त किंउ कर हो
ता है॥ सो कहो॥ ॥श्रीवसिष्ठोवाच॥ ॥ हे रामजी ब्रह्म
अनंत शक्ति है॥ इस विषे अनेक प्रकार का कथन हो
ता है॥ जहां जहां जैसी शक्ति फुरती है॥ तहां तहां तैसा
रूप हो भासता है॥ जब शुध चैतन्य विषे शक्ति फुर
ती है॥ जो अहं अस्मि॥ तब तिस फुरणे का नाम जीव
कहीता है॥ सो चित्त संकल्प का कारण है॥ जब दृश्य
की ओर फुरता है॥ तब दृश्य होकर भासता है॥ बहु
उ नाना प्रकार के कारण कार्य भासते हैं॥ ॥श्रीरामो
वाच॥ ॥ हे मुनीश्वर जो इस प्रकार है॥ तो दैव किस
का नाम कृया॥ अरु कर्म कारण किसको कहते हैं
॥श्रीवसिष्ठोवाच॥ ॥ हे रामजी फुरणा अफुरणा दो
नों चिन्मात्र सत्ता का स्वभाव है॥ जैसे फुरणा अफु
रणा दोनों वायु के स्वभाव हैं॥ जब फुरती है तब भा
सती है॥ अरु जब फुरणे ते रहित होती है॥ तब नहीं
भासती॥ तैसे शुध चिन्मात्र विषे चैतन्यता का लक्ष
ण जो है॥ अहं अस्मि॥ अर्थ इह जो मय ब्रह्म हों॥ तब
तिसका नाम स्पंद बुधीश्वर कहते हैं॥ तिस कर दृ
श्य जगत हो भासता है॥ तिस दृश्य जगत ते रहित हो
वणा तिसको निस्पंद कहते हैं॥ चित्त के फुरणे क
र नाना प्रकार का जगत हो भासता है॥ चित्त के अ
फुरकृये जगत नाम मिट जाता है॥ नित शांति पद
ब्रह्म को प्राप्त होता है॥ हे रामजी कर्म अरु कारण इ
हैं चित्त स्पंद के नाम है॥ अरु चित्त स्पंद ते अनुनव
भिन्न नहीं॥ अनुनव ही चित्त स्पंद कृण की न्याई भा
सता है॥ जीव कर्म का रण बीज रूपी चित्त स्पंद है॥
चित्त स्पंद कर के आगे दृश्य हो भासती है॥ बहुड़
चिदाभास द्वारा देह विषे अहं प्रतीत होता है॥ तिस
देह विषे स्थित होकर चित्त संवेदन दृश्य की ओ
र संसरती है॥ संसरणा भी दो प्रकार का है॥ ता कदी

घे है॥ एक लघु है॥ किन्हूं कों संसरणे विषे अनेक ज
न्म व्यतीत होते हैं॥ अरु किनों कों एक जन्म होता है॥
आदि ही फुरकर स्वरूप विषे स्थित होता है॥ तिनकों
प्रथम जन्म होता है॥ अरु जो आदि उपज कर प्रमा
दी हूए हैं॥ सो दृश्य की ओर चले जाते हैं॥ तिनकों ब
हुते जन्म होते हैं॥ चित्त के फुरणे कर ऐसा अनुभव
करते हैं॥ पुन्य क्रिया करके स्वर्ग कों जाते हैं॥ अरु पा
प क्रिया करके नरक कों जाते हैं॥ इस प्रकार दृश्य
भ्रम कों देखते हैं॥ अज्ञान कर के बंधन विषे रहते
हैं॥ अरु जब ज्ञान की प्राप्त होती है॥ तब भी सुख का अ
नुभव करते है॥ सो बड़ा संसरना है॥ अरु जो एक ही
जन्म पाकर आत्मा की ओर आवते हैं॥ सो अल्प संस
रणा है॥ बहुडे जन्मों के बंधन में नहीं आवते॥ एक
ही जन्म विषे आत्मरूप कों पावते हैं॥ हे रामजी जैसे
स्वर्ण ही भूषण रूप कों धारता है॥ तैसे संवेदन ही
काष्ठ लोष्ट होकर भासती है॥ इस चित्त के संयोग
कर अजन्म अविनाशी पुरुष कों नाना प्रकार के देह
प्राप्त होते हैं॥ जानता है जो मैं उपजा हों॥ बडा अ
वस्थावान हूआ हों॥ अरु मर जावोंगा॥ इत्यादिक भ्र
म कों देखता है॥ जैसे नौका विषे बैठे हूए तट
के वृक्ष भ्रमते दृष्ट आवते हैं॥ तैसे भ्रम कर के अ
वणे विषे जन्म मरण भासते हैं॥ आत्मा के अज्ञान
कर के जीव कों अहं आदिक कल्पना फुरती है॥ जै
से मथुरा के राजा लवण कों मनोराज विषे चंडाल
का भ्रम भासया था॥ तैसे चित्त के फुरणे कर इह
जीव जगत भ्रम कों देखता है॥ हे रामजी इह जगत
सन मन के फुरणे कर पडा भासता है॥ अरु शिव
जो परमात्मा है॥ सो चिन्मात्र है॥ तिस विषे जब चे
तउन्मुखत्व होता है॥ जो मैं यह हों॥ तिसका नाम जीव
है॥ जैसे सोम जल विषे कछुक द्रवता होती है॥ तिस वि

षेतरंगफुरतेहैं॥ तैंसेआत्माविषेजगतफुरतेहैं॥
अरुउपजकरलीनहोजातेहैं॥ हेरामजीचेतन्य
फुरणेकरजीवकीनांईहोभासताहै॥ जैसेसमुद्र
द्रवताकरकेतरंगहोभासताहै॥ तैंसेचेतन्यचेतके
संयोगकरजीवकहीताहै॥ तिसजीवतैंसंकल्पका
फुरणाहोताहै॥ तबमनकहीताहै॥ जबसंकल्पनि
श्चयरूपहोताहै॥ तबबुधिकहीतीहै॥ अरुजब
अहंभावहोताहै॥ तबअहंकारकहीताहै॥ तिस
अहंभावकोपाकरतन्मात्राकीकलनांहोतीहै॥
पृथिवीजलतेजवायुआकाशइहसूक्ष्मभूतहो
तेहैं॥ तिनतैंआगेंजगतहोताहै॥ हेरामजीअसत
रूपाचित्तकेसंसरणेकरजगतरूपहोभासताहै
जैसेनेत्रदूषणकरकेआकाशविषेमुक्तिमाला
भासतीहै॥ जैसेस्वप्नपुरभ्रमकरकेभासताहै॥ तैं
सेचित्तकेसंसरणेकरजगतभ्रमभासताहै॥ हे
रामजीआत्मानित्यशुद्धशांतिरूपहै॥ अरुअप
णेआपविषेस्थितहै॥ तिसविषेचित्तसंवेदन
नेंजगतकोरचाहै॥ तिसजगतकोभ्रमकरकेस
तकीनांईदेखताहै॥ जैसेस्वप्नसृष्टिकोभ्रमक
रकेसतदेखताहै॥ तैंसेइहजगतभ्रमकरकेस
तभासताहै॥ हेरामजीमनकेसंसरणेकानाम
जाग्रतहै॥ अरुअहंकारकानामस्वप्नाहै॥ अरु
चित्तजोहैसजातीरूपचेतणेवालातिसकानाम
सुषुप्तहै॥ अरुचिन्मात्रकानामतुर्यापदहै॥ अ
रुजबशुधचिन्मात्रविषेअसंतप्रणामहोवै॥
तिसकानामतुर्यातीतपदहै॥ तिसविषेस्थितहू
याअरुउत्थानकदाचितनहीहोता॥ तिस
त्रयसत्तातैंसभनउदेहोतेहैं॥ अरुतिसहीविषेस
मलीनहोतेहैं॥ परवास्तवतैंनकोउउपजाहै॥
नलीनहोताहै॥ चित्तकेफुरणेकरसभनभ्रमभा

सताहै॥ जैसे नेत्रदूषणकर मुक्तेमाला भासती है
आकाश विषे। तैसे चित्तके फुरणेकर इहु जग
त भासता है॥ हे रामजी जैसे वृक्षके वधूलेकों आ
काश छेड देता है॥ तैसे मनको आत्मा छेड देता
है। जैसे लोहा निर्मलकीयाहूया आरसी होकर
प्रतिबिंबको ग्रहण करता है॥ तैसे आत्मा विषे
संवेदनकरके जगत प्रतिबिंबित होता है॥ पर
वास्तवतें जगत भीकछु दूसरी वस्तु नहीं॥ जैसे ए
क बीजही पत्र फल फल टास होभासता है॥ तैसे
आत्मसत्ता संवेदनकरके नानारूप होभासती
है। अरु जो ज्ञानवान हैं॥ तिनकों सत अखंड स
त्ता भासती है॥ अरु अज्ञानीकों नानाप्रकार जग
त भासता है॥ अरु आत्मातें इतर कछु नहीं॥ जैसे
समुद्रही तरंग बुदबुदे होभासता है॥ तैसे आत्म
सत्ताही नानाप्रकार जगत होभासती है॥ श्रीरा
मोवाच॥ बडा आश्चर्य है॥ बडा आश्चर्य है॥ जो
असत रूपी जगत सत होकर भासता है॥ अरु
विस्तारसंयुक्त सत भासता है॥ सो अविद्याकरके
पडा भासता है॥ सो इह फुरणा अंतर्मुख होता है॥
अरु बाहिरमुखकें सभासता है॥ श्रीवसिष्ठो
वाच॥ हे रामजी इस दृश्यका असता भाव है॥ अ
नहोती दृश्य मनके फुरणेकर होती है। शुध चि अनुभव
न्मात्ररूप विषे फुरणेकर जीवतुच्छ रूप हूया है॥
सो जीवत्व असत्त है॥ अरु सतकी न्यांई हो भासती
है॥ पर जीव ब्रह्म साथ अभिन्न है॥ जैसे जलतें त
रंग भासते हैं॥ तैसे फुरणेकर भिन्नकी न्याई हो
भासता है॥ तिस जीव विषे संकल्प कलना होती
है॥ तब मनरूप होकर स्थित होता है॥ अरु चित
वनकर चित्त होता है॥ अरु निश्चयकर बुधि हो
ती है॥ अहंकरणेकर अहंकार होता है॥ बडे

काकतालीकीन्याई चिदणु विषे तन्मात्रा फुरणआ
वती है॥ जब शब्द स्रवण की इछा भई॥ तब स्रवण
इंद्री प्रगट भई॥ जब गंध लेणे की इछा भई॥ तब ना
सका इंद्री प्रगट भई॥ जब रस लेणे की इछा भई॥
तब रसनां इंद्री प्रगट भई॥ इसी प्रकार पांचो इंद्री
प्रगट भई हैं॥ भावनां कर के सत ही असत की न्याई
भासणे लागा है॥ हे रामजी इस प्रकार आदि जीव हू
या है॥ तिसकी भावनां कर के आतिवाहक की न्याई
सरीर हो आए हैं॥ चलते भासते हैं॥ तो भी अचल
रूप हैं॥ तांते जेता कछु जगत भासता है॥ सो सन ब्र
ह्म स्वरूप है॥ इतर कछु नहीं॥ प्रमाता भी ब्रह्म है॥ प्र
माण भी ब्रह्म है॥ प्रमेय भी ब्रह्म है॥ पर संवेदन के
फुरणे कर अनेक रूप भासते हैं॥ जैसी जैसी संवे
दन फुरती है॥ तैसा तैसा रूप हो भासता है॥ जब दृ
श्य को चेतती है॥ तब नाना प्रकार की दृश्य हो भास
ती है॥ अरु जब अंतरमुख ब्रह्म कों चेतती है॥ त
ब ब्रह्म रूप ही भासता है॥ हे रामजी इह दृश्य कछु
उपजी नहीं॥ आत्म सत्ता ही सदा अपणे आप विषे
इस्थित है॥ जब दृश्य ही का अभाव हूया॥ तब बंध
क्या कहीये॥ अरु मुक्ति क्या कहीये॥ अरु विचार कि
सका करीये॥ सर्व कलनां का अभाव है॥ हे रामजी इ
ह जो तेरा प्रश्न है॥ तिसका उत्तर सिधांत काल विषे
क होगा॥ ईहां नहीं बनता॥ जैसे कमल फलों की मा
ला जो होती है॥ सो अपणे काल विषे सोभा पावती
है॥ तैसे तेरा प्रश्न सिधांत काल विषे सोभा पावेगा॥
समय बिनां यथार्थ बचन भी निरर्थक होता है॥ तांते
सिधांत काल विषे कहोंगा॥ हे रामजी जेते कछु प
दार्थ हैं॥ तिनों का फल भी समें पाकर होता है॥ समें
बिनां नहीं होता॥ अब पूर्व प्रसंग सुण॥ हे रामजी ब्र
ह्म विषे चेतोन्मुखत्व कर के अहं आदि जीव त्री

आपकों पितामह जानत भया ॥ जैसे स्वप्न विषे आप
को कोऊ देखे ॥ तैसे ब्रह्माजी आपकों देषत भया ॥ सो
ब्रह्मा प्रथम ॐ शब्दकों उच्चारत भया ॥ तिस शब्दत
न्मात्रातें चारो वेद देखत भया ॥ तिसतें अनंतर म
नो राज करके सृष्टकों रचता भया ॥ तब असत
रूप सृष्टि भावना करके सत्त भासणे लागी ॥ हे रा
मजी ब्रह्मसत्तातें जैसा ब्रह्मादिकों का उपजणा हू
या है ॥ तैसे सर्व कीटादिकों का हूया है ॥ जगतका
कारण संवेदन है ॥ सो संवेदन करके जीवोंकों जग
त भ्रम भासता है ॥ जिनकों अधिभौतिक सरीर वि
षे अहं प्रतीत भई है ॥ तिस कर आपणे निश्चय अ
नुसार अधिभौतिक सरूप भई है ॥ अरु ब्रह्माजीकों
अतिवाहक शक्ति भई है ॥ जैसी जैसी जिसकों नि
श्चय भई है ॥ तैसी तैसी तिसकों भासता है ॥ ब्रह्मा
विषे ब्रह्माकी शक्तिका निश्चय है ॥ मानुषों विषे मा
नुष शक्तिका निश्चय है ॥ कीटों विषे कीटोंका नि
श्चय हूया है ॥ हे रामजी जैसी जैसी वासना संवित
विषे होती है ॥ तिसके अनुसार अनुभव होता है ॥ शु
द्ध चिन्मात्र विषे जो चेतना मुखत्व हूया है ॥ तिसका
नाम जीव हूया है ॥ तिस विषे जो नाना रूप भासता है ॥
सो पुरुष है ॥ तिस विषे जो फुरणा है ॥ सो कर्म है ॥ जैं
से जैसे फुरता है ॥ तैसे तैसे भासता है ॥ हे रामजी आ
त्मसत्ता विषे जो अहं हूया है ॥ तिसका नाम चित्त है
तिसनें आगें जगत रचा है ॥ सो जगत अविचारित
सिध है ॥ विचार कीयेतें नष्ट हो जाता है ॥ जैसे अवि
चार करके आपणे पिछावें विषे बाल वैताल कल्प
ता है ॥ विचार कीयेतें वैताल नष्ट हो जाता है ॥ तैसे
आत्मविचारतें चित्त अरु जगत नष्ट हो जाते हैं ॥ हे दोनों
रामजी ब्रह्मसत्ता सदा अपणे आप विषे स्थित है ॥
तिस विषे चित्त कलनां कोऊ नहीं ॥ अरु प्रमाता प्र

माणगमेयइहभीब्रह्मतेंइतरकछुनहीं॥ तोएकअ
रुदोकीकलनांकैसेहोवे॥ जैसेससेकेसिंगअस
तहैं॥ तैसेआत्माविषेद्वैतकलनांअसतहै॥ हेरा
मजीइहब्रह्मांडभीभावनामात्रहै॥ जिसकोंसतभा
सताहै॥ तिसकोंबंधनकाकारणहै॥ जैसेघराइ
णअपणाघरबनावतीहै॥ सोबंधनकाकारणहो
तीहै॥ तैसेजोजगतकोंसतमानताहै॥ तिसकोंवे
हीबंधनकरताहै॥ तिसकरजन्ममरणकोंदेषता
है॥ अरुजिसकोंजगतअसतभासताहै॥ तिसकों
बंधननहींकरता॥ उसकोंदृढ्याभासहै॥ हेरामजी
ब्रह्मसत्तासमकाअपणाआपहै॥ तिसविषेजै
साकिसीकोंनिश्चाहोताहै॥ तिसकोंअपणेअनु
भवकेअनुसारभासताहै॥ कईनिमषविषेक
ल्पअतीतहोएकोंअनुभवकरतेहैं॥ अरुकई
कल्पविषेनिमषहूएकोंअनुभवकरतेहैं॥ वा
स्तवतेंकृयाकछुनहीं॥ जगतकाउपजणाअरु
बंधमोक्षभीमिथ्याहै॥ रसभीमिथ्याहै॥ रसलेण
वालाभीमिथ्याहै॥ शुधब्रह्मअद्वैतसदाअपणे
आपविषेस्थितहै॥ परआत्माकेअज्ञानकर
शुधभीअशुधभासताहै॥ हेरामजीआत्मके
अज्ञानकरकेऐसेभासताहै॥ जैसेजलअरुत
रंगविषेभेदमूरखमानतेहैं॥ तैसेब्रह्मअरुज
गतविषेभेदमूरखजानतेहैं॥ जैसेस्वर्णअरुभू
षणविषेभेदअज्ञानीमानतेहैं॥ तैसेब्रह्मअरु
जगतविषेभेदमूरखमानतेहैं॥ ज्ञानवानकोंस
बचिदाकाशभासताहै॥ हेरामजीजबआत्मस
ताविषेअनात्मरूपदृश्यकीचेतनाहोतीहै॥ त
बदृश्यरूपहोकरभासतीहै॥ तिसतेंअनंतरअहं
भावहोताहै॥ बहुडतन्मात्राकीकलनांहोतीहै
बहुडशब्दअर्थकीकलनांहोतीहै॥ इसीप्रका

रचितसत्ताविषेजैसाचेतनताफुरतीहै॥ तैसातैसा
रूपहोभासनेलागतीहै॥ सतअसतपदार्थस
नेवासनोंकेअनुसारभासतेहैं॥ जैसेस्वप्नकीसि
ष्टफुरआवतीहै॥ सोअनुभवरूपहीहै॥ तैसेइह
जगतफुरताहै॥ सोअनुभवरूपहै॥ तातेसनसि
ष्टचिन्मात्रहीरूपहै॥ अरुचिन्मात्रहीविषेसिष्ट
है॥ अरुसर्वकीसत्तारूपचिन्मात्रहीहै॥ अंतर
बाह्यअर्धऊर्धसनचिन्मात्रहीहै॥ प्रमाताप्रमा
णप्रमेयइहसनचिन्मात्रहीहै॥ अरुतुर्यातीत
पदनित्यस्थितहै॥ ॥इतिश्रीउतपतप्रकरणे
सतउपदेशोनामसर्गः॥५॰ ॥श्रीवसिष्टोवाच
हेरामजीइसप्रसंगपरपुरातनइतिहासहै॥ तिस
विषेमहाधर्मोंकासमूहहै॥ सोसुण॥ ॥अ
थकथाकर्कटीकीलिख्यते॥ एकमहाश्याम
काजलकेपर्वतकीन्याईकर्कटीनामराक्षसीहि
मालयपर्वतकेसिखरपरहोतभईहै॥ विषूचका
मीतिसीकानामहूयाहै॥ स्थिरविद्युलीकीन्याई
तिसकेनेत्रभए॥ अरुअग्निकीन्याईतिसकीजि
ह्वाचमत्कारकरे॥ वदनखअरुऊचासरीरतिस
का॥ सोभोजनकरकेतृप्तकदाचितनहोवे॥ तबउ
सकेमनविषेउपजी॥ जोजंबूद्वीपकेसंपूर्णजीवों
कोंभोजनकरों॥ तबहीतृप्तहोवोंगी॥ अन्यथामेरीतृ
प्तनहोवेगी॥ अरुआपदाइरकीयेतेंदूरनीहोती
है॥ तातेंउद्यमकरों॥ एकाग्रचित्तहोकरतपकरों॥ हे
रामजीऐसेविचारकरकेएकांतहिमालयपर्वत
कीकंदराविषेएकटेककरस्थितभई॥ दोनोंभुजा
ऊर्धकोंधारतीं॥ अरुनेत्रआकाशकीओरकीए॥ मा
नोमेघकोंपकडतीहै॥ सरीरअरुप्राणस्थितकरत
भई॥ लिखीमूर्तकीन्याईहोगई॥ सीतउष्णसमकर
रही॥ अरुसरीरजर्जरीभावहूया॥ सहस्त्रवर्षव्यतीत

तनेया॥दारुणतपकीया॥तबब्रह्माजीआए॥तब
राक्षसीमनकरनमस्कारकीया॥अरुमनविषेवि
चारकीया॥जोमेरेवरकेनमित्तआएहैं॥तबब्रह्मा
जीआकरकहा॥हेपुत्रीतुजबडातपकीयाहै॥उब
खडीहो॥जोकछुवांछितहै॥सोवरमांग॥कर्कटी
योवाच॥हेभगवनमयलोहकीन्याईविसूचका
होवों॥जोजीवोंकेरिदेविषेप्रवेशकरजावों॥हेरा
मजीजबऐसेमूर्खराक्षसीकहा॥तबब्रह्माजीक
हाऐसेहीहोवेगि॥तेरानामभीप्रसिधविसूचकाहो
वेगा॥हेराक्षसीदुराचारीजोजीवहोवें॥तिनकेरि
देविषेतूंप्राणवायुकेमार्गजाप्रवेसकरेगी॥अरु
जोगुणवानतेरेनिवर्तकरणेकेअर्थिउंमंत्रकों
पडेंगे॥जोहिमालयकेउतरशिखरविषेकर्कटी
नामराक्षसीविसूचकाहै॥सोदूरहोवे॥अरुदुःखी
कोंचंद्रमाकेमंडलविषेचितवे॥जोअमृतकेकुंड
विषेबैठाहे॥अरुराक्षसीहिमालयपर्वतकेशि
खरपरगई॥ऐसेचितवकरइसमंत्रकोंपडे॥शु
चपवित्रहोकरतबतिसकोंतेंत्यागजावेंगी॥इह
मंत्रहै॥तिसविषेतूंप्रवेशनकरसकेंगी॥हेराम
जीजबइसप्रकारब्रह्माजीकहा॥तबकहिकर
आकाशकोंउदे॥तबइंद्रअरुसिधोंकेमार्गग
ए॥अरुउहजोमंत्रकर्कटीकोकहाथा॥ब्रह्माजी
नेसोसिधोंनेश्रवणकीयाथा॥तिनोंनेतिसमंत्रकों
प्रसिधकीया॥तबकर्कटीकासरीरसूक्ष्महोव
नेलागा॥जैसेसंकल्पकापहाडसंकल्पकेही
णहूयेतेंछीणहोजाताहे॥तैसेक्रमकरकेप्रथ
मजोमेघवतआकारथा॥सोघटकरकिछुइकेस
मानभया॥फेरमानुषकेसमान॥फेरहस्तमात्र
फेरअर्दसमात्र॥फेरलोहेकीसूईकीन्याईहोतेभ
या॥जैसेकमलकीतंततहोतीहै॥तैसेहोगया॥हे

रामजी ऐसे रूपको धारकर कर्कटी देखत भई ॥
जो अविचारी पुरुष हैं ॥ सो तृणकी न्याईं सरीरकों
त्यागते हैं ॥ अरु जो पूर्व अपरकों विचारते हैं ॥ सो
पाछे कष्ट नहीं पावते ॥ जो पुरुष पूर्व अपर विचा
रसें रहित हैं ॥ सो पाछे कष्ट पावते हैं ॥ अनर्थरूप
होकर जीवोंको कष्ट देते हैं ॥ एक पदार्थकों भला
जानकर तिसके निमित यत्न करते हैं ॥ न धर्मकी
ओर देखते हैं । न सुखकी ओर देखते हैं ॥ इस प्रका
र मूर्खता देसी भोजनके निमित बडे गंभीर सरीर
कों त्यागकर तुछ सरीरका अंगीकार करता ॥ सो ए
क सरीर सूक्ष्म कीया ॥ अरु दूसरा सरीर पुर्यष्टि
का भई ॥ महा सूक्ष्म सरीरकों जो इंद्रीयां ग्रहण न
कर सकें ॥ तैसे सरीर साथ जा प्रवेश करे ॥ कहूं पुर्य
ष्टिका साथ जाय प्रवेश करे ॥ दुःख देवे प्राणीयोंकों
विपर्यय करे ॥ तब प्राणी कष्ट पावें ॥ रक्त आदिक
जो रस हैं तिनकों पान करे ॥ एक बूंद सों उदर पूर्ण
हो जावे ॥ परंतु तृष्णा निवर्त न होवे ॥ वायु चले तिसकर
होत विषे गिड पडे ॥ चिकड विषे दबी जावे ॥ अरु च
नीके तले आवे ॥ घास तृण विषे दबी जावे ॥ जो नीच
पापी होवें तिनोंकों कष्ट देवे ॥ अरु जो गुणवान होवें
तिनोंके निकट न जावे ॥ जो मंत्र पडें तिनोंतें भी छोड
जावे ॥ हे रामजी मूर्खता करके एते कष्टकों पावती
भई ॥ वाल्मीकोवाच ॥ हे भारद्वाज जब इस प्रका
र वसिष्टजी कहा ॥ तब सूर्य भगवान अस्ति भया सा
यंकालका समा हूया ॥ सर्व सभा नमस्कार करके स्ना
नकों गए ॥ वीचारसंयुक्त रात्रिको बीतावते भये ॥
सूर्यकी किरणोंसाथ बहुर आन बैठे ॥ ॥ इ
ति श्री उतपत प्रकरणे विसूचका व्यवहारो नाम
सर्गः ॥ ५१ ॥ श्रीवसिष्टोवाच ॥ हे रामजी जब इ
स प्रकार प्राणीयोंके मारणे विषे उसकों केते वर्ष

अतीत भए॥ तब उसके रिदे विषे विचार उपजत भ
या॥ जो बडा कष्ट है॥ बडा कष्ट है॥ इह विसूचका स
रीर मुझ को कैसे प्राप्त भया है॥ प्रथम सर्वता कर के
इह वर ब्रह्मा जी ते मांग पाया था॥ म सर्वता बडे दुःख कों
प्राप्त करती है॥ कैसा मेघ की न्याई मेरा सरीर था॥ जो
सूर्यादिकों को भी अछादन लेता था॥ मंदराचल पर्व
त की न्याई मेरा उदर था॥ वाडवाग्नि की न्याई मेरी
जिह्वा कहां गई॥ जैसे कोऊ अनागी पुरुष चिंतामणि
कों त्याग कर के चकमक कों अंगीकार करे॥
तैसे मय बडे सरीर कों त्याग कर तुछ सरीर कों अं
गीकार कीया है॥ कैसा सरीर है॥ जो एक बूंद कर तृप्त
हो जाता है॥ परंतु मैं नहीं घरती॥ उस सरीर साथ
मय निर्भय विचरती थी॥ इह सरीर तो पृथिवी के
किणके साथ भी दबा जाता है॥ तांते बहुड उसी सरी
र के निमित तप करों॥ उह कवन पदार्थ है॥ जो उद्यम
कीये हाथ नहीं आवता॥ हे रामजी इस प्रकार पूर्व
ले सरीर के निमित तप करने कों समर्थ भई॥ तब
हिमालय पर्वत के निर्जन स्थान विषे एक टेक के
आधार इस्थित भई॥ मुख ऊर्ध्व कर के तप करने ला
गी॥ हे रामजी जब पवन चले॥ तब उह इस के मुख
मों फल अथवा जल के किणके आन राखे॥ पर इ
ह अंतर ग्रहण न करे॥ मुख कों मूंद लेवे॥ पवन दे
ख कर आश्चर्य कों प्राप्त भया॥ जो मय सुमेरादि
कों को भी चलायमान कीया है॥ पर इस का निश्चा
चलायमान नहीं होता॥ मेघों की वर्षा के छिकडे वि
खेद बी गई॥ पर निश्चा जिउ का तिउ रहा॥ हे रामजी
इस प्रकार उस कों सहस्र वर्ष अतीत भया॥ इउ ब
राप कर के उस का चित निर्मल भया॥ तब सर्व से
कल्पों के त्यागे ते तिस कों आत्म ज्ञान की प्राप्त भ

ई॥ वह प्रकाश कौं पाया॥ जो परावर चेतन्य का साक्षा-
तकार हूया॥ तिस कर परम पावन रूप भई॥ तब
चेतन सी होती भई॥ अर्थ इह॥ जो चैतन्य विषै उस
को एकता भाव होत भया॥ तिस के तप कर सर्व
लोक तपायमान भए॥ तब ईंद्र नारिद सों प्रश्न
कीया॥ जो ऐसा तप किसने कीया है॥ जिसके तप
कर लोक जलने लागे हैं॥ तब नारिद कहा है इं-
द्र सात सहस्र वर्ष कर्कटी नाम राक्षसी ने तप
कीया है॥ तिस कर चित विसूचिका भई थी॥ तिस
कर बहुत कष्ट पाया॥ अरु लोकों कौ भी कष्ट
दीया॥ जैसे विराट आत्मा सर्व विषै प्रवेश कीया
हैं॥ तैसे उन सर्व देहों विषै प्रवेश कीया॥ पर ज-
हां मंत्र जाप होवै॥ तहां निवर्त हो जावै॥ अरु जहां
मंत्र जाप न होवै॥ तिसके अंतर प्रवेश कर के
रक्त मांस भोजन करै॥ परंतु त्रिप्त न होवै॥ मन वि-
षै तृष्णा रहै॥ सूक्ष्म सरीर कर धातु विषै रहती
जावै॥ बहुत कष्ट को पाकर विचार कीया॥
जो उद्यम कर सभ कछु प्राप्त होता है॥ तौं तैं पू-
र्वले सरीर के निमित्त तप करौं॥ तब एक गाडं-
पंखी ऊहां आन बैठा॥ कछु भोजन करणे ली-
गा॥ तिस की चुंच के मार्ग विसूचिका भी अंतर
चली गई॥ तब वह पंखी कष्ट पाकर उडा॥ उह
विसूचिका उसकी पुर्यष्टिका के साथ मिलकर
उसकौं प्रेरता॥ हिमालय पर्वत के बन कौं उ-
सको ले गई॥ ऊहां उस पंखी कौ देह कर धारी॥ जैं-
से जोगेश्वर संवेदन को त्याग कर सुखी होता
है॥ तैसे पंछी देह कर सुखी भया॥ तब उसी स-
रीर साथ विसूचिका तप करने लागी॥ हे राम

जी इस प्रकार इंद्र सुणकर उसके देखणे निमित्त प
वन को चलाया ॥ तब पवन आकाश को छोडकर
भूतल विषे उतरता ॥ लोकालोक पर्वत को लंघकर
स्वर्ण की पृथिवी लंघी ॥ फेर समुद्र द्वीप लंघकर क्र
म सों हिमाले के बन विषे सूक्षम सरीर साथ उस
कों देखत भया ॥ पवन उसकों चलावता रहा ॥ अरु सूर्य
तपायरहा ॥ अरु चलायमान न भई ॥ प्राणवायु का
भी भोजन न करे ॥ तब पवन आश्चर्यमान होकर क
हा ॥ हे तपस्विनी तूं किस निमित्त तप करती हैं ॥ हे राम
जी जब ऐसे पवन कहा ॥ तब भी विसूचका न बोली
तब पवन कहा भगवती विसूचका बडा तप कीया
है ॥ अब कोऊ कामना इसकों नहीं ॥ ऐसे कहिकर प
वन चला ॥ क्रम सों इंद्र के पास आया ॥ इंद्र विसूच
का के दर्शन महात्म निमित्त पवन कों कंठ लगाया
आदर कीया जो तूं बडे पुन्यवान का दर्शन करि आ
या हैं ॥ पवन भी सब वृत्तांत सुणाया ॥ अरु कहा हे रा
जन उसके तप के तेज कर हिमाले की सीतलता आ
च्छादी गई है ॥ तुम ब्रह्माजी पास चलो ॥ नही तो उस
के तप कर जगत जलजाता है ॥ हे रामजी जब इस प्र
कार पवन कहा ॥ तब इंद्र देवता पवन गणों सहि
त ब्रह्माजी के पास आए ॥ प्रणाम करके बैठगए ॥
तब ब्रह्माजी कहा ॥ जो तुमारा वृत्तांत मय जाण्या है
हे इंद्र तुम जावो मय विसूचका पास जाता हों ॥ हे रा
मजी ब्रह्माजी इस प्रकार कहिकर इंद्र कों विसूच
का पास आया ॥ तिसकों देखकर आश्चर्यमान हू
या ॥ जो तृण की न्यांई विसूचका थी ॥ परसुमेर तें भी
अधिक धीर्य धारता है ॥ जैसे मध्याह्न का सूर्य ते
जवान होता है ॥ तैसे इसका तप तेजवान है ॥ अरु प

रब्रह्म विषे इस्थित पाई है॥ अरु जगत इसका अब शांति होग
या है॥ तांते इह वंदना करणे योग्य है॥ हे राम अतीत बंगा का
ज्ञातल विषे स्थित होकर ब्रह्माजी कहा॥ हे पुत्री कर्कटी तें
अब वर कों ग्रहण कर॥ तब विसूचका विचार कर कह
णे लागी॥ जो कछु जानणे योग्य था सो मय जाण्या है॥ अरु
जो पावणे योग था सो मय पाया है॥ शांति रूप भई हों॥ संपू
र्णे संसय मेरे निवर्त भए हैं॥ अवर वर साथ मेरा क्या प्रयो
जन है॥ इह जगत अपणे संकल्प तें उपजा है॥ जैसे बाले
क कों अपणे पिछावें विषे वेताल भासता है॥ तिसकर भय
कों पावता है॥ तैसे मय स्वरूप के प्रमाद कर भटकती
फेरी हों॥ अब इष्ट अनिष्ट की मुझ कों इच्छा नहीं॥ अब मय
निर्विकल्प होकर शांति पद विषे इस्थित हों॥ हे रामजी अै
सकहि कर विसूचका तूष्णी हो रही॥ तब ब्रह्माजी वीतराग
प्रसन्न बुधि उसकी भावी कों देख कर कहते भया॥ ब्रह्मो
वाच॥ हे कर्कटी तें कछु वर कों ग्रहण कर॥ कछु इक का
ल तु जनतल विषे विचरणा है॥ भोगों कों भोग कर तें वि
देहमुक्ति होवेंगी॥ अब तु जीवन्मुक्ति होकर विचरणा है
नतके निम्न कों लंघ कोऊ नहीं सकता॥ अरु जब तूं तप क
रणे लागी थी॥ तब पूर्व देह पावणे का संकल्प कीया था॥ उ
ह संकल्प अब सबल भया है॥ जैसे बीज विषे वृक्ष का सद
भाव होता है॥ सो काल पाकर विस्तार कों पावता है॥ तैसे तेरे
विषे पूर्व सरीर का संकल्प था॥ सो अब प्राप्त होवेगा॥ उसी
जैसा सरीर तें पाकर हिमालय के बन विषे विचरेंगी॥ हे
पुत्री तेरे तांई अनिरखवग योग हूया है॥ अनिरखवग कही
ये॥ जैसे कोऊ छाया के निमित्त अंब वृक्ष के नीचे आन बैठे
तिस कों छाया भी प्राप्त होवे॥ अरु फल भी प्राप्त होवे॥ सो ते
रे तांई हूया है॥ तैंने जो नेम कीया था सरीर के वध होणे का
सो भी होवेगा॥ अरु ब्रह्म तत्व शांति रूप भी प्राप्त हूया है
हे पुत्री तेरा तामसी सरीर विषे जीवन्मुक्ति होकर विचरेंगी

१५५
१३९

139

अवरजन्मतुजकोऊनहींपावणा॥ अरुइसजन्मविषेतंपरम
शांतिवानरहेंगी॥ अरुसरितकालकेआकाशकीन्याईनि
र्मलरहेंगी॥ जबतेरीचत्तबाह्यमुखफुरेगी॥ तबसभजगत
तुजकोंआत्मरूपभासेगा॥ व्यवहारविषेभीसमाधिरहेगी॥
अरुसमाधिविषेभीसमाधिरहेगी॥ पापीजीवोंकोंतंभोज
नकरेगी॥ न्यायबोधकतेरानामहोवेगा॥ अरुविवेकपालते
रादेहहोवेगा॥ तांतेपूर्वलेदेहकोंअंगीकारकर॥ श्रीवसि
ष्ठोवाच॥ हेरामजीऐसेकहिकरब्रह्माजीअंतरध्यानहो
तभये॥ तबसूचीकहाऐसेहीहोवें॥ हमकोंदोनोंतुल्यहें॥ त
बजैसेबीजतेंवृक्षहोताहे॥ तैसेक्रमकरतिसकासरीरव
धगया॥ कैंसेवध्या॥ जोप्रथमेंप्रदेशमात्रहूया॥ फेरहस्तमा
त्र॥ फेरपुरुषमात्र॥ फेरवृक्षमात्र॥ फेरयोजनप्रमाणहोग
या॥ जैसेसंकल्पकापहाडएकक्षणविषेहोजाताहे॥ तैसे
उसकासरीरवधगया॥ ॥इतिश्रीउतपतप्रकरणेसूची
सरीरलाभोनामसर्गः॥ ५२॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हेराम
जीजैसेवर्षाकालकाबदलसूक्ष्मतेंसूक्ष्महोताहे॥ परती
बहीवधजाताहे॥ तैसेसूचीमयी॥ बहुडकर्कटीराक्षसीका
सरीरहोतभई॥ जैसेसर्पकुंजत्यागकरबहुडआत्मत्वक
रकेनहींग्रहणकरता॥ तैसेराक्षसीआत्मत्वकरकेग्रहण
नकीया॥ ऐसेसरीरकोंपाकरबहुडपद्मासनबांध्या॥ सं
वितसत्ताविषेनिर्विकल्पस्थितभई॥ षटमासपहाडकेसि
खरकीन्याईसमाधिस्थितरही॥ बहुडप्रारब्धवेगकरजा
गआई॥ तबवृत्तबाह्यमुखभई॥ अरुक्षुधाआनलागी॥
काहेतेंजोसरीरकेस्वभावसरीरपर्यंतरहतेहें॥ तबविचा
रतभई॥ जोविवेकीहेंतिनोंकोंनमारोंगी॥ जोसरीरनष्टहो
वे॥ तोभीन्यायविनांभोजननकरोंगी॥ देहादिकसभसंक
ल्पमात्रहें॥ मुजकोंनमरणेकीइछाहे॥ नजीवणेकीइछा
हे॥ हेरामजीऐसेविचारकरसूचीतृष्णीहोबेठरही॥ राक्ष
सीस्वभावकात्यागकीया॥ इसनिमित्तसूर्यभगवानआकाश

वाणीकरतभया॥हेकर्कटीतूंजाकरअज्ञानीजीवोंको
भोजनकर॥जबतूंभोजनकरेंगी॥तबउनकाकल्या
णहोवेगा॥अज्ञानीपापीजीवोंकाउधारकरनांभीसं
तोंकास्वभावहे॥जोविवेकीपुरुषहैं॥तिनोंकोतूंमत
भोजनकर॥अरुजोतेरेउपदेसकरज्ञानवानहोवे
तिसकोंभीनमार॥उहबोधआत्माहोवेगा॥अरुजो
उपदेसकरभीबोधात्मानहोवे॥तिसकोभोजनकर
तबराक्षसीकहा॥हेभगवनतुमअनुग्रहकरकहाहे
इसीप्रकारमुजकोंब्रह्माजीभीकहाथा॥हेरामजीऐ
सेकहिकरसूचीहिमालेकेसिखरतेंउतरआई॥तहां
किरातोंकेग्राममध्ये॥तिनविषेविचरतेलागी॥रात्रिभी
स्यामअरुराक्षसीभीअरुतमालवृक्षभीस्याममहा
अंधकारनासे॥जैसेभोंमरेकीपीठस्यामहोतीहे॥मा
नोकाजलकामेघस्थितभयाहे॥ऐसीस्यामताविषे
जोकिरातदेसकाराजामंत्रीसहितवारजात्राकोंनि
कस्याथा॥तिनकोंआवतादेख्या॥तबराक्षसीविचा
रतभई॥जोमुजकोंभोजनआनप्राप्तभयाहे॥इहमू
रखअज्ञानीहोवें॥तोदेहदुनोंकोंमारहे॥इनोंजीवोंको
जीवणकरकेकुअर्थसिधनहीहोता॥नलोकसिध
होताहे॥नपरलोकसिधहोताहे॥ऐसेजीवोंकाजी
वणदुःखकेनिमित्तहै॥आदिब्रह्माजीकीनेतहे॥जो
पापीयोंकोंमारणायोग्यहे॥अरुजोगुणवानहैं॥ति
नकोंमारणापरवाननहीं॥सोगुणवानभीदोप्रकार
केहैं॥एकअभिमानी॥अदंभीशांतिवानहैं॥अरुजोपुं
न्यकरणेवालाहे॥सोभीगुणवानहै॥अरुमहागुण
वानब्रह्मवेत्तेहैं॥तिनोंकेजीवणेकरसभलोकोंका
कार्यसिधहोताहे॥जोमेरासरीरभोजनविनांनष्ट
होजावे॥तोभीगुणवानकोंनमारोंगी॥जोउदारात्मापु
रुषहैं॥सोपृथिवीकासूर्यचंद्रमाहे॥तिनोंकीसंगत
करस्वर्गभीहोताहे॥अरुमोक्षभीहोताहे॥जैसेसुर

जीवनीबूटीकरमृतकभीजीवताहै ॥ तैंसेसंतोंकेसंग
करअमरहुवीताहै ॥ तांतेंमयइनकीग्रहमकरपरी
क्षाकरों ॥ कदाचितइनमीज्ञानवानहोवें ॥ जोज्ञानवा
नहैं ॥ सोपूजणेयोग्यहैं ॥ अरुजोमूर्खहैं ॥ तोदंडदेणे
योग्यहैं ॥ मयइनकोंभोजनकरोंगी ॥ ॥ इतिश्री
उतपतप्रकरणेराक्षसीविचारोनामसर्गः ॥ ५२ ॥
श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हेरामजीतबउहराक्षसीउन
कोंदेखकरगर्जणेलागीमेघकीन्यांई ॥ अरुकहत
भई ॥ अरेअटवीरूपीआकाशकेचंद्रमांसूर्यतुमक
वनहो ॥ बुधिवानहो ॥ अथवाउर्बुधीहो ॥ अबकहोते
आएहो ॥ अरुक्याआचारहेतुमारा ॥ तुमतोमुजकों
ग्रासआनप्राप्तभएहो ॥ अबमयतुजकोंभोजनक
रतीहों ॥ राजोवाच ॥ अरीभौतिकसरीरीइसतुछ
सरीरकोंपाकरक्याकरतीहैं ॥ हमकोंदेखकरजोतूं
गर्जतीहैं ॥ सोतेराशब्दहमकोंभोमरीकेशब्दवतभा
सताहै ॥ हमकोंकछुभयनहीआवता ॥ हेराक्षसी
इहतेरासरीरमायामात्रहै ॥ इसतुछस्वभावकोंत्या
गकर ॥ अरुजोकछुतेराअर्थहै ॥ सोकहो ॥ हमपूर्ण
करदेवेंगे ॥ हेरामजीजबइसप्रकारराजेकहा ॥ तबे
तिसकेवचनावणेनमित्तराक्षसीप्रलयकालकेमेघ
कीन्यांईबड़ेतवडेशब्दकरतभई ॥ जैसेपवंडोंके
हा चलेहोतेंशब्दहोतेहैं ॥ तैसाशब्दकरणेलागी ॥ सन
द्धिशब्दकरनेरहीं ॥ गीवाअरुभुजाऊर्धकर
केभयानकशब्दकरे ॥ विद्युलीकीन्यांईनेत्रोंकोंचे
मकावे ॥ तिसकोंदेखकरसभजीवनयपावें ॥ अरु
राजामंत्रीधीर्यसोंरहे ॥ तबमंत्रीकहा ॥ हेराक्षसी
तेंऐसेशब्दअर्थपडीकरतीहैं ॥ इनकरतेराप्र
योजनकछुसिधनहीहोता ॥ इसआरंभकोंत्याग
करअपणाअर्थकहो ॥ बुधिवानजोपुरुषहोते

हैं ॥ तिसऽअर्थको ग्रहण करते हैं ॥ जोऽअपर्त्ति विषे भू
त होता है ॥ जोऽअपर्त्ति विषे भूत नहीं होता ॥ तिसके नि
मित्त यत्न नहीं करते ॥ सो हम तेरा विषय भूत नहीं
तुझ जैसे सहस्रही मर्दन किये हैं ॥ हे राक्षसी हमारे
धीर्य रूपी पवन कर तुझ जैसी अनंत मखीयां तृण
पत्रवत उडती जाती हैं ॥ तांते नीच स्वभावकों त्याग
कर स्वस्ति चित्त हो ॥ जो कछु अपणा प्रयोजन है ॥ सो
प्रगट कर ॥ बुधिवान जो व्यवहार करते हैं ॥ सो स्व
स्ति चित्त होकर करते हैं ॥ स्वस्ति चित्त होये विनां व्य
वहार की सिधता नहीं होती ॥ इह आदि नेत है ॥ तांते
स्वस्ति चित्त होकर अपणां अर्थ कहु ॥ हम तेरा अर्थ
सिध कर देवेंगे ॥ हमारे पासों स्वप्ने विषे भी अर्थी व्य
र्थ नहीं गया ॥ सजनका अर्थ पूर्ण करते हैं ॥ तांते अप
णा प्रयोजन कहु ॥ हे रामजी जब ऐसे मंत्री कहा ॥ त
ब राक्षसी चितवती भई ॥ जो इह बडे उदार आत्मा दृष्ट
आवते हैं ॥ अरु धीर्यवान हैं ॥ अब मैं इनकों जान्या
है ॥ अरु इनमुजकों जान्या है ॥ मुजसों इनका नास न य
होवेगा ॥ काहेतें जो इह ज्ञानी पुरुष हैं ॥ अरु ब्रह्मसत्ता
विषे इस्थित हैं ॥ ऐसा निश्चा ज्ञानवानों विनां अव
र किसीका नहीं होता ॥ परकदाचित अज्ञानी होवें
तब बहुड संदेहकों अंगीकार करके पूछती हों ॥ ज्ञा
नवानकों पाकर जो नहीं पूछते ॥ सो भी नीच बुध हैं
हे रामजी ऐसे विचार कर बहुड पूछती भई ॥ तुम
कवन हो ॥ तुमारा आचार क्या है ॥ हे निहपापो महा
पुरुषोंकों देखकर मित्रभाव उपज आवता है ॥
मंत्रीयोवाच ॥ किरातदेशका इह राजा है ॥ अरु
मय इसका मंत्री हों ॥ अरु रात्रि विषे तुम सारखों
के मारणे निमित्त आए हैं ॥ अरु रात्रि दिन विषे हमा
रा एही आचार है ॥ जो जीव धर्मकी मर्यादा त्यागणे

हारे हैं ॥ तिनोंकों हम मारणे हारे हैं ॥ जैसे ईंधनकों
अग्नि नास करती है ॥ तैसे हम दुष्टोंकों नास करते
हैं ॥ राक्षस्योवाच ॥ हे राजन इह तेरा दुष्ट मंत्री
है ॥ जिस राजाका मंत्री भला नही होता ॥ उह राजा भी
भला नही होता ॥ अरु जिस राजाका मंत्री भला होता
है ॥ तिसकी प्रजा भी शांतिवान होती है ॥ भला मंत्री सो
कहीता है ॥ जो राजाकों न्याय विषे जोडे ॥ अरु विवेक
सिखावे ॥ जो राजा विवेकी होता है ॥ तो शांतात्मा होता
है ॥ जब राजा शांतिवान हूया ॥ तब प्रजा भी शांतिवा
न होती है ॥ सम गुणवान तैं जो उत्तम गुणवान है ॥ सो
आत्मज्ञानी है ॥ जो आत्मज्ञानी है ॥ सो राजा है ॥ अरु
सोई मंत्री है ॥ तिस विषे प्रनता भी होवे ॥ अरु समदृ
ष्टि भी होवे ॥ अरु जो अनुता समदृष्टि तें रहित होवे ॥ सो
न राजा है ॥ न मंत्री है ॥ हे राजन जो उत्तम ज्ञानवान पुरु
ष होत ब तुम कल्याणरूप हो ॥ जो ज्ञानतें रहित हो पुरुष
तब तुमकों भय भोजन करोंगी ॥ तुमकों छुटणेका
उपाव तही है ॥ जो मय प्रश्नोंका समूह करती हों ॥ ति
नोंका उत्तर देवो ॥ जो प्रश्नोंका उत्तर दीया ॥ तब मेरे
प्रणाम योग्य हो ॥ अरु मेरा अर्थ होवेगा ॥ सो कहोंगी जो
तुम पूर्ण करोगे ॥ अरु जो प्रश्नोंका उत्तर न दीया ॥ त
ब तुमकों भोजन करोंगी ॥ ॥ इति श्री उतपत्तिप्र
करणे राक्षसी विचारो नाम सर्गः ॥ ५४ ॥ श्रीव
सिष्ठोवाच ॥ हे रामजी जब इस प्रकार राक्षसी क
हा ॥ तब राजा कहा ॥ तैं प्रश्न कर ॥ हम उत्तर देवेंगे
॥ राक्षसीयोवाच ॥ हे राजन इह एक कवन अ
णु है ॥ जो अनेकरूप हूया है ॥ जो एक है ॥ अरु अ
नेकरूप हूया है ॥ अरु एककें अनेक नाम हूए हैं
अरु उह कवन अणु है ॥ जिस विषे अनेक ब्रह्मां
ड हैं ॥ जैसे समुद्र विषे अनेक बुदबुदे होते हैं ॥ तैं
से एक अणु विषे अनेक ब्रह्मांड उपजकर लीं

न होते हैं ॥ अरु उह आकाश कवन है ॥ जो पोलतें रहित है ॥ अ
रु अनंत ब्रह्मांड अणों की न्याई विचरते हैं ॥ अरु उह कवन
अणु है ॥ जो न किंचिन ॥ न अकिंचिन है ॥ अरु उह कवन अ
णु है ॥ जिस विषे तेरा अहं अरु मेरा अहं फुरता है ॥ अरु
उह एक कवन अणु है ॥ जिस विषे अहं त्वं फुरते हैं ॥ अरु
उह कवन है ॥ चलता है नही चलता ॥ अरु उह कवन अ
णु है ॥ जो पाषाणवत स्थित है ॥ अरु उह कवन है ॥ जिस
आकाश विषे चित्र कीये हैं ॥ कछु नही कीया ॥ अरु उह
कवन अणु है ॥ जो दाहतें रहित है ॥ अरु उह कवन अणु
है ॥ जिसतें सूर्य चंद्रमा प्रकाशते हैं ॥ अरु आप अविनासी
है ॥ अरु उह कवन अणु है ॥ जो नेत्रौं कर देषीया नही जाता
अरु सन प्रकाशकों प्रकाशता है ॥ अरु उह कवन अणु
है ॥ जो स्वाभाविक प्रकाशवान है ॥ अरु उह कवन अणु है
जिसतें सत असत दोनों भासते हैं ॥ अरु उह कवन अणु
है ॥ जो दूर भी अदूर है ॥ अरु उह कवन अणु है ॥ जिस विषे
सुमेर आदिक समाय रहे हैं ॥ अरु उह कवन अणु है ॥ जि
स विषे निमेषमों कल्प व्यतीत होते हैं ॥ अरु कल्पमों निमे
ष होता है ॥ अरु उह कवन अणु है ॥ जो प्रत्यक्ष है ॥ अरु न
ही प्रत्यक्ष ॥ अरु उह कवन अणु है ॥ जो अनेक जन्मों के
जतन कर पाईता है ॥ अरु नही पाईया ॥ अरु उह कवन अ
णु है ॥ जो अणुताको त्यागे बिनों सुमेर आदिक आकारको
प्राप्त होता है ॥ अरु उह कवन अणु है ॥ निहस्वाद है ॥ अरु
आप समस्वादरूप है ॥ अरु उह कवन अणु है ॥ जो आप
ले दीपकों समर्थ नही ॥ अरु सनकों दीप रहा है ॥ उह
कवन अणु है ॥ जिसकर सन जीव जीवते हैं ॥ अरु उह क
वन अणु है ॥ जो सनका द्रष्टा है ॥ दृश्य साथ मिलकर दृश्य
होता है ॥ जिसके नास हूएं भी आपकों अखंडित देखता है
अरु उह कवन अणु है ॥ जिसके जान्यतें द्रष्टा दर्शन दृ

रूपलयहोजातेहैं॥ अरुउहकवनअणुहै॥ जिसविषेदे
तनीअभिन्नहै॥ अरुअद्वैतहै॥ उहकवनअणुहै॥ जि
सविषेजिसकीतंतनीसुमेरकीन्याईस्थूलहै॥ हेराजन
जबतुजमेरेप्रश्नोंकाउत्तरदीया॥ तबमेरेपूजणेयोग्य
हो॥ अरुजबउत्तरनदीया॥ तबतुममेरेउदररूपीज्व
लाकाईंधनहो॥ दोनोंमेरेउदरविषेजापडोगे॥ तिसतेंअ
नंतरतुमारीसर्वप्रजाकोंग्रासलेवोंगी॥ श्रीवसिष्ठोवाच
हेरामजीस्यामंमेघकीन्याईजिसकाआकारहै॥ ऐसीराक्ष
सीइसप्रकारकहिकरतूष्णीहोरही॥ ॥इतिश्रीउत
पत्तिप्रकरणेराक्षसीप्रश्नवर्ननंनामसर्गः॥ ५४ ॥
श्रीवसिष्ठोवाच॥ हेरामजीअर्धरात्रिकेसमेमहाशून्य
वनविषेराक्षसीमहाप्रश्नजबकीये॥ तबमहामंत्रीति
सकोंउत्तरकहतभया॥ मंत्रीयोवाच॥ हेराक्षसीइह
जोतुमप्रश्नकीयेहैं॥ सोएकपरमात्माहीकेकीयेहैं॥ सो
सुणु॥ जोपरमात्माअलक्षहै॥ अर्थइहजोइंद्रीयोंकावि
षयनहीं॥ अरुमनआदिकोंकीचितवनोंतेंरहितहै॥ ऐ
सीसत्ताजोचिन्मात्ररूपहै॥ अरुआकाशतेंभीसूक्ष्महै॥
इसकारणतेंतिसकोंअणुकहीताहै॥ सूक्ष्मताकरकेअ
णुसंज्ञाहै॥ प्रमाणकरकेअणुसंज्ञानहीं॥ काहेतेंजोसर्वा
त्माहै॥ तिसअणुविषेअनेकजगतसतअसतकीन्याई
स्थितहैं॥ अरुजबतिसचिदणुविषेसंवेदनफुरतीहै॥ त
बउहीसंवेदनजगतकीन्याईहोभासतीहै॥ तिसकरकिंचि
तकहीताहै॥ सृष्टिकेहोणेतेंपूर्वनिःकिंचितकहीताहै॥
इंद्रीयोंकाविषयनहीं॥ तांतेनिहकिंचितहै॥ सोईचिदणु
सर्वकाआत्माहै॥ अरुसोईचिदणुएकहीआभासकरके
अनेकरूपभासताहै॥ अरुउहीचिदणुआकाशरूपहै
अरुमनवाणीतेंअतीतसर्वात्माहै॥ तिसचिदणुविषेअने
कजगतफुरणेकरस्थितहैं॥ जैसेसमुद्रविषेअनेकतरं

ग उपजते हैं॥ बहुड़ लीन होते हैं॥ तैसे फुरणे कर
चिदणु विषे अनेक जगत भासते हैं॥ अरु मन इं
द्रीयों ते अतीत है॥ अरु अपणे प्रकास कर प्रका
शता है॥ हे रामजी सो हमारा तेरा सर्व का अहं आत
मा एक ही है॥ अहं को अपेक्षा कर त्वं है॥ त्वं की
अपेक्षा कर अहं है॥ अथवा सर्व आप ही होता
है॥ त्रिपुटी रूप भी उही है॥ अरु उही चिदणु अ
नेक योजनों पर्यंत जाता है॥ अरु कदाचित नहीं
चल्या॥ काहे ते जो संवित अनंत रूप है॥ योजनों के
समूह तिस के अंतर हैं॥ न कोऊ आवता है॥ न को
ऊ जावता है॥ अपणे आकाश कोश विषे सर्व देश
काल स्थित है॥ तां ते इह जेता कछु जगत भासता
है॥ सो सभ आतम विषइ स्थित है॥ जैसे आकाश
विषे घट आदिक इस्थित हैं॥ तैसे चिदणु विषे दे
श काल स्थित हैं॥ अरु सभ का ईश्वर कर्ता उही
है॥ अरु सभ का भोक्ता उही है॥ स्वरूप तें न कर्ता है
न भोक्ता है॥ अरु अपणी सूक्ष्मता को न त्याग कर
जगतों के धारणे हारा भी उही है॥ अरु स्वरूप तें
उपजा कछु नहीं॥ सभ चिन्मात्र रूप है॥ अलक्ष
भाव करके दूर भी उही है॥ अरु चिदणु भाव करनि
किटं उही है॥ ज्ञान भाव करनि किट रूप उही है॥ अ
रु अज्ञान करके दूर भी उही है॥ हे रामजी जेता कछु
जगत भासता है॥ सो सभ संवेदन रूप है॥ जैसी संवे
दन फुरती है॥ तैसा रूप हो भासता है॥ जैसे स्वप्ने के ए
क क्षण विषे सत असत जगत फुर आवते हैं॥ अरु
बहुते काल का अनुभव होता है॥ जैसे दुःखी को थो
डा काल भी बहुत हो भासता है॥ अरु सुखी कों बहु
ता काल भी थोड़ा हो जाता है॥ जैसे हरीचंद कों एक
रात्रि विषे बहुते बर्षों का अनुभव हूया था॥ तैसे दे
श काल हो भासते हैं॥ सो सभ चिदणु आत्मा का अ

नुभव है॥ जैसे आकाश विषे घन शून्यता करके व
ह्य भासते हैं॥ तैसे घन चैतन्यता करके जगत भासता
है॥ हे राक्षसी एक द्वैत की कल्पना कोऊ नहीं॥ अ
ण होते ही पदार्थ पड़े भासते हैं॥ सो सम स्वच्छ निर्म
ल प्रकाश रूप आत्मा ही है॥ अवर कछु दूया नहीं
॥ ॥इति श्री उत्पत्ति प्रकरणे राक्षसी प्रश्नोत्तर व
र्णनं नाम सर्गः॥५६॥ राक्षस्योवाच॥ बड़ा आ
श्चर्य है॥ बड़ा आश्चर्य है॥ मंत्री तो इह परम पावन
वचन कहे हैं॥ अब कमल नयन राजा भी कछुक
है॥ राजोवाच॥ हे राक्षसी इह जो जाग्रत जगत की
प्रतीत है॥ सो जब इसका अभाव होवे॥ तब आत्म
प्रतीत होती है॥ जब सर्व संकल्प की चेतनता का संन्या
स होवे॥ तब आत्मा का साक्षात्कार होवे॥ सो आ
त्म सत्ता कैसी है॥ जिस विषे संवेदन फुरणे कर ज
गत हो भासता है॥ अरु संवेदन के अभाव तें सृष्टि
का भी अभाव हो जाता है॥ तिसका अधिष्ठान रूप
आत्म सत्ता है॥ सो वाणी तें अगोचर है॥ हे राक्षसी
इह जो द्रष्टा दर्शन दृश्य है॥ तिसके अंतर आत्म
अनुभव सत्ता है॥ सो परमात्मा का रूप है॥ सो परमात्मा ही द्र
ष्टा दर्शन दृश्य रूप हो भासता है॥ तिस विषे जगत
लीला मात्र है॥ अरु लीला मात्र विषे भी आप अखं
डित जिउ का तिउ है॥ हे राक्षसी द्रष्टा बिना दृश्य न
ही होती॥ जैसे भोक्ता बिना भोग्य नहीं होता॥ तैसे
द्रष्टा बिना दृश्य नहीं होती॥ जैसे पिता बिना पुत्र न
ही होता॥ तैसे द्रष्टा बिना दृश्य नहीं होती॥ हे राक्षसी
द्रष्टा कों दृश्य उपजावणे की समर्थता है॥ अरु दृ
श्य कों द्रष्टा के उपजावणे की समर्थता नहीं॥ का
हे तें जो दृश्य जड़ है॥ जैसे स्वर्ण तें भूषण बनता है
अरु भूषण तें स्वर्ण नहीं बनता॥ तैसे द्रष्टा तें दृ
श्य होती है॥ दृश्य तें द्रष्टा नहीं होता॥ हे राक्षसी स्व

र्ण विषे भूषण बुधि है॥ सो मोह दृष्टि है॥ तैसे द्रष्टा विषे
जो दृश्य भासती है॥ सो अज्ञान दृष्टि है॥ जब द्रष्टा दृश्य
को चेतता है॥ तब दृश्य होइ भासती है॥ द्रष्टा नही भास
ता॥ जब द्रष्टा आपणे स्वभाव विषे स्थित होता है॥ तब
दृश्य नही भासती॥ जैसे जब लग भूषण बुधि होती है
तब लग स्वर्ण नही भासता॥ जब लग स्वर्ण का ज्ञान
होता है॥ तब भूषण बुधि नही रहती॥ तैसे ज्ञान कर
के त्रिपुटी का अभाव हो जाता है॥ केवल शुध स्वरूप
भासता है॥ हे रामजी परम आतम जो निःस्वाद रूप है
सोई सर्व स्वादों को उपजावता है॥ जहां जहां रस सत्ता
है॥ तहां ही चिदाणु कर होती है॥ जैसे आदर्श विना प्र
तिबिंब नही भासता॥ तैसे सर्व स्वाद चिदणु विना न
ही होते॥ सर्व को रस देणेहारा उही है॥ सर्व आत्मा
भाव करके सभ का अधिष्ठान है॥ हे रामजी जेते क
छु आकार भासते हैं॥ सो आत्म मात्र है॥ जैसे आकाश
विषे नीलता भासती है॥ तैसे आत्मा विषे विश्व भा
सती है॥ आत्मा सर्वगत है॥ अरु सर्व का अनुभव रू
प है॥ हे रामजी तिस विषे व्याप व्यापक भाव नही॥ का भी
हे ते जो सर्व आत्मा है॥ अरु सर्व आप उही है॥ जब ति
स शुध चिन्मात्र विषे संवेदन फुरती है॥ तब तैसा रू
प हो भासता है॥ तिस विषे व्याप व्यापक सन कलना
होती है॥ जैसे जल विषे द्रवता करके तरंग बुदबुदे
हो भासते हैं॥ तैसे संवेदन करके उपजे पदार्थ आत्म
रूप हैं॥ इतर नही॥ आत्मा देश काल के परिछेद ते
रहित है॥ केवल शुध चिन्मात्र है॥ अरु सर्व रूप हो
कर भी उही स्थित भया है॥ अरु सर्व का अनुभव भी
तिसी विषे होता है॥ सो तो बोध सत्ता मात्र है॥ तिस वि
षे द्वैत एकक लना कैसे कहीए॥ हे रामजी जब क
छु द्वैत होता है॥ तब एकता भी होती है॥ जो द्वैत ही न हो
वे॥ तो एक कैसे कहीए॥ जैसे धूप की अपेक्षा कर

छायाकहीतीहै॥अरछायाकीअपेक्षाकरधुपकहीं
तीहै॥तैंसेएककीअपेक्षाकरद्वैतकहीताहै॥जहांए
ककहणाभीनहोवै।तहांद्वैतकैंसेकहीए॥इसकलनां
तेंरहितचिन्मात्ररूपहै॥अरुजगतभीतिसतेंव्यतिरे
कनहीं॥जैंसेजलअरुद्रवताविषेकछुभेदनहीं॥तैं
सेचिन्मात्रअरुजगतविषेकछुभेदनहीं॥हेरामजी
नानाप्रकारकेंआरंभदृष्टआवतेहैं।तोभीआत्मसत्ता
समहै॥जैंसेबीजकेंअंतरवृक्षहोताहै॥सोनानाप्रका
रकेंरूपधारताहै॥तैंसेसर्वजगतब्रह्मसत्ताविषेइ
स्थितहैं॥अरुउहीरूपहैं॥इतरकछुनहीं॥जैंसेस्वर्ण
तेंभूषणभिन्ननहीं॥तैंसेजगतब्रह्मतेंभिन्ननहीं॥का
हतेंजोद्वैतकछुवस्तुनहीं॥आत्मसत्ताहीद्वैतकीन्यां
ईहोभासतीहै॥जैंसेस्वर्णभूषणरूपहोताहै॥तैंसे
आत्माजगतरूपहोभासताहै॥हेरामजीजबइस
कोंसम्यकबोधहोताहै॥तबद्वैतभीअद्वैतरूपभास
ताहै॥काहतेंजोअज्ञानकरकेद्वैतकलनांहोतीथी
अज्ञानकेंअभावहूए।द्वैतकाभीअभावहोजाताहै
तांतेंब्रह्मअरजगतविषेभेदकछुनहीं॥जैंसेजल
अरुतरंगविषेभेदकछुनहीं॥तैंसेआत्माअरुज
गतविषेभेदनहीं॥हेरामजीद्वैतअरुअद्वैतजाण
नांहीबंधनकाकारणहै॥द्वैतअरअद्वैतकीकल
नांतेंरहितहोवणा॥इसीकोंपरमपदकहतेहैं॥अ
रुद्रष्टादर्सनदृश्यजोजगतहै॥सोसभचिदअणुमा
णविषेइस्थितहै॥तिसीविषेसुमेरआदिकहैं॥सु
मेरकया।जोचिदअणुविषेअनंतत्रिलोकीयांइस्थित
हैं॥जैंसेबीजविषेवृक्षहोताहै॥तैंसेचिदअणुविषे
जगतस्थितहै॥हेरामजीबीजप्रणामकरवृक्षभा
वकोंप्राप्तहोताहै॥अरुचिदअणुप्रणामकरजगत
रूपनहीहोता॥चिदअणुकाकछुनहींजगतरूपहो
भासताहै॥परवास्तवतेंकछुउपजानहीं॥केवल

हो

ग्र चेतन चिन्मात्र ग्रपणे ग्राप विषे इस्थित है॥ हे राक्षसी उह चिदणु संवेदन करके ग्रणु उदे होउ दे रूप हो कर भासता है॥ जैसे बीज वृक्ष हो भासता है तैसे ग्रात्मा ग्रनेक रूप हो भासता है॥ न कछु उदे हूया है॥ न नाश होवेगा॥ हे राक्षसी तिस चिदणु ते जिसकी तंत सुमेर की न्याई स्थूल है॥ जैसे जिसकी तंत ते सुमेर स्थूल है॥ तैसे चिदणु ते जिसकी तंत इस्थूल है॥ दृश्य रूप है॥ ग्ररु चिदणु मन सहित षट इंद्रीयों का विषय नहीं॥ तिस चिदणु विषे ग्रनंत सुमेरादिक इस्थित हैं॥ सो क्या रूप है॥ जैसे ग्राकाश विषे शून्यता होती है॥ तैसे चिदणु विषे जगत है॥ हे राक्षसी जिसको ग्रात्मबोध हूया है॥ तिसको जगत सुषुप्त की न्याई होता है॥ तिस पद विषे मुक्ति पुरुष सदा स्थित हैं॥ ग्ररु परमार्थ ते जगत भी ब्रह्म स्वरूप है॥ भिन्न भाव कछु नहीं॥ ॥६

इति श्री उतपत प्रकरणे विसूचीउपाख्याने परमार्थ पिंडी वर्नने नाम सर्गः॥ ५७ ॥ श्री वसिष्ठोवाच॥

हे रामजी इस प्रकार राजा के मुख ते श्रवण करके कर्कटी जीवों की हिंसा को त्याग कर ग्रंतर ते शीतल भई॥ ग्ररु परमानंद को प्राप्त भई॥ जैसे वर्षा काल विषे मोरणी प्रसन्न होती है॥ तैसे राजा के वचन श्रवण करके कर्कटी परमानंद को प्राप्त भई॥ राक्षसीयोवाच॥ हे राजन तुम महा पावन वचन कहे हैं॥ तां ते तुमारा बोधमय यनें विमल देखा है॥ बोध रूपी सीतल सूर्य है॥ ग्ररु समरस सों पूर्ण है॥ रागद्वेष ग्रादिक मल ते रहित है॥ जैसे पूर्णमासी का चंद्रमा सीतल ग्ररु ग्रंमृत कर पूर्ण होता है तैसे तुमारा बोध सीतल ग्ररु ग्रंमृत कर पूरण है हे राजन तेरे विवेक सों एक कण मैं देखा है॥ सो तुम मेरे पूजणे योग्य हो॥ तुमारे वचनों कर मेरी बुधि

निर्मल भई है॥ जैसे चंद्रमां कों देखकर कमल प्रफु
लित होता है॥ तैसे तुमारे वचन कर मेरी बुधि प्रफुलि
त हो आई है॥ हे राजन उह कवन है॥ जो दीपक हाथ वि
षे होवे॥ अरु कोंए विषे गिडे॥ तैसे उह कवन है॥ जो संतों
के संग कर भी दुःखी रहे॥ संतों की संगत कर सभ दुःख
नष्ट होते हैं॥ हे राजन तुम जो इस बन विषे आए हो॥
सो का प्रयोजन है॥ तुम पूजणे योग्य हो॥ अरु अब प्र
योजन कहो॥ राजोवाच॥ मेरे नगर विषे मानुष
रहते हैं॥ तिनों कों विसूचका रोग आन लागा है॥ ति
स विसूचका कर बहुत कष्टवान भए हैं॥ औ बैद
भी बहुत कर रहे हैं॥ पर दुःख दूर नहीं होता॥ अरु
हम सुण्या है॥ जो एक राक्षसी है॥ उही जीवों कों कष्ट
पडी देती है॥ तिसका मंत्र भी है॥ तिस मंत्र कर निवार
ण हो जाती है॥ तिसके मारणे निमित्त मय रात्रि कों वी
रयात्रा करणे निकस्या हों॥ जो उह राक्षसी तूं है॥ तो
हमारा तुमारा संवाद भी हूया है॥ तिस वचनों कों अं
गीकार कर के प्राणीयों की हिंसा करणी छोड दे॥ र
किसी कों कष्ट न दे॥ राक्षसी योवाच॥ हे राजन तु
म सत कहा है॥ मय किसी जीव को न मारोंगी॥ राजो
वाच॥ हे कमल नयनी तुम जो कहा॥ जो मय कि
सी जीव कों न मारोंगी॥ सो तेरा तो आहार जीव है॥
जीवों के मारणे बिनां तेरे सरीर का निर्वाह कैसे
होवेगा॥ राक्षसी योवाच॥ हे राजन षट सहस्र वर्ष
मय समाधि विषे रही हों॥ तिसते उपरंत समाधि
खुली॥ तब क्षुधा लागी॥ अब बहुड हिमालय प
र्वत की कंदरा विषे जाकर समाधि मों जुडोंगी॥
जैसे मूर्ति लिखी होती है॥ तैसे इस्थित होवोंगी
जब समाधि ते उतरोंगी॥ तब अमृत की धारणा
सों विश्राम करोंगी॥ जब तिसते उतरोंगी॥ तब
सरीर कों त्याग देवोंगी॥ पर जीवों की हिंसा न क

समाध्य
भली प्रकार ध्यान से स्थित
इंद्रियें एकाग्रता
विनती

रोगी॥ हे राजन जिस प्रकार हिं साधर्म कों अंगीका
र कीया है॥ सो सुण॥ मुज कों जब क्षुधा व्रती ला
गी॥ तब तिस के निवारणे अर्थ हिमालय पर्वत
के उत्तर शिखर कों लंब न है॥ तिस विषे एक स्वर्ण
की शिला है॥ तिस के पास मय लोह के थंभ की
न्याई प्रकार साथ जीवों के नासन मित तप कर
णे लागी॥ बहुत वर्ष व्यतीत भए॥ तब मन वांछि
त वर मुज कों ब्रह्मा दीया॥ तब मेरे दो सरीर भए
एक आधार भूत सूची की न्याई॥ अरु दूसरा पु
र्यष्टि का भया॥ तब मय विसूचका नाम राक्षसी भ
ई॥ तिस सरीर साथ मय अनेक जीवों कों भोजन
करों॥ अंतर तिस के प्रवेश करों॥ अरु ब्रह्मा जी मु
ज कों कहा॥ जो गुणवान होवेगें॥ तिस पर तेरा बल
न चलेगा॥ अरु तूं मंत्र के पडनें कर अब वी तें भी
निवर्त हो जावेंगी॥ हे राजन उसी मंत्र कों तुम भी
अंगीकार करो॥ तिस मंत्र के पाठ कर सभनों का
साध रोग नष्ट हो जावेगा॥ ब्रह्मा जी का उपदेश
है॥ तिस कों तुम नदी के कंठे पर पवित्र हो कर ग्र
हण करो॥ तिस पाठ कर तेरी प्रजा का दुःख निव
र्त होवेगा॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी जब इस
प्रकार अर्धरात्र के समे राक्षसी कहा॥ तब निक
ट नदी के तीर पर राजा मंत्री राक्षसी तीनों गए॥ व्य
तिरेक तें एकत्र सुहृद भए॥ तीनों पवित्र हो कर न
दी के तीर पर बैठे॥ तब जो मंत्र राक्षसी कों उपदेस
कीया था ब्रह्मा जी॥ सोई मंत्र विसूचका जी तिसं यु
क्त राजा कों उपदेश कर तभई॥ जिस के जपणे
कर कार्य सिध होवे॥ तिस मंत्र कों क्रम कर के उप
देस कीया॥ अरु हिमालय की ओर चलनें लागी
तब राजे कहा॥ हे महादेवी तुम हमारे गुरु हैं॥ तुमा
रे विद्यमान हम कछु प्रार्थना करते हैं॥ सो अंगी

146

कारकरणी॥ जोमहापुरुषोंकीसुहृद्दतानित्यबढ
तीरहती है॥ अरु तुमारा सरीर भी इछाचारी है॥ तो तें
लघसरीरकोंधारो॥ कैंसासरीरजोमनकेहरणहा
रा॥ भूषणवस्त्रसंयुक्त इस्त्रीकासरीरधारकरको
ऊकालहमारे नगर विषे निवासकरो॥ राक्षसीयो
वाच॥ हेराजनमयतोलघुअकार भीधारोंगी॥ प
रमेरे भोजन देणेकोंसमर्थनहोवोगे॥ जोलघुसरी
रस्त्रीकाधारोंगी॥ तोभीमेरास्वभावतोराक्षसीका
है॥ इसीकातत्तकरणेसमानजनोंकीन्याईनहीहो
ता॥ जैसाकब्बूसरीरोंकास्वभावहै॥ सोस्थिष्टपर्यंत
तैंसाहीरहताहै॥ राजोवाच॥ हेकल्याणरूपराक्ष
सी तें स्त्रीसमानसरीर धारकरहमारेग्रह विषेचल
रहो॥ जोचोरपापीमेरेमंडलविषेआवेगा॥ सोहमते
रे विद्यमान करेंगे॥ तबतूं स्त्रीरूपकोंत्यागकरराक्ष
सी सरीर साथ तिनकों लेजावणा॥ अरु एकोंतबै
ठ हिमालेपर्वतकीकंदरा विषेजा भोजन करणा
काहे तें जो बडे भोजन करणेवालेकोंएकांतरखाव
णा सुखरूप है॥ जबतिसकोंभोजनकरतेंतृप्त होवें
गी॥ तबसोयरहणा जबनिद्रातेंजागेगी॥ समाधिवि
षेस्थित होवणा॥ जबसमाधितें उतरैंगी॥ तबबडे
डे हमारेपास आवणा॥ हम तेरे नमित्तबंदीजन ए
कठेकर राखेंगे॥ तिनोंकोंलेजावणा॥ तिनोंकाभोज
नकरणा॥ जोधर्मकेनमित्त हिंसाकरीतीहै॥ तिसको
मरणभीमरणानही॥ उसपरदयाहोतीहै॥ काहे तें
जोपापकरणेतेंछूटताहै॥ अरु नलेकमआवता
है॥ राक्षसीयोवाच॥ हेराजन तुमयुक्तपूर्वकवच
नकहेहैं॥ मयइस्त्रीकासरीरधारकरतुमारेसाथ
चलतीहों॥ युक्तपूर्वकवचनजोकहेहैं॥ सोतिनोंकोस
नकोऊमांनताहै॥ श्रीवसिष्टोवाच॥ हेरामजीइ
सप्रकारराक्षसीकहिकरमहासुंदरस्त्रीकासरी

तुम

अभ्यागतंहिंगा

रधारता॥ पटूटेकंकनआदिकनानाप्रकारकेभूष
णधारे॥ अरुपटकेवस्त्रपहिरकरराजाकेपा
सचली॥ राजामंत्रीआगेंचलेजावें॥ अरुस्त्रीपाछें
चलीजावे॥ तबतिसीरात्रिकेसमेंराजातिसकोंअ
पणेग्रहमोंलेआया॥ एकांतस्थानविषेजावेंवे॥
रात्रिविषेपरस्परचर्चाकरतेरहे॥ जबप्रातकाल
भया॥ तबसोलागपवतीस्त्रीराक्षसीराजाकेअंत
हपुरविषेजावेगी॥ जोकछुस्त्रीयोंकाव्यवहारहे॥
सोकरतीरहे॥ राजाअरुमंत्रीअपणेव्यवहारवि
षेस्थितभए॥ जबषट्दिनव्यतीतभए॥ तबराजा
केमंडलविषेतीनसहस्रचोरपापात्माबांधेआए
उहसभहीराजाकर्कटीकेविद्यमानकीए॥ तबउ
हराक्षसीकावडासरीरधारकरउनकोंभुजामंडल
विषेपालीया॥ जैसेमेघबुंदोकोंधारताहै॥ तैसेउनकों
भुजाविषेपाकरहिमालयपर्वतकेशिखरकोचली
जैसेकिसीकोंस्वर्णप्राप्तहोताहे॥ तबकंकालप्रसन्नहो
ताहे॥ तैसेउहप्रसन्नभई॥ अरुहिमालयकेशिखरप
राई॥ तहांतृप्तहोकेभोजनकीया॥ तबसुखीहोकरसो
यरही॥ दोदिनपर्यंतसोईरही॥ उपरंतजागकरसमा
धिविषेजुडी॥ पंचसहस्रवर्षपर्यंतसमाधिविषेजुडीर
ही॥ तिसतेंजबउतरी॥ तबबऊडराजाकेपासआई
इसप्रकारजबआवे॥ तबउहराजाप्रजाकरे॥ जेतेक
कष्टजनएकठेहोवें॥ सोतिसकेविद्यमानकरे॥ तब
उहलेजावे॥ हिमालयपर्वतकीकंदराविषेभोजनजा
करे॥ भोजनकरकेसोयरहे॥ जबजागेतबसमाधिवि
षेस्थितहोवे॥ जबसमाधितेंउतरेतबराजाकेपासआ
वे॥ हेरामजीइसप्रकारजीवन्मुक्तिहोकरउहराक्षसी
स्वभावकोंकरतीरही॥ अनेकवर्षव्यतीतभए॥ तबरा
जाविदेहमुक्तिहूया॥ बऊडजोकोऊउसमंडलकारा
जाहोवे॥ तिसराजाकीभीराक्षसीसाथसुहृदताहोवे

।। ।।इतिश्रीउतपतप्रकरणेराक्षसीसुहृदतताव
र्तनंनामसर्गः।। ५८।।श्रीवसिष्ठोवाच।। हेरामजी
जबउहराक्षसीआवे।।तबभी।किरातदेशकाराजा
पूर्वकीन्याईउसकीपूजाकरे।।अरुजोकबुउस
कीप्रजाविषेरोगसोकहोवे।।सोराक्षसीनिवृतक
रे।।इसप्रकारअनेकवर्षव्यतीतभए।।तबएकबा
रउसकोंसमाधिविषेबहुतवर्षबीते।।तबकिरा
तदेशकाराजाजीवोंकेदुःखनिवारणेअर्थएक
तिसकीप्रतिमाउंचेस्थानतेंस्थापितकरी।।तिस
प्रतिमाकानामएककंदरादेवी।दूसरानाममंग
लादेवीभया।।तिसकाध्यानकरकेपूजाकरणेला
गे।।तिसकरतिनोंकाकार्यसिधहोवणेलागा।।हे
उह रामजीउसप्रतिमाविषेदेवीअननिवासकरतभ
ई।।जोकोईकिसीनमित्तप्रतमाकीपूजाकरे।।तिस
काकार्यसिधहोवे।।अरुदुःखभीदूरहोवे।।अरुजो
प्रतिमाकीपूजानकरे।।तिसकारोगभीनजावे।।
कार्यभीनहोवे।।राजाकाराजभीसिधनहोवे।।जब
पूजाकरे।।तबराजभीहोवे।।अरुदुःखभीनष्टहोवे
विधसंयुक्ततिसकीपूजाकरे।।तिसकरदेवीप्रस
न्नहोवे।।अरुकार्यभीसिधहोवे।।हेरामजीअबल
गतुहीप्रतिमाकिरातदेशविषेइस्थितहे।।जिसजि
सफलवेनमितउनकीकोउसेवाकरे।।तैसतैंस
फलकोप्राप्तहोवे।। ।।इतिश्रीउतपतप्रकरणे
सूचीउपाख्यानेनामसर्गः।।५९।।श्रीवसिष्ठोवा
च।।हेरामजीइहअनिंदितकर्कटीकापरख्यान
जैसेपूर्वव्यतीतभयाहै।।तैसेतुजकोंकहाहे।।श्री
रामोवाच।।हेभगवनराक्षसीकासूक्ष्मवपुकिस
नमित्तथा।।अरुकर्कटीइसकानामकिसनमित
था।।जैसेहूयाहै।।तैसेकहो।।श्रीवसिष्ठोवाच।।हे
रामजीइहराक्षसोंकेकुलकीकंन्याथी।।सोराक्षसों

कापुलकवपु भी होताहै ॥ अरु रुक्मवपु भी होताहै ॥
रक्तपीतवपु भी होताहै ॥ हे रामजी एक जलजंतु क
र्कटनाम प्राणी होताहै ॥ सो उसका स्याम आकार हो
ताहै ॥ तिसके समान एक राक्षस था ॥ तिसके समान
इहपुत्री उपजी थी ॥ इसकारणतें इसका नाम कर्क
टी न था ॥ हे रामजी ईहां अवर कर्कटीका प्रयोजन
कछु नही ॥ ईहां अध्यात्मप्रसंग था ॥ शुधचैतन्यनि
रूपणके निमित्त मयतुजको कहाहै ॥ इहसम आश्च
र्यरूपहै ॥ जो असत्तरूप जगतके पदार्थ हैं ॥ सो स
त्तरूप होकर भासते हैं ॥ जो आत्मा सदा पूरणब्रह्म
है ॥ सो अविद्यमानकीन्याईं भासताहै ॥ हे रामजी वा
स्तवतें तो एक अनादि अनंत परम कारणरूप सत्ता
स्थित है ॥ तिसविषे भावनाके वसतें जगतरूप हो
भासताहै ॥ पर स्वरूपतें अनन्यरूप है ॥ जैसे जल
अरु तरंगविषे भेद नही ॥ तैसे ब्रह्म अरु जगतविषे
भेद नही ॥ हे रामजी आत्माविषे द्वैत कछु हूया नही
सदा आत्मसत्ता अपनी आपविषे इस्थित है ॥ तिस
विषे जैसा चित्तसंवेद दृढ होताहै ॥ तैसा होभासता
है ॥ जैसे बांतररत्नोंको एकठा करके तिसविषे अ
ग्निकी भावना करके सकते हैं ॥ तब उनोंका सीत
निवर्त होताहै ॥ तैसे भावनाके वसतें आत्माविषे ज
गत होभासताहै ॥ जैसे जल अरु तरंगविषे भेद न
ही ॥ तैसे ब्रह्म अरु जगतविषे भेद नही ॥ जो विचारक
रके भेद भासताहै ॥ जैसे स्वर्ण अरु भूषणविषे भेद
मूर्ख मानते हैं ॥ तैसे आत्मा अरु जगतविषे भेद मूर्ख
मानते हैं ॥ इसविषे संसा कछु नही ॥ सन जगत ब्रह्म
तें उपजा है ॥ अरु ब्रह्म ही स्वरूप है ॥ जब तूं जागेगा
तब तें जिंउका तिंउ जाणेगा ॥ श्रीरामोवाच ॥ हे भ
गवन जगत जिसतें होताहै ॥ सो तिसतें व्यतिरेक हो
ताहै ॥ अर्थ इह जो पंचमी विभक्ति करके निरूपणक

रीता है ॥ सो व्यतिरेक का अर्थ इह है ॥ जैसे कुलालतें
घट होता है ॥ सो कुलालतें भिन्न होता है ॥ तुम कैसे क
हते हो ॥ जो सर्व जगत ब्रह्मतें उपजा है ॥ अरु ब्रह्मस्व
रूप है ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी इह जगत ब्र
ह्मतें उपजा है ॥ इह शब्द नी शास्त्रों ने जनावणे के न
मित कहा है ॥ जेते कछु प्रतियोगी शब्द हैं ॥ सो इस रूप
विषे हैं ॥ उपदेश जनावणे के नमित कहे हैं ॥ वास्त
व तें इह शब्द को उ नहीं ॥ जैसे किसी बालिक को वै
ताल भासता है ॥ जो को उपजता है ॥ जो बालिक को
स्थान वैताल किसी विषे स्थित होकर मैं दीया है ॥ सो व्यवहा
र के नमित उसको कहीता है ॥ अमुकी गोड विषे मैं दी
या है ॥ तैसे आत्मा विषे उपदेस के नमित भेद कल
ना करी है ॥ वास्तव तें तिस विषे द्वैत कलना को उ न
हीं ॥ हे रामजी ब्रह्मतें जगत हूया है ॥ सो इह अर्थ के
वल व्यतिरेक विषे नहीं होता ॥ पंचमी विभक्ति कर
जो कार्य कहीता है ॥ सो अभिन्न विषे भी होता है ॥ जो
कुलाल नांडे पिंड तें उपजावता है ॥ सो व्यतिरेक का
अर्थ है ॥ स्वामीतें टहलीया होवणा भी भिन्न का अ
र्थ है ॥ अरु जैसे कहीये अवयवी के अवयव हैं ॥ अ
रु स्वर्ण विषे भूषण होए हैं ॥ मृत्तिका तें घट होते हैं
सो इह अभिन्न हैं ॥ तैसे ब्रह्मतें उपजा जगत ब्रह्मस्व
रूप है ॥ हे रामजी भेद कलना अज्ञान कर उठी है ॥ अ
रु सम्यक ज्ञान कर भेद कलना शांति हो जाती है ॥ अ
शब्द पद शेष रहता है ॥ जब तें ज्ञान वान होवेंगा ॥ त
बि अैसे जानोंगा ॥ जो आदि अंत मध्य तें रहित अखं
ड सत्ता अपने आप विषे स्थित है ॥ हे रामजी वाच
वाचक भाव द्वैत बिनां सिध नहीं होता ॥ जब बोध हू
या ॥ तब वाच वाचक भाव भी मौन हो जाता है ॥ तां तें
महा वाक्यों के अर्थ विषे निष्ठा करो ॥ अरु जेती क
छु भेद कलना भासती है ॥ तिस के निवृत अर्थ मे

रेवचनसुणा॥ सनजगतमननैंरचाहे॥ जैसेगंधर्व
नगरहोताहे॥ तैंसइहजगतमननैंरचाहे॥ जैसेम
यदेख्याहे॥ तैंसेमयइष्टांतकरकहोंगा॥ जिसके
जात्तेतैंसनजगततुजकोंनेममात्रनासेगा॥ तब
निश्चैकोंधारकरजगतकीवासनांदूरतैंत्यागदेवें
गा॥ बोधकरकेसनजगतमनकामननरूपना
सेगा॥ अरुआत्मरूपहोकरआपतेंआपविषे
स्थितहोवेंगा॥ हेरामजीइहमनरूपीवडारोगहे॥
निवरत
विवेकरूपीऔषधकरतिसकीचिकित्साकरो॥
जोसनजगतचित्तहीकल्प्याहे॥ वास्तवतैंकछुनहीं
चित्तकरकेपडाभासताहे॥ जैसेस्वप्नविषेनानाप्र
कारकेअरेनभासतेहैं॥ तैंसेचित्तकरसंसारभास
ताहे॥ अरुज्ञानकेप्राप्तहूएसर्वकलनांमिटजा
वेगी॥ अरुआत्मस्थितहोवेंगा॥ हेरामजीसर्गकेआ
दिविषेपृथिवीआदिकतत्वअविद्यमानथे॥ तिनां
कोंविद्यमानकीन्याईब्रह्माजीदेखतभया॥ जैसेस्व
प्नेविषेजगतविद्यमानकीन्याईभासताहे॥ तैंसेइह
रूपदेखताभया॥ जडसंवेदनकरपहाडआदिक
देखताभया॥ अरुचेतनसंवेदनकरजंगमजगत
देखताभया॥ सोसनजगतदीर्घसंवेदनाहे॥ वास्त
वतैंकछुहूयानहीं॥ परसनइहरूपजगतमननेचेत्या
हे॥ सोईमनआत्माकासरीरहे॥ सोआत्माहीविस्ती
र्णहे॥ अरुनिर्मलहे॥ मनतिसविषेआभासरूपहे
जैसेसूर्यकीकिरणांकरजलाभासहोताहे॥ तैंसे
आत्माकाआभासमनहे॥ सोईमनरूपीबालिकज
गतरूपीपिसाचकोंअज्ञानकरकेदेखताहे॥ अ
रुज्ञानकरकेसनआत्मरूपदेखताहे॥ हेरामजी
जबआत्मचेतनताकोंप्राप्तहोताहे॥ तबइहीचित्तचे
तनामइहरूपकोंदेखताहे॥ तिसनिवृत्तिअर्थतुज
कोंकथाकहताहों॥ ॥इतिश्रीउतपतप्रकर
णेमनअंकुरउत्पतवर्ननंनामसर्गः॥ ६० ॥श्री

वसिष्ठोवाच॥ हे रामजी पूर्व जो मुझकों ब्रह्माजी
सर्गके आदि विषे कहा है॥ सो मय तुझकों कहता हों
सुण॥ पूर्व एक कालमों मय ब्रह्माजीके पास गया था
अरु मय पूछा॥ हे भगवन इह जगत गण कहांते आ
ए॥ कैसे उत्पत हूए हैं॥ तब पितामाजी मुझकों इं
दु ब्राह्मण का आख्यान कहा॥ अथ कथा इंदु ब्रा
ह्मण के पुत्रों की लिख्यते॥ ब्रह्मोवाच॥ हे मुनी
कंर श्वर इह सभ जगत मन तें उपजा है॥ अरु मन तें के प
ड़ा भासता है॥ जैसे जल तें द्रवता कर के नाना प्र
कार के तरंग भासते हैं॥ तैसे मन के फुरणे कर जे
गत भासता है॥ सो मन रूप ही है॥ हे मुनीश्वर पूर्व
कल्प विषे एक वृत्तांत देख्या है॥ सो सुण॥ एक
समे दिन का क्षय हूया॥ मय संपूर्ण स्रिष्ट कों संहा
र कर के रात्रि विषे स्वस्ति भाव हो रहा॥ जब रात्रि व्य
तीत भई॥ अरु मय जागा॥ तब उठ कर संध्या आ
दिक कर्म विधि संयुक्त कीये॥ अरु बहु आकाश
की ओर देखता भया मय॥ सो तम अरु प्रकाश ते
रहित व्यापक स्वरूप अंत तें रहित मय देखत
भया॥ अरु चिदाकाश विषे चित्त कों जोड्या॥ सं
सार के उपजावणे का चित्त विषे संकल्प धारता॥ त
ब मुझकों शुध सूक्ष्म चिदाकाश विषे स्रिष्टी दृष्ट
आईयां॥ सो कैसीयां स्रिष्टी भासीयां॥ जो बहु विस्त
र सहित अरु परस्पर अदृश्य रूप॥ जो एक स्रिष्ट
कों दूसरा न देखे॥ अरु एक एक स्रिष्ट विषे ब्रह्मा वि
ष्णु रुद्र तीनों देवते रहें॥ अरु देवता दैत्य गंधर्व किं
नर नाग मनुष सुमेर मंदराचल कैलास हिमाला
आदिक पर्वत पृथ्वी नदीयां सातों समुंद्र आदि
क सर्व स्रिष्टी के व्यवहार कों देखता भया॥ सो दस
स्रिष्टी की संख्या देखी॥ तिनों विषे दश ब्रह्मा देखे

मानोमेराहीरूपहैं॥मेराहीमूर्त्तिहैं।कमलहीतेंउत्प
त्तिहूयेहैं।अरुराजहंसतैंअरुदेकूणादशाहीब्र
ह्मादेखे॥अरुभिन्नभिन्नतिनोंकीसृष्टीदेखी॥
अरुवृहन्नदीयोंकेप्रवाहचलतेहैं॥अरुवायुआ
काशविषेचलतीहै॥अरुसूर्यचंद्रमांआकाशवि
षेविचरतेहैं॥अरुनागदैत्यपातालविषेभोगोंको
भोगतेहैं॥देवतास्वर्गविषेक्रीडाकरतेहैं॥मानुष
पृथिवीपरविचरतेहैं॥कालचक्रपडाफिरताहै॥
द्वादसमाससतिसकेदशाकिलहैं॥षटरुतीवसंता
दिकहैं।वासनाकेअनुसारस्वर्गनर्कभोगभोगते
हैं॥अरुमोक्षकोंभीपावतेहैं॥सृष्टसृष्टविषेस
प्तदीपहैं॥उत्पतप्रलयकल्पकरहोतीहै॥गंगाजीका
प्रवाहजगतकेगलेविषेयज्ञोपवीतहै॥कहूंऐसे
स्थानहैं॥जहांसदाप्रकाशहै।कहूंअंधकाररहीरह
ताहै॥कहूंप्रकाशअंधकारदोनोंहैं॥तिसविषेस्था
वरजंगमप्रजामंयदेखताभया॥विद्यलीकीन्यांईसृ
ष्टीउपजतीयांहैं॥अरुमिटजातीयांहैं॥जैसेवृक्षोंके
पातउपजतेहैं॥अरमिटजातेहैं।गंधर्वनगरवतसृ
ष्टीदेखी।एकएकब्रह्मांडविषेस्थावरजंगमप्रजा
देखी।जैसेगूलरकेफलविषेमछरहोतेहैं॥तैसेए
कएकब्रह्मांडविषेजीवदेखे॥सोक्षणपलदिनमा
सवर्षोंकाप्रवाहचल्याजाताहै॥हेमुनीश्वरअतिवा
हकदृष्टकरमयउनोंसृष्टोंकोंदेखताभया॥जब
मयचर्मदृष्टकरदेखों।तोकछूनभासें॥चिरकाल
पर्यंतमयदेखतारहा॥जोकदाचितचित्तकाभ्रमहो
वे॥परस्पष्टहीभासें।तबएकसृष्टकेसूर्यकोंदेख
करमयआवाहनकीया॥तबसूर्यमेरेनिकटआ
नप्राप्तभया।तिनकोंमयकहा॥हेदिनेसभास्करतु
मकोंकुशलहोवे॥ऐसेमयकहिकरबहुडकहा
हेसूर्यभगवानतुंकवनहैं॥अरुइहसृष्टांकहांते

उपजी हैं॥ इह एक जगत है॥ अथवा अनेक जगत हैं॥
जैसे तुम जानते हो तैंसे कहो॥ तब उह सर्यनी त्रिकाल
ज्ञान राखता था॥ मुज कों जानकर नमस्कार कीया॥ अ
रु अतिंदित वाली कर कहत भया॥ भानोवाच॥ हे
ईश्वर इस दृश्यरूपी पिशाच के तुम नित्य कारण होते
हो॥ तांते तुम आपही जानते हो॥ मेरे पासं किस निमित्त
पूछते हो॥ अरु जो लीला के निमित्त पूछते हो॥ तो जैसे
वृत्तांत हूया है॥ तैसे मय तुमारे विद्यमान कहता हों॥ हे
भगवन इह जो सत असत रूपी नाना प्रकार के व्यवहा
रों संयुक्त जगत भासता है॥ सो सभ मन के फुरणे विषे
इस्थित है॥ ॥इति श्री उतपत प्रकरणे आदित्य
समागमं नाम सर्गः॥ ६१ ॥श्री भानोवाच॥ हे भग
वन तुमारा जो काल का दिन व्यतीत हूया है॥ तिस कल्प
विषे जंबूदीप था॥ तिस की कोण विषे कैलाश पर्वत था
तिस की कंदरा विषे स्वर्णज्येष्ठ नाम एक तुमारा पुत्र था
सो उहां कुटी रचता भया॥ तहां जाकर साधुजन निवा
स करते थे॥ तहां वेदों का वेता सांति रूप इंदु नाम ब्राह्म
ण कश्यप रूपी ईश्वर का कुल तें प्रगट भया॥ तिस कु
टी विषे जाकर निवास कीया॥ स्त्री सहित॥ तिस स्त्री वि
षे प्राणों की न्यांई स्नेह था॥ सो स्त्री पुत्रों तें रहित थी॥ जैं
से निर्जल विषे घास नही होता॥ तैंसे उस तें संतान न उ
पजे॥ बहुत सुंदर परपुत्र तें रहित थी॥ तब उह दोनों
स्त्री पुरुष पुत्र के निमित्त तप करनें लागे॥ कैलास पर्व
त के निकिट निर्जन स्थान विषे वृक्ष के ऊपर जा बैठे॥
तहां बैठकर तप करणें लागे॥ जल पान करें॥ अवर भो
जन कछु न करें॥ इस प्रकार दिन रात्रि कों व्यतीत करें
एक चुली जल की पान करें॥ बहुड चुली का भी त्याग
कीया॥ फुरणे तें रहित वृक्ष की न्यांई होर रहे॥ तिनों को
त्रेता द्वापुर युग व्यतीत भया॥ तब चंद्रकला धारी रुद्र
जी तुष्टमान होकर निकिट आए॥ भवानी संग कर दो
नों तिस के सन्मुख आन खडे॥ जो स्त्री पुरुष दोनों थे

न्हके ऊपर बैठे थे॥ तब तिनों शिवजी कों देखकर प्र-
णाम कीया॥ अरु दोनों प्रफुलित होआए॥ जैसे दि-
न की तप्त कर चंद्रमुखी कमलनीयां मंदीयां चंद्रमा
के उदे हूयें प्रफुलित होआवती हें॥ तैसे शिवजी कों
देखकर प्रफुलित भए॥ तब भवानी अरु ज्ञां कर ति-
स ब्राह्मण कों कहत भए॥ श्री ईश्वरोवाच॥ हे ब्राह्म-
ण तूं वर मांग॥ मय तुज पर संतुष्ट हूया हों॥ जो तुज कों
वांछित है सो मांग॥ जब ऐसे शिवजी कहा॥ तब ब्रा-
ह्मण प्रफुलित होआया॥ अर कहत भया॥ हे देवदेव-
श मेरे गृह विषे दश पुत्र होवैं॥ सो वदे बुधिवान अरु
कल्याणरूप होवैं॥ जिसकर मुज कों शोक कदाचित
न होवे॥ भवानोवाच॥ हे भगवन इस प्रकार जब ब्रा-
ह्मण कहा॥ तब ईश्वर कहा ऐसे ही होवे॥ ऐसे का-
हि कर ईश्वर अंतरध्यान होत भया॥ जैसे समुद्र तें त-
रंग उछलकर शांति होजाता है॥ तैसे भवानी शंकर
अंतरध्यान होत भए॥ तब उह स्त्री पुरुष दोनों शिव-
जी के वचनों को ग्रहण करके प्रसन्न होत भए॥ जैसे
सदाशिव अरु भवानी की मूर्ति है॥ सो रिदे विषे धारी
तैसे प्रसन्न होकर अपणे गृह विषे आए॥ तब ब्राह्म- वतभ
णी गर्भवान भई॥ जैसे वर्षा काल के बदल जलकर
पूर्ण होते हैं॥ तैसे उह गर्भ कर पूर्ण भई॥ समै पाकर
तिसके दश पुत्र भए॥ जैसे द्वितीया के चंद्रमा की शो- हीहोत
भा होती है॥ तैसे उनकी शोभा भई॥ अरु षोडश वर्ष
के आकार की न्याई ब्राह्मणी का आकार रहा॥ वृधिभा-
व को न प्राप्त भया॥ अरु उह दशों ही संस्कार कों लेकर
उपजे॥ अरु थोडे काल विषे वडे होगए॥ जब सप्त वर्ष
के भए॥ तब सन ब्रह्म ही केवते भए॥ तब उनों के माता
अर पिता दोनों सरीर कों त्यागकर अपणी गति कों प्रा-
प्त भए॥ उह दशों ही ब्राह्मण माता पिता तें रहित भए॥ अ-
र पिता माता की विधि संयुक्त क्रिया करी॥ बहुड अप-
णे गृह कों त्यागकर कैलास पर्वत के सिखर पर जाय

डे॥ अगर परस्पर विचार करणे लागे॥ जो कवन ईश्व
र्य है॥ जो परमेश्वर रूप है॥ अरु उह कवन ऐश्वर्य
है॥ जिसके पाए तें बहुड दुःखी न होवीये॥ अगर जि
सका नाश भी न होवे॥ अरु जिसके पाए तें सभका
ईश्वर होवीये॥ तब एक भाई कहा। जो सभनका ऐश्व
र्य मंडलेश्वरों का है॥ सभ ऊपर तिनकी आज्ञा व
र्तती है॥ बहुड दूसरे भाई कहा। मंडलेश्वर की वि
भूत भी कछु नहीं॥ जो उह भी राजा के अधीन होता
है॥ तां ते राजा का पद बडा है॥ बहुड अवर भाई क
हा। जो राजा की विभूत भी कछु नहीं॥ काहे तें जो रा
जा चक्रवर्ती के अधीन होता है॥ तां ते चक्रवर्ती का
पद बडा है॥ बहुड अवर भाई कहा। जो चक्रवर्ती
भी कछु नहीं॥ उह भी यम का अधीन होता है॥ तां
ते यम का पद बडा है॥ बहुड अवर भाई कहा। जो
इंद्र के आगें यम की विभूत भी कछु नहीं॥ तां तें इं
द्र का पद बडा है॥ बहुड अवर भाई कहा। इंद्र की
विभूत भी कछु नहीं॥ ब्रह्मा के एक मुहूर्त विषे इं
द्र नष्ट हो जाता है॥ तब सभनों तें जो बडा भाई था
सो कहत भया॥ जैसे मृगों के समूह कों मृग कहे
तैसे छोटों भाईयों कों बुधिवान बडा भाई गंभी
र वचन कर कहत भया॥ जेती कछु विभूत है॥ सो
ब्रह्मा के कल्प विषे नष्ट हो जाती है॥ तां ते ऐश्वर्य
बडा ब्रह्मा का है॥ इस तें अवर कोऊ नहीं॥ हे भगव
न जब इस प्रकार बडे भाई कहा॥ तब सभनों क
हा भली कहा॥ तब उन [illegible] बडे भाई जी कहा॥ हे ता
त जो सर्व दुःखों का नाश करता जगत पूज ब्रह्मा
जी का पद है॥ तिसको हम कैंसे प्राप्त होवें॥ सो उपा
व कहो॥ बहुड बडा भाई कहत भया॥ हे भाईयो अ
वर सभनों कों त्याग कर एही भावनां निश्चे करी
ये॥ जो मय ब्रह्मा हों पद्म आसन पर बैठा हों॥ अ

रुसमस्तिष्टकाकरताहों॥ अरुसमकीपालनां
करताहों॥ अरुसिंहारकर्त्ताभीमयहीहों॥ जेते
कछुजगतजालहें॥ तिनोंकाआश्रयभूतमय
हीहों॥ समस्तिष्टमेरेअंगविषेस्थितहे॥ ऐसे
निश्चेकोंधारकरबेगे॥ तबतुमहमसमनोंके
त्रैलोकापदप्राप्तहोवेगा॥ हेभगवनजबवन्हेंनो
ईइसप्रकारकहा॥ तबछोटेभाईयोंकहा॥ हेता
ततुमयथार्थकहाहे॥ जैंसेतुमकहाहे॥ हमतैं
सेहीकरतेहैं॥ ऐसेमानकरवन्हेंभाईसहितस
मध्यानविषेइस्थितभए॥ अरुमनविषेएहीचि
तवनांकरतेभए॥ जोमयब्रह्माहों॥ कमलासनप
रबैठाहों॥ मयसमस्तिष्टकाकरताहों॥ भोगभो
गताभीमयहीहों॥ महेश्वरभीमयहीहों॥ समज
गतभीमयहीहों॥ कर्मभीमयहीरचेहे॥ अरुसर
स्वतीगायत्रीसहितजोवेदहैं॥ सोमेरेआश्रयआ
नखडेहैं॥ अरुइहलोकपालसिधोंकेमंडललो
कोंकेपालनहारेहैं॥ सोसभमयहीरचेहे॥ स्वर्ग
लोकमृतलोकपाताललोकपहाडनदीयांस
मुद्रसभमयहीरचेहैं॥ अरुमहाबाहुवज्रधारी
यतीकाभीतांमयहीरचाहे॥ अरसूर्यमेरीआ ५३
ज्ञामेंतपताहे॥ अरुचंद्रमामेरीआज्ञामेंचलता
हे॥ अरुजगतकीमर्यादानमित्तसभलोकपाल
मेंहीरचेहैं॥ जैंसेगौऊंकोगोपालचरावताहे॥ तैं
सेलोकपालमेरीआज्ञापाकरलोकोंकापालते
हैं॥ जैसेसमुद्रविषेतरंगउपजतेहैं॥ तैंसेजगतमु
जतेंउपजताहे॥ बहुडमेरेहीविषेलीनहोताहे॥
अरमयसदाआत्मपदविषेइस्थितहों॥ अरुहे
लादिनमासवर्षजुगादिककालमेराहीरचाहे॥ म रूया
यहीसभकालकेनामराखेहैं॥ मयहीदिनकोक
ताहों॥ अरुरात्रिकोलीनकरलेताहों॥ अरुसदा

आत्मपद विषे इस्थित हो ॥ पूर्ण परमेश्वर मय
ही हैं ॥ हे ब्रह्मा जी इस प्रकार उह दशाहीं भाई भा
वनां कर के ध्यान विषे जुडे ॥ मानो कागद ऊपर
मूर्त्ती लिख छोडी हैं ॥ तां ते सम न वृत्ति जाल कों त्या
ग करए क ब्रह्मा ही के ध्यान विषे इस्थित भए ॥
॥ इति श्री उत्पत प्रकरणे इंदु वंस वर्णनं नाम स
र्गः ॥ ६२ ॥ भानो वाच ॥ हे भगवन इंदु ब्राह्मण
के दशाहीं पुत्र ब्रह्मा की भावनां धार कर बैठे ॥ त
ब तिनों के देह धूप अरु पवन कर के सूक गए
जैसे ज्येष्ट अरु आषाढ विषे कमल पत्र सूक क
र गिड पडते हैं ॥ तैसे उनों के देह सूक कर गिड प
डे ॥ तब वनचर जो जीव थे ॥ सो तिनों कों आपो आ
प खैंच कर भक्षण कर गए ॥ जैसे फल को बांदर
पकडते हैं ॥ तैसे तिन देह को विदीर्ण कर दीया ॥
पर तिनों की वृत्ति ब्रह्मा के ध्यान विषे स्थित रही
बाह्य देहादिक अभ्यास विषे न आई ॥ ब्रह्मा की
भावना विषे लागी रही ॥ इस प्रकार जब चतुर्थ
युग का अंत भया ॥ अरु तुमारे कल्प दिन का क्ष
य होवणे लागा ॥ द्वादश सूर्य तपणे लागे ॥ वडान
वाल आवणे लागा ॥ अरु पवन चलणे लागा ॥ अ
रु समुद्र उछल पडे ॥ सभ जल ही जल होगया ॥ स
भ भूत क्षय को प्राप्त भए ॥ सभ को संहार कर के तु
म आत्म पद विषे स्थित भये ॥ तब उन के सरीर भी
नष्ट होगये ॥ अरु पुर्यष्टिका उनकी आकाश वि
लेकर षे आकाश रूप होकर ब्रह्मा के संकल्प कों तीव्र
भावनां के वस तें दशों सृष्टीं सहित दश ब्रह्मा हो
त भए हैं ॥ भिन्न भिन्न अपणी अपणी सृष्टि के ब्रह्मा
हूए हैं ॥ अब तुम जाग कर के देखो ॥ जो चित्त आ
काश विषे फुरते हैं ॥ हे भगवन तिस दश ब्रह्मा के
चिताकाश विषे दशों ही सृष्टीं स्थित हैं ॥ तिन दश

हां स्रिष्टी के मध्य विषे एक स्रिष्ट का सूर्य मय हों॥
आकाश विषे मेरा मंदर है॥ काल जो है क्षण दिन
मास वर्ष युग सो मुझ कर होता है॥ इस क्रिया विषे
मुझ को उन जोड़ा है॥ हे भगवन इस प्रकार मय तुझ
को दृष्टा हों स्रिष्टां कही हैं॥ सो कैसी स्रिष्टी हैं॥ जो चि
त के भ्रम कर पड़ी भासती हैं॥ आगे जैसे तुमारी इ
छा होवै तैसे करो॥ भिन्न भिन्न कल्पनां कर के जग
त जाल विस्तार को प्राप्त भया है॥ सो सभ इंद्रजाल की
न्याई है॥ चित के भ्रम कर के पड़े भासते हैं॥ ॥इ
ति श्री उत्पत प्रकरणे जगत रचना निर्णय नाम स
र्गः॥ ६३॥ श्री ब्रह्मोवाच॥ हे ब्राह्मण ब्रह्मवेती
यों विषे श्रेष्ट इस प्रकार उस ब्रह्मा के सूर्य ने मय
ब्रह्मा को कहि कर तूष्णीं भया॥ तब तिस के वचनों कों
विचार कर मय कहत भया॥ हे भगवन भानु तुम क
हो॥ जो उनों स्रिष्टां तें अब मय क्या करों॥ इह तो दृष्टा
स्रिष्टां कृयां हैं॥ दृष्टा ही ब्रह्मा हैं॥ अब मेरे रचणे क
र क्या सिध होता है॥ हे मुनीश्वर जब इस प्रकार म
य कहा॥ तब सूर्य विचार कर के मुझ को कहत भया
॥भानोवाच॥ हे ब्रह्मन तुम तो निरइछित हो॥ तुमा
रे विषे तो इछा कछु नहीं स्रिष्ट रचणे की॥ स्रिष्ट का
रचणा तुम को विनोद (लीला) मात्र है॥ किसी कामना के ना
मित नहीं॥ तुम निहकाम रूप हो॥ जैसे जल कर के
सूर्य का प्रतिबिंब होता है॥ जल विनां प्रतिबिंब की
कलनां नहीं होती॥ तैसे संवेदन कर के तुमारे विषे
स्रिष्ट की रचनां होती है॥ अज्ञानी को तुम स्रिष्ट कर
ता भासते हो॥ तुम सदा जिउं के तिउं निहक्रिया रूप
हो॥ हे भगवन तुम को सरीरादिकों की प्राप्त विषे राग
द्वेष कछु नहीं॥ उत्पत संहार की तुमारे विषे कलनां
कछु नहीं॥ लीला मात्र तुम तें स्रिष्ट होती है॥ जैसे

सूर्य करके दिन होता है। अरु सूर्य के अस्त हूये रा
त्रि होती है। अरु सूर्य असंसक्ति रूप है। तैसे तुमारे
विषे संवेदन फुरणे कर स्रिष्ट होती है। अरु तुम स
दा असंसक्ति रूप हो। अरु जगत की रचना तुमारा
नित कर्म है। नित कर्म के त्याग कीये ते तुमको कछु
अपूर्व वस्तु भी प्राप्त नही होती। ताते जो कछु तुमा
रा नित कर्म है सो तुम करो। हे जगत पितामह महा
पुरुष जो होते हैं॥ जो कछु उनके प्राप्त होता है। तिस
को यथा प्राप्त विषे असंसक्ति होकर विचरते हैं॥ का
र्य को करते हैं॥ जैसे निहकलंक दर्पण गति बिंब को
अंगीकार करता है॥ तैसे महापुरुष यथा प्राप्त को
असंसक्ति होकर अंगीकार करते हैं॥ जैसे ज्ञानवा
न को कर्म करणे विषे लिपायमानी नही होती॥ क
रण अकरण दोनों तिनों को तुल्य हैं॥ इस कार
ण ते दोनों तें सुषुप्त रूप होता है॥ हे भगवन ब्रह्मा
जी तुम तो सदा सुषुप्त रूप हो॥ तुमको उध्यान कि
सी प्रकार नही॥ ताते तुम सुषुप्त होकर अपणे प्र
कृत आचार को करो॥ जो इंद्र ब्राह्मण के पुत्रों की
स्रिष्ट को देखो॥ तब भी विरुध कछु नही॥ जो ज्ञा
न दृष्ट कर देखो॥ तो तुमारी स्रिष्ट विषे उह नही
भासती॥ उन विषे तुमारा अयोजन कछु नही॥ उ
न की स्रिष्ट उनके चित विषे इस्थित है॥ अरु उन
की स्रिष्ट को तुम नाश भी नही कर सकते। काहे
ते जो कछु इंद्रीयों साध्य होता है॥ तिस को नाश भी
कर सकीता है॥ पर मन के निश्चय को नाश नही
कर सकीता॥ हे भगवन जिसके चित विषे दृढ नि
श्चा होता है॥ तिसको उही निवृत करे तब निवृत
होता है॥ अवर को उनिवारणे को सामर्थ्य नही हो
ता॥ देह नष्ट होती है॥ पर निश्चा नष्ट नही होता

जो चिरकाल का निश्चा हढ हो रहा है॥ तिसका नाश
नही होता॥ हे भगवन जो मन विषे दृढ निश्चा होर
हा है॥ सोई पुरुषकार रूप है॥ तिसका निश्चा अबर
किसी कर चलायमान नही होता॥ जैसे जल के संच नैं
ण करके पर्वत चलायमान नही होता॥ इसी कार
ण ते कहा है॥ जो चित्त का निश्चा चलायमान नही
होता॥ काहे ते जो स्त्रियां उनके चित्त विषे दृढ भूत
हैं॥ अरु तुमारी स्त्रि तुमारे चित्त विषे स्थित है॥
॥ ॥इति श्री उत्पत प्रकरणे इंद्र पुत्र निश्चा क
थनं नाम सर्गः॥ ६५ ॥ मनोवाच॥ हे देवेश
इस पर एक पूर्व इतिहास कह्या है॥ सो तुम सुणो
॥ अथ कथा इंद्रद्युम्न राजा की लिख्यते॥
एक इंद्रद्युम्न नाम राजा था॥ तिसकी कमल न
यनी स्त्री थी॥ तिसका नाम अहिल्या था॥ तिस रा
जा के नगर विषे इंद्र नाम एक ब्राह्मण का पुत्र था
सो बहुत सुंदर अरु बलवान था॥ अरु अहि
ल्या राजा की पटराणी थी॥ तब तिस राणी पूर्व
अहिल्या गोतम की स्त्री अरु इंद्र की कथा सुणी
तब एक सहेली कहा॥ हे राणी जैसे पूर्व अहिल्या
थी॥ तैसे तूं हैं॥ अरु जैसे उह इंद्र सुंदर था॥ तैसे
तुमारे नगर विषे भी एक इंद्र नाम ब्राह्मण है॥ हे भ
गवन जब इस प्रकार राणी सुणा॥ तब उस इंद्र ब्रा
ह्मण विषे राणी का अनुराग हूया॥ पर उह राणी
को प्राप्त न होवे॥ राणी का सरीर इसी प्रकार सूक
ता जावे॥ तब राजे सुणा॥ जो राणी को कछु रोग म
का रोग है॥ तिसके निवारणे अर्थ नेह अरु केले
के पत्र और सीतल औषध तिसको दिवाए॥ पर
उसकों वांछित पदार्थ को न दृष्ट आवे खान

पानसय्याआदिकजेतेकछुइंद्रीयोंकेवांछितपदा
र्थहैं॥ सोतिसकोंसुखरूपकोंऊनभासे॥ तबउहदि
नदिनविषेपीतवर्णहोतीजावे॥ इंदुकेवियोगकर
पडीतडफे॥ जैसेजलविनांमछलीमारूथलविषे
पडीतडफे॥ तैसेउहतडफतीरहे॥ अरुकहे॥ हाइंदु
हाइंदुहाइंदुऐसेविरलापकरतीरहे॥ लोकलज्जाकों
त्यागदीया॥ उसइंदुविषेबहुतस्नेहवधाया॥ तब
विचारकर्केएकसखीकहा॥ हेराणीमयइंदुब्राह्म
णकोंलेआवतीहों॥ जबइसप्रकारसखीकहा॥ तब
राणीसावधानहोआई॥ जैसेचंद्रमांकोंदेखकरक
मलनीयांखिडआवतीहैं॥ तैसेउनकेआश्रकरराणी
खिडआई॥ तबउहसखीब्राह्मणकेघरगई॥ उसइं
दुकोंप्रबोधकरकेरात्रिकेसमेंमहिल्यापासलेआ
ई॥ तबएकस्थानविषेएकठेभए॥ तबदोनोंकाचि
त्तपरस्परस्नेहकरबंधमानभया॥ अरुबहुतप्रस
न्नभए॥ जैसेचकवीअरुचकवेकास्नेहहोताहै॥ तै
सेपरस्परस्नेहभया॥ जैसेरितुअरुकामकास्नेह
होताहै॥ तैसेउनोकास्नेहभया॥ एकदूसरेविनांए
कक्षणभीनरहें॥ अवरसनकियाउसकीनिवृत्तहो
गई॥ जैसेचंद्रमांकोंदेखकरचंद्रमुखीकमलखि
डआवतेहैं॥ तैसेएकदूसरेकोदेखकरप्रसंनहो
वें॥ हेभगवनब्रह्माजीउसराणीकाभरताभीबडागु
णवानथा॥ वहराणीभरतीकोत्यागदीया॥ अरुइं
दुकापरस्परउनसाथस्नेहभया॥ जबराजाइनका
संपूर्णवृत्तांतश्रवणकीया॥ तबइनकोंदंडताड
नाकरावणेलागा॥ परउनकोंखेदकछुनहोवे॥ ज
बचिक्कडविषेउनकोडारा॥ तबकमलकीन्याई
ऊपररहें॥ कष्टकछुनपावें॥ बहुडबरफविषेउ

नकोमारदीया॥तोभीखेदवाननहूए॥तबराजाक
हिनेलागा॥हेदुर्मतीयोतुमेंखेदकछुनहीहोता॥ को
उहकहेंहमकोंखेदकैंसेहोवे॥हमतोआपकोंभी
नहीजांणते॥अहिल्याकहेहमकोतोसमनइंद्रही
भासताहे॥इंद्रकहेहमकोंसमनअहिल्याहीभा
सतीहे॥जिन्हदुःखकहांहोवे॥तेरेदंडकरणेकर
हमकोंदुःखकहांहोवे॥नहीहोता॥परस्परहर्षवा
नहैं॥तबराजेउनकोबांधडारया॥बहुडअग्नि
विषेडारया॥तबभीकष्टकछुनहोवे॥तिनकोंअ
ग्निजालेनहीं॥बहुडहस्तीकेचरणतलेडारीया॥तो
भीदुःखकछुनपाया॥तबराजेकहा॥हेपापीयोतु
मकोंअग्निआदिकोंविषेदुःखकिउंनहीहोता॥
तबइंद्रकहा॥हेराजनजेतेकछुजगतजालहैं॥सो
मनविषेस्थितहैं॥जैसामनहोताहे॥तैसारूपपु
रुषकाहोताहे॥तिसनिश्चेकोंदूरकरणेकोंकोउ
समर्थनहीं॥जेतेभांवेंतेतेदंडदें हमकोदुःखक
छुनहीं॥काहेतेंजोहमारेरिदेविषेप्रीतिभाअवरकी
नहीं॥जोकोउअवरहमकोंभासेतोदुःखहोवे॥अ
वरतोकछुनहीभासता॥दुःखकैंसेहोवे॥हेराजन
जोकछुमनविषेदृढीभूतहोताहे॥सोईपदाभास
ताहे॥तिसकानिश्चाकोउदूरनहीकरसकता॥स
रीरनष्टहोजाताहे॥परमनकानिश्चानष्टनहीहो
ता॥हेराजनजोमनविषेतीव्रसंवेगहोताहे॥सोवर
श्रापकरकेभीदूरनहीहोता॥जैसेसुमेरकोंमंदमंद
वायुचलायनहींसकती॥तैसेमनकेनिश्चेकोंको
उनहीचलायसकता॥इसीकारणतेंकहाहे॥जोमे
रेरिदेविषेइसकीमूर्तिस्थितहे॥इसकेरिदेविषे
मेरीमूर्तिस्थितहे॥इसकोसभजगतमेंहीभासता
हे॥अरुमुजकोंसभजगतएहीभासताहे॥जोक

हू हमकों दूसराभासे॥ तोदुःखभीहोवे॥ जैसेलोहेके
कोठिविषेभगवतीहोवे॥ तिसकेदुःखदेणेकोंको
ऊसमर्थनहीं॥ तैंसेमुजकोंदुःखकोऊनहीं॥ जहांमय
जातांहोंतहांमुजकोंसर्वऔरतेंअहिल्याभासतीहै
तांतेदुःखकोऊनहीं॥ जैसेज्येष्टआषाढकीवर्षावि
षेपर्वततपायमाननहीहोता॥ तैंसेहमकोंदुःखक
छुनहीहोता॥ हेराजनमनहीकानामअहिल्याहे॥ अ
रमनहीकानामइंद्रहै॥ अरुमनहीसमजणांतरचा
है॥ जैंसाजैंसामनविषेदृढनिश्चाहोताहै॥ तैंसाहीं
होभासताहै॥ सुमेरकीन्याईस्थितहोजाताहे॥ नष्ट
नहीहोता॥ जैसेपत्रफलफलटासकेकाटेतेंवृक्ष
नष्टनहीहोता॥ जबबीजहीनष्टहोवे॥ तबवृक्षनष्ट
होताहे॥ तैसेसरीरकेनष्टहूयेतेंमनकानिश्चानष्ट
नहीहोता॥ जबएकसरीरनष्टहोताहै॥ तबअवर
सरीरधारलेताहै॥ तांतेंसरीरकेनष्टहूयेंमनकानि
श्चानष्टनहीहोता॥ जबमनकानिश्चानष्टहोवे॥ तब
सरीरकेहोतेंभीकछुकियासिधनहीहोती॥ तांतेस
भकाबीजमनहे॥ तांतेमुजकोंसनऔरअहिल्याभा
सतीहे॥ अरुअहिल्याकोंसनऔरइंद्रभासताहै
हमकोंदुःखकैंसेहोवे॥ ॥इतिश्रीउतपतप्रकर
णेमननिश्चावर्ननंनामसर्गः॥ ९९॥ भानोवाच॥
हेभगवनइसप्रकारजबइंद्रजालनेकहा॥ तबक
मलनयनराजाकेसमीपनरतनामविप्रेश्वरबैग
या॥ तिसकोंराजाकहतेभया॥ हेसर्वधर्मोंकेवेत्तानर
तमुनीश्वरतुमदेखो॥ इहकैंसेदीर्घपापीहैं॥ जैसाइन
कापापहे॥ तिनकेअनुसारइनकोंश्रापदेवो॥ जोइह
मरजावें॥ अरुजोमारणेयोगनहोवें॥ तिसकोंराजा
मारेंतबराजापापीहोताहै॥ जैसेतिसकेमारणेतेंपा
पहोताहै॥ तैंसेपापीकेनमारणेतेंपापहोताहै॥ तां

तेइनकोंश्रापदेवो॥जोइहनष्टहोजावें।हेभगवनजब
इसप्रकारराजासांईलकहा।तबभरतमुनीश्वरइन
केपापकोंविचारकरकेकहा॥रेपापीयोतुममरजावो।ज
बइसप्रकारमुनीश्वरकहा।तबइंद्रअहल्याबोलया
हेदुष्टोतुमजोहमकोंश्रापदीयाहै।सोक्याहोवे।तिसक
रकेसरीरनष्टहोवे।हमारामनकानिश्चातोनष्टहोव
तेकानहीं॥तुमभावेंलाखयतनकरो॥तिसमनकरस
रीरबहुतहोवेंगे॥ऐसेकहिकरदोनोंपृथिवीपरगि
डपडे॥जैसेमूलतेंकाटावृक्षगिडपडताहै॥तैसेउह
गिडपडे॥दृढवासनांकरहरणअरहरणीभए॥तहो
नीपरस्परस्नेहविषेरहे॥तिसदेहकोंत्यागपरबीजन्म
कोंपाया॥अरुतिसदेहकोंभीत्यागकीया॥अबहमारी
स्रिष्टिविषेतपकरतापुन्यवानब्राह्मणअरुब्राह्मणी
भएहैं॥तातेतुमदेखो।जोभरतमुनीश्वरश्रापदीया
तबउनोंकेसरीरनष्टहूए।परमनकानिश्चानष्टन
भया॥जहांसरीरधारें।तहांदोनोंहीएकठेहोवें॥आप
समांअ(पूरन)स्लतमभगवानभए॥जोअवरकिसीकरआनं
दवाननहोवें॥ ॥इतिश्रीउत्पतप्रकरणेलूतमइं
द्रअहिल्यापरख्यानसमाप्तंनामसर्गः॥६७॥श्रीभ
नोवाच॥हेजगतनाथतुमदेखोजोजैसामनकानि
श्चाहोताहै।तिसकेअनुसारआगेहोभासताहै॥इंदु
केपुत्रोंकीस्रिष्टवतमनकेनिश्चेकोदूरनहीकरसके
ता॥हेईश्वरमनहीजगतकाकरताहै॥अरुमनहीपु
रुषहै।मनकाकीयाहोताहै।सरीरकाकीयानहीहो
ता।जोमनविषेदृढनिश्चाहोताहै॥सोकिसीउपावक
रदूरनहीहोता।जैसेमणिविषेप्रतिबिंबहोताहै।सो
मणिकेउठाएविनांदूरनहीहोता॥तैसेमनकानिश्चा
अवरकरदूरनहीहोता॥जबमनउलटे।तबमनका
निश्चादूरहोवे।जोअनेकस्रिष्टोंकेभ्रमचितविषेस्थि

तहैं॥ तांतें हे ब्रह्माजी तुम भी चित्ताकाश विषे स्त्रिष्ट को
रचो॥ हे नाथ तीन आकाश हैं॥ एक भूताकाश है॥ एक चि
त्ताकाश है॥ एक चिदाकाश है॥ सो तीनों अनंत हैं॥ इनों
का अंत कछू नहीं॥ भूताकाश जो है॥ सो चित्ताकाश के आ
श्रय है॥ अरु चित्ताकाश चिदाकाश के आश्रय है॥ भू
ताकाश अरु चित्ताकाश इह दोनों चिदाकाश के आ
श्र प्रकाशते हैं॥ तांते तुम चिदाकाश के आश्रय जेती
तुमारी इछा होवे॥ तेती स्त्रिष्ट रचो चिदाकाश अनंत रू
प है॥ अरु इंदु ब्राह्मण के पुत्रों तुमारा काल लीया है॥ आ
पणा नितकर्म तुम भी करो॥ ब्रह्मोवाच॥ हे वसिष्ठ जी
जब इस प्रकार सूर्य मुज कों कहा॥ जो सभ जगत जाल
मन तें उपजा है॥ तब मय विचार कर कहा॥ हे भानु तुज
युक्त पूर्वक वचन यथार्थ कहे हैं॥ एक भूताकाश है॥
एक चित्ताकाश है॥ एक चिदाकाश है॥ सो तीनों अनंत है
पर भूताकाश अरु चित्ताकाश दोनों चिदाकाश के आ
श्रय फुरते हैं॥ तांते हम भी अब अपणे नितकर्म को क
रते हैं॥ अरु जो कछु मय तुज कों कहता हों॥ सो तुम भी मा
नो॥ जो मेरी स्त्रिष्ट का स्वयंभू मन प्रजापति होवो॥ जैसे तु
मारी इछा होवे॥ तैसे रचो॥ ऐसे जब मय कहा॥ तब सूर्य
मेरी आज्ञा मान कर अपणे दो सरीर करता भया॥ एक
तो पूर्वला सूर्य का सरीर रहा॥ इंदु ब्राह्मण के पुत्र की
स्त्रिष्ट का सूर्य हूया॥ अरु दूसरा सरीर उस स्वयंभू मन
का कीया॥ हे वसिष्ठ जी मेरी आज्ञा के अनुसार उस स्त्रि
ष्ट रची॥ तांते मय तुज कों कहा है॥ जो इह जगत सभ मन
हूया का रचा है॥ जो मन विषे दृढ निश्चा होता है॥ सो ई फलदा
यक होता है॥ जैसे इंदु ब्राह्मण के पुत्रों को यों स्त्रिष्टा हूये
हैं॥ मन के निश्चे कर॥ हे मुनीश्वर देह के नष्ट हूए भी मन
का निश्चा दूर नहीं होता॥ चित्त विषे दृढ ही भासता है॥ जो

तिसते होता है ॥ सो चित्त आत्मा का कचन रूप है ॥ जैसे
चेतन विषे फुरणा होता है ॥ तैसा ही हो भासता है ॥ प्रथम
शुद्ध संवित विषे जो उथान हूया है ॥ सो आतिवाहक
सरीर है ॥ बहुरि जो उस विषे दृढ़ अभ्यास हूया है ॥ अरु
स्वरूप का प्रमाद हूया है ॥ तब अधिभौतिक सरीर हो
कर भासणे लागा ॥ अरु जब अधिभौतिक का अभिमा
नी भया ॥ तब इस का नाम जीव भया ॥ अरु देह अभिमा
ने कर नाना प्रकार की वासना भई ॥ तिन के अनुसार घ
टीयंत्र की न्यांई पड़ा भटकता है ॥ जब बहुरि आत्मा का
बोध होता है ॥ तब देह ते आदि लेकर सभ दृश्य शांति
हो जाती है ॥ हे मुनीश्वर जेती कछु दृश्य भासती है ॥ सो स
भ भ्रम कर के भासती है ॥ वास्तव तें न कोऊ माया है ॥ न
जगत है ॥ इह सभ भ्रम चित्त कर के हूया है ॥ हे वसिष्ट
जी और द्वैत कछु उपजा नहीं ॥ चित्त के फुरणे कर अ
हंत्व भासता है ॥ जैसे इंद्र ब्राह्मण के पुत्र मन के निश्चे क
र ब्रह्मा होत भए ॥ तैसे मय भी ब्रह्मा हो ॥ शुद्ध आत्मा वि
षे चेतनता होती है ॥ सोई चेतनता ब्रह्मा रूप होकर स्थित हो
ती है ॥ सोई मन रूप होती है ॥ तिस मन के संयोग कर चेत
न को जीवक होता है ॥ जब इस विषे जीवत्व होता है ॥ तब
अपणे साथ देह को देखता है ॥ जैसे इंद्र ब्राह्मण के पु
त्रों कीयां स्रिष्टीयां भयां है ॥ तैसे इह जगत भी है ॥ जैसे भ्रम
कर के आकाश विषे दूसरा चंद्रमा भासता है ॥ तैसे इह
जगत भासता है ॥ सो जगत सत भी नहीं ॥ अरु असत भी
नहीं ॥ प्रत्यक्ष देखणे कर सत भासता है ॥ अरु अभाव हो
णे कर असत हो भासता है ॥ सो सभ मन विषे पड़ा फुर
ता है ॥ अरु मन के दो रूप हैं ॥ एक जड़ रूप ॥ दूसरा चेतन्य
रूप ॥ जड़ रूप मन का दृश्य है ॥ अरु चेतन रूप मन का आ
त्मा है ॥ जब दृश्य की ओर फुरता है ॥ तब दृश्य होता है ॥ अ

र जब चेतन भाव की ओर स्थित होता है ॥ तब दृश्य भाव
नष्ट हो जाता है ॥ अरु जब जड भाव विषे फुरता है ॥ तब
नाना प्रकार के जगत कों देखता है ॥ वास्तव तें ब्रह्मा आ
दि तृणपर्यंत सर्व चेतन्यरूप है ॥ जड तिस कों कहीता
है ॥ जो अभावरूप होवे ॥ जैसे लकडी विषे चित्त नहीं भा
सता ॥ अरु प्राणधारीयों विषे चित्त भासता है ॥ पर स्वरू
प तें दोनों तुल्य हैं ॥ काहे तें जो सर्व परमात्मा करके भास
ते हैं ॥ हे वसिष्ठ जी वास्तव तें सर्व चेतन्यस्वरूप है ॥ जो चे
तन्यस्वरूप न होवें ॥ तो क्यों भासे ॥ चेतन्यता करके ही भा
सते हैं ॥ जड अरु चेतन्य का विभाग अवाच ब्रह्म विषे न
ही पाईता ॥ जड चेतन्य का विभाग प्रमाद दोष कर भास
ता है ॥ वास्तव तें कछु नहीं ॥ जैसे स्वप्ने विषे दो प्रकार भूत
भासते हैं ॥ जड अरु चेतन्यरूप ॥ तैसे जिस कों स्वरूप का
प्रमाद होता है ॥ तिस कों जड चेतन्य का विभाग भासता
है ॥ हे मुनीश्वर ब्रह्म विषे जो चेतता भई ॥ सो मन भया ॥ ति
स मन विषे चेतन्य भासता है ॥ सो ब्रह्म है ॥ अरु जड भासता है
सो अज्ञान है ॥ जब अबोध भाव होता है ॥ तब दृश्य भाव
कों देखता है ॥ अरु जब चेतन भाव विषे स्थित होता है ॥
तब शुद्ध स्वरूप होता है ॥ हे मुनीश्वर चेतन्यमात्र विषे
अहं दृश्य का उथान होता है ॥ सो चेतन्य तें भिन्न नहीं ॥ जैं
से जल तें तरंग भिन्न नहीं ॥ तैसे अहं चिन्मात्र तें भिन्न नहीं
सर्व की अहंप्रतीत ब्रह्म विषे होती है ॥ सो परमपद है ॥ दुः
खों तें रहित है ॥ सो ईशुध चित्त जीव चित्तभाव कों चेतता
है ॥ तब जड चेतन्य भाव कों देखता है ॥ पर वास्तव तें कछु
हुया नहीं ॥ जब चित फुरता है ॥ तब जगतजाल भासता है
जब अरु चेतन भाग आत्मा विषे स्थित होता है ॥ तब मन का
जड भाग अभाव हो जाता है ॥ जैसे पारस के छोणे तें तांबा
स्वर्ण हो जाता है ॥ बहुड ताम्र भाव तिस का नहीं रहता ॥ तैं
से जब चित्त आत्मभाव विषे स्थित होता है ॥ तब मन का दृ

रूपभावनहीरहता॥ शुधचिन्मात्रशेषरहताहै॥ हेमुनी
श्वरजबलगआत्माकाग्यानहै॥ तबलगनानाप्र
कारकाजगतभासताहै॥ जबआत्मबोधहोताहै॥ त
बजगतभ्रमनष्टहोजाताहै॥ इहजगतभ्रमचित्तवि
षेइस्थितहै॥ जैसाजैसानिश्चाचित्तविषेइस्थितहो
ताहै॥ तैसाहीहोभासताहै॥ इसपरआहिल्याअरुइं
द्रकादृष्टांतकहाहै॥ तातेजैसीभावनांदृढहोतीहै॥
तैसीहोभासतीहै॥ हेवसिष्टजीजिसकोंएहीभावनां
दृढहै॥ जोमयदेहहों॥ सोपुरुषजोकछुचेष्टाकरता
है॥ सोदेहकेनिमितकरताहै॥ तिसकरबहुतकालल
कष्टपावताहै॥ जैसेबालिकवेतालकीकल्पनांकर
दुःखपावताहै॥ तैसेदेहविषेपुरुषअभिमानकरक
ष्टपावताहै॥ जिसकीदेहकीभावनांनष्टभईहै॥ अरु
शुधचैतन्यभागविषेस्थितपाईहै॥ तिसकोंदेहादिक
भ्रमशांतिहोजाताहै॥ ॥इतिश्रीउत्पतप्रकरणेअ
वांतरमोक्षउपदेशोनामसर्गः॥ ६८॥ श्रीवसिष्टोवा
च॥ हेरामजीजबइसप्रकारब्रह्माजीमुजकोंकहा॥ त
बमयप्रश्नकीया॥ हेभगवनतुमकहाजोआपविषेमं
त्रादिकोंकाबलहोताहै॥ सोआपभीअमिटरूपहै॥ मि
टतानहीं॥ सोऐसेभीदेख्याहै॥ जोआपकरकेंइंद्रीयां
भीजरीभूतहोजाताहैं॥ ऐसेतोनहीं॥ जोदेहकोंआपहो
वे॥ अरुमनकोंनहोवे॥ हेभगवनमनअरुदेहअनन्य
रूपहैं॥ जैसेवायुअरुस्पंदविषेभेदनहीं॥ जैसेघृतअ
रुचिकनाईविषेभेदकछुनहीं॥ तैसेमनअरुदेहविषे
भेदकछुनहीं॥ जोकहीयेदेहकछुवस्तनहीं॥ चित्तही
चित्तहै॥ देहभीचित्तविषेकल्पितहै॥ जैसेस्वप्नेदेहक
ल्पितहोतीहै॥ तोरकरकेनष्टहूयेंदेनेकिंउनष्टनहीं
होता॥ सोमयदेख्याहै॥ जोआपकरदेहअरुमनभीज
रीभूतहोजातेहैं॥ अरुतुमकहतेहो जोदेहकाकर्ममन
नकोंनहींलागता॥ सोकैसेजाणीये॥ श्रीब्रह्मोवाच॥

मनबुद्धे

कछु

की

जैसेमृगत्रिष्णाका
जलहोताहैअरुदृ
मरीचेदरसंभास
ताहै

हे मुनीश्वर ऐसा पदार्थ कोऊ नहीं जगत विषे ॥ जो
सर्व कर्मों कों त्याग कर पुरुषरूप पुरुषार्थ कों अंगी
कार करीए तो सिद्ध न होवे ॥ ब्रह्मा आदिक चींटी पर्यं
त जिस जिस का भाव नां होती है ॥ तैसा तैसा रूप हो भा
सता है ॥ अरु सर्व जीवों के दो दो सरीर हैं । एक मन
रूपी सरीर है ॥ सो चंचल है ॥ अरु दूसरा मांसमय स
रीर है ॥ तिसका कीया कार्य निःफल है ॥ अरु जो मन
कर चेष्टा होती है ॥ सो सफल होती है ॥ हे मुनीश्वर जि
स पुरुष कों मांसमय सरीर विषे अहंभाव है ॥ तिस
कों आधि व्याधि ताप भी अवश्य मेव लागता है ॥ अ
रु मांसमय सरीर जो मूक है ॥ अरु गुंग है ॥ दीन अरु
नाशी है ॥ इस साथ जिसका संयोग होता है ॥ सो दीन र
हता है ॥ अरु चित्तरूपी सरीर चंचल है ॥ हे अपणे चि
त परवस किसी के नहीं होता ॥ अर्थ इह ॥ जो वशी कर
णा बहुत कठिन है ॥ जब दृढ वैराग्य अभ्यास होवे
तब वस होवे ॥ अन्यथा वस नहीं होता ॥ महा चंचल है ॥
अरु इह जगत भी मन विषे पडा है ॥ तांते जैसा निश्चा
मन विषे होता है ॥ सो दूर नहीं होता ॥ अरु मांसमय स
रीर का कीया सफल नहीं होता ॥ तांते जो मन विषे नि
श्चा है ॥ सो दूर नहीं होता ॥ हे मुनीश्वर जिन पुरुषों चि
त कों आत्मपद विषे जोडा है ॥ तिनकों अग्नि विषे
पाईये तो भी दुःख नहीं होता ॥ काहे ते जो उनका चित्त
बाह्य ते इस्त्री आदिक कों ग्रहण नहीं करता ॥ आ
त्मा ही विषे इस्थित होता है ॥ हे मुनीश्वर जो सर्व भाव
कों त्याग कर मन का निश्चा जिस विषे दृढ होता है ॥ सो
ई भासता है ॥ अवर किसी संसार के कष्ट अरु ताप
कर चलायमान नहीं होता ॥ अरु जो किसी दुःख ता
प कर मन चलायमान होवे ॥ तब जाणीये जो इसका
दृढ निश्चा न था ॥ हे मुनीश्वर मन की तीव्रता के हलाव

णोको किसीकी समर्थता नहीं ॥ काहेतें जो सूक्ष्म मानसी
है ॥ तातें मन साधु मन को मारै ॥ अरु चित्त कों परमप
द विषे जोडै ॥ जब चित्त आत्मपद विषे दृढीभूत हो
ता है ॥ तब जगत के पदार्थों कर चलायमान नहीं
होता ॥ जैसे मंडप ऋषीश्वर सूलीपर चढ्या था ॥ ति
सको सूली ऊपर भी खेद न भया ॥ हे मुनीश्वर जिस
विषे मन दृढ होकर लागता है ॥ तिसकों चलायके
ऊ नहीं सकता ॥ जैसे दशपुत्र इंदु ब्राह्मण के चला
यमान न हूए ॥ तैसे मन आत्मा विषे स्थित हूया च
लायमान न होवेगा ॥ हे मुनीश्वर जैसे जैसे मन वि
षे तीव्र निश्चा होता है ॥ तिसकी सिद्धता होती है ॥
दीर्घतपा एक ऋषीश्वर था ॥ उह अंधे कूप विषे गि
र पडा ॥ तिस कूप ही विषे मन कर यज्ञ करने ला
गा । मन विषे यज्ञ का निश्चा कीया ॥ तिस यज्ञ कर
मन ही विषे देवता होकर फल भोगणे लागा ॥ इंद्र
पुरी विषे ॥ जैसे इंदु ब्राह्मण के पुत्र मानुषों के समा
न थे ॥ अरु मन विषे दृढ जो ब्रह्मा की भावना करी
तिस कर दशों ही ब्रह्मा भए ॥ अरु इसे हीं अपणी
अपणी सृष्टि रची ॥ सो कैसीयां सृष्टीयां हैं ॥ जो मुझ
कर भी खंडन न नहीं होतीयां ॥ तातें जो कछु दृढ अ
भ्यास होता है ॥ तिसका नाश नहीं होता ॥ अवर भी
जो देवता ऋषि महा धीर्यवान हूये हैं ॥ जिनकी ए
क क्षण वृत्ति भी चलायमान नहीं भई ॥ तिनकों सं
सार ताप आधि व्याधि त्रिताप कर्म तिस तें आदि ले
कर जो तीने दुःख हैं ॥ तिनकों कोऊ नहीं स्पर्श क
रता ॥ जैसे कमल फुल का प्रहार सिला को फोड न
ही सकता ॥ तैसे धीर्यवान पुरुषों कों संसार ताप न
ही लागते ॥ अरु जिसकों आधि व्याधि दुःख खंड
न करते हैं ॥ सो जानीये जो परम अर्थतें भ्रष्ट है ॥

हेमुनीश्वरजोपरमअर्थविषेसावधानभएहैं॥तिन
कोदुःखकोऊनहीस्पर्शकरता॥स्वप्नेविषेभीति
नकोदुःखकाअनुभवनहीहोता॥काहेतेंजोउन
काचित्तशांतरूपहूयाहै॥तातेदृढपुरुषार्थकर
मनकेसाथमनकोमार॥तिसकरजगतभ्रमशांति
होजावेगा॥हेमुनीश्वरजिसकोंस्वरूपकाप्रमादहो
ताहै॥तिसकोंक्षणविषेजगतदृढहोभासताहै॥जै
सेबालिककोंवैतालहोभासताहै॥तैसेप्रमादकर
जगतहोभासताहै॥हेमुनीश्वरमनरूपीकुलालहै
अरुवृत्तरूपीमनकाहै॥तिसमनकरवृत्तिअने
कप्रकारधारतीहै॥जैसेमृत्तिकाकुलालकरअ
नेकप्रकारोंकोंधारतीहै॥तैसेनिश्चेकेअनुसार
वृत्तिअनेकप्रकारोंकोंधारतीहै॥जैसेसूर्यकेच
ढेतेंभावनाकरअंधकारकोंदेखतेहैं॥अरुकि
नेकोंचंद्रमांकीकिरणोंभावनाकरअग्निरूपभा
सतीहै॥किनेकोंविषविषेअमृतकीभावनाहो
तीहै॥तिसकोंविषभीअमृतरूपहोजातीहै॥इ
सीप्रकारकटुकअमलसलोणभीभावनाके
अनुसारभासतेहैं॥जैसामनविषेनिश्चाहोताहै
तैसाइसकोंभासताहै॥मनरूपीबाजीगरहै॥जै
सीरचनाचहताहै॥तैसीकरलेताहै॥सोमनरूपी
बाजीगरकारचाहूयाजगतहै॥सोसतभीनहीं॥
अरुअसतभीनहीं॥प्रत्यक्षभासतेकरसतहै॥
अरुनाशभावकरअसतहै॥सतअसतभीमन
करपडाभासताहै॥वास्तवतेंउपजाकछुनहीं॥
॥ ॥इतिश्रीउत्पत्तिप्रकरणेमनमहात्म्यवर्णनं
नामसर्गः॥ ६९ ॥श्रीवसिष्ठोवाच॥हेरामजी
इसप्रकारप्रथमब्रह्माजीमुझकोंकहाथा॥सो

मय॰अबतुजकोंकहाहै॥जोप्रथमब्रह्मसमपदा
स्थितथा॥तिसविषेचित्तहूया॥अर्थइहजोअहं
अस्मिचेतनकालेखणहूया॥तिसकीजबद्रिढता
हूई॥तबमनहूया॥तिसमनपंचतन्मात्राकीक
लनोंकरी॥सोतेजआकारब्रह्मापरमेष्टीकहीता
है॥हेरामजीसोब्रह्माजीमनरूपहै॥अरुमनहीब्र
ह्मारूपहै॥तिसकारूपसंकल्पहै॥बहुडजैसासं
कल्पआगेंकरताहै॥तैसाहीहोभासताहै॥तिस
ब्रह्मानेंएकअविद्याशक्तिकल्पीहै॥अनात्मवि
षेआत्मअभिमानकरणतिसकानामअविद्या
है॥बहुडअविद्याकोनिरतकोविद्याकल्पी॥इस
प्रकारपहाडतृणजलसमुद्रस्थावरजंगमसंपूर्ण
जगतकोंउत्पतकीया॥इसप्रकारब्रह्माहूया॥अरु
इसप्रकारजगतहूया॥जैसेतुजकोंकहाहै॥सोजग
तकैसेउपजाहै॥अरुकैसेमिटताहै॥सोसुण॥जैसे
समुद्रविषेतरंगउपजतेहैं॥अरुसमुद्रहीविषेली
नहोतेहैं॥तैसेब्रह्मतेंजगतउपजताहै॥अरुब्रह्म
हीविषेलीनहोताहै॥हेरामजीशुधआत्मसत्तावि
षेजोअहंकाउलेखहूयाहै॥सोमनहै॥अरुसोईब्र
ह्माहै॥तिसनेंनानाप्रकारकाजगतरचाहै॥सोसर्व
विषेचित्तशक्तिपसरीहै॥सोचित्तहीकरनानात्वभा
सताहै॥हेरामजीजेतेकक्षुद्रजीवहैं॥तिनसर्वोंविषे
आत्मसत्ताहै॥परअपणेस्वरूपकेप्रमादकरपडे स्थित
नटकतेहैं॥जैसेपवनकरकेबनविषेसकेपात्र
नटकतेहैं॥तैसेकर्मरूपीवायुकरजीवपडेनटक
तेहैं॥अर्धऊर्धविषेघटीयंत्रकीन्याईअनेकज
न्मोंकोंपावतेहैं॥जबकाकतालीवतसतसंगकी
प्राप्तहोवे॥अरुअपणांपुरुषार्थभीकरे॥तबमुक्ति
होवे॥जबलगसतसंगकीप्राप्तनहींभई॥तबलग

कर्मरूपी जेवडे साथ बांधे हूये अनेक जन्मों विषे भटकते हैं ॥ अरु जब सतसंग कर ज्ञान की प्राप्त होवे ॥ तब ही इस भ्रमतें छूटे ॥ अरु ध्यान ही छूटता ॥ हे राम जी इस प्रकार ब्रह्मतें जीव उपजे हैं ॥ अरु मिट जाते हैं ॥ अनंत संकटों का कारण वासना है ॥ वासना ही नाना प्रकारों के संकटों को दिखावती है ॥ अरु जगत रूपी बन जन्म रूपी वली वासना जल कर बढती है ॥ जब सम्यक ज्ञान प्राप्त होवे सोई मया कुहाडा तिस कर इसको काटे ॥ जब मन की वासना का होना मिटे ॥ तब सरीर रूपी अंकुर मन रूपी बीजतें न उपजे ॥ जैसे भुना बीज अंकुर नही लेता ॥ तैसे वासनातें रहित मन सरीर को नही धारता ॥ ॥ इति श्री उतपतप्रकरणे वासनां खंडनं नाम सर्गः ॥ ६० ॥ श्री वसिष्ठो वाच ॥ हे राम जी जेते कछु भूत जात हैं ॥ सो सब ब्रह्मतें उपजे हैं ॥ जैसे समुद्रतें तरंग बुदबुदे होते हैं ॥ तैसे इह जीव ब्रह्मतें उपजे हैं ॥ सो सब ब्रह्म ही रूप है ॥ जैसे सूर्य के किरणों विषे जल भासता है ॥ तैसे ब्रह्मतें जीव हूये हैं ॥ जैसे चंद्रमातें किरणों का विस्तार होता है ॥ तैसे ब्रह्मतें जीव होते हैं ॥ जैसे स्वर्णतें भूषण होते हैं ॥ तैसे ब्रह्मतें जगत होता है ॥ जैसे झरणों सो जल के किणके उपजते हैं ॥ तैसे ब्रह्मतें भूत उपजते हैं ॥ जैसे आकास एक ही है ॥ घट की उपाधि कर के घटाकास कहीता है ॥ तैसे ब्रह्म संवेदन के फुरणे कर जीव कहीता है ॥ जैसे जल ही द्रवता कर के तरंग हो भासता है ॥ तैसे ब्रह्म संवेदन कर के जगत रूप हो भासता है ॥ द्रष्टा दर्शन द्रस्य सब ब्रह्म ही तें उपजे हैं ॥ जैसे सूर्य के तेज कर मृगत्रिस्ना की नदी भासती है ॥ तैसे संवेदन कर के ब्रह्म विषे द्रष्टा दर्शन द्रस्य भासते हैं ॥ वास्तव तें द्रष्टा दर्शन

द्रूपको भ्रम नहीं ॥ जैसे चंद्रमा अरु शीतलता विषे भेद नहीं ॥ जैं
से सूर्य अरु प्रकाश विषे भेद नहीं ॥ तैसे ब्रह्म अरु द्रूपवि
षे कछु भेद नहीं ॥ जैसे समुद्र अरु तरंग विषे तरंग उपजते
हैं ॥ अरु समुद्र ही विषे लीन होते हैं ॥ तैसे जीव ब्रह्मतें उपज
ते हैं ॥ ब्रह्म ही विषे लीन होते हैं ॥ कई सहस्र जन्मों तें अनंत
र आत्म होते हैं ॥ अरु कई थोडे जन्मों कर मिलते हैं ॥ हे राम
जी इस प्रकार जगत ब्रह्मतें हूया है ॥ अरु इस प्रकार लीन
होता है ॥ ॥ इति श्री उत्पत्ति प्रकरणे सर्व ब्रह्म प्रतिपा
दनं नाम सर्गः ॥ ७१ ॥ श्री वसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी कर्ता
अरु कर्म इह अभिन्न रूप हैं ॥ अरु एकठे ही ब्रह्मतें उत्पत
हूये हैं ॥ जैसे सुगंध अरु फूल वृक्षतें उत्पत एकठे होते हैं
तैसे कर्ता अरु कर्म एकठे उत्पत हूये हैं ॥ जब जीव सर्व सं
कल्पों को त्यागता है ॥ तब निर्मल ब्रह्मरूप होता है ॥ जैसे आ
काश विषे नीलता भासती है ॥ तैसे आत्मा विषे जगत क
ल्पना भासती है ॥ आत्मा अद्वैत है ॥ अपने आप विषे स्थित
है ॥ अरु इह भी अज्ञानी के बोध जनावणे निमित्त कहीता
है ॥ जो जीव ब्रह्मतें उपजे हैं ॥ परंतु भी दूसरा कछु नहीं ॥ अ
रु दूसरे को अंगीकार करके उपदेश करीता है ॥ वास्तव तें
ब्रह्मसत्ता विषे कोऊ कल्पना नहीं ॥ अरु जो ज्ञानवान हैं ॥ ति
नों को सदा ही ऐसे भासता है ॥ अरु अज्ञानी को दूरते दूर ही
भासता है ॥ हे रामजी आत्म अज्ञानतें जगत उपजता है ॥ अ
रु आत्म के ज्ञान कर लीन होता है ॥ जैसे वसंत रुत विषे ना
ना प्रकार के अंकुर उपजते हैं ॥ अरु तिन के नष्ट हूयें अ
भाव हो जाते हैं ॥ तैसे चित्त के फुरणे तें जीव चौरासी फिरते
हैं ॥ अरु चित्त के अफुर हूयें लीन हो जाते हैं ॥ हे रामजी देव
ता दैत्य नाग मानुष आदिक जेते कछु जीव तुज को भासते हैं
सो सब आत्मा तें उपजे हैं ॥ बहुड़ आत्मा ही विषे लीन होते हैं ॥
इनका उत्पत कहणा भी अज्ञान है ॥ आत्मा के अज्ञान कर
भासते हैं ॥ जब आत्मज्ञान होता है ॥ तब संसार भ्रम नष्ट हो
जाता है ॥ श्रीरामोवाच ॥ हे भगवन जो पदार्थ शास्त्र प्रमा

णहै॥ सोई सत है॥ अरु शास्त्र प्रमाण सोई है॥ जिस कर रा
गद्वेषतें रहित होवै॥ अमानी अदंभी होवै॥ सो भली गतिकों
पावता है॥ अरु जो शास्त्र प्रमाणतें विपरीत वर्त्तते हैं॥ सो अ
शुभगतिकों पावते हैं॥ अरु लोकों विषे भी प्रसिध है॥ जो क
र्मोंके अनुसार जीव उपजते वर्त्तते हैं॥ जैसे बीजतें अंकुर
उपजता है॥ तैसी गतिकों जीव पावता है॥ जैसा कर्म होता है
तैसी गति होती है॥ कर्मों कर के कर्ता होता है॥ अरु कर्त्ता क
र के कर्म होते हैं॥ अरु तुम कहते हो॥ जो मन अरु कर्म ब्रह्म
तें एकठे उत्पत्न हूए हैं॥ इस प्रकार शास्त्रों के वचन अरु
लोकों के वचन अप्रमाण होते हैं॥ हे देव इस संसे के दूर क
रणे को तुम योग्य हो॥ जैसे होवै तैसे कहो॥ श्रीवसिष्ठो
वाच॥ हे रामजी इह प्रश्न तुमनें भला कीया है॥ तिसका उ
त्तर मैं कहता हों सुण॥ तिसके श्रवण कीये तें तुमकों
ज्ञान प्राप्त होवैगा॥ हे रामजी सुध संवित मात्र आत्मतत्व
विषे जो संवेदन फुरा है॥ सो कर्मों का बीज मन हूया है॥ सो
सभ कर्म रूप है॥ तिस बीजतें सभ फल होते हैं॥ तातें मन
अरु कर्म विषे कछु भेद नहीं॥ जो मन विषे संकल्प होता
है॥ सो ज्ञानवान तिसकों अंकुर कहते हैं॥ हे रामजी पूर्व इ
सका देह मन नहीं है॥ तिस मनरूपी सरीर साथ कर्म होता
है॥ तिस कर्मतें फल होता है॥ अन्यथा नहीं होता॥ जो क
छु मन के संकल्प साथ कीया है॥ सो अवश्यमेव सिध हो
ता है॥ पूर्व जो पुरुष प्रयत्न कीया होता है॥ सो निफल नहीं
होता॥ अवश्यमेव तिसकी प्राप्त होती है॥ हे रामजी जो ब्र
ह्म विषे चेतनता हूई है॥ सोई मन है॥ अरु मन जो है सो क
जी र्म रूप है॥ अरु सर्व जीवों का बीज है इतर नहीं॥ हे राम के
उ[illegible]शो देशांतरकों जावणे लागता है॥ तब जावणे का सं
कल्प ले जाता है॥ सो कर्म है॥ अरु फुरणरूप मन का है॥
समुझ सो मन अरु कर्म विषे भेद कछु नहीं॥ अब दोनों स्वरूप ब्रह्म
है॥ तिस विषे चेतनता इव तां जीवरूप हैं॥ तिसी का नाम म

इव तां रूप चेतनता है सो चेतन जीवरूप है

नहै॥ सो मन कर्म रूप है॥ जैसे मन फुरता है॥ सोई रूप हो
भासता है॥ जो कछु मन करके करीता है॥ सोई सिध हो
ता है॥ सरीर करके क्रिया करी सिध नही होती॥ इसी ते क
हा जो मन अरु कर्म विषे भेद कछु नही॥ मन अरु कर्म
को भिन्न जानते हैं॥ सो मिथ्या कलना है॥ जैसे समुद्र अ
रु तरंग विषे भेद कछु नही॥ तैसे मन अरु कर्म विषे भे
द मूर्ख मानते हैं॥ प्रथम ब्रह्म सें मन अरु कर्म एकठे फु
र आए हैं॥ जैसे समुद्र विषे तरंग फुर आवते हैं॥ तैसे चि
त के फुरणे कर मन अरु कर्म फुर आए हैं॥ जब चित्त सों
स्पंदता मिट जाती है॥ तब चित्त भी नष्ट हो जाता है॥ अरु
कर्मों के नष्ट हूये मन का भी अभाव हो जाता है॥ जो पुरु
ष मन ते मुक्ति हूया है॥ सोई मुक्ति हूया है॥ जोई मन ते मु
क्ति नही हूया॥ सोई बाध्या हूया है॥ एक के नास हूए दो
नो का नास हो जाता है॥ जैसे अग्नि के नास हूये उष्णता
भी नास हो जाती है॥ जब उष्णता नास होती है॥ तब अ
ग्नि नास होती है॥ तैसे मन के नष्ट हूये कर्म भी नष्ट हो
ते हैं॥ अरु कर्म के नष्ट हूये मन भी नष्ट हो जाता है॥
॥इति श्री उत्पत प्रकरणे कर्मपोरुषगतिपादनं
नाम सर्गः॥ ८२॥ श्रीवसिष्टोवाच॥ हे रामजी मन
जो है सो भावना मात्र है॥ भावना नाम फुरणे का है॥ अरु
फुरणा कर्म रूप है॥ तिस कर्मरूपी फुरणे कर सर्व फ
ल की प्राप्त होती है॥ श्रीरामोवाच॥ हे ब्राह्मण इस
मन का रूप विस्तार कर कहो॥ जो जड अजड मन का आ
कार है॥ तिसको विवेरा कर कहो॥ श्रीवसिष्टोवाच
हे रामजी अनंत तत्व जो आत्मा सर्वशक्ति है॥ जब तिस
विषे संकल्प शक्ति फुरती है॥ तब तिसको मन कहीता
है॥ जड अजड के मध्य विषे डुलायमान होता है॥ तिस
मिश्रित रूप का नाम मन है॥ हे रामजी भा[illegible]वं रूप जो प
दार्थ हैं॥ तिसके मध्य विषे जो सत असत का निश्चा क
रता है॥ तिसका नाम मन है॥ तिस विषे जो इह निश्चाक

फैलदायिक

حقیقت

रणा॥ जोमयचिदानंदस्वरूपनहीं॥ मयरूपणोहां॥ देह
साथमिलकरअैसेफुरताहै॥ इसतेंरहितमननहीहो
ता॥ जैसेगुणोंविनांगुणीनहीरहता॥ तैसेकर्मकलनां
विनांमननहीरहता॥ जैसेउश्नताकीसत्ताअग्नितेंभिन्न
नहीपईती॥ तैसेकर्मोकीसत्तामनतेंभिन्ननहीपईती॥
हेरामजीमनरूपीबीजहै॥ तिसविषेसंकल्परूपीनानाप्र
कारकेफलहोतेहैं॥ तिनकरकेनानाप्रकारकेसरीरहो
तेहैं॥ तिसकरसंपूर्णजगतदिषीताहै॥ जैसीजैंसीमनवि
षेवासनांहोतीहै॥ तिसकेअनुसारफलकीप्राप्तहोतीहै
तांतेमनकाफुरणाहीकर्मोकाबीजहै॥ तिसकरभिन्नभि
न्नक्रियाहोतीहै॥ सोतिसवृक्षकीशाखाहैं॥ अरुनानाप्र
कारकेविचित्रफलहैं॥ हेरामजीजिसओरमनकानिश्च
होताहै॥ तिसीओरकर्मेंद्रियांभीप्रवर्ततीयांहैं॥ अरुजो
कर्महै॥ सोईमनकाफुरणाहै॥ अरुमनहीफुरणारूपहै
इसीकारणतेंकहाहै॥ जोमनकर्मरूपहै॥ तिसमनकीए
तीसंज्ञाकहीहै॥ मनकहीये॥ बुधिकहीये॥ अहंकारक
हीये॥ चित्तकहीये॥ कर्मकहीये॥ कलनांकहीये॥ स्मृतक
हीये॥ वासनांकहीये॥ अविद्याकहीये॥ इंद्रीयां॥ पुरुष
प्रयत्न॥ प्रकृत॥ माया॥ इत्यादिककल्पनांसंसारकाका
रणहैं॥ चित्तकोंजबचेतकासंयोगहोताहै॥ तबसंसा
रनोमहोताहै॥ अरुइहजेतीसंज्ञाकहीहैं॥ सोचित्तके
फुरणेकरकेकाकतालीवतअकसमात्रतेंफुरआ
णहैं॥ ॥श्रीरामोवाच॥ हेभगवनअद्वैततत्वपरम
संवितआकाशविषेएतीकलनांकैसेहूईहै॥ अरुति
सविषेअनर्थरूपीदृश्यताकैसेहूईहै॥ ॥श्रीवसिष्टोवा
च॥ हेरामजीशुधसंवितमात्रजोसत्ताहै॥ सोफुरणेकी
न्यांईस्थितभईहै॥ तिसकानाममनहै॥ अरुजबउहवृ
त्तनिश्चयरूपभई॥ जोभावअभावरूपपदार्थोकोंनि
श्चेकरतभई॥ जोइहपदार्थअैसाहै॥ इहपदार्थअैसा

है॥ तिस निश्चे व्रत्ति का नाम बुधि है॥ जब मिथ्या अभिमान
हढ करीया अनात्मा विषे॥ अरु आत्म भाव परछिन्न करीया
तब तिसका नाम अहंकार भया॥ सोई मिथ्या अहंकार
संसार बंधन का कारण है॥ किसी पदार्थ को ग्रहण कर
ता है॥ किसी का त्याग करता है॥ बालिक की न्याई विचा
र ते रहित पडा धावता है॥ तिसका नाम चित्त है॥ अरु व्र
त्ति का फुरणा धर्म है॥ तिस फुरणे विषे फल को आरोप कर
तिसकी ओर धावणा॥ तिसका नाम कर्म है॥ अरु कर्त्तले
को अभिमान फुरे रिदे विषे तिसका नाम कलना है॥ अरु
पूर्व जो कार्य कीया है॥ तिसको त्याग कर तिसका संस्कार
चित्त विषे धार कर स्मरण करणा तिसका नाम स्मृत है॥
अथवा पूर्वी तिसका अनुभव न होया॥ अरु रिदे विषे
फुर आवे जो इह मय पूर्व कीया था॥ तिसका नाम भी स्मृ
त है॥ अरु जिस पदार्थ का अनुभव होवे॥ तिसके अनुसा
र जो चित्त फुरे॥ तिसका नाम वासना है॥ हे रामजी आत्म
तत्व अद्वैत है॥ तिस विषे अविद्या अविद्यमान होकर
नासती है॥ तिसका नाम अविद्या है॥ अरु फुरणे स्वरू
प को भुलाकर अपणे नास के निमित्त स्पंद चेष्टा करता
है॥ अरु शुध आत्मा विषे विकल्प पडउठते हैं॥ तिसका
नाम मल अविद्या है॥ शब्द स्पर्श रूप रस गंध पंचों कों
दिखावणे हारीयां हैं॥ अरु जो इंद्रीयां परमात्मा कों दि
खावणे हारीयां नहीं॥ तिसका नाम इंद्रीयां है॥ अरु अद्वै
त तत्व आत्मा विषे जिस द्वैत रूप जाल को रचा है॥ तिस स्पं
द कला का नाम प्रकृति कहीये॥ अरु असत को सत की
न्याई दिखावती है॥ अरु सत को सत की न्याई दिखाव अ
ती हैं॥ सो माया कहीती है॥ अरु शब्द स्पर्श रूप रस गंध इ
ह कर्म हैं॥ अरु जिस कर शब्द स्पर्श रूप रस गंध होते हैं
सो कर्ता कहीता है॥ सोई कार्य कारण कहीता है॥ अरु शु
ध चैतन्य चेतना भाव को प्राप्त होता है॥ सो संकल्प की न्यां

ई होता है॥ तिस फुरणे वर्त्तके इह पर्याय हैं॥ तिस फुरणे क-
र नाना प्रकार के संकल्प जाल उठते हैं॥ तब तिस कों जीव
कहीता है॥ मन भी इसी का नाम है॥ हे रामजी परमार्थ रूप शु-
ध चित्त ही चेतन के संयोग कर स्वरूप तें गिरे की न्याई स्थि-
त भया है॥ श्रीरामोवाच॥ हे भगवन इह मन जड है॥ अ-
थवा चैतन्य है॥ इसका रूप मुझ कों जिउ का तिउ कहो॥ जो
मेरे रिदे विषे स्थित होवे॥ श्रीवसिष्टोवाच॥ हे रामजी
मन जड भी नहीं॥ अरु चैतन्य भी नहीं॥ जड चैतन्य की जो सं-
धि है॥ मध्य भाव तिसका नाम मन है॥ संकल्प विकल्प रूप
मन है॥ तिस मन तें इह जगत उपजा है॥ जड अरु चैतन्य
दोनों भावों विषे दुलायमान है॥ अर्थ इह जो कब हूं जड
भाव की ओर आवता है॥ कब हूं चैतन्य भाव की ओर आ-
वता है॥ तिस का नाम मन है॥ शुध चैतन्य मात्र विषे जो फु-
रणा हूया है॥ तिसका नाम मन है॥ तिस मन की अनेक
संज्ञा है॥ मन बुधि चित्त अहंकारादिक संज्ञा कों मन ही
प्राप्त भया है॥ जैसे एक नटूया अनेक सांगों की संज्ञा को
पावता है॥ जिसका सांग ले आवता है॥ तिसी संज्ञा कों पा-
वता है॥ जैसे पुरुष विचित्र कर्मों कर अनेक संज्ञा कों पा-
वता है॥ तैसे संकल्प कर मन अनेक संज्ञा को पावता है॥
हे रामजी इह जो मय मन की अनेक संज्ञा कही हैं॥ अन्य-
था अन्यथा कर बहुत प्रकार वादीयों ने नाम राखे हैं
जो मन कों जड मानते हैं॥ अरु जीव कों मन तें भिन्न मान-
ते हैं॥ अरु अहंकार को भिन्न मानते हैं॥ सो मिथ्या कल्प-
ना करते हैं॥ न्याइक ऐउं कहते हैं॥ स्त्रिष्ट तत्वों के सूक्ष्म
प्रमाणों ने उत्पति भई है॥ जब प्रलय होती है॥ तब स्थूल
तत्व प्रलय हो जाते हैं॥ तिनों के सूक्ष्म प्रमाण रहते हैं॥
बहुड उत्पन्न काल विषे तेही सूक्ष्म प्रमाण द्वौणे त्रयोणे
होकर स्थूलता कों प्राप्त होते हैं॥ तिन पांचों तत्वों ने स्त्रिष्ट
होती है॥ अरु सांख्यमत वाले कहते हैं॥ प्रकृति माया के

गणामकरस्लिष्टहोतीहै॥ अरुचारुवाकीपृथिवीजलते
जवायुचारोंतत्वोंकेएकठेहोणेकरस्लिष्टकीउत्पतमा
नतेहैं॥ अरुचारोंतत्वोंकेसरीरमानतेहैं॥ जबतत्वआपो
आपविछडजातेहैं॥ तबप्रलयमानतेहैं॥ अरुजैमनअ
ग्रवरप्रकारमानतेहैं॥ बौधकवैशेषकादिकअवरप्र
कारमानतेहैं। पांचरात्रिकअवरप्रकारमानतेहैं॥ जैसे
एकहीस्थानकेअनेकमार्गहोतेहैं॥ अनेकमार्गोंकरउसी
एकस्थानकोंपऊचीताहै॥ तैसेअनेकमतोंकाअधिष्टा
नआत्मसताहै॥ अरुजोभिन्नभिन्नमतमानकरविवाद
करतेहैं॥ सोआत्मतत्वकेअज्ञानकरकरतेहैं॥ सिधांत
सनकाएकहै॥ तिसविषेवादकोकुनहीप्रवेशकरता। हे
रामजीजेतेकछुशास्त्रोंकेमतवालेहैं॥ सोआपणेआपणे
मतकीप्रतिपालकरतेहैं॥ अरुदूसरेकीउपमानहीकर
ते। जैसेमार्गकेचलणेवालेआपणेआपणेवांछितदेस
कोंजातेहैं॥ तैसेमनकोंअनेकसंज्ञाकरकहतेहैं। जैंसे
एकपुरुषकोंअनेकसंज्ञाकरकहीताहै॥ स्नानकरणें
तेस्नानी॥ अरुदानकरणेंतेदानी॥ अरुतपकरणेतें
तपस्वीकहीताहै॥ इत्यादिकक्रियाकरणेकरअनेकसं
ज्ञाकोंपावताहै॥ तैसेमनकीअनेकसंज्ञाहोतीहै॥ मनहीं
कानामजीवहै॥ मनहींकानामवासनाहै॥ कर्मभीमनहींका
नामहै॥ हेरामजीएकचित्तहीकेफुरणेकरसंपूर्णजगत
हूयाहै॥ अरुमनहीकेफुरणेकरनासताहै। जबइहपु
रुषफुरणेतेंरहितहोताहै॥ तबदेखताहै। तोभीनहीदे
खता॥ अरुइहप्रसिधजाणीये॥ जोपुरुषइंद्रीयोंकेइ
पान वाकन
ष्टअनिष्टविषेहर्षशोकतेंरहितहै॥ सोज्ञानवानहै॥ अ
रुजोइंद्रीयोंकेइष्टअनिष्टविषेबंधमानहै॥ तिसका
नामजीवहै॥ हेरामजीजोपुरुषइसमनकोंकेवलजड
जानतेहैं॥ तिनकोंभीतूंजडजान। अरुजोपुरुषमनकों
केवलचैतन्यजानतेहैं॥ सोभीबंधनमोंबांधेहैं॥ जबए
कहीरूपमनकाहोवे। तबनानाप्रकारकीविचित्रताभीन

होवे॥ जबकेवलचैतन्यरूपहोवे॥ तबजगतकाकारण
नहीहोता॥ अरुजडहोवेतबभीजगतकाकारणनहीहो
ता॥ हेरामजीसर्वअर्थोंकाकारणमनहै॥ जैसेएकजे
लरसकरअनेकरूपभासतेहैं॥ तैसेएकहीमनअने
कपदार्थहोभासताहै॥ अरुमनहीपर्मदेवसर्वसक्ति
कीसक्तिहै॥ अरुपरमात्मरूपतेंइतरफुरताहै॥ तिस
तेंजडचैतन्यभावउपजेहैं॥ हेरामजीनितशुधरूप
ब्रह्महै॥ सोईजबशक्तितेंभावकोंप्राप्तहोताहै॥ तब
अविद्याकेवसतेंनानाप्रकारकेजगतकोंधारताहै।
तिसहीकेसर्वपर्यायहैं॥ जीवकहीये॥ मनकहीये॥
अहंकारकहीये॥ बुधिकहीये॥ इत्यादिकसंज्ञामलि
नचित्तकीयांहोतीहैं॥ ॥इतिश्रीउत्पतप्रकरणे
मनसंज्ञाविचारोनामसर्गः॥ ७३ ॥ श्रीरामोवाच
हेभगवनइहसभजगतअडंबरमनहीनेरचाहै॥
अरुमनहीरूपहै॥ इहतुमारेकहिणेकरमयनिश्च
कीयाहै॥ परइसकाअनुभवकैसेहोवे॥ सोकहो॥ श्री
वसिष्ठोवाच॥ हेरामजीइहमनभावनांमात्रहै॥ जैं
सेसूर्यकीधूपहोतीहै॥ सोमारुस्थलविषेजलहोभा
सतीहै॥ तैंसेआत्माकोआभासरूपमनहोताहै॥ तिस
मनकरकेजेताकछुजगतभासताहै॥ सोसभहीमन
रूपहै॥ कहूंमानुषरूपकहूंदेवताकहोंदैत्यकहूंय
क्षकहूंगंधर्वरूपभयाहै॥ जेतेकछुरूपभासतेहैं।
सोसभहीमनकरकेभासतेहैं॥ सोमनअविचारित
सिधभयाहै॥ विचारकीयेतेंनष्टहोजाताहै॥ मनही
केनष्टहूयेआत्माहीशेषरहताहै॥ सोसाक्षीभूतस
र्वपदतेंअतीतहै॥ सर्वव्यापीसर्वकाआश्रयभूतहै
तिसकेप्रमादकरमनजगतकोरचताहै॥ इसीतेंक
हाहै॥ जोमनकर्मरूपहै॥ सर्वसरीरोंकाकारणहै॥ हे
रामजीजन्ममरणआदिकजेतेकछुविकारहैं॥ सो
मनकरकेभासतेहैं॥ सोमनआपनीअविचारित

अरु मनही करयरूपहै

सिध है॥ विचार कीये तें लीन होजाता है॥ जब मन लीन हू-
या॥ तब कर्म आदिक भी मलीन होजाते हैं॥ जो इसनी-
मत्त मुक्ति कह्या है॥ सो मुक्ति है॥ सो पुरुष जन्म मरण वि-
षे नहीं आवता॥ समन तो मउसका नष्ट होजाता है॥ श्री-
रामोवाच॥ हे भगवन तीन प्रकार के सात्विकी राजसी
तामसी जीव तुमने कहे हैं॥ तिनका कारण प्रथम मैं सत
असत रूप मन कहा। सो मन शुद्ध अशुद्ध स्वरूप चिन्मा-
त्र तत्व तें कैसे उपजा॥ अरु उपज कर विचित्रता रूप ज-
गत के कारणत्व भाव कों कैसे प्राप्त भया॥ श्रीवसिष्ठो-
वाच॥ हे रामजी आकाश तीन हैं॥ एक चिदाकाश है॥
एक चित्ताकाश है॥ एक भूताकाश है॥ सो आकाश भा-
व कर सभ न समान हैं॥ पर अपणी अपणी सत्ता को ली-
ये खडोते हैं॥ चिदाकाश जो है॥ सो चिदाकाश करके
[परापर] नित उपलक्ष रूप है॥ चैतन्य मात्र सबन के अंतर बाह्य
स्थित है॥ अरु बोध रूप है॥ सर्व भूतों विषे सम व्याप रहा
है॥ सो चिदाकाश है॥ अरु जो भूतों का कारण रूप है॥ सो
कल्पना रूप है॥ अरु सभ जगत को जिसने विस्तारता
है॥ सो चित्ताकाश कहीता है॥ अरु दसो दिसकों विस्त-
रता है वपु तिसका। अरु पवनादिकों का आश्रय भूत
है॥ सो भूताकाश कहीता है॥ हे रामजी चित्ताकाश अरु
भूताकाश इह दोनों चिदाकाश के आश्रय हैं॥ अरु स-
र्व का कारण चित्त है॥ जैसे दिन कर सर्व कार्य होते हैं॥ तैं-
से चित्त कर सर्व पदार्थ प्रगट होते हैं॥ सो चित्त जड भी न-
हीं॥ अरु चैतन्य भी नहीं॥ मलिन चेतन का नाम चित्त है॥
सो आकाश भी तिन तें उपजे हैं॥ हे रामजी तीन आकाश
भी अज्ञानी का विषय हैं॥ ज्ञानवान का विषय नहीं॥ ज्ञा-
नवान जो तीन आकाश कहिते हैं॥ सो अज्ञानी के जना-
वणे निमित्त उपदेश करते हैं॥ ज्ञानवान कों एक ब्रह्म स्वप-
रपूर्ण सर्व कल्पनों ते रहित भासता है॥ द्वैत अद्वैत शा-
स्त्री उपदेश के निमित कहते हैं॥ बोधरूप विषे शास्त्र

कोऊ नहीं ॥ हे रामजी जबलग आत्मा का बोध नहीं भया
तबलग मय तीन आकाश कहता हों ॥ वास्तव तें कलनं
कोऊ नहीं ॥ जैसे दावा अग्नि के ताप तें वन जल जाता है
सूख जैसा भासता है ॥ तैसे ज्ञान अग्नि के तापकर्यें चि
त्ताकाश अरु भूताकाश चिदाकाश विषे कल्पित भास
ते हैं ॥ फुरणे द्वारा इह पडे भासते हैं ॥ जब मलिन चेतन
चेतनता कों प्राप्त होता है ॥ तब जगत भासता है ॥ जैसे इंद्र
जाल की बाजी भासती है ॥ तैसे इह जगत भासता है ॥ ज
ब दृश्य भ्रम नष्ट होवे ॥ तब मुक्ति रूप होता है ॥ ॥ इति
श्री उत्पत्ति प्रकरणे चिदाकाश महात्म्य वर्ननं नाम स
र्गः ॥ ६४ ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी इह जो कछु उ
पजा भासता है ॥ सो तूं चित्त तें उपजा जान ॥ सो जैसे उपजा
तैसे उपजा ॥ अब तूं इसके निवर्त का यत्न कर ॥ अरु आ
त्मपद विषे चित्त को जोड ॥ तब इह जगत भ्रम नष्ट हो जा
वेगा ॥ हे रामजी इह चित्त कैसा है ॥ इस ऊपर एक चिता
ख्यान पूर्व कह्या है ॥ सो सुण ॥ जैसे ब्रह्माजी मुज कों कहा
है ॥ अरु जैसे मय देख्या है ॥ तैसे मय तुजे कहता हों ॥
॥ अथ कथा चिताख्यान लिख्यते ॥ एक महा सून
वन था ॥ जिसका एक कोण विषे इह आकाश स्थित है ॥
तिस उद्याड विषे एक पुरुष मय देखता भया ॥ सो कैसा
था ॥ जो सहस्र हीं जिसके कर ॥ अरु लोइण थे ॥ चंचल
अरु व्याकुल अरु बदा ही आकार जिसका ॥ अरु सह
स्र हीं भुजा साथ अपणे सरीर को ताडना करे मारे ॥ अ
रु आप ही कष्टमान होकर भागे ॥ बहुत योजनों पर्यंत
चल्या जावे ॥ अरु दौडता दौडता थक परे ॥ अंग चूर्ण हू
ये ॥ एक अंध कूप विषे जा गिडता ॥ केते काल तें पाछे ऊ
हां ते निकस कर करंज्ये के वन विषे जा पडे ॥ तहां कंट
क चुभें ॥ तब कष्ट पावे ॥ जैसे पतंग दीपक कों सुख रू
प जाण कर प्रवेश करता है ॥ अरु नाश ता कों पावता है
तैसे उह सुख रूप जान कर प्रवेस करे ॥ तहां भी कष्ट पा

زدکوب

वे ॥ बहुड़ आपकों हाथीसा प्रहार करे ॥ तब तिस सा
थ कष्टमान होवे ॥ तब दौड़ता हूया अंधे कूप विषे जा
पड़े दुःख पावे ॥ बहुड़ उहांतें निकस कर कदलीवन
विषे जा पड़े ॥ सुख पावे ॥ तिसतें निकसकर आपकों प्र
हार करणे लागा ॥ इसी प्रकार अपणा आपही प्रहार
करे ॥ अरु दुःख पावे ॥ तब मय उसकों पकिड़कर पूछ
ता भया ॥ अरे तूं कवन हैं ॥ अरु क्या करता हैं ॥ अरु कि
सन मित्त करता हैं ॥ अरु तेरा नाम क्या है ॥ अरु मिथ्या
यत्न किंउ करता हैं ॥ तब उह कहत भया ॥ जो मय नक
छ हों ॥ न कछु करता हों ॥ अरु तूं तो मेरा शत्रु हैं ॥ तेरे दे
षणे कर मय नाश कों प्राप्त भया हों ॥ तब मेरे देखतें दे
खतें आपणे अंगों को त्यागता भया ॥ प्रथमे उसका सी
स गिर पड़ा ॥ बहुड़ भुजा गिर पड़ी ॥ क्रम कर के उह
आपणे सरीर कों त्यागता भया ॥ तब मय आगे गया ए
क पुरुष और देख्या ॥ उह भी इसी प्रकार करे ॥ आपकों
प्रहार कर के कष्ट पावे ॥ अंधकूप विषे गिर पड़े ॥ अरु
कणजीए के बन विषे जाके दुःख पावे ॥ जब कदलीव
न विषे जावे ॥ तब सुखी होवे ॥ तब मुज कों देषकर प्रस
न्न भया ॥ तब तिस कों पकिड़कर उसी प्रकार मय पूछा
तब उह भी मेरे देखतें देखतें आपणे सरीर कों त्यागत
भया ॥ त्यागतें हूए कष्टमान भी होवे ॥ अरु हर्षमान भी
होवे ॥ उसकों देखकर मय आगे गया ॥ तब और एक
पुरुष देख्या ॥ उह भी इसी प्रकार करता रहे ॥ अंधे कू
प विषे जा गिरे ॥ हे रामजी चिरकाल पर्यंत मय उसकों
देखता भया ॥ जब कूपतें निकस्या ॥ तब मय उसपर प्रस
न्न भया ॥ अरु उससों पूछा ॥ जैसे उनसों पूछा था ॥ तब
उह मूर्ख मुज कों न जानकर दूरतें भाग गया ॥ जो कछु
आपणा आचार था ॥ तिस विषे जा लागा ॥ तिसके अनंत

राचिरकालपर्यंतमयऊहांविचरतारहा॥ तबउसही
प्रकारमयबऊतपुरुषदेखे॥ जोआपहीआपकों
नाशकरें। जिसकोंमयपछों। अरुउहमेरेपासआ
वे। तिसकोंमयकष्टतेंछुडायदेवों॥ अरुआनंदकों
प्राप्तकरों॥ अरुजोमेरेनिकटहीनआवे॥ मुजकोत्या
गजावे। तिनकाउहीहालपडाहोवे। तिसजानअटवीविषे
उहीव्यवहारपडाकरे। हेरामजीउहीअटवीतुमभीदे
खीहै॥ परउहव्यवहारतुमनहीकीया॥ अरुतुमउस
अटवीविषेजावणेयोग्यभीनहीं॥ तूंबालिकहैं॥ अ
रुउहअटवीमहा[illegible]भयानकहै॥ तिसविषेप्राप्तहू
एकंटकोंकेकष्टकोंप्राप्तहोवीताहै॥ ॥इतिश्री
उतपतप्रकरणेचित्तोपाख्यानेनामसर्गः॥ ७५॥ श्री
रामोवाच॥ हेब्राह्मणउहअटवीकवनहै॥ अरुमय
कबदेखीहै॥ अरुउहपुरुषकवनहैं॥ अरुउहमूर्खअ
पणेनाशकेनमित्तकिंउउद्यमकरतेथे॥ सोकहो॥ ॥
॥श्रीवसिष्ठोवाच॥ हेरामजीउहअटवीदूरनहीं॥ अरु
उहपुरुषभीदूरनहीं॥ इहजोवडागंभीरअसाररूपीसं
सारहै॥ सोईअटवीहै॥ ऐसीअटवीहै॥ जोशून्यहै॥ अ
रुविकारोंकरपूर्णहै॥ अरुइहअटवीभीआत्मकर
सिधहोतीहै॥ अरुतिसविषेजोपुरुषरहतेहैं॥ सोसन
मानुषहैं॥ दुःखरूपीचेष्टापडेकरतेहैं॥ अरुविवेक
ज्ञानरूपजोमयहों॥ सोउनोंकोप्रबोधकरताथा॥ जोमे
रेनिकटआएथे॥ सोमेरेउपदेसकरप्रफुलितहोआ
ए॥ बोधकरकेउहअरामीभए॥ अरुउहचित्तउपशाम
हूएहैं॥ अरुजोमूर्खथे सोमेरानिरादरकीया॥ अरुउ
सीकष्टविषेरहे॥ हेरामजीजेतीकछूइंद्रीयोंकेविषयों
कीअभिलाषाहै॥ सोउनकेअंगहैं॥ हाथोंकरजहारक
रणाजोसहकामकर्मकरणे॥ तिनकरफदेहूयेदूरतें

हूरजापरे॥ सो अंधाकूप है॥ अरु विवेक का त्याग तिसका
नाम आपकों प्रहार कीया है॥ मृत्युरूपी नरक विषे जा
दुःखी होते हैं॥ जब उहां ते आवें॥ तब पुण्यकर्म कर स्व
र्ग जाय भोगें॥ सो कदलीवन है॥ तिसतें निकस कर कण
ज्ञये का वन स्त्री पुत्रादिक हैं॥ तिनों कर दुःखी होते हैं
जब पापकर्म करें॥ तब नरकरूपी अंधेकूप विषे गि
रें॥ बहुड पुन्य करें स्वर्ग जावें॥ हे रामजी गृहस्थ महा दुः
खरूप है॥ कण्ज्ञये के वन की न्याई है॥ इह मानुष अ
सम्रखे हैं॥ जो इन विषे दुःख पावते हैं॥ जो तिन विषे वि
वेक के निकट आवते हैं॥ सो सुभ असुभ रूपी कर्मों
के बंधन तें मुक्ति होते हैं॥ इस प्रकार विवेक कों प्राप्त
होकर आत्मपद कों प्राप्त होते हैं॥ हे रामजी चित्त कों
संतों के संग कर पालना करो॥ अरु जो कछु संतों अ
रु शास्त्रों ने प्रतिपादन कीया है॥ तिस की भावना करो
तब तुजकों शोक कोउ न रहेगा॥ हे रामजी जब चित्त
आत्मपद विषे स्थित होवेगा॥ सम दुःखों तें रहित होवें
गा॥ महापर्वत की न्याई कटस्थ होवेगा॥ अरु राग द्वे
ष कर चलायमान न होवेगा॥ अरु जो देहादिक पर
छिन्न अहंकार है॥ सो नष्ट होजावेगा॥ जैसे सूर्य के उदे
हूए बरफ गल जाती है॥ तैसे इह तुछ अहंकार नष्ट हो
जावेगा॥ अरु सर्वात्मा ही पडा भासेगा॥ हे रामजी जब
लग इसकों आत्मज्ञान नहीं प्राप्त भया॥ तब लग अनिं
दित आचार विषे विचरे॥ अरु शास्त्रों के अर्थ विषे अ
भ्यास करे॥ अरु मन कों राग द्वेषादिक तें विरक्त करे॥
तब पाछें जो पावणे योग्य पद है॥ सो पावेगा॥ सो शांति
रूप है॥ हे रामजी जब लग आत्मपद का प्रमाद है॥ तब
लग अनेक दुःख व्याधि पडे होते हैं॥ शांति नहीं होती॥ अ
रु जब लग आत्मपद की प्राप्त हूई॥ तब सम दुःख न
ष्ट होजाते हैं॥ जैसे सूर्य के आगें बरफ नष्ट होजाती है॥

॥इति श्री उत्पत्तिप्रकरणे चित्तोपाख्याने समाप्तं नाम
सर्गः॥७६॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी चित्त परमा
त्मा तें उपजा है॥ सो चित्त आत्म रूप भी है॥ अरु अनात्म रू
प भी है॥ जैसे समुद्र तें तरंग होता है॥ सो तन्मय भी होता
है॥ अतन्मय भी होता है॥ तैसे चित्त है॥ जो ज्ञानवान हैं॥
तिनों का चित्त भी ब्रह्मस्वरूप है॥ इतर नहीं जैसे जिसकों
जल का ज्ञान है॥ तिनकों तरंग भी जलरूप भासते हैं॥ तैं
से जो ज्ञानवान हैं॥ तिनकों जगत ब्रह्मरूप भासता है॥
अरु जो ज्ञान तें रहित हैं॥ तिनकों संसार भासता है॥ जैं
से जिसकों जल का अज्ञान है॥ तिनकों भिन्न भिन्न तरंग
भासते हैं॥ तैसे अज्ञानी कों भिन्न भिन्न जगत भासता है
अरु ज्ञानवान कों केवल ब्रह्मसत्ता ही भासती है॥ हे रा
मजी मन आदिक जो तुज कों भासते हैं॥ सो भी ब्रह्म तें भि
न्न नहीं॥ अनन्य रूप है॥ अरु मन आदिक भी आत्म की स
क्ति है॥ सो आत्मा सर्व और तें पूरण है॥ तिसतें इतर को उ
नहीं॥ सर्व शक्ति रूप होकर पसरता है॥ चेतन शक्ति जीवों
विषे ज्ञान स्वरूप प्रत्यक्ष है॥ वायु विषे स्पंद निस्पंद शक्ति
दृही है॥ पहाडों विषे जड शक्ति दृही है॥ आकाश विषे शू
न्य शक्ति दृही है॥ सर्ग विषे भाव सक्ति अरु नास विषे का
ल शक्ति दृही है॥ सोक विषे शोक शक्ति मुदिता विषे आ
नंद शक्ति दृही है॥ इसतें लेकर जेते कछु भाव अभाव प
दार्थ शक्ति हैं॥ सो सर्व ब्रह्म शक्ति है॥ जैसे फल फल टा
स पत्र आदिक विस्तार है॥ सो सर्व बीज के अंतर स्थित है
तैसे सर्व पदार्थ ब्रह्म विषे इस्थित हैं॥ हे रामजी जैसे वसं
त रुत विषे एक ही रस नाना प्रकार के फल फल टास हो
भासती है॥ तैसे एक ही आत्मा चेतता करके जगत रूप
हो भासता है॥ तिस विषे अवर देश काल आदिक विचित्र
ता कोउ नहीं॥ संपूर्ण जगत ब्रह्म ही रूप है॥ सो ब्रह्म आत्मा
सर्वज्ञ है॥ नित उदित रूप है॥ हे रामजी जब तिस विषे मन

वरकाइ

नकलनाहोतीहै॥तबतिसकोंमनहींकहीताहै॥जैसे
आकाशविषेमोरकेपुछवततिरवरेहोभासतेहैं॥तैं
सेआत्माविषेमनहै॥हेरामजीब्रह्मविषेजोचेततताहो
तीहै॥सोईमनहै॥सोमनब्रह्मकीशक्तिरूपहै॥इतरन
हींब्रह्महीहै॥ब्रह्मतेंइतरकलनाकरणीअज्ञानहै॥
ब्रह्मविषेजोअैसेउथानफुर्या॥जोमयफुरूं॥इसीकानो
ममनफुर्या॥तिसमनतेंजडअरुचेतनरूपजगतफुर्या
है॥बहुडआगेंमनहींप्रतियोगीविविछेदसंतारूप
इहसभनहींमनहींनेंकल्पेहैं॥प्रतियोगीविविछेदसं
ख्यारूपइनकाभेदइहहै॥प्रतियोगीकहीयेजैसेचेत
नकाप्रतियोगीजडहोताहै॥अरुविविछेदकहीयेजैं
सेघटअविछिन्नपटअविछिन्नहोताहै॥अरुजीवईश्व
रइत्यादिकसंताकहीये॥अविवेकताजोहइपहै॥इह
सभमनकेकल्पेहैं॥जैसेजैसेब्रह्मविषेदृढमननहोता ब्रह्म
है॥तैसाहोभासताहै॥इंद्रब्राह्मणकेपुत्रोंकीन्याई॥जैसे
समुद्रविषेद्रवताकरकेतरंगहोभासतेहैं॥तैसेशुध
चिन्मात्रविषेफुरणेकरकेजीवअरुनानाप्रकारकाज
गतहोभासताहै॥अरुफुर्याकछुनहीं॥ब्रह्महीअपणे
आपविषेइस्थितहै॥जैसेतरंगोकेहोवणेमिटणेविषे
जलएकहीरसहै॥तैसेजगतकेहोणेमिटणेविषेब्र
ह्मजिंउकातिंउहै॥जैसेसूर्यकीकिरणांजलरूपहोभास
ताहै॥तैसेआत्माविचित्ररूपहोभासताहै॥अरुसदाअ
पणेआपविषेइस्थितहै॥हेरामजीकारणकर्मकरताज
न्ममरणआदिकजेतेकछुभासतेहैं॥सोसभब्रह्मस्वरू
पहैं॥ब्रह्मतेंइतरकछुनहीं॥आत्माशुधस्वरूपहै॥तिस
विषेजोनमोहनक्षमांआदिककोउनहीं॥काहेतेंजोअद्वै
तहै॥अरुसर्वात्माहै॥जैसेस्वर्णतेंनानाप्रकारकेभूषण
भासतेहैं॥तैसेब्रह्मतेंजगतहोभासताहै॥जोज्ञानवान
पुरुषहैं॥तिनोंकोंसदाहीअैसेभासताहै॥अरुजोअज्ञा

भी हैं॥ तिनकों भिन्न भिन्न कलनां भासती है॥ जैसे कि
सीका बांधव होता है॥ दूरदेशतें चिरकालतें पाछे आ
वता है॥ तब देशकालके विविधानकरके बांधवकों
अबांधव जानता है॥ तैसे अज्ञानके विविधानकरके
अभिन्नरूप आत्माकों भिन्नरूप जानता है॥ जैसे आ
काशविषे दूसरा चंद्रमा भ्रमकरके भासता है॥ तैसे
सत असत जगत मनके भ्रमकरके भासता है॥ तिस
मननें भिन्न भिन्न कलनां करी है॥ अरु आत्मतत्त्व स
दा अपने आपविषे स्थित है॥ तिसविषे बंधमोक्ष
कलनांका अभाव है॥ श्रीरामोवाच॥ हे भगवन जो
मनविषे निश्चय होता है॥ सोई सफल होता है॥ अन्यथा
नहीं होता॥ अरु जो मनविषे बंधका निश्चय होता है॥ तो
बंधके संग असत होता है॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे राम
जी बंधकी कलना मूर्ख करते हैं॥ सो भी मिथ्या है॥ जो
बंधकी कलना मिथ्या भई॥ तो बंधकी अपेक्षा करमो
क्ष भी मिथ्या है॥ तातें बंधमोक्षकी कलना मूर्ख करते
हैं॥ वास्तवतें न बंध है न मोक्ष है॥ हे रामजी अज्ञानकर
के अवस्तु भी वस्तुरूप होभासती है॥ जैसे जेवडीविषे
सर्पभ्रम भासता है॥ सो अज्ञानकरके असत सत होभा
सता है॥ जैसे जेवडीके ज्ञानतें सर्पभ्रम नष्ट होजाता है॥
तैसे ज्ञानवानकों बंधमोक्षकी कलनाका अभाव हो
जाता है॥ हे रामजी आदि परमात्मातें मन उपजा है॥ ति
स मन ही बंधमोक्ष कल्पा है॥ अरु इह इस प्रपंच कल्पा
है॥ सो कलनामात्र है॥ बालिकोंकी कथावत है॥ अर्थ इ
ह जो विचारतें रहित है॥ तिनकों इहरूप भासती है॥ ॥
॥ इति श्री उत्पत्तिप्रकरणे चित्तचिकित्सा चित्तोत्पत्ति
वर्ननं नाम सर्गः॥ ७७ ॥ श्रीरामोवाच॥ हे मुनीश्वर
बालिकोंकी कथा किंउ कर है॥ सो कृपाकर कहो॥ अ
थ कथा बालिकोंकी लिख्यते॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे
रामजी एक मूर्ख बालिक था॥ सो धात्रीजो है दाई तिस

सो पूछता भया ॥ जो कोऊ अपूर्व कथा तुज कों आवती होवे
जो आगें न हूई होवे ॥ सो मुज कों सुणा ॥ हे रामजी जब इस
प्रकार बालिक कहा ॥ तब तिस को प्रसन्नता निमित्त बुधि
वान धात्री कहत भई ॥ धात्र्योवाच ॥ हे पुत्र एक कथा
है सो सुण । एक शून्य नगर था ॥ तिस का एक राजा था ॥ ति
स राजा के तीन पुत्र थे । सो कैसे थे । जो शुभ तिनों का आ
चार था ॥ अरु वह दे युवावान थे । जैसे आकास विषे तारे सुंदर
हैं ॥ तैसे सुंदर युवावान थे । सो दोनों उपजे न थे ॥ अर एक
गर्भ विषे भी न आया था ॥ सो तीनों शुभ आचारवान शु
भ क्रिया करते ॥ इस के अर्थ जीतणे को चले ॥ सून्य नग
र तें बाहिर निकसे ॥ कैसा नगर है । निर्माण रूप तिस मा
र्ग तें निर्बंध अरु सोक सहित एकठे चले ॥ जैसे बुध
अर शुक्र अरु शनैश्चर एकठे चलें । तैसे चले ॥ अर्थ
इह ॥ जो एकठे एक दोनहीं होते ॥ इउ ही दृष्टांत मात्र है ॥
अर सरीह के फूल वत तिनों के अंग कोमल हैं ॥ सो मा
र्ग चलने कर थके ॥ अरु ऊपर तें सूर्य की धूप तपी ॥ जैं
से ज्येष्ठ आषाढ की धूप कर कमल कुमला जाते हैं ॥ तैं
से कुमला गए ॥ अरु चर्न रेत की तप्त कर तपणे लागे ॥ म
हा शोक को प्राप्त भए ॥ चर्नों विषे दूर्भो के कंटक चुभे ॥
अरु मुख धूड कर [illegible]सल हो गए ॥ तीनों कष्टवान हो
कर आए ॥ आगें तीन वृक्ष देखे । कैसे वृक्ष हैं । जो दोइ
तो उपजे नहीं ॥ अरु तीसरे का बीज भी नहीं बोया ॥ सो ति
न तीनों एक वृक्ष के नीचे आकर निवास कीया ॥ जैसे क
ल्प वृक्ष के नीचे स्वर्ग विषे इंद्र अरु अग्नि अरु यम आ
न बैठे हैं ॥ तैसे आन बैठे ॥ अरु तिन के फल भक्षण कीये
अरु फलों का रस काढ कर भक्षण कीया ॥ अरु तिनों
के फलों की माला गले विषे पहिरी ॥ अरु चिरकाल प
र्यंत विश्राम कीया ॥ बहुरि चले ॥ दूर तें दूर गए ॥ मध्या
न्ह का समा हूआ ॥ तिस कर तपायमान हूए ॥ तब आगे
तीन नदीयां देखीं ॥ तिन के निकट गए ॥ जो वह तरंगो

करकेसो भासती हैं॥ सो कैसा हैं॥ जो देखे विषे जलकछु नहीं
अरु तीसरी सुकीपड़ी है॥ तिस विषे चिरकाल पर्यंत क्री
डा करत भए॥ जैसे स्वर्ग की गंगा विषे ब्रह्मा विष्णु रुद्र जील
लोल करें॥ तैसे तिन विषे कलोल करें॥ तब दिन अस्त हो
तो लागा॥ ऊहां ते चले॥ एक भविष्यत नगर को देखते भए
वेदी ध्वजा करके संपन्न है॥ अरु रत्न मणी स्वर्ण करके
जड़ता हूया है॥ मानो सुमेर का सिखर है॥ तिन विषे व मं
दिर लाल जड़े हूये हैं॥ ऐसा मंदर देखा॥ जो निराकार
है॥ तिन विषे जाय बैठा के थ्या॥ तिस विषे बहुत अंगना दे
खी॥ तिस विषे जाकर विचारत भए॥ जो रसोई करीए॥ अ
रु ब्राह्मणों को भी खवाई थे॥ तब केचन की तीन बलटो
ईयां मंगाईयां॥ सो कैसयां हैं॥ सो दो के घड़ने वाला उपजा
नहीं॥ तीसरी के घड़ने वाला आया नहीं॥ तिन बलटोए
विषे सउसेर घट तिडन वे सेर चावल रीधे॥ तिस करस
ईकडे ब्राह्मणों को भोजन कराया॥ अरु आप भी भोजन
कीया॥ कैसे ब्राह्मण अरु आप थे॥ जो जिन के साथ देह
भी न थी॥ अर्थ इह जो विदेह थे॥ तिनों ने रच कर भोजन
खाया॥ इस प्रकार तिन राजपुत्र की इह रमणीक कथा
सुनाई है॥ जब तें इसको चित्त विषे धारेगा॥ तब पंडित
होवेंगा॥ हे रामजी इस प्रकार धात्री बालिक को कथा सु
णाई॥ तब बालिक के चित्त विषे साच भासी॥ जैसे इस क
था का रूप संकल्प तें इतर कछु नहीं॥ तैसे इह जगत सं
कल्पमात्र है॥ अज्ञान करके चित्त विषे स्थित भासता है
ता तें संकल्प कर बंध मोक्ष की कल्पना करा है॥ हे रामजी
शुध आत्म तत्व निहकिंचन रूप है॥ संकल्प के वस तें
किंचिन हो भासता है॥ पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाश
आदिक जो पंच भौतिक स्रिष्ट है॥ सो सब संकल्पमात्र
है॥ जैसे स्वप्न विषे नाना प्रकार की स्रिष्ट भासती है॥ पर
आकाश रूप है॥ कछु उपजी नहीं॥ तैसे इह जगत जान

जोकछ्छुउपजा नहीं॥ जैसे राजपुत्र भविष्यतनगरविषे इस्थित हूआ॥ सोसंकल्पमात्र हैं॥ तैसे इह जगत संकल्पमात्र है॥ परमनके फुरणेकर सतपडा भासता है॥ अरु वहे विस्तारसहित भासता है॥ जैसे दिनकरके जगत विस्तारकों पावता है॥ तैसे संकल्पकर उपजा जगत संकल्पकर विस्तारकों प्राप्त भया है॥ अरु चित्तका विलास है॥ चित्तके फुरणेकर पडा भासता है॥ तातें हे रामजी संकल्परूपी मेलकों त्यागकर निर्विकल्पपदकों प्राप्तिकर॥ जब तिस पदविषे इस्थित होवेगी॥ तब परमशांतिकी प्राप्त होवेगी॥ ॥इति श्रीउत्पतप्रकरणे बालिककथावर्ननंनमसर्गः॥ ७८ ॥श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी जो मूढ अज्ञानीपुरुष हैं॥ सो संकल्पकरके अपणे आपही कर मोहकों प्राप्त होते हैं॥ अरु जो पंडित हैं॥ सो मोहकों नहीं प्राप्त होते॥ जैसे मूर्ख बालिक अपणे पिछावें विषे वैतालकल्पकर भयकों प्राप्त होता है॥ तैसे मूर्ख अपणी कलनाकरके दुःखी होता है॥ ॥श्रीरामोवाच॥ हे भगवन ब्रह्मवेत्तों विषे श्रेष्ठ उह संकल्प क्या है॥ अरु पिछावां क्या है॥ जो असत ही सतकी न्याई दिखावता है॥ ॥श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी पंचभौतिक सरीर पिछावेंकी न्याई है॥ काहेतें जो अपणी कलनां कररचा है॥ अरु अहंकार पिशाचकी न्यांई इस्थित हूया है॥ जैसे बालिक पिछावेंविषे वैताल कल्पकर भय पावता है॥ तैसे देहविषे अहंकारकर खेदमान होता है॥ हे रामजी एक परमात्मा देहविषे इस्थित है॥ सो अद्वैत है॥ अहंकार कैसे होवे॥ वास्तवतें अहंकार कोऊ नहीं॥ आत्मा अनेदरूप है॥ तिसविषे अहं बुधि भ्रमकरके करता है॥ जैसे मिथ्यादृष्टीकों मारूस्थलविषे जल भासता है॥ तैसे अज्ञानीकों सरीरविषे अहंकार होता है॥ जैसे मणिका प्रकाश मणि ऊपर पडता है॥ सो मणितें इतर नहीं मणि ही रूप है॥ तैसे आत्मा विषे जगत भासता है॥ सो आत्मा ही रूप है॥ जैसे द्रवताकरके जलविषे तरंग ही भासते हैं॥ सो जलही हैं॥ तैसे आत्मा विषे चित्तकरके नानात्वभा

सताहै॥ सो आत्मातें इतर कछु नहीं॥ असम्यक ज्ञान करके ना
नात्व भासता है॥ तांतें असम्यक दृष्टको त्याग कर आत्मारू
पको आश्रय करो॥ मोहतें रहित होकर शुद्धि बुद्धि साथ वि
चारो॥ विचार करके सतका ग्रहण करो॥ अरु असतका त्याग
रूप करो॥ हे रामजी तें अवर मोहका माहात्म देख॥ जो देह स्थूलनें ना
शवंत है॥ तिसके राखणेका उपाव करता है॥ सो रहती नहीं॥ अ
रु जिस मनरूपी सरीरके नास हूए कल्याण होता है॥ तिसकौं
पुष्ट करता है॥ हे रामजी इह सन मोहके अरंभ मिथ्या भ्रमक
रके दृढ हूए हैं॥ अरु अनंतात्म तत्वके ज्ञान विबेक कलनांको
उ नहीं॥ जेता कछु नानात्व भासता है॥ सो है नहीं॥ अरु जीव भी
रूप ब्रह्म साथ अभिन्न हैं॥ तांते न कोऊ बंध है॥ न मुक्ति है॥ काहेतें
जो आत्मा नंतरूप है॥ हे रामजी वास्तवतें द्वैत कलनांको कोऊ
नहीं॥ केवल ब्रह्मसत्ता अपणे आप विषे स्थित है॥ जो आ
त्मतत्व अनंतरूप है॥ सोई अज्ञान करके अंतकी न्यांई भासता
है॥ जब अनात्म विषे आत्म अभिमान करता है॥ तब परिछि
न्न कल्पनां होती है॥ तांते सरीरके दुःख कर दुःखी होता है॥ अ
रु सुख कर सुखी मानता है॥ हे रामजी आत्मा विषे न बंध है
न मुक्ति है॥ काहेतें जो आत्मतत्व अनंतरूप निर्विकार निरा
कार अद्वैतरूप है॥ तिस विषे बंध मोक्ष कलनां कैसे होवे
हे रामजी देहके नष्ट हूयें आत्मा नष्ट नही होता॥ जैसे घट वि
षे आकास होता है॥ सो घटके नास हूए आकास तो नष्ट नही
होता॥ तैसे देहके नष्ट हूए आत्माका नाश नही होता॥ जैसे ज
ल विषे तरंग उपजता है॥ सो तरंगके नष्ट हूए जल तो नष्ट नही
होता॥ हे रामजी सनका सरीर मन है॥ सो मन आत्माकी शक्ति है
तिस मन आगें इह शरीर जगत रचा है॥ तिस मनका तत्व ज्ञान
विनां नाश नही होता॥ बहुउ शरीरादिकके नष्ट हूए आत्मा
का नाश कैसे होवे॥ हे रामजी सरीरके नाश हूए तेरा तो नाश
नही होता॥ तं किउं मिथ्या शोकवान होता हैं॥ तूं तो नित्य शुद्धा
त्मा ज्ञान स्वरूप हैं॥ हे रामजी कमलोंके सूकेतें भोमरा तो नष्ट
नही होता॥ तैसे देहके नष्ट हूयें आत्मा तो नष्ट नही होता॥ सं

सारविबेकी डाकरता जो मन है॥ तिसका भी नाश नही होता॥
तो आत्मा का नाश कैसे होवे॥ जैसे घट के नाश हूए घटाका
श नाश नही होता॥ तैसे देह के नाश हूए आत्मा का नाश
नही होता॥ हे रामजी जैसे जल का कुंड होता है॥ तिस विषे बिं
ब पडता है॥ तिस कुंड के नाश हूंए बिंब का तो नाश नही
होता॥ हे रामजी सभनों जीवों का देह मन है॥ जब मृत्यु होता
है॥ तब कोऊ काल सर्व पदार्थों का अभाव हो जाता है॥ ति
सके अनंतर बहुड पदार्थ भासआवते हैं॥ मूर्छी का नाम मृ
त्यु है॥ मूर्छी के हूंए आत्मा तो नाश नही होता॥ चित्त की मूर्छी
करके देश काल पदार्थों का अभाव हो जाता है॥ इसी का ना
म मृत्यु है॥ हे रामजी संसार भ्रम का रचनहारा जो मन है॥
तिस का नास बिनां ज्ञान रूप अग्नि कर नहीं होता॥ तो आत
म तत्व का नास कैसे होवे॥ हे रामजी देस काल वस्तु करम
नं का निष्फल विपर्यय भाव को प्राप्त होता है॥ पर ज्ञान बिनां
मन नष्ट नहीं होता॥ हे रामजी मन कल्पित रूप का नाशौं नहीं
होता॥ तौ ते जगत के पदार्थों कर तो आत्मा का नाश कैसे हो
वे॥ इस कारण तें शोक किसी का नहीं करणा॥ हे महाबाहु
रामजी तूं तो नित्य शुध अविनासी रूप हैं॥ इह संकल्प
वासनां करके तेरे विषे जन्म मरण भासते हैं॥ सो भ्रम मात्र
हैं॥ तां ते इस बासनां को त्याग कर॥ शुध चिदाकाश आत
मा विषे स्थित होवो॥ जैसे गरुड पंखी अंडे को त्याग कर
आकाश विषे उडता है॥ तैसे तूं बासनां को त्याग कर चिदा
काश विषे स्थित हो॥ हे रामजी शुध आत्मा विषे जो मन फु
रता है॥ सोई मन है॥ सो मन सत्ति इष्ट अनिष्ट करके इस
को बंधन का कारण होती है॥ सो मन मिथ्या भ्रम कर के इस
को बंधन का कारण हूया है॥ जैसे स्वप्न सृष्टि भ्रांति मात्र
होती है॥ तैसे जाग्रत जगत भ्रांति मात्र है॥ हे रामजी इह ज
गत अविद्या कर रच्या हूया है॥ सो तिस अविद्या को तरणा
कठिन भया है॥ अविचार कर के अविद्या हूई है॥ अरु वि
चार कीये तें नष्ट हो जाती है॥ तिस अविद्या जगत को वि।

स्तारता है॥ इह जगत बरफ की कंध है॥ अरु जब ज्ञानरूपी
अग्निका तेज होवे॥ तब निवृत्त हो जाती है॥ हे रामजी इह
जगत आकास रूप है॥ अविद्या भ्रांत करके आकार होभा
सते हैं॥ दीर्घ काल का स्वप्ना है॥ विचार कीये तें निवृत्त होता
है॥ हे रामजी इह जगत भाव नाम मात्र है॥ वास्तव तें कछु उ
पजा नहीं॥ जैसे आकास विषे तिरवरे भासते हैं॥ तैसे आ
त्मा विषे भ्रांति करके जगत भासता है॥ जैसे बरफ की
श्रीला तपन करके लीन हो जाती है॥ तैसे आत्म विचार क
रके जगत लीन हो जाता है॥ हे रामजी इह जगत अविद्या
करके बध्या है॥ सो अनर्थ का कारण है॥ जैसे जैसे चित्त फु
रता है॥ तैसे तैसे हो भासता है॥ जैसे घुराइण की चेष्टा अ
पणे बंधन का कारण होती है॥ तैसे मन की चेष्टा अपणे
दुःख के निमित्त होती है॥ हे रामजी निह संकल्प होवणे
इस विषे तो यतन कछु नहीं॥ तांते संकल्परूप आवर्ण
को दूर करो॥ तब आत्मतत्व ही अपणा आप प्रकासेगा॥
संकल्प विकल्प ही आत्मा के आगे आवर्ण हैं॥ जब इस
कों त्यागेगा॥ तब आत्मबोध प्रकासेगा॥ हे रामजी मन के
नास विषे बडा आनंद प्राप्त होता है॥ तांते मन के नास क
रणे का यतन करो॥ हे रामजी मनरूपी किरसाण नें जग
तरूपी वन रचा है॥ तिस वन विषे सुख दुखरूपी वृक्ष हैं॥
अरु यमरूपी सर्प तिस विषे रहता है॥ जो विवेक तें रहि
त पुरुष हैं॥ तिनों को भोजन करता है॥ हे रामजी इह मन
परम दुःखों का कारण है॥ तांते इस मनरूपी शत्रु कों बैरा
ग्य अरु अभ्यासरूपी शस्त्र कर मारो॥ तब आत्मपद
कों प्राप्त होवो॥ वाल्मीकोवाच॥ हे भारद्वाज जब इस प्र
कार वसिष्ठ जी कहा॥ तब सायंकाल का समा हूया॥ सर्व श्रो
ता परस्पर नमस्कार करके स्नान को गए॥ बहुड़ इस सूर्य की
किरणों साथ अपणे अपणे स्थान पर आन बैठे॥ ॥
॥ इति श्री उत्पत्ति प्रकरणे मनफुरण उपदेसो नाम स
र्गः॥ ८९ ॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी इह चित्त जीप

रमात्मातें उठता है॥ जैसे समुद्रतें लीला करके तरंग होता
है॥ तैसे परमात्मातें मन हूया है॥ बहुड मनने जगतना
बना करी है॥ सो जगत वहु विस्तारको प्राप्त भया है॥ जो
आपणा आपरूप है॥ तिसको अन्यकी न्याई दिखावता
है॥ अरु जो अन्यरूप है॥ तिसको आपणा आप दिखाव
ता है॥ अर्थ इह॥ जो आत्मको अनात्मरूप दिखावता है
अरु अनात्मकों आत्मरूप दिखावता है॥ ऐसा जो भ्रां
तिरूप मन है॥ सो निकट वस्तुकों दूर दिखावता है॥ अरु
दूर वस्तुकों निकट दिखावता है॥ हे रामजी एक निमेष
विषे मन संसारकों उत्पत करता है॥ अरु उन्मेष विषे ली
न करलेता है॥ जेता कछु स्थावर जंगम जगत होभासता
है॥ सो सर्व मन हीतें उपजा है॥ देश काल द्रव्य अनेकञा
कौ विपर्ययरूप मन ही दिखावता है॥ आपले फुरणे क
रके नानाप्रकारके भाव अभावकों मन ही प्राप्त करता
है॥ जैसे नट्या लीला करके नानाप्रकारके सांगोंको धा
रता है॥ सतको असत॥ अरु असतकों सत करदिखा
वता है॥ तैसे मन विषे जैसा फुरणा होता है॥ तैसा ही हो
भासता है॥ जैसा जैसा निश्चा मन विषे होता है॥ तिसके अ
नुसार इंद्रियां भी विचरती हैं॥ हे रामजी मन करके जो चे
ष्टा होती है॥ सोई सफल होती है॥ मन विनां सरीरकी क्रिया
सफल न ही होती॥ जैसा जैसा बीज होता है॥ तैसा ही फल
होता है॥ अवर प्रकार न ही होता॥ तैसे मन विषे जो निश्चा
होता है॥ सोई सफल होता है॥ जैसे बालिक मृत्तिकाकी
सेना बनावता है॥ अरु नानाप्रकारके नाम धरावता है
तैसे मन भी संकल्प करके जगतकों रचलेता है॥ जैसे
माटीकी सेना माटीतें भिन्न कछु नहीं॥ तैसे नानाप्रकार
का जगत आत्मातें भिन्न कछु नहीं॥ जैसे मन अर्थोंकों क
ल्पता है॥ सोई भासता है॥ तैसे इह जाग्रत जगत भी मन
का कल्पा है॥ हे रामजी एक गोपद विषे मन अनेक योज
नोंकों रचलेता है॥ अरु कल्पको क्षणचा करता है॥ अरु

क्षण विषे कल्पकों रच लेता है ॥ जैसा कछु मन विषे तीव्र
संवेग होता है ॥ तैसा ही होकर भासता है ॥ मनकों रचणे
विषे विलंब नहीं लागती ॥ जेते कछु देश काल पदार्थ हैं ॥
सो सभ मन तें उपजे हैं ॥ सभका कारण रूप मन है ॥ जैसे स
मुद्र तें तरंग उपजते हैं ॥ सो समुद्र ही रूप हैं ॥ तैसे नाना प्रका
र के दृश्य पदार्थ भासते हैं ॥ सो मन ही रूप हैं ॥ हे रामजी क
र्त्ता कर्म क्रिया द्रष्टा दर्शन दृश्य सभ मन ही का पसारा है ॥
सो मन ही रूप हैं ॥ जैसे स्वर्ण तें नाना प्रकार के भूषण भास
ते हैं ॥ तैसे जब आत्म ज्ञान होता है ॥ तब सभ नानात्व आत्म
रूप भासता है ॥ मन आदिक भी भिन्न नहीं भासते ॥ ॥
॥ इति श्री उत्पत्ति प्रकरणे चित्त माहात्म वर्ननं नाम
सर्गः ॥ ८ ॥ श्री वसिष्ठोवाच ॥ हे रामजी एक उपाख्या
न तुझकों कहता हों ॥ जो पूर्व व्यतीत हूया है ॥ इह जगत इं
द्रजाल वत है ॥ जैसे मन रूपी इंद्रजाल विषे इह जगत
स्थित है ॥ तैसे सुण ॥ अथ कथा लवण की लिख्यते
॥ हे रामजी इस पृथिवी विषे एक उत्तरा खांडव नामा दे
श है ॥ तहां तिस देश विषे एक बडा वन था ॥ तिस विषे ना
ना प्रकार के वृक्ष फल फूल लता थी ॥ तहां विद्याधर आ
न के कलोल करते थे ॥ अरु किंनर आन गायन करते थे
मंद मंद पवन चलै ॥ तिस स्थान विषे महा रचना बणी हू
ई ॥ स्वर्ण वत कल्प वृक्ष पारजात वृक्ष लागे हूए हैं ॥ ति
न देश का लवण नाम राजा होत भया है ॥ मानो दूसरा सू
र्य पृथिवी विषे आन उदे हूया है ॥ बडा तेजवान ॥ तेजवान
जेते कछु शत्रु हैं ॥ तिन सभनों कों नाश किया है ॥ जो पुरुष
शुध पुन्यवान हैं ॥ तिन का रक्षा करणे कों विष्णु था ॥ हे राम
जी ऐसा तेजवान हूया है ॥ जो शत्रु राजा का नाम स्मरण
करें ॥ तब उनकों ताप चड जावे ॥ अरु श्रेष्ठ पुरुषों की पाल
ना करे ॥ तिस राजा के यश कर संपूर्ण पृथिवी भरी हूई ॥
स्वर्ग विषे विद्याधर यश गावें ॥ लोकपाल अरु सर्व लोकों

विषेउसकायशप्रसिधथा॥ हेरामजीतिसराजाकेसमान
कोऊस्वप्नेविषेभीदृष्टनआवे॥ बडाबुधिवानउदारता
उसविषेप्रसन्नथा। जैसेब्राह्मणकेकंठविषेरुद्राक्षकी
मालाप्रसन्नहोपाईतीहै॥ तैसेउसविषेउदारताअरुतेज
दृष्टआवे। एकदिनसभासंयुक्तबैठाथा॥ अरुदोमहू
र्तदिनरहा। वहसिंहासनपरबैठाहै॥ जैसेदेवतोंकीस
भाविषेइंद्रबैठे। तैसेराजासभाविषेबैठाहै॥ अरुमंडले
श्वरोंकीसेनानमस्कारकरबाहिरनिकसेहैं॥ अरुअंग
नानिर्त्तकरतीहैं॥ बाजंत्रबाजतेहैंमधुरधुनसों॥ अरु
चमरसिरपरहोताहै॥ मंत्रीआगेंखडेहैं॥ जैसेदेवगुरु
वृहस्पतिहोताहै। तैसेराजाहै। तिसराजाकोमंत्रीदेशों
कीयांवार्त्तासुनावतेहैं॥ अरुइतिहासपुस्तकटोपराख्या
है॥ भटलोकउस्ततिकरतेहैं। तिसीकालमोंसभाविषे
एकइंद्रजालकबाजीगरअपलेअडंबरसंयुक्तआ
नप्राप्तभया। जैसेवर्षाकालकामेघजलकरपूरणआ
वताहै॥ तैसेबाजीगरआया॥ अरुराजाऊंचेस्थानपरटं
गांकोलमकाएहूएबैठाहै॥ तिसराजाकेनिकटइंद्रजा
लकआनप्राप्तभया॥ जैसेवृक्षकेनिकटबांनरआव
ताहै॥ तैसेआकरकहतभया॥ हेराजनएकतुममेराकौ
तुकदेखो॥ हेरामजीऐसेकहिकरउसपिंडखोलया। टा
तिसपिटाडसोंमोरकापछनिकासकरभमावणेला
गा॥ तिसकेभमावणेकरनानाप्रकारकीरचनाभास
णेलागी। मानोपरमात्माकीमायानानाप्रकारकीकेरा
जादेखतभया। जैसेइंद्रधनुषआकाशविषेभासताहै
तैसेसूर्यकीकिरणांवतरंगभासणेलागे। बहुडतिसीक्ष
णविषेमंडलेश्वरकाद्रुतआनप्राप्तभया। जैसेआकास
विषेतारामंडलकोलंघकरमेघआवताहै। तैसेहाथ
विषेघोडाअरुसभाकोंएकपुरुषलंघताआया॥ अरुक

हतभया। हेराजनइहमहाबलवानघोडाहै॥ मेरेराजातु
जकोंदीयाहै॥ कैंसाघोडाहै॥ जैसेउचैकानोंवालासूर्यका
घोडा। जोसमुद्रकेमथनतेंनिकसयाथा॥ तैंसाइहघोडा
है॥ पवनकीन्याईइसकावेगहै॥ मानोपवनकीमूर्तहै। मे
रेस्वामीकहाहै। जोउत्तमपदार्थवनोंकोंयोग्यहै॥ इसन
मित्तघोडेतेंविषेरत्नतुमकोंदीयाहै। हेरामजीजबइस
प्रकारदूतकहा। तबइंद्रजालकबोलतभया॥ जैंसेमेघ
गर्जनाकरताहै। अरुपाछेबबीहाबोलताहै। तैंसेइंद्रजा
लककहा। हेराजनइसघोडेपरआरूढहोकरतुमविच
रो। अरुशोभापावो॥ जैंसेआकासविषेसूर्यशोभताहै॥
अरुजगतकोंभीशोभितकरताहै॥ तैंसेतुमशोभापावो
गे। तुमभीशोभोगे। अरुघोडाभीशोभेगा। हेरामजीजबइंद्र
जालककहा॥ तबराजाघोडेकीओरदेखताभया॥ देख
करमूर्छाहोगया। जैंसेकागजऊपरमूर्त्तिलिखीहोतीहै
तैंसेदोमहूर्तपर्यंतराजानिस्पंदहोगया। जैसेवीतरागमु
नीश्वरपरमानंदआत्मपदविषेस्थितहोताहै॥ तैंसेराजा
स्थितभया। हेरामजीतिसराजाकोंभयकरकेभीजगावें
नहीं॥ अरुहाथपावराजाकाकछूहलेभीनहीं॥ सिरपर
चमरपडाहोवे। जैसेचिकडविषेकमलस्थितहोताहै॥
तैंसेराजाअचलहोगया। जैंसेमूर्त्तिकाकमलनिस्पंदहो
ताहै। तैंसेराजाअचलभया। मंत्रीटहलएसभसंसेकेस
मुद्रविषेडूबगए। उहजानतभए। जोराजाकेचित्तविषे
काईवडीचिंताउपजीहै। अरुसर्वसभाकेलोकआश्चर्य
मानहूए॥ ॥इतिश्रीउत्पतप्रकरणेइंद्रजालकउपा
ख्यानेनृपव्याधनामोसर्गः॥ ९१ ॥श्रीवसिष्ठोवाच॥
हेरामजीतबराजादोमहूर्तउपरंतचैतन्यताविषेआया
जैसेवर्षाकालकेमेघतेंछूटकरकमलप्रफुलितहोआ
वताहै। तैंसेराजाजागकरसिंहासनपरकंपनेलागा। जैंसे

नूंचालविषेपर्वतकंपणेलागतेहैं॥ तैंसेराजाकेअंगकं
पणेलागे। जैंसेप्रलयकालविषेसुमेरगिरनेलागे॥ अ
रूपासलेपर्वतथांनेछोडेंगिरनेनदेवें॥ तैंसेमंत्रीयोंरा
जाकोंभुजासाथथांनेछोडकरगिरनेंनदीया॥ परराजा
कीबुधिव्याकुलभई। तबराजाबोलतभया॥ इहनगर
किसकाहे। अरुसभाकिसकीहे॥ ईहांकाराजाकोंनहे।
अरुइहक्याहे॥ हेरामजीइसप्रकारराजाकावचनसुणे
तबमंत्रीकछुइकशांतिवानभए॥ जैंसेसूर्यराहतेंछूट
ताहे॥ तबप्रसन्नहोताहे॥ अरुकमलभीखिडआवतेहैं॥
तिनकोंदेखकरभ्रमरेप्रसन्नहोतेहैं॥ तैंसेमंत्रीटहलूए
प्रसन्नहोकरकहतभए॥ जैंसेप्रलयकालकेहोमतेंन
मतामार्कंडेयतिसकोंदेवतापूछेंतैंसेपू॥ हेराजनतूंकिं कुंतनए
उव्याकुलताकोंप्राप्तभयाहैं॥ तेरातोनिर्मलमनहे॥ तूंतो
उदारात्माहैं। हेदेवजिनपुरुषोंकीप्रीतिविषयपदार्थों
विषेहे॥ अरुअपातरमणीयभोगोंविषेजिनकाचित्त
हे॥ तिनकामनमोहविषेभ्रमजाताहे॥ अरुजोसंतजनउ
दारचित्तहैं॥ तिनकामननिर्मलहे॥ मोहविषेनहीडूबता
हेदेवजिनकाचित्तभोगोंकीतृष्णांविषेफस्याहूयाहे।
तिनकामनमोहकोंप्राप्तहोताहे॥ अरुजोमहापुरुषसंत
जनहैं॥ तिनकामनमोहविषेडूबतानहीं। जिनकामनपू
र्णतत्वआत्माविषेस्थितहूयाहे॥ अरुवहगुणोंकरसंप
न्नहैं। तिनकोंसरीररहणे अरुनष्टहोणेविषेकछुमोह
नहीउपजता॥ अरुजिनकोंआत्मतत्वकाअभ्यासनहीं
प्राप्तभया॥ तेमूर्खमोहकोंपावतेहैं॥ तुमाराचित्ततोविवे
कभावकोंग्रहणकरणेवालाहे॥ जोनित्यहीनौतनउदा
रकथा। अरुशब्दसुणतेहो॥ अबकिंउमोहकरचलाय
मानहूयेहो। जैंसेवायुकरपर्वतचलायमानहोवे॥ तैंसे
तुमचलायमानहूयेहो॥ तुमअपणीउदारताकोंस्मरण
करो। हेरामजीजबइसप्रकारमंत्रीटहलूएकहतभए।

तबराजासावधानभया॥ अरुमुखकीकांतिउज्वलहोआ
ई॥ जैसेसरितकालकेसकेव्रछवसंतरुतविषेप्रफुलि
तहोआवतेहैं॥ तैसेराजानेनेत्रोंकोंखोलकरदेखतानभय
जैसेसूर्यराहकीऔरदेखताहै॥ तैसेराजाइंद्रजालक
कीऔरदेखतानभया॥ अरुकहा॥ हेदुष्टइंद्रजालक
तुजइह क्याकर्मकीया॥ राजोंसाधर्मीकोऊऐसाकाम
करताहै॥ जैसेजलविनमछलीकष्टपाकरबहुरुडजल
विषेप्रसन्नहोवे॥ तैसेमयहूयाहों॥ बडाआश्चर्यहै॥ बडा
आश्चर्यहै॥ परमात्माअनंतशक्तिहै॥ अनेकप्रकारके
पदार्थपडेफुरतेहैं॥ मयदोमहूर्तविषेक्याभ्रमदेख्याहै
मेरामनसदाज्ञानकेअभ्यासविषेस्थितथा॥ सोमोहाग
याहै॥ तोप्राकृतीजीवोंकीक्याबातकहिलीहै॥ मयबडा
आश्चर्यभ्रमदेख्याहै॥ तुमसननहीमुजतेसुणो॥ इहजो
इंद्रजालकहै॥ सोसांबरदैत्यहैकिंउ॥ दोमहूर्तविषेइस
मुजकोंअनेकदेशकालनदीयांपदार्थदिखाएहैं॥ जैं
सेब्रह्माजीएकमहूर्तविषेनानाप्रकारकेपदार्थरचले
वे॥ तैसेइसमुजकोंदोमहूर्तोंविषेअनेकभ्रमपदार्थदि
खाएहैं॥ सोसननहीमयतुमारेआगेंकहताहों॥ मानोसा
रीसृष्टिइसकेपिटारविषेहै॥ ॥इतिश्रीउतपतप्र
करणेराजाप्रबोधीनामसर्गः॥ ८२ ॥राजोवाच॥ हे
साधोइसपृथिवीविषेमयराजाहों॥ सनक्लिष्टमेरीआ
ज्ञामेंचलतीहै॥ अरुमयइंद्रकीन्याईसिंहासनपरबे
ठताहों॥ जैसेस्वर्गविषेइंद्रकेआगेंदेवतेखलोतेहैं॥ तैंसे
मेरेआगेंमंत्रीमंडलेश्वरहैं॥ अरुउदारताकरकेनीसंप
न्नहों॥ सोमयवडेभ्रमकोंदेखतानभयाहों॥ हेसाधोजब
इसइंद्रजालकपिटारसोंकाढकरमोरपुछकोंभ्रमा
याथा॥ तबउहमुजकोंसूर्यकीकिरणकीन्याईहोतासा
जैसेबडामेघवर्षाकरसांतिहोताहै॥ अरुपाछेंइंद्रधनु
षदृष्टआवताहै॥ तैसेविचित्ररूपपछमुजकोंदृष्टआ

या॥ तब तिसके ऽनंतर एक दूत घोडा ले ऽआया॥ तिस घो
डे ऊपर मय चित्त ही कर ऽआरूढ भया॥ ऽअरु चित्त ही कर
घोडा मुज कों दूर तें दूर ही ले गया॥ ऽअरु सरीर कर मय ई
हां बैठा रहा॥ जैसे जोगी की वासना कर घर ही बैठा मूर्ख
दूर तें दूर ही भ्रमता है॥ तैसे घोडा मुज कों दूर तें दूर ही ले ग
या॥ एक महा भयानक निर्जन देस विषे ले गया॥ जैसे प्रल
य काल विषे जल्य रूप स्थान होते हैं॥ तैसे स्थान विषे मुज
कों ले गया॥ मानों दूसरा ऽआकाश है॥ मानो दूसरा समुद्र
है पृथिवी का। देश देशांतर कों लंघ कर महा ऽअटवी विषे
ले गया घोडा मुज कों। जहां मानुष घास बीज कोऊ दृष्ट न
ऽआवे। तहां मय महा कष्टवान दीनता कों प्राप्त भया॥ त
हां उद्याड विषे कष्ट साथ रात्रि कों व्यतीत कीया पृथवी ऊ
पर। कल्प समान रात्रि व्यतीत करी॥ निद्रा भी न पडी। जब सू
र्य उदे भया॥ तब उहां तें चल्या ऽआगे गया॥ पंखीयों का शब्द
सुण्या॥ बडू डवृक्ष दृष्ट ऽआए॥ पर खान पान कछू न पाया
तिन वृक्षों कों देख कर प्रसन्न भया॥ जैसे मरणे तें छूटा रो
गकर के भी प्रसन्न होता है॥ तैसे मय एक जे पक्के वृक्षों का
ऽआश्रे लीया। जैसे मार्कंडेय रिषि प्रलय विषे जो मता दूर्या
वट का ऽआश्रय लीया था॥ तैसे मय वृक्षों कों ग्रहण कीया
तब घोडा मुज कों छोड कर चलता रहा॥ जैसे गंगा विषे डु
बी लेलोकर पाप चले ते रहते हैं॥ तैसे घोडा मुज कों छोड
गया॥ बडू डसूर्य ऽअस्त भया। तहां रात्रि मय व्यतीत करी
भोजन जल स्नान कछु न कीया। महा दीनता कों मय प्रा
प्त भया॥ जैसे कोऊ मोल लीया मानुष दीन होता है। जैसे
कूप विषे गिडा मानुष दीन होता है॥ तैसे मय दीन कष्टवा
न भया। कल्प के समान रात्रि व्यतीत करी॥ जब दिन हूया
कोऊ फल फूल उहां दृष्ट न ऽआवे॥ जैसे मूर्ख के सरीर विषे
कोऊ गुण दृष्ट नही ऽआवता॥ तैसे ऊहां ऽअन्न पाणी कछु दृ
ष्ट न ऽआवे॥ तब मय ऽआगे गया॥ एक कंन्या मुज कों दृष्ट ऽआ
ई॥ तिसके हाथ विषे मृत्तिका की मटकी। तिस विषे रीचे दू

ग चावल अरु जंबू के रस की टिंडु भरी हूई लीये जाती थी
जैसे रात्रि के संमुख चंद्रमा आवे ॥ तैसे मय आकर कहा ॥ हे
बाले मुझ को भोजन दे मय छुधा कर के आतुर हों ॥ जो को
ऊ दीन आतुर को भोजन देता है ॥ सो बदी संपदा को प्राप्त
होता है ॥ तातें मुझ को भोजन दे ॥ हे साधो जब बार बार उस
को कहा ॥ तब उह कहत भई ॥ तूं तौ कोऊ राजा भासता हैं
जो नाना प्रकार के वस्त्र भूषण पहिरते हूए हैं ॥ अरु भो
जन मांगता हैं ॥ सो मय न देवोंगी ॥ ऐसे कहि कर आगे च
ली जावे ॥ अरु मय भी तिस के पाछें चल्या जावों ॥ तब उस
कहा ॥ हे राजन हम भी चलोक चंडाल हैं ॥ अपणे प्रयोज
न विना किसी को कछु देते नहीं ॥ जे तूं मेरा भरता होवें ॥ त
ब मय देती हों ॥ इह भोजन मय पिता के निमित लीए जा
ती हों ॥ उह बैताल की न्यांई मसाण विषे अवधूत बैठा है
अरु धूड़ सा अंग भरते हूए हैं ॥ जो तूं मेरा भरता होवें ॥
तो मय देती हों ॥ काहे तें जो भरता प्राणों तें भी प्यारा होता
है ॥ पिता सों हम आकरा लेवोंगी ॥ हे साधो जब चंडाली ऐ
से कहा ॥ तब मय कहा ॥ मय भरता होता हों ॥ मुझ को भोज
न दे ॥ तब उस मुझ को अर्ध भाग भोजन दीया ॥ अर्ध ही जं
बू का रस दीनी ॥ तब मय भोजन कीया ॥ तब कछु शांतिवा
न भया ॥ परतृप्त न भया ॥ तब दोनों ऊहां तें चले ॥ मेरा हाथ
पकिड़ कर मुझ को आगे लगाया ॥ अपणे पिता के निकि
ट मुझ को ले गई ॥ जैसे पापी को यमदूत ले जाते हैं ॥ तब चं
डाली कहा ॥ हे पिता जी इह मय भरता कीया है ॥ पिता कहा
भला कीया ॥ ऐसे कहि कर चावल अरु जंबू की रस भोज
न कीनी ॥ भोजन कर के उस को पिता कहा ॥ हे पुत्री इस को
अपणे घर ले जा ॥ मुझ को अपणे घर ले चली ॥ जब ग्राम के
निकट गई ॥ तब मय देख्या ॥ जो अस्थि मांस रुधिर पड़ी है
कुकड़ गदेभ हस्ती आदिक की खलड़ी पड़ी है ॥ तिन कों
लंघ कर अपणे महल विषे ले गई ॥ एक बाग निकिट था
तिस ते आगे मुझ को अपणी माता पास ले गई ॥ अरु कह

हे माताजी इह तेरा वधाई हूया है॥ माता कहा भली बात
हूई॥ तब उसगृह विषे हम विश्राम कीया॥ उस चंडाली मु
जको भोजन दीया॥ तिसकों मयन ल्हाण कीया। बहुड वि
वाह का दिन स्थापन कीया। तिस दिन विषे विवाह कीया
चंडाल हसें अरु नृत्य करें॥ तब उह चंडाली मुजकों विवा
ह दीनी। वस्त्रादिक पदार्थों सहित दीनी॥ ॥इति श्री
उत्पत प्रकरणे चंडाली विवाह वर्ननं नाम सर्गः॥ ८३॥
॥श्रीराजोवाच॥ हे साधो बहुत कहणे कर क्या है॥ उ
हां मय वहां चंडाल होत भया। सप्त दिन पर्यंत विवाह
का उत्साह होता रहा। तहां अष्ट मास समय रहा। बहुड
अवरस्थान विषे जार हे। तब उह चंडाली गर्भवंती भई
तिसतें एक कंन्या उत्पत भई। अरु शीघ्र ही वधगई। जै
से मूर्ख के चित्त विषे चिंता वध जाती है। तैसे वधगई। ब
हुड बालिक होत भया। बहुड कंन्या। बहुड बालिक। ब
हुड कंन्या। बहुड बालिक। इसी प्रकार तीन पुत्र अर ती
न कंन्यां उत्पत भई॥ तब मय वहां पर्वीर खान चंडाल हू
या। तिस चंडाली साथ बहुत काल चंडालों विषे विचर
ता रहा। अरु तिनके साथ बहुत स्नेह भया। जैसे जाल
विषे पखी बंधायमान होता है॥ तैसे मय तिनों विषे बं
धायमान हूया॥ हे साधो तिन विषे मय वहे वहे कष्ट पा
ए। सिर पर भार उठावों॥ अरु नीचे चरण तपायमान हो
वें। अरु ऊपर तें सूर्य तपे। अरु रात्रि कों कंकली अरु
कोडो पर सयन करों। ऊपर कों कोउ वस्त्र न प्राप्त होवे
पुरातन कोपीन जीवों जु तौं साथ भरी हूई। अरु कुकु ग्रॅरल्हह
डगर्द न हस्ती आदिक कों भोजन करों॥ अरु रुधिर पा मांस
न करों। जाल साथ पंखी मारों। कुंडी साथ मछ मारों। अ
नेक प्रकार के क्रूर कर्म करों। अरु सीत काल मों सील क
र कष्ट पावों। उष्म काल मों उष्मता कर के कष्ट पावों। मेरा
सरीर नीकृष्ट हूया। अरु अवस्था नीवध हूई। समग्रा
नो विषे हमारा बहुत काल व्यतीत भया। चमरे तले विषा

आश्रयनकरों॥ अरुपसूंएकेसिरसिराणेराखों। जैसेशे
षनागकीशय्याऊपरविष्णुभगवानशयनकरताहै॥
तैसेशयनकरों। बांधवोंविषेबहुतस्नेहवध्या॥ जैसेव
र्षाकालकीनदीवधतीजातीहै॥ तैसेवध्या॥ बहुडवर्षा
होणेतैंरहितहोगई। सूर्यतपणेलागा। कालपड्या। मानो
बादशसूर्यएकठेतपतेहैं। समेविनांमानोप्रलयआई
है॥ तबहमऊहांतेनिकसे॥ तीनपुत्रअरुतीनकंन्यास्त्री
सहितजहांअन्नजलसुणीवे॥ तहांजावों॥ मांसखावें।
रक्तपानकरें। बहुउडहमीहाथनआवे। बहुतशोकवा
नहूया। सरीरअसक्तिहोगया॥ ऐसेकष्टमानहूए॥ पु
त्रकोंपितानसंभाले॥ अरुपिताकोंपुत्रनसंभाले। बांध
वोंकोस्नेहआपसविषेछूटगया॥ ॥इतिश्रीउतपत
प्रकरणेइंद्रजालोपाख्यानेउपद्रववर्णनंनामसर्गः॥
॥८४॥ श्रीराजोवाच॥ हेसाधोइसप्रकारहमफिरते
रहे। सरीरवधहोगया। जैसेसकापातवायुकरभ्रमता
है। तैसेहमकर्मोंकेवसतेंभ्रमतेफिरें। जोकछुआपणे
राजकाअभिमानथा। सोविसर्जनहोगया। अरुचं
डालभावरिदेविषेदृढहोगया। जैसेपंखोंकेटूटेतें
पहाडअचलभएहैं॥ तैसेचंडालभावरिदेविषेअच
लभया॥ महाकष्टवानव्याकुलहूए॥ तबफलफूलक
हूंदृष्टनआवें। बहुडएकवृक्षदेख्या। तिसकेनीचेहम
विश्रामकीया॥ तबएकबालिकजोसभनोंतेछोटाथा
सोमेरेपासआकरकहतभया॥ हेपितामुजकोंमांसदे
मयभोजनकरों॥ नहींतोंमेरेप्राणनिकसतेहैं॥ तबमय
कहा। मांसतोनहीं। तबउहकहतभया। भावेंकिथोंदे।
तबमयस्नेहकरबांध्याहूया॥ जोछोटापुत्रपियाराहो
ताहै। तिसकरमयकहा॥ हेपुत्रमेरामांसखाताहै॥ तब
उसदुर्बुधीकहादेह॥ तबमययवनकीलकडीचुणले
आया॥ तिनकोंएकठाकरकेअग्निजगाई॥ अरुकहा
हेपुत्रमयअग्निविषेप्रवेसकरताहों॥ जबमयपरप

कहोवों। तबतुम भोजन करणा॥ हे साधो स्नेह करके
मय इस प्रकार कर कहा॥ जो किसी प्रकार इह जीव
ते रहे॥ ऐसे कहि कर मय चिता विषे प्रवेश कीया
जब मुझकों उष्णता लागी। तब मय ईहां कों प्राप्त भ
न हूया। सो तुमकों कांपता दृष्ट आया॥ जब सावधा
न हूया॥ तिणारे तुरीया बोलणे लागे॥ हे साधो मय
इस प्रकार चरित्र देख्या है॥ सो तुमारे आगे कहा है
जो मय जैसे विवेकवान पुरुषकों इस मोहित कीया
है॥ तो अवर प्राकृती जीवों की क्या वार्त्ता है॥ माया म
हा आश्चर्य रूप है ॥श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी ज
ब इस प्रकार ते जबोन राजे कहा। तब उह सांबर
अंतर्धान होगया॥ अरु सभा विषे मंत्री तें आदि ले
कर जो बैठे थे॥ सो सभ आश्चर्यमान हूए॥ अरु सु
ण कर कहणे लागे॥ बडा आश्चर्य है॥ बडा आश्चर्य
है॥ भगवान की माया विचित्र रूप है॥ इह तो सांबरी
माया नहीं॥ उह तो अपणे लोभ के निमित्त सांग कर
ते हैं॥ इह तो लीये विनां अंतर्धान होगया॥ इह ई
श्वर की माया है॥ जिस कर ऐसा राजा विवेकवान
मोह कों प्राप्त हूया है॥ तो समान जीवों की क्या कहि
णी है॥ हे रामजी ऐसे संदेहवान होकर स्थित भए
अरु मय भी तिस सभा विषे बैठा था॥ इह वृत्तांत
मय प्रत्यक्ष देख्या है॥ सोई तुझकों कहता हों॥ हे रा
मजी इह जो फुरण रूप मन है॥ सोई ही अविद्या है॥
इसके फुरणे कर अनेक प्रकारों का भ्रम दिखीता है
जब इह मन उपशम होवे॥ तब ही कल्याण होवे॥ तां
ते मन जो चंचलताकलना कों उठावता है॥ तिसकों त्या
ग कर॥ आत्मपद विषे स्थित होवो॥ जब मन उप
शम होवेगा॥ तब पावन पद कों प्राप्त होदेखोगे॥ ॥
॥इति श्री उत्पत्तप्रकरणे सांबरोपाख्याने समाप्तं ना
म सर्गः॥ ७५॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी आदि

जो शुद्ध परमात्मा तें चित्त संवेदन फुरी है ॥ सो कलनां
रूप होकर स्थित भई है ॥ तिसकर दृश्य सत होकर
भासणे लागी है ॥ आत्मा के प्रमाद करके मोह को प्रा
प्त हूया है ॥ सो चित्त फुरणे करके चिरपर्यंत का जग
त विषे मग्न हो रहा है ॥ सो मन असत रूप है ॥ अरु
मन ही संपूर्ण जगत को विस्तारता है ॥ तिसकर अ
नेक दुःखां को प्राप्त हूया है ॥ जैसे बालिक अपणे
परछावें विषे वेताल कल्प कर आपही भयमान हो
ता है ॥ तैसे इह मन जगत को रचकर आपही दुःखी
होता है ॥ अरु तेही मन संसार की वासनां त्याग कर
आत्मपद विषे स्थित होवे ॥ तब एक ही क्षण विषे
सभ दुःख नष्ट हो जावें ॥ जैसे सूर्य की किरणां कर
अंधकार नष्ट हो जाता है ॥ तैसे दुःख नष्ट हो जाते हैं
हे रामजी ऐसा पदार्थ कोऊ नहीं ॥ जो अभ्यास कीए
तें प्राप्त न होवे ॥ तातें जब आत्मपद का अभ्यास करी
ये ॥ तब ही प्राप्त होता है ॥ आत्मपद के अभ्यास कीये
तें आत्मा निकट भासता है ॥ अरु संसार दूर भासता
है ॥ अरु जब जगत ही का अभ्यास दृढ होता है ॥ तब
जगत निकट भासता है ॥ अरु आत्मपद दूर भासता
है ॥ हे रामजी जो मूर्ख मानुष हैं ॥ तिन को अभयपद वि
षे भय भासता है ॥ जैसे पंथी को दूर तें वृक्ष विषे वेता
ल कलनां होती है ॥ अरु भय को पावता है ॥ तैसे चित्त
वासनां सहित को अभयपद विषे भय भासता है
जब मित्र विषे शत्रु भावनां होती है ॥ तब शत्रु हो भास
ता है ॥ जब अमृत विषे विष की भावनां होती है ॥ तब
अमृत भी विष की न्याई हो भासता है ॥ जेते क बडे देश
काल पदार्थ भासते हैं ॥ सो सभ मनन करके भासते हैं
हे रामजी संसार का जो कारण है ॥ सो मोह है ॥ तिसक
र नाना प्रकार की वासनां पडी उठती है ॥ तिस वासनां
कर नाना प्रकार के दुःख पावता है ॥ तातें ज्ञानरूपी

कुहाडेसाथ वासनाकों काटो। जो आत्मपद विषे वा
सना ही आवर्ण है। जिन पुरुषने विचार करके वास
नोको नष्ट कीया है॥ तिसकों आत्माका साक्षात कार
होता है॥ जैसे बदलोंते रहित सूर्य प्रकाशता है॥ तै
से वासनांते रहित चित्त विषे आत्मा प्रकाशता है॥ हे
रामजी मन ही को पुरुष जान॥ देहकों मानुष नहीं जा
नणा॥ काहेतें देह जड है॥ अरु मन जड चैतन्य तें वि
लक्षण है॥ जो मनकर कार्य करीता है॥ सो सफल हो
ता है॥ जो मनकर दान कीया है॥ अरु लीया है॥ सोई
सफल होता है॥ देहकर कीया सफल नही होता॥ हे
रामजी इह संपूर्ण जगत मनरूप है॥ मन ही आकाश
है॥ मन ही पर्वत नदीयां सूर्य चंद्रमादिकों प्रकाश स
भ मन ही कर होता है॥ अरु अष्ट स्त्री रूप रस गंध
सभ मन ही कर ग्रहण करीते हैं॥ अरु नाना प्रकार
की वासना करके नाना प्रकार के रूप सभ मन ही धा
रता है॥ लघु पदार्थ कों दीर्घ करता अरु सतकों अ
सत चाकर्ता सो मन ही है॥ अरु असत जगत के प
दार्थों कों सतकी न्याई दिखावता है सो मन ही है॥ हे
रामजी जैसे वृत मन विषे दृढ होती है॥ सोई सत हो
भासती है॥ जैसे हरीचंद कों बारां वर्षों की प्रतीत भा
सगाई॥ जैसे इंद्रद्युम्न कों एक महूर्त विषे जग
तों का अनन्तव कूया है॥ जैसे इंद्र ज्ञालण के पुत्र
मन के निश्चै कर दशा ही ब्रह्मा होतन भए॥ हे रामजी
जो सुख साथ बैग है॥ अरु मन विषे कोउ चिंता आ
न लागी॥ तब सुख ही विषे तिसकों महा नर्क हो जा
ता है॥ अरु जो दुःख विषे बैठा है॥ अरु मन विषे शां
ति है॥ तो दुःखी भी सुखी हो जाता है॥ तातें जैसा निश्चा
मन विषे होता है॥ तैसा हो भासता है॥ अरु जिस जी
र मन का निश्चा होता है॥ तिसी ओर इंद्रीयों का सम
हनी विचरता है॥ इंद्रीयों का आधार नृत भी मन है

जो मन नष्ट होता है तो इंद्रीयां भी भिन्न भिन्न हो जाती हैं। अरु वास्तव तें आत्मा ही सम मकी अधिष्ठान रूप स्थित है। सो स्वछ निर्विकार सम न का साक्षी भूत है। अरु अहंकार के उथान तें रहित चिन्मात्र रूप है। तिस विषे मन के फुरणे कर संसार भासता है। वास्तव तें आत्मा द्वैत भ्रम तें रहित है। सर्व जगत आत्मा का चिमत्कार है। चेतन भाव अर्नत स्फुरत अस्पष्ट (?) है। वायु विषे स्पंदरूप तुही है। पृथवी विषे कठोरता तुंही है। जल विषे द्रवता तुंही है। सूर्य अग्नि विषे प्रकाश तुंही है। चंद्रमा विषे शीतलता तुंही है। आकाश विषे शून्यता तुंही है। सर्व पदार्थों विषे चेतन शक्ति तुंही है। सो अनेकता कछु नहीं परम न कर के अनेकता भासती है। हे रामजी जैसा निश्चा मन विषे दृड होता है सोई सिध होता है। मन बिनां किसी पदार्थ की सिधता नहीं होती। भोजन नाना प्रकार के भोग्य है। अरु मन अवर ठौड होता है तब स्वाद कछु नहीं आवता। अरु नेत्रों कर सम न कछु देखता है पर मन अवर ठौड होता है। तब कछु नहीं देखता। इसी प्रकार किसी इंद्री का विषय सिध नहीं होता। हे रामजी इंद्रीयों तें मन नहीं उपजता। अरु मन तें इंद्रीयां उपजती हैं। जेता कछु इंद्री का विषे दृष्ट आता है सो सम मन तें उपजा है। जिन पुरुषों मन कों वस कीया है सो महात्मा पुरुष पंडित हैं। तिनकों मेरा नमस्कार है। हे रामजी एक वीतराग ब्राह्मण एक वन विषे स्थित था। सो जिसके हाथ कों कोई वनचर जीव काट खा गया। पर तिसकों कछु कष्ट न भया। काहे तें जो उसका मन अवर ठौड स्थित था। इह मन फुरणे कर सुख कों दुख बणा करता है। अरु आत्मपद विषे स्थित हुए दुःख कों सुख बणा करता है। हे रामजी जैसा जैसा निश्चा मन विषे दृड होता है सोई होकर भासता है। जैसे लवण राजा कों

वेडालीका अनुभव हूया था॥ तैसे इह जगत मनोमा
त्र है॥ चित्त के भ्रम करके पड़ा भासता है॥ जैसी जैसी
प्रतिभा मन विषे होती है॥ तैसा ही इसकों अनुभव हो
ता है॥ इह संपूर्ण जगत मनोमात्र है॥ जैसा जैसा फुर
णा मन विषे होता है॥ तैसा तैसा होकर भासता है॥ म
न के फुरणे कर देवता तें दैत्य हो जाता है॥ अरु मन
के फुरणे कर दैत्य तें देवता हो जाता है॥ मन के संकल्प
कर मनुष नाग वृक्ष हो जाता है॥ हे रामजी मन के फु
रणे कर मरण होता है॥ अरु मन के फुरणे कर जन्म
होता है॥ बहुड़ संकल्प कर पुरुष तें स्त्री हो जाता है॥
अरु स्त्री पुरुष हो जाता है॥ पिता पुत्र हो जाता है॥ अ तें
रु पुत्र पिता हो जाता है॥ जैसे नट्या अनेक सांगों कों
धारता है॥ तैसे अपणे संकल्प कर मन अनेक रूप
धारता है॥ संकल्प कर मरता भासता है॥ अरु मन
के संकल्प कर जन्मता भासता है॥ हे रामजी इह जी
व निराकार है॥ पर मन के संकल्प कर आकार हो
भासता है॥ तिस मन विषे जो मनन है॥ सो मूढता है॥
तिस मूढता कर के वासना हूई है॥ तिस वासना क
र के जीव रूपी पत्र पड़े भटकते हैं॥ जैसे तृण जल
के दोभ विषे भ्रमता है॥ तैसे इह जीव मन कर दुः
ख का अनुभव करता है॥ तां ते इस मन कों आत्मा
भ्यास विषे स्थित करो॥ ॥इति श्री उतपत प्र
करणे चित्त वर्णनं नाम सर्गः॥ ९६ ॥श्रीवसि
ष्ठोवाच॥ हे रामजी इह चित्त रूपी महा असाध्य रो
ग है॥ तिसकी निवृत्ति अर्थ मय तुज कों श्रेष्ठ औष
ध कहता हों॥ जो आपही पुरुषार्थ होता है॥ अरु आ
पही साधक होता है॥ अरु आपही यतन रूप औ
षध होता है॥ तां ते चित्त रूपी वेताल कों वस करो॥
हे रामजी जो कछु पदार्थ तुज कों इष्ट रूप भासें॥

तिसका त्याग करो ॥ जब तूं वांछित का त्याग करेंगा ॥
तब चित्त भी वस हो जावेगा ॥ अरु अचल पद कों प्रा
प्त होवेंगा ॥ जैसे लोहे साथ लोहा कटीता है ॥ तैसे म
न साथ मन ही कों मारो ॥ तातें शीघ्र ही यत्न कर के
अपणे चित्त को जीतो ॥ जब चित्त कों जीत कर अचि
त्त होवेंगा ॥ जैसे बदलों के अभाव हूए सूर्य भास आ
वता है ॥ तैसे चित्त का फुरणा बदल है ॥ तिसकों दूर क
रो ॥ तब आत्मपद भास आवेगा ॥ अरु जिसकों अप
णे चित्त वश करणे की शक्ति नहीं ॥ तिसको धिकार
है ॥ वह मानुषों विषे गर्दन है ॥ अपणे पुरुषार्थ साथ
मन कों वस करणा ॥ सो अपणे साथ परम मित्राई क
रणी होती है ॥ अरु अपणे मन वस कीये विनां अप
णा आप ही शत्रु है ॥ अर्थ इह ॥ जो मन को उपशम
कीये विनां घटीयंत्र की न्यांई संसार चक्र विषे भ
टकता फिरेगा ॥ अरु जिनों मानुषों मन कों उपशम
कीया है ॥ तिनकों परम लाभ हूया है ॥ हे रामजी मन
के मारणे का अर्थ एही है ॥ जो दृश्य की और तें चित्त
कों निवृत्त करणा ॥ अरु आत्म चैतन्य संवित विषे
लगावणा ॥ एही मन को जीतणा है ॥ आत्म चित्तवनां
कर के चित्त कों वश करणा ॥ सो सुखरूप है ॥ हे राम
जी इच्छा कर के इह मन पुष्ट होता है ॥ जब अंतर तें इ
च्छा निवृत्त भई ॥ तब मन उपशम हो जाता है ॥ जब मन
उपशम हूया ॥ तब परम कल्याण हूया ॥ हे रामजी
जब इह पुरुष असंकल्परूपी औषध कर के चित्तरू
पी रोग कों काटे ॥ तब तिस पद कों प्राप्त होवे ॥ जो सर्व
है ॥ अरु सर्वगत शांतिरूप है ॥ अरु इह जो देह है ॥
सो निकृष्ट कर मृद है ॥ इसकों मन संकल्प कर के क
ल्या है ॥ तातें पुरुषार्थ कर के चित्त कों अचित्त करो ॥
तब इस बंधन तें छूटो ॥ हे रामजी शुद्ध संवित आ
काश विषे यत्न कर के चित्त को जोडो ॥ जब चित्त

पर्यंततीव्रसंवेगमनकाऽआत्माकीऽऔरहोवेगा ॥ तब
चैतन्यचित्तकोंभक्षणकरलेवेगा ॥ जबचित्तकीचि
तवनोंनिवृत्तहोवेगी ॥ तबकेवलचैतन्यमात्रहीशे
षरहेगा ॥ हेरामजीजबजगतकीभावनोंतेंतूंमुक्ति
होवेंगा ॥ तबतेरीबुधिऽआत्मतत्वविषेजुडेगी ॥ अर्थ
इह ॥ जोबोधरूपहोजावेगी ॥ तांतेचित्तकोंऽअचित्तक
रकेग्रासलेवो ॥ जबतूंपरमपरमार्थकरकेचित्त
कोंऽअचित्तकरेंगा ॥ तबमहाऽअद्वैतपदकोंप्राप्तहोवें
गा ॥ हेरामजीमनकेजीतणेविषेतुजकोंऽअवरयतन
कछुनहीं ॥ एकसंवेदनकाप्रवाहउलटावणाहे ॥ इ
सीकरचित्तऽअचित्तहोजावेगा ॥ चित्तकोंफुरणेंतेंरहि
तकरणा इसीकानामपरमकल्याणहे ॥ जिनोंचित्त
कोंफुरणेंतेंरहितकीयाहे ॥ तिनकोंत्रिलोकीकारा
जतृणसमानहे ॥ हेरामजीऽऐसेसूरमेंनाहैं ॥ जोशस्त्रों
केप्रहारसहतेहैं ॥ ऽअरुऽअग्निकरजलणाभीसह
तेहैं ॥ ऽअरुतुजकोंचित्तकेऽअफुरणेकरकायतन ऐसेविषे
हे ॥ हेरामजीजिनकोंऽअपणेचित्तउलटावणेकीस
मर्थतानहीं ॥ सोनरोंविषेऽअधमहे ॥ जिनकोंएहीऽअ
नुभवपडाहोताहे ॥ जोमयजन्म्याहों ॥ ऽअरुमरोंगा
ऽअबजीवताहों ॥ सोइहचपलताऽअसतरूपप्रमाद
करपडीफुरताहे ॥ जैसेकिसीस्थानविषेबेगाहोवे
ऽअरुमनकेफुरणेकरकिसीऽअवरदेशविषेजावे
सोभ्रमहे ॥ तैसेभ्रमकरकेऽआपकोंजन्मतामरता
जानताहे ॥ हेरामजीइहपुरुषमनरूपीसरीरसाथ
इसलोकऽअरुपरलोकविषेपडानटकताहे ॥ सो
मोक्षहोवणे प्रयंतचित्तविषेपडाभासताहे ॥ जो
चित्तभीमोक्षपर्यंतनाशनहीहोता ॥ तबतुजकोंमृ
त्युकाभयकिंउहोताहे ॥ तेरास्वरूपतोनितशुधबु
धसर्वविकारोंतेरहितहे ॥ ऽअरुइहलोकपरलोक
चित्तकेफुरणेंतेउत्पतहूयाहे ॥ सोचित्तकेमननतें

इतर कछु नहीं ॥ अरु पुत्र भाई इह हिलूए जो मोह का स्था
न हैं ॥ तिन के लोकू कर जो आप कौं लोकु मानता है ॥ सो
भी चित्त ही कर मानता है ॥ जब चित्त अचित्त हो जावे
तब सर्व बंधनों ते मुक्ति होवे ॥ हे रामजी मय ऊर्ध्व अ
र्ध सर्व स्थान देखे हैं ॥ अरु आकाश भी सम देखे हैं ॥ ति
न कौं एकांत बैठ विचारता है ॥ जो शांति के प्राप्त होणे
का अवर उपाव कोऊ नहीं ॥ चित्त का उपशम करणा
एही उपाव है ॥ जब लग चित्त दृश्य कौं पडा चेतता है
तब लग शांति नहीं प्राप्त होती ॥ अरु जब चित्त उप
शम होवे ॥ तब इसकों उस पद विषे विश्राम होता है
जो नित शुध सर्वाभासन का कारण है ॥ परम शांति
रूप है ॥ तिस पद विषे विश्राम पावेगा ॥ हे रामजी रि
दयाकाश विषे जो चेतन सत्ता है ॥ अर्थ इह जो ब्रह्मा
कार वृत्ति है ॥ जब मन की तीव्र संवेग तिस की ओर हो
वे ॥ तब सभ ही दुःखों का अभाव हो जावे ॥ हे रामजी
इह संसार के भोग जो रमणीक भासते हैं ॥ अरु जेते
अहंत्व आदिक दृश्य हैं ॥ सो सभ मन कर के भासते
हैं ॥ जब दृढ विचार कर इसकी अभावना होवे ॥ त
ब मन की यां वासनां नष्ट हो जावें ॥ जैसे दात्री कर खे
ती नष्ट हो जाती है ॥ तैसे वासनां तें रहित निर्विकल्प
परम तत्व भासेगा ॥ जैसे घटाकाश के नष्ट हूए नि
र्मल आकाश भासता है ॥ तैसे मन की वासनां तें र
हित सन शुध आत्म भासेगा ॥ हे रामजी मन इसका
परम शत्रु है ॥ सो मन वासनां संकल्प कर पुष्ट होता
है ॥ सो इसकों पुष्ट नहीं करणा ॥ हे रामजी चित्त के प
सारणे विषे अनर्थ होता है ॥ अरु चित्त के अफुर हूं
ए कल्याण होता है ॥ इह वार्त्ता बालिक भी जानते
हैं ॥ जैसे पिता अनुग्रह करके बालिक कौं कहता है
तैसे मय तुज कों समझावता हों ॥ जो मन रूपी एक शत्रु
है ॥ तिस नें संकल्प कलना कर भय कौं प्राप्त की

याहै॥ तांते इसकात्यागकरो॥ अरु आत्मपदविषे
स्थितहोवो॥ हेरामजी प्रलयकालकापवनचले॥ अ
रु सातीसमुद्रमर्यादाकोंत्यागकरएकठेहोजावें
अरु द्वादशसूर्यतपें। तोभीमनतेंरहितजोपुरुष
है। तिनकोविघ्नकोऊनहींहोता॥ उहसदाशांतिरू
पहै॥ हेरामजी मनरूपीबीजहै। तिसतेंसंसाररू
पीवृक्षउपजाहै॥ सप्तलोकतिसकेपत्रहैं॥ शुभअ
शुभसुखदुःखतिसकेफलहैं॥ तांतेमनरूपीबी
जकोंनष्टकरो॥ तबशांतिपदकोंप्राप्तहोवो॥ तिस
विषेस्थितहूए चक्रवर्तीराजतृणवतभासताहै।
हेरामजी मनकेक्षीणहूए परमानंदउत्तमपदकों
प्राप्तहोवेगा॥ तांतेमनकेसंकल्पउपजावणेविषेअ
नर्थहोताहै॥ अरुसंकल्पकेक्षीणहूए कल्याणहो
ताहै॥ हेरामजी संतोषकरमनवसहोताहै॥ जबम
नवसहूया॥ तबनितउदयरूपपरमपावननिर्म
लआत्मपदशेषरहताहै॥ सोतुजकोंप्राप्तहोवेगा
॥ ॥इतिश्रीउत्पतप्रकरणेमनश्चिकित्साप्रति
पादनंनामसर्गः॥ ८८॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हेरा
मजी जोतीव्रसंवेगहोताहै॥ तिसीकोंआगेदेखता
है॥ जोदृष्टकातीव्रसंवेगहोताहै॥ तिसकरचित्त
जन्ममरणादिककोंदेखताहै॥ जिसकानिश्चयम
नविषेदृढहोताहै॥ तिसीकाअनुभवकरताहै॥ जैं
सामनकाफुरणाफुरताहै॥ तैंसाहोकरभासताहै
जैंसेबरफकाशुक्लशीतलरूपहै॥ अरुकाजर
काकृष्णरूपहै॥ तैसेमनकाचंचलरूपहै॥ श्रीरा
मोवाच॥ हेब्राह्मण मनजोसर्वविकारवानचंचलरू
पहै॥ तिसमनकीचपलताकैंसेनिवृतहोवे॥ सोप्र
कारकहो॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हेरामजी तूंसतक
हताहैं॥ चंचलतातेंरहितमनकहूंनहींदिखीता।
काहेतें जोमनकाचंचलहीस्वभावहै॥ जैंसेअग्नि

काउहमस्वभावहे॥ हेरामजीमनविषेचंचलताफु
रणशक्तिहे॥ सोईजगतआडंबरकाकारणरूप
हे॥ जैसेवायुकास्पंदरूपहै॥ तैसेमनकाचंचलरू
पहै॥ अरुजहांचंचलतातेंरहितहे॥ तिसकोंमृत्यु
कमनकहीताहे॥ हेरामजीतपयतनकरण। आर
णोंकासिधांतएहीहै॥ जोमनकेमृत्यहोणेको
मोक्षकहतेहैं॥ जबमनक्षीणहोताहै॥ तबसभदुः
खनष्टहोजातेहैं॥ अर्थइह। परमानंदआत्मस्व
रूपप्राप्तहोताहे॥ हेरामजीमनविषेजोचंचलता
हे॥ तिसीकानामअविद्याहे॥ अरुदूसराइसकानां
मवासनाहे। सोइहअविद्याअविचारितसिधहे
विचारकीयेतेंनष्टहोजातीहे॥ चित्तकीचंचलता
वासनाहे॥ सोअंतरस्थितहे। जबइहनष्टहोवे। त
बपरमशांतिकोप्राप्तहोवे॥ तांतेयतनकरकेइ
सचंचलताअविद्यारूपकात्यागकरो। जबचंच
लताअविद्यानासहोवेगी। तबमनशांतिहोजा
वेगा। सोमनकारूपसुण। जडचेतनकेमध्यजो
डुलायमानहे। तिसकानाममनहे॥ हेरामजीज
बइहतीव्रताकरकेजडकीओरलागताहे॥ तब
आत्माकेप्रमादकरजडरूपहोजाताहै॥ अर्थ
इहजोअनात्माविषेप्रतीतकरताहे॥ अरुजब
विचारविवेकविषेलागताहे॥ तबतिसअभ्यास
करजडतानिवृत्तहोजातीहे॥ केवलचेतन्यआ
त्मतत्वपदभासताहे॥ जैसाअभ्यासदृढहोताहे
तैसाअनुभवहोताहे॥ जैसेपदार्थकीचित्तविषे
दृढताहोतीहे॥ अभ्यासकेवशातेंतैसारूपहोभा
सताहे॥ हेरामजीजिसपदकेनमितमनपुरुषप्र
यतनकरताहे॥ तिसपदकोंप्राप्तहोताहे॥ अरु
विचार अभ्यासकीतीव्रतातेंभावितरूपहोताहे॥ इसी
कारणतेंतुजकोंकहाहे॥ जोचित्तकरचित्तकोंव

स्राकरो ॥ तब ऽऽअशोकपदकों प्राप्त होवो ॥ जेते कछु ज
गतके भावाभावरूप पदार्थ हैं ॥ सो सब मनतें उप
जे हैं ॥ तांते मनकों उपशम करणे का पुरुषार्थ करो
मनके उपशम कीये विनां ऽऽअवर छूटणे का उपाव
कोऊ नहीं ॥ मन कों मन ही करतें निग्रह करो ॥ जैसे राजा
साथ राजा ही युध करता है ॥ तैसे मन ही साथ मन
युध करता है ॥ तांतें तूं मन ही साथ मन कों मार ॥ तब
शांति पद कों प्राप्त होवें ॥ हे रामजी इह पुरुष वदे सं
सारसमुद्र विषे पडा है ॥ तिस विषे तृष्णां रूपी तंदू
ए इसकों बांध्या है ॥ तिसकर ऽऽअध ऊर्ध कों चल्या जा
ता है ॥ ऽऽअरु रागद्वेषरूपी घुमरघेरों विषे कष्ट पा
वता है ॥ तिस तें तरणे के निमित भी शुध मनरूपी बे
डा है ॥ जब शुध मनरूपी बेडे पर ऽऽआरूढ होवे ॥ तब
संसारसमुद्र तें पार पडूवे ॥ हे रामजी ऽऽअवरण मन ही
बंधन का कारण कासी है ॥ तिसकों शुध मनें साथ छे हैं
दो ॥ किस प्रकार छेदीये दृश्य की ऽऽओर जो मन धाव
ता है ॥ तिस तें वैराग करावो ॥ ऽऽअरु ऽऽआत्म तत्व विषे जो
डो ॥ हे रामजी जब भोगों की वासनां त्याग करेंगा ॥ तब
यतन विनां जगत की वासनां छूट जावेगी ॥ जब भावा
भावरूप जगत का त्याग करेंगा ॥ तब निर्विकल्प शु
धस्वरूप होवेंगा ॥ जब सर्व दृश्य पदार्थों की ऽऽअभाव
ना होती है ॥ तब भावना को करणे हारा मन भी नष्ट हो जा
ता है ॥ हे रामजी जो कछु संवेदन पडी फुरती है ॥ इस सं
वेदन का फुरणा ही जगत है ॥ ऽऽअरु ऽऽअसंवेदन होणा
इसी का नाम मोक्ष है ॥ तांते संवेदन का ऽऽअभाव कर
णा ही कर्तव्य है ॥ जब भाव की ऽऽअभावना हूई ॥ तब क
ल्याण हूया ॥ सब पदार्थ मृगतृष्णां के जलवत मि
थ्या हैं ॥ तांते इनकी ऽऽआस्था कों त्याग करो ॥ इह मिथ्या
रूप हैं ॥ तेरा स्वरूप तौ नित्य तृप्त ऽऽअपणे ऽऽआप विषे

स्थितहै॥ ॥इतिश्रीउत्पतप्रकरणेपुरुषप्रयत
नकथनंनामसर्गः॥ ९८ ॥श्रीवसिष्ठोवाच॥
हेरामजीइहजोवासनाहै॥सोभ्रांतिकरकेउठीहै
जैसेआकाशविषेभ्रांतिकरकेदूसराचंद्रमाभा
सताहै॥ तैसेभ्रांतिकरकेआत्माविषेजगतभा
सताहै॥इसकीवासनांदूरतेंत्यागकरो॥हेरामजी
जोज्ञानवानहैं॥तिनोंकोंजगतनहीभासता॥अरु
जोअज्ञानीहैं॥तिनोंकोंअविद्याविद्यमानकीन्यां
ईभासतीहै॥अरुसंसारकेपदार्थकोंरमणीक
जानकरअंगीकारकरतेहैं॥अरुज्ञानवानसम्य
कैसीकोंआत्मतत्त्व॥ तेंइतरनहीभासता॥जैसे
समुद्रतरंगहोभासताहै॥परजलतेंइतरकछुभि
यानहीं॥तैसेआत्मतत्त्वहीअपनेआपविषेस्थि
तहै॥सोनितशुधअद्वैतहै॥सोतेराअपनाआपहै
हेरामजीकर्ताअकर्ताग्रहणत्यागदोनोंविकल्पों
कोंत्यागकरअपनेस्वरूपविषेस्थितहो॥अरुजो
कछुप्रकृतआचारआनप्राप्तहोवे॥तिसकोंकर
अरुअंतरतेंलिपायमाननहोवो॥कर्तृत्वभो
क्तृत्वकाअभिमानअपनेविषेकछुनमानो॥का
हेतेंजोसर्वपदार्थइंद्रजालकीमायावतमिथ्याहैं
हेरामजीमिथ्यापदार्थोंविषेआस्थाकरणीक्याहै
सबसंसारकाबीजअविद्याहै॥सोअविद्यास्वरूप
केप्रमादकरसतहोभासतीहै॥हेरामजी॥चित्तविषे
चेतविनये २५ जोचेतकीवासनांपड़ीफुरतीहै॥सोमोहकाकारण
है॥इहसंसारअविद्यारूपहै॥देखणेमात्रसुंदरभा
सताहै॥परअंतरतेंशून्यहै॥तातेंसंसारअसाररू
पहै॥जैसेनदीकाप्रवाहचल्याजाताहै॥तैसेसंसा
रनष्टहोताजाताहै॥हेरामजीइहअविद्याकैसीहै
जोग्रहणकरीयेतोग्रहणविषेकछुनहीआवती

अरु कोमल भासता है॥ पर अंतर तें तीक्षण रूप है॥
प्रगट आकार नी दृष्ट आवते हैं॥ पर मृगतृष्णा
के जलवत असत रूप हैं॥ अविद्या कहूं विकार
रूप भासती है॥ कहूं स्पष्ट रूप भासती है॥ कहूं
दीर्घ रूप भासती है॥ जिसकर संसार उपजता
विनसता भासता है॥ पर अंतर भ्रम रूप है॥ आत्मतत्व
विषे कछु है नहीं॥ अरु सर्व एही भासती है॥ अरु
जड है॥ पर आत्मा की सत्ता कर चेतन्यवद्भास
ती है॥ तो भी असत रूप है॥ एक निमेष के प्रमाद क
रके वह प्रमाद कौं दिखावती है॥ जहां निर्मल प्र
काश रूप आत्मा है॥ तिस विषे तम कौं दिखावती
है॥ जो मय आत्मा कौं नहीं जानता॥ जैसे उलूक कौं अं
धकार भासता है॥ तैसे मूर्खों कौं अनुभव रूप आ
त्मा नहीं भासता॥ जगत ही भासता है॥ सो असत रू
प है॥ जैसे मृगतृष्णा की नदी विस्तार रूप भासती है
तैसे अविद्या नाना रंग विलासनी विकार रूप है॥
विषम स्मर रूप है॥ कोमल कठन रूप है॥ स्त्री की
सांई चंचल है॥ अरु होभ रूप है॥ अरु जब लग
जागते के भोगों विषे प्रीत है॥ तब लग अविद्या व
ध होती है॥ अरु जब भोगों तें स्नेह छीण होता है॥ त
ब अविद्या नष्ट हो जाती है॥ जिउं जिउं अविद्या का
विस्मरण होता है॥ तिउं तिउं सुखी होता है॥ इसका
रण तें दृश्य का विस्मरण सुख के निमित्त है॥ जैसे कि
सी कौं दृढ स्वप्न आवता है॥ तिस विषे अपणी नष्ट
ता मानता है॥ तैसे अविद्या के स्मरण विषे अनर्थ
होता है॥ अविद्या एक महूर्त विषे त्रिलोकी रच ले
ती है॥ एक छिण विषे बहुड नास कर लेती है॥ जैसे ए
क महूर्त विषे राजा हरीचंद कौं अनेक वर्षों का अनु
भव भयो॥ अरु दुःखी कौं रात्रि कल्पों की सांई ब्यतीत है

ती है॥ अरु जो बहुत सुखी होता है॥ तिसको रात्रिक
ण की न्याई व्यतीत होती है॥ काल भी अविद्या प्रमाद
कर विपर्यय रूप हो जाता है॥ हे रामजी ऐसा कोऊ
समर्थ नहीं॥ जो अविद्या कर विपर्यय न होवे॥ जेता
कछु जगत जाल तुझ को भासता है॥ सो अविद्या क
र के भासता है॥ जैसे इंद्रीयां पदार्थ का रूप दिखाव
ती हैं॥ तैसे अविद्या पदार्थों को दिखावती है॥ सो स
ने असत रूप हैं॥ जैसे नाना प्रकार की स्त्रिष्ट मनोराज
विषे भासती है॥ जैसे स्वप्न स्त्रिष्ट भासती है॥ सो अ
सत रूप है॥ तैसे इह जगत असत रूप है॥ जैसे मृग
त्रिष्णा की नदी कों देख कर मूर्ख मृग दौडता है॥ अ
रु कष्टमान होता है॥ तैसे जगत के पदार्थों निमित
अज्ञानी यतन करते हैं॥ ज्ञानवान यतन नहीं कर
ते॥ हे रामजी अग्नि तें धूम निकस कर आकाश वि
षे बदल होकर वर्षा करता है॥ तैसे अविद्या आत
मा तें उपज कर आत्मा की सत्ता पाके जगत को रचती
है॥ तिस जगत विषे इह जीव पडा भटकता है॥ घटीयं
त्र की न्याई॥ तैसे तीनों गुणों साथ बांध्या जीव पडा भ
टकता है॥ हे रामजी इह अविद्या दीपक की शिखा
वत है॥ तृष्णा रूपी तेल कर अधिक प्रकाशता है॥ ज
ब त्रिष्णा रूपी तेल तें रहित होवे॥ अरु विवेक रूपी
वायु चले॥ तब अविद्या रूपी दीपक निर्वाण हो जावे
हे रामजी अविद्या कुहीड की न्याई आवर्ण करती है
पर ग्रहण करीये तो हाथ कछु नहीं आवती॥ देख
ण मात्र स्पष्ट द्रिष्ट आवती है॥ पर विचार कीये तें अ
णु मात्र भी नहीं रहती॥ जैसे रात्रि कों बन अंधकार द्रि
ष्ट आवता है॥ पर दीपक हाथ लेकर देखीये॥ तो अ
णु मात्र भी नहीं भासता॥ तैसे अविद्या विचार कीये
तें नहीं भासती॥ बहुड कैसी है॥ जैसे आकाश विषे
नीलता भासती है॥ जैसे स्वप्न स्त्रिष्ट भासती है॥ तैसे

अविद्यारूपी जगत अज्ञानी कों भासता है॥ सो नाम
करके भासता है॥ हे रामजी इह जाग्रत जगत भी दी
र्घ काल का स्वप्ना है॥ जैसे सूर्य की किरणां विषे ज
ल बुध मूर्ख करता है॥ तैसे मूर्ख जगत विषे सुख
मानता है॥ जो ज्ञानवान पुरुष हैं॥ तिनकों किसी की
आस्था नहीं होती॥ उह असत जाणते हैं॥ हे रामजी
इह भोग जिनकों अमृत की न्याई भासते हैं॥ सो बहु
दुःख कों पावते हैं॥ मूर्खों कों इह सुंदर भासते हैं॥ अ
रु स्पर्श कीये तें नाश करते हैं॥ जैसे मूर्ख पतंग दीप
क को सुखरूप जान कर उसकी इच्छा करता है॥ तब
नास कों प्राप्त होता है॥ तैसे इह जीव भोगों कर नाश हो
ता है॥ जैसे संध्याकाल के आकाश में लाली भासती
है॥ तैसे अविद्या कर जगत भासता है॥ जैसे स्वप्ने वि
षे थोडा काल बहुत हो भासता है॥ तैसे इह जागत अ
विद्या कर के सत हो भासता है॥ अरु आत्मज्ञान क
रके नष्ट हो जाता है॥ हे रामजी जो कछु दृष्टमान जग
त भासता है॥ सो मिथ्यारूप अविद्यमान है॥ सो अवि
द्या निराकार रूप स्वरूप है॥ तिसनें सत की न्याई दिखा
कर जगत कों अंध कीया है॥ तातें आत्मसुख कों न
ही जानते॥ जैसे सूर्य के प्रकाश विषे उलूकों अंधका
र भासता है॥ तैसे चिदानंद आत्मा सदा प्रकाशता है
सो अविद्या कर के मूर्खों कों नहीं भासता॥ असत रू
प अविद्या जीवों कों अंध कीया है॥ सो अविद्या अ
ज्ञान कर के अनंत दुःखों कों दिखावती है॥ अरु सर्व
विकारों कों उपजावती है॥ बोध तें रहित करती है॥
अरु सर्व मनों विषे वासना बढावती है॥ हे रामजी
इह अविद्या कैसी है॥ जो निराकार अरूप जीवों कों
बांध लीया है॥ जैसे स्वप्ने विषे आप कों बांध्या देखे॥ तै
से अविद्या सभनकों बांध्या है॥ सो क्या है॥ स्वरूप के
प्रमाद का नाम अविद्या है॥ अवर कछु नहीं॥ = ॥

॥ इति श्री उतपतप्रकरणेऽविद्यावर्ननं नाम
सर्गः ॥ ८९ ॥ श्रीरामोवाच ॥ हे भगवन जेता
कछु जगत भासता है ॥ सो सभ अविद्या कर भास
ता है ॥ सो अविद्या किस कर निवृत होवे ॥ श्रीव
सिष्टोवाच ॥ हे रामजी जैसे बरफ की पुतली सू
र्य के तेज कर के नष्ट हो जाती है ॥ तैसे अविद्या
आत्मा के प्रकाश कर नष्ट हो जाती है ॥ जब ल
ग आत्मा का दर्शन नहीं भया ॥ तब लग अवि
द्या पुरुष को भ्रमावती है ॥ अरु नाना प्रकार के
दुःखों को प्राप्त करती है ॥ अरु जब आत्मा के द
र्शन की इछा होती है ॥ तब उह इछा मोह को नाश
करती है ॥ जैसे धूप कर के छाया क्षीण हो जाती
है ॥ तैसे आत्मपद की इछा कर के अविद्या नष्ट
हो जाती है ॥ जैसे द्वादश सूर्य के उदे हूए सर्व दे
शा की छाया नष्ट हो जाती है ॥ तैसे आत्मा के सा
क्षात्कार हूए अविद्या नष्ट हो जाती है ॥ हे रामजी
दृश्यपदार्थों की इछा परीउवता है ॥ इसी को ना
म अविद्या है ॥ अरु तिस अविद्या के नाश निमि
त इछा होवे ॥ तिसका नाम विद्या है ॥ तिस विद्या
ही का नाम मोक्ष है ॥ अरु विद्या अविद्या को नाश
निसंकल्पता है ॥ जो जेती कछु दृश्य है ॥ तिस की इ
छा न उपजे ॥ केवल चिन्मात्र विषे चित्त की इस्थित
होवे ॥ तिस कर अविद्या नष्ट हो जाती है ॥ जब स
र्व वासना निवृत होवे ॥ तब आत्मतत्व प्रकाश
आवेगा ॥ जैसे रात्रि के क्षय हूए सूर्य प्रकाशता
है ॥ तैसे वासना के क्षय हूए आत्म प्रकाशता
है ॥ जैसे सूर्य के उदे हूए नहीं जानीता जो रात्र
कहां गई ॥ तैसे विवेक के उदे हूए नहीं जानीता
जो अविद्या कहां गई ॥ हे रामजी इह पुरुष संसा

रकोदृढवासनाकरकेबांध्याहूयाहै॥जैसेबालिकपि
शाचेंविषेचैतालेमानकरकेभयमानहोताहै॥तैंसेइहपुरु
षअपणीवासनाकरकेभयपावताहै॥श्रीरामोवाच॥
हेभगवनजोकछुदृश्यहै॥सोसभअविद्याकरकेहूई
है॥अरुअविद्याआत्मभावनाकरनाशहोतीहै॥सोआ
त्माकैसाहै॥सोकहो॥श्रीवसिष्टोवाच॥हेरामजीचेत
न्यखलतेंरहितअरुसर्वगतिअनंतचैतन्यअनुभवरू
पऐसाजोचेतन्यतत्वअग्याष्टपदहै॥सोआत्मापरमई
श्वरहै॥हेरामजीब्रह्मातेंआदिलेकरतृणपर्यंतजोज
गतहै॥सोसर्वआत्मस्वरूपहै॥अविद्याकछुनहीं॥हेनि
हपापरामजीसर्वदेहोंविषेनित्यचेतन्यघनअविनाशी
है॥तिसविषेचित्तनामनीकलनांआभासअन्यकीन्याई
होकरभासताहै॥परआत्मातेंइतरकछुनहीं॥हेरामजी
नकोऊजन्मताहै॥नकोऊमरताहै॥नकोऊविकारहै॥
आत्मतत्वप्रकाशताहै॥अविनाशीचेततेंरहितशुध
चिन्मात्रअपणेआपविषेइस्थितहै॥तिसदेवआत्मा
कीजबविभागकलनांशक्तिहोतीहै॥तिसकानाममन
है।जैंसेसमुद्रविषेद्रवताकरकेतरंगभासतेहैं॥तैंसेचि
न्मात्रविषेजोचेततांहोतीहै॥तिसकानाममनहोताहै॥
संकल्पकलनांकरदृश्यकीन्यांईहोभासतीहै॥तिस
संकल्पकलनाकानामअविद्याहै।संकल्पकरउपजी
संकल्पकरनाशहोजातीहै॥जैंसेवायुकरअग्निउप
जतीहै।अरुवायुहीकरनष्टहोतीहै॥तैंसेसंकल्पक
रअविद्यारूपीजगतउपजताहै॥अरुसंकल्पकरके
नष्टहोजाताहै॥जबचित्तकीवृत्तिदृश्यकीओरफुर
ताहै॥तबअविद्याबधजातीहै॥जबवृत्तिदृश्यकोंत्या
गकरस्वरूपकीओरआवतीहै॥तबअविद्यानष्टहो
जातीहै॥हेरामजीजबसंकल्पकरताहै॥जोमयब्रह्म
नहीं।तबमनदृढबंधनमोंहोताहै॥अरुजबएहीसंक
ल्पदृढकरताहै॥जोसर्वब्रह्महै॥तबमुक्तिहोताहै॥अ

रूजब अनात्मा विषे अहं अभिमान दृढ करता है॥ तब बंध
मान होता है॥ जैसे बालिक आकाश विषे स्वर्ण के कमलों
की कलना करे॥ जो सूर्यवत प्रकाशते हैं॥ अरु सुगंध कर
पूर्ण है। सो भावना मात्र होते हैं॥ तैसे दृश्य अविद्या भावना
मात्र है॥ जैसे सरीर का अभिमान करता है॥ अरु जब ऐ
से जानता है॥ जो न मैं देह हों॥ न मेरी देह है॥ न मांस हों॥ न
अस्थि हों॥ ऐसी भावना कर मुक्ति होता है॥ देह तें अन्यम
य साक्षी भूत हों॥ ऐसे निश्चेवान कों अविद्या तें मुक्ति के
होता है॥ जैसे पुरुष आकाश विषे नीलमा कल्पता है॥ तैं
से आत्मा विषे अज्ञानी अविद्या दृश्य कल्पता है॥ वास्तव
तें कछु नहीं॥ श्रीरामोवाच॥ हे भगवन सुमेर की छाया
आकाश विषे पडती है॥ अथवा तम की प्रभा है॥ इह आ
काश विषे नीलमा कैसे भासती है॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥
हे रामजी आकाश विषे नीलता है नहीं॥ इह सून्यता का गु
ण है॥ न सुमेर की छाया है॥ न तम है॥ आकाश पुलाण मा
त्र है॥ हे रामजी इह ब्रह्मांड तेजरूप है॥ इस का प्रकाश ही
स्वरूप है॥ तम का स्वभाव नहीं॥ तम जो है सो ब्रह्मांड के बा
ह्य है॥ अंतर नहीं॥ ब्रह्मांड का प्रकाश स्वभाव है॥ अरु इह
नीलमा भासती है॥ सो दृष्ट सून्यता कर के आकाश विषे
नीलता भासती है॥ अवर नीलमा कछु नहीं॥ जिस की मंद दृ
ष्ट है॥ तिस कों नीलमा भासती है॥ जिस की दिव्य दृष्ट है॥
तिस कों नीलमा नहीं भासती॥ पुलाड भासता है॥ जैसे मंद
दृष्टी कों नीलमा भासती है॥ तैसे अज्ञानी कों अविद्या भा
सती है॥ जैसे दिव्य दृष्टवाले कों नीलमा नहीं भासती॥ तैं
से ज्ञानवान कों अविद्या नहीं भासती॥ अलैसे तौ ही भास
ती है॥ हे रामजी जहां लग इसके नेत्रों की दृष्ट जाती है॥ त
हां लग प्रकाश भासता है॥ जहां दृष्ट कुंठित हो जाती है॥
तहां इस कों नीलमा भासती है॥ हे रामजी जैसे जिस की
दृष्ट क्षय होती है॥ तहां तिस कों नीलमा भासती है॥ तैसे ज
हां इस जीव की आत्म दृष्ट क्षय होती है॥ तहां इस कों अवि

द्या दृश्य भासणे लागती है ॥ सो दुःखों का कारण है ॥ हे रामजी
चैतन्य कों छोड कर जो कछु स्मरण करता है ॥ तिस का नाम
अविद्या है ॥ अरु जब चित्त अचल होता है ॥ तब अविद्या न
ष्ट हो जाती है ॥ जैसे आकाश के फूल हैं ॥ तैसे अविद्या है ॥ तां
ते मन कों फुरणे ते रहित अचल करो ॥ तब दृश्य भ्रम अवि
द्या नष्ट होवे ॥ मन के संकल्प फुरणे का नाम अविद्या है ॥ जब
संसरणा आत्मा की ओर आवे ॥ तब अविद्या नष्ट होवे ॥ हे रा
मजी जैसे राजा के आगे मंत्री टहिलए कार्य करते हैं ॥ तैसे
मन के आगे इंद्रीयां कार्य करती हैं ॥ हे रामजी तांते विषयवा
सना कों त्याग कर ॥ अंतर ते आत्मा की भावनां कर ॥ तब आ
त्म पद कों प्राप्त होवेंगा ॥ जिन पुरुषों अंतर की भावनां आ
त्मा विषे जोडी है ॥ सो शांति कों प्राप्त भए हैं ॥ तिन ज्ञानवान
कों केवल आत्मपद भासता है ॥ पृथिवी नदीयां ते आदि ले
कर जो दृश्य है ॥ सो सब आत्मस्वरूप भासती है ॥ अरु जिन
कों आत्मा विषे प्रमाद है ॥ तिन कों जगत पडा भासता है ॥ अ
रु आत्मा के सम्यक ज्ञान हूए ते जगत भ्रम नष्ट हो जाता है ॥
तांते आत्मा की भावना कर ॥ हे रामजी जेवडी विषे दो विक
ल्प होते हैं ॥ एक जेवडी का ॥ दूसरा सर्प का ॥ सो दोनों विकल्प
अज्ञानी कों होते हैं ॥ अरु ज्ञानवान कों दोनों विकल्प नही
होते ॥ अरु जो जिज्ञासी होता है ॥ तिस की वृत्त सत असत वि
षे डुलायमान होती है ॥ अरु जो ज्ञानवान हैं ॥ तिनों कों सन
ब्रह्मतत्व ही भासता है ॥ तांते तूं जगत की वासना सर्व त्याग
कर ॥ तब शांतात्मा होवेंगा ॥ हे रामजी संसार के भोगों की वा
सनां तब होती है ॥ जब अनात्म विषे आत्म अभिमान होता
है ॥ सो तूं देह का काहे कों अभिमान करता हैं ॥ इह तो जडरुम
क है ॥ अरु अस्थि मांस की पुतली है ॥ ऐसी देह विषे तूं किं
उ ममत्व करता हैं ॥ जब लग देह विषे अभिमान होता है ॥
तब लग सुख दुःख भोक्ता है ॥ अरु इछा करता है ॥ जैसे का
ष्ठ अरु लाख का संयोग होता है ॥ जैसे मेघ अरु आकाश
का संयोग होता है ॥ तैसे देह अरु देही का संयोग होता है ॥

जैसेघटकेनाशहूंएघटाकाशकानाशनहीहोता॥तैंसेदे
हकेनाशहूंएआत्माकानाशनहीहोता॥हेरामजीजैंसेम
गत्रिश्नाकीनदीभासतीहै॥तैंसेअज्ञानकरसुखदुःख
जन्ममरणभासतेहैंअज्ञानीकों।सोअज्ञानीकीकलना
कोंत्यागकरस्थितहोवो॥वडाआश्चर्यहै॥जोब्रह्मतत्वस
दासाक्षहै॥सोइसजीवकोंनलगयाहै॥अरुजोअसतअ
विद्याहै॥तिसकोंवारंवारस्मृतकर्ताहै॥ऐसीअविद्याको
तुममतप्राप्तहोवो॥हेरामजीमनकाजोमननहै॥सोईअ
विद्याहै॥अरुएहीअनर्थकाकारणहै॥इसकरकेजीवअ
नेकजन्मकोंदेखताहै॥जैंसेस्वप्नविषेमनकेफुरणेकर
केनानाप्रकारकेसुखदुःखअनुभवकरताहै॥तैंसेइह
जागतचितकीवासनांकरकेपडाभासताहै॥जागतस्व
प्नविषेइहजीवविचित्ररचनांकोंदेखताहै॥सोमनके
फुरणेकरकेदेखताहै॥जोस्वर्गविषेबैठाहोताहै॥अरु
मनोराजविषेउसकोंनरकोंकाअनुभवहोताहै॥तैंसेआ
नंदरूपआत्माविषेप्रमादकरकेइसकोंदुःखकाअनु
भवहोताहै॥हेरामजीअज्ञानीमनकेफुरणेकरकेसूक्ष्म
अणुविषेसंपूर्णजगतजन्मकोंदेखताहै॥जैंसेराजाल
वणसिंहासनपरबैठा॥चंडालीकाअनुभवकरतभया
तोतेंसंसारकीवासनांचित्ततेंत्यागदेवो॥इहवासनांसं
सारबंधनकाकारणहै॥सर्वभावोंविषेवर्तो।पररागद्वे
षकिसीविषेनकरो॥जैंसेफटकमणिसभप्रतिबिंब
कोंग्रहणकरतीहै॥परलिपायमानकिसीविषेनहीहो
ती॥तैंसेतुमसभकार्यकरो।पररागद्वेषकिसीविषेनहो
वे।ऐसाजोपुरुषहै।सोनिर्बंधनरूपहै॥तिसकोंशास्त्र
काउपदेशनहीं॥इहविचित्ररूपहै।हेरामजीजोकछुप्र
कृतआचारतुमकोंआनप्राप्तहोवे॥देणालेणाबोलनां
चलनांआदिकसभकार्यकरो॥परअंतरतेंलिपायमा
ननहोवो॥इहज्ञानसभनतेंश्रेष्टहै॥ ॥इतिश्रीउत्पत
प्रकरणेयथार्थउपदेशोनामसर्गः॥ ८६ ॥अबोल

मीकोवाच॥ हे भारद्वाज जब इस प्रकार वसिष्टजी कहा
त ब कमलनयन रामजी वसिष्टजी की और देखता भया
अरु अंतहकरण प्रफुलित हो आया॥ जैसे रात्रि के मुंदे
हूए कमल सूर्य के उदे हूए खिड आवते हैं॥ तैसे रामजी
प्रफुलित होकर बोलते भया॥ श्रीरामोवाच॥ बडा आ
श्चर्य है। बडा आश्चर्य है। जो तिसकी तंतसाथ पर्वत बां
धे हूए हैं। अविद्यमान जो है अविद्या। तिसने संपूर्ण जग
त को वस कीया है। अरु अविद्यमान जगत को वज्रसार व
त दृढ कीया है। तीनों जगत असतरूप है। अरु सत की न्यां
ई स्थित भासते हैं। हे भगवन इस संसार की जो नटनी माया
है। तिसका रूप का है। अरु लवण राजा पुरुषवान था। सो
ऐसी वदी आपदा को कैसे प्राप्त हूया॥ अरु इंद्रजालक
जो भ्रम दिखावता भया। सो कवन था॥ अरु उसको अपणा
अर्थ कछु न था। सो इंद्रजालक कहां गया। अरु इस देही
अरु देह का संबंध कैसे हूया है॥ अरु शुभ अशुभ कर्मों
के फल भोगणे को कैसे समर्थ होता है। एते प्रश्नों का उत्त
र मेरे बोध के निमित्त कहो॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे राम
जी इह देह काष्ट माटी के समान है। जैसे स्वप्ने विषे चित्त के
फुरणे कर देह भासती है॥ तैसे इह देह चित्त की कल्पी हू
ई है॥ अरु चित्त के संबंध करके जीवपद को प्राप्त भया चैत
है॥ सो जीव चित्तशक्ति कर स्वजायमान है॥ तिस चित्त के फु
रणे कर संसार उपजा है॥ सो चित्त बालिक अरु बांतर
वत चंचल है॥ अपणे फुरणे रूप कर्मों कर नाना प्रकार
के सरीरों को धारता है॥ चित्त के एते नाम हैं॥ अहंकार क
हीये। मन कहीये। जीव कहीये। इत्यादिक नाम चित्त के
हैं॥ सो चित्त ही अज्ञान करके सुख दुःख को भोक्ता है॥ सरी
र नहीं भोक्ता। अरु जो प्रबोधा चित्त हैं॥ सो ज्योतिरूप हैं॥ ज
बलग मन अप्रबोध होता है॥ अविद्यारूपी निद्रा कर सो
या हूया है॥ तबलग स्वप्नरूप अनेक स्रिष्टीं को देखता है
अरु जब अविद्या निद्रा ते जागता है। तब नहीं देखता। हे
रामजी जबलग जीव अविद्या साथ मलिन है। तबलग

संसार भ्रम कों देखता है ॥ अरु जब बोधवान होता है ॥ त
ब संसार भ्रम निवृत्त हो जाता है ॥ जैसे रात्रि कर कमल मुं
दे जाते हैं ॥ अरु सूर्य के उदे हूए खिड आवते हैं ॥ तैसे अ
विद्या कर चित्त जगत भ्रम कों देखता है ॥ अरु बोध कर
अद्वैत रूप आत्मा देखता है ॥ तातें अज्ञान ही दुःख का का
रण है ॥ अविवेक करके पंच भौतिक देह विषे अभिमा
नी होकर कर्म करता है ॥ तैसे ही भोक्ता है । शुभ करता है
तब शुभ भोक्ता है ॥ अशुभ करता है ॥ तब अशुभ भोक्ता है
जैसे नटूया अपनी क्रिया कर अनेक स्वांगों कों धारता
है ॥ तैसे चित्त अपने फुरने कर अनेक सरीरों कों धार
ता है ॥ जेतेक इष्ट अनिष्टादिक सुख दुःख हैं । सो सम
मन के फुरने विषे हैं ॥ सरीर विषे स्थित होकर मन करती
है । जैसे रथ ऊपर आरूढ होकर रथवाही चेष्टा करता है
जैसे खोर विषे बैठकर सर्प चेष्टा करता है ॥ तैसे सरीर
विषे स्थित होकर मन चेष्टा करता है ॥ हे रामजी जड रू
प सरीर कों मन चंचल करती है ॥ जैसे वृक्ष कों वायु चंचल
करती है ॥ तैसे सरीर कों मन चंचल करती है ॥ जेतीक सु
ख दुःख की कलना है ॥ सो सब मन ही करती है ॥ अरु मन
ही भोक्ता है ॥ हे रामजी अब लवण राजा का वृत्तांत सुण
राजा लवण मन के भ्रमणे कर चंडाल हूया ॥ जेताकछु
मन करके करीता है सो सफल होता है । हे रामजी एक
काल में हरीचंद की कुल तें उपजा जो राजा लवण है ॥
बगीचे
सो एकांत विषे बैठकर विचार करतें भया ॥ जो मेरा पिता
महा बडा राजा भया है ॥ अरु मेरे बडे ने राजसूय यज्ञ की
ये हैं ॥ अरु मय भी उनकी कुल विषे उत्पन्न भया हों ॥ मय
भी राजसूय यज्ञ करों ॥ इस प्रकार चितवना करके लव
ण राजा मानुषी यज्ञ का आरंभ कीया ॥ देवता रूपीश्व
रमुनीश्वर सभनों कों मन ही कर पूजा करतें भया ॥ अ
ग्नि पवनादिक देवताओं कों पूजतें भया ॥ मंत्र अरु समिग्री
जो कछु राजसूय यज्ञ का कर्म है ॥ सो संपूर्ण करतें भया ।
अरु मन ही कर तिस का फल भोक्ता भया । तातें हे रामजी

मनहीकरसभकर्महोताहै॥ अरुमनहींभोक्ता है॥ जोचित्तहै
सोईपुरुषहै॥ पूर्णचित्तकरपूर्णहोताहै॥ अरुनष्टचित्त
करनष्टहोताहै॥ अर्थइह॥ जोजिसकाचित्तआत्मतत्वके
रपूर्णहै॥ सोईपूर्णहै॥ अरुजोआत्मतत्वतेंनष्टचित्तहै॥ सो
नष्टरूपचित्तहै॥ हेरामजीजिसकोंइहनिश्चाहै॥ जोमय
देहहों॥ सोअबुधीअनेकदुःखोंकोंप्राप्तहोवेगा॥ अरुजि
सकाचित्तविवेकविषेजागाहै॥ तिसकोसर्वदुःखोंकाअ
भावहोजाताहै॥ जैसेसूर्यकेउदेहूंएकमलोंकासुकच
णादूरहोजाताहै॥ अरुखिडआवतेहैं॥ तैंसेविवेकतें
जोरहितपुरुषहैं॥ सोदुःखोंकरसुकचेरहतेहैं॥ अरजो
विवेकरूपीसूर्यकेप्रकाशकरप्रफुलितभयाहै॥ सोसं
सारकेदुःखोंकोंतरजाताहै॥ ॥इतिश्रीउतपतप्रक
रणेसुखदुःखभोक्ताउपदेशोनामसर्गः॥ ९१ ॥ श्रीरा
मोवाच॥ हे भगवनराजालवणराजसूययज्ञमनकर
करतभया॥ अरुमनहीकरतिसकाफलभोगा॥ परउ
हसांबरीकोंनथा॥ जिसउसकोंऐसाभ्रमदिखाया॥
॥श्रीवसिष्टोवाच॥ हेरामजीजबउहसांबरीलवण
राजाकीसभाविषेआया॥ तबमयभीहांबैठाथा॥ मय
उहदेखाथा॥ तहांतबलवणराजाअरुमंत्रीमुजसों
पूछतेभए॥ जोइहसांबरीकवनथा॥ तबमयउनकोंक
हा॥ जोकछुउनकोंकहाथा॥ सोतुजकोंकहताहों॥ हेरा
मजीजोपुरुषराजसूयंयज्ञकरताहै॥ तिसकोद्वादश
वर्षकीआपदाप्राप्तहोतीहै॥ तिनद्वादशवर्षोंविषेअ
नेकदुःखोंकोंदेखताहै॥ सोराजालवणमनकरयज्ञ
करतभया॥ तिनकोंआपदाभीमनकरप्राप्तभई॥ अरु
स्वर्गतेंइंद्रअपणादूतपठाया॥ आपदाभावणेकेनमि
तसांबरीआकारवानहोकरआया॥ राजाकोंचंडाली
कीआपदाभुगाकरबहुडस्वर्गकोंचल्यागया॥ हेराम
जीजोमयकछुदेखाथा॥ सोतुजकोंकहाहै॥ तांतेमनही
प्रमत्त

कर्त्ता है॥ अरु मन हीं भोक्ता है॥ जैसा जैसा मन विषे दृढ
संकल्प फुरता है॥ तैसा ही इसकों सुख दुःख का अनुभ
व होता है॥ हे रामजी जब लग चित्त पदा फुरता है॥ तब ल
ग इसकों आपदा प्राप्त होती है॥ जैसे जिंउ जिंउ किकर
का वृक्ष वधता है॥ तिंउ तिंउ कंटक वधते जाते हैं॥ तैसे म
न के फुरणे कर आपदा वधती जाती है॥ अरु जब मन
स्थित होता है॥ तब सब आपदा मिट जाती है॥ तातें हे राम
जी इस चित्तरूप बरफ कों विवेकरूपी तप्त करि गलावो
तब परम सार की प्राप्त होवेगी॥ इह चित्त ही संकल्प आडं
रूप बर का कारण है॥ तिसकों तूं अविद्या दृष्ट पैं जाण॥ जैसे
किसी वृत्ति कहा॥ किसी विवर्त कहा॥ किसी तरक कहा॥ सो
एक ही वस्तु के नाम हैं॥ तैसे किसी अविद्या कही॥ किसी
जीव॥ किसी बुध॥ किसी मन॥ किसी अहंकार कहा॥ सो स
न फुरणे के नाम हैं॥ इसकों विवेक कर लीन करो॥ हे रा
मजी जैसा संकल्प इस विषे दृढ होता है॥ तैसा देखता
है॥ हे रामजी उह कवन पदार्थ है॥ जो यत्तन कीयें सि
धन होवे॥ जो इह यत्न कर फिरे नहीं॥ तो सब कछु सि
ध होता है॥ जैसे जल के बासन कों जल विषे डारीये
तब जल की एकता हो जाती है॥ तैसे आत्मबोध कर
सर्व पदार्थों की एकता हो जाती है॥ श्रीरामोवाच॥
ही हे भगवन तुमों कहा॥ जो सुख दुःख सब मन विषे स्थि
त हैं॥ अरु मन की वृत्ति के नष्ट हूए सब नष्ट हो जाते
हैं॥ सो चपल वृत्ति कैसे क्षय होती है॥ श्रीवसिष्ठोवा
च॥ हे रघुकुल आकाश के चंद्रमा रामजी मय तुज
कों मन के उपशम की युक्ति कहता हूं॥ जैसे असवा
र के वस विषे घोडा आवता है॥ तैसे तेरे वस विषे म
न आवेगा॥ हे रामजी सब भूत मन ही ते उपजे हैं॥ सो ति
न की उत्पत्ति तीन प्रकार की है॥ एक राजसी॥ एक सा
त्विकी॥ एक तामसी है॥ प्रथम जो शुध चिन्मात्र त्रत्य वि

षेकलनाउठीहै॥तिसवासमुखीफुरणेकानाममनहू
याहै॥सोब्रह्मारूपहै॥सोब्रह्मासंकल्परूपआगेंसंक
ल्पकर्तेभया॥जैसाजैसासंकल्पकीयाहै॥तैसातैसा
देखतानयाहै॥तिसनेंइहमनवंनेंअडेंबरकल्याहै॥
तिसविषेजन्ममरणसुखदुःखमोहादिकसंसरण
रूपकल्याहै॥इसप्रकारबहुतआरंभकरआपवि
वीणहोगया॥आपणेआरंभसंयुक्ति।जैसेबरफका
किणकासमुद्रतेंउपजकरसूर्यकेतेजसोंलीनहोजा
वे॥तैसेबहुडसंकल्पकेवसतेंउपजा॥बहुडलीन
होगया॥इसप्रकारकईअनंतकोटिब्रह्मांडब्रह्मतें
उपजकरलीनहोजातेहैं॥अरुकेईहोवेंगे।जैसेस
मुद्रतेंतरंगहोतेहैं॥अरुलीनहोजातेहैं॥तैसेब्रह्मतें
ब्रह्मांडअरुब्रह्मेउपजउपजकरलीनहोजातेहैं॥अ
रुजैसेब्रह्मतत्वतेंउपजेहैं॥अरुजैसेलीनहोतेहैं॥सो
सुण॥हेरामजीशुधब्रह्मतत्वतेंप्रथममनसक्तिउप
जीहै॥तबआकासकोंचेततीभई॥तबआकाशाहू
या॥तिसतेंबहुडपवनहूया॥बहुडअग्निभई॥ति
सतेंआगेंजलहूया॥तिसकीदेखतातेंपृथिवीभई
जबचितसक्तिहूईसंकल्पकरपांचभूतकोंप्राप्तभ
ई॥तबअंतहकर्णजोसत्वप्रकितीहैं॥सोपृथिवी
अपतेजवायुसोंमिलकरधान्यविषेआनप्राप्त
होतेहैं॥तिनकोंपुरुषभोजनकरतेहैं॥तबउहप्राण
मंथावीर्यरुधिररूपगर्भविषेनिवासकरतेहैं॥ति
सतेंपुरुषउपजताहै॥सोपुरुषजन्मणमात्रतेंवेदों
कोंपठनेलागताहै॥बहुडगुरोंकेनिकिटजाताहै
बहुडकर्मकरकेतिसकीबुधिविवेकसोंचमतका
रवानहोतीहै।तुमारीन्यांईतिसकेचित्तकीवृत्तिहो
जातीहै॥ग्रहणत्यागशुभअशुभविषेविचारउस
कोंउपजताहै।तबनिर्मलअंतहकरणसहितपु

रूपस्थित होता है॥ तब क्रम करके सप्त भूमिका जो ज्ञान की हैं॥ सो तिसके चित्त विषे प्रकाशती हैं॥ चंद्रमा की न्याई तिसके चित्त विषे प्रकाशती हैं॥ ॥ इति श्रीउत्पत्तिप्रकरणे मोक्षोपाये महारामायणे सात्त्विकजन्म अवतारो नाम सर्गः॥ ९२॥ श्रीरामोवाच॥ हे सर्व शास्त्रों के वेत्ता भगवान उह कैसे सप्त भूमिका ज्ञान की यां शुध करणे हारी हैं॥ सो मुजकौं कहो॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हे रामजी सप्त भूमिका ज्ञान की हैं॥ अरु सप्त भूमिका अज्ञान की हैं॥ तिनके अंतर्गत अवर अवस्था बहुत हैं॥ तिनकी संख्या कछु नहीं॥ ज्ञान की भी अरु अज्ञान की भी असंख्य हैं॥ पर सप्त भूमिका के अंतर्गत हैं॥ हे रामचंद्र आत्मरूपी बृक्ष है॥ अरु अपणा पुरुषार्थ रूपी बसंत रुत है॥ तिसकर दो प्रकार की बली उत्पत्ति होती है॥ एक शुभ अरु एक अशुभ है॥ तिस पुरुषार्थ रूपी रस के बढणे कर फल की प्राप्ति होती है॥ अब भूमिका सुण ज्ञान किसकौं कहते हैं॥ अरु अज्ञान किसकौं कहते हैं॥ शुध चिन्मात्र विषे चेतना फुरणे तें रहित होकर स्थित होवणा॥ इसी का नाम ज्ञान है॥ शुध चिन्मात्र अद्वैत विषे जो अहं वेदना फुरती है॥ सो स्वरूप तें गिरना है॥ सो अज्ञान दशा है॥ हे रामचंद्र इह मय तुजकौं संक्षेप तें ज्ञान अरु अज्ञान के लक्षण कहे हैं॥ शुध चिन्मात्र विषे हे स्थित जिनकी॥ सो सत स्वरूप तें चलायमान नहीं होते॥ अरु राग द्वेष किसा विषे नहीं॥ सो ज्ञानवान है॥ अरु ऐसे स्वरूप चिन्मात्र तें जो गिरे हैं॥ अरु जगत के पदार्थों विषे मग्न हैं॥ सो अज्ञानी हैं॥ इस तें परे मोह कोऊ नहीं॥ न कोऊ हूया है॥ न कोऊ होवेगा॥ एही परम मोह है॥ अरु स्वरूप स्थित किसका नाम है॥ एक अर्थ कौं छोडकर अवर अर्थ कौं प्राप्त होती है वृत्ति॥ जैसे जाग्रत कौं त्यागकर स्वप्ने कौं प्राप्त होती है॥ तिसके मध्य विषे जो निर्मल रूप सत्ता

है॥ तिस विषे स्थित होणा सो स्वरूपस्थित कहीता है॥ हे रा
मचंद्र नली प्रकार जिसके संकल्प विकल्प शांत हूए हैं
अरु त्रिलोकी के अंतवंत भ्रम है॥ कैसी भ्रमता है॥ जो नि
द्रा अरु जडता तें रहित है॥ तिस सत्ता विषे स्थित होवणा
सो स्वरूपस्थित कहीता है॥ कैसा स्वरूप है॥ जो अहं त्वं आ
दिक फुरणे तें रहित है॥ अरु भेद विकार तें रहित है॥ ज
डता तें रहित अचेत चिन्मात्र है॥ सो आत्मस्वरूप कहीता
है॥ तिस तत्व के फुरणे कर जो जीवों की अवस्था हूई है॥
सो सुण॥ हे रामजी एक बीज जाग्रत है॥ एक जाग्रत है
तीसरी महाजाग्रत है॥ चौथी जाग्रतस्वप्न है॥ पंचम स्वप्न
है॥ षष्टी स्वप्नजाग्रत है॥ सप्तम सुषुप्त है॥ इह सप्त प्रकार
की अवस्था है॥ इनके अंतर्गत अवर अनेक हैं॥ मुख्य इ
ह सप्त हैं॥ अब इनके लक्षण सुण॥ हे रामचंद्र प्रथम जो
शुध चिन्मात्र असद तत्व सों चेतन्यता का लक्षण अहं
हों॥ तिसका भविष्यत जीव नाम होता है॥ सो आदि सर्व प
दार्थों का बीजरूप है॥ सो तिसका नाम बीजजाग्रत है॥ अ
रु तिसके अनंतर जो अहं अरु इह मेरा इत्यादिक प्रती
त जो दृढ हो गई॥ जन्मांतर विना भासे॥ तिसका नाम जाग्र
त है॥ अरु इह जो मय हों॥ इत्यादिक त्राष्टी साथ तन्मय हो
वणा॥ जन्मांतर विषे जो इह दृढ प्रतीत हो जावे॥ तिसका ना
म महाजाग्रत है॥ अरु महाजाग्रत विषे बैठे हूए मन प
डा फुरता है॥ मनोराज विषे उह फुरणा दृढ हो भासे॥ अथ
वा अदृढ होवे॥ सो जाग्रतस्वप्न कहीता है॥ अरु दूसरा चंद्र
मा भासे॥ सिपी विषे रूपा भासे॥ इत्यादिक विपर्यय भास
णा सो जाग्रतस्वप्न है॥ अरु निद्रा आई तिस विषे मन फुर
णे लागा॥ नाना प्रकार के पदार्थ चित के फुरणे कर भास
णे लागे॥ जब जाग उठ्या॥ तब कहता है मय अल्प काल
विषे केते पदार्थ देखे हैं॥ निद्रा काल विषे जो पदार्थ देखे
थे॥ तिनको असतरूप जानता भया॥ तिस निद्राकाल विषे
फुरणे का नाम स्वप्न है॥ अरु स्वप्न आया॥ तिस विषे दीर्घ का

१८७

190

लबीतगया। अफुल्लितअपणोवनावपुदेखताभया। ति
सविषेअहंममभावनाद्रिढहोआई। तबसतजानक
रजन्ममरणादिकदेखताभया। इहदेहरहेअपवान
रहे। तिनकानामस्वप्नजागतहै। उहस्वप्नामहाजागत
रूपकोप्राप्तहोताहै। इहस्वप्नजागतहै। अरुइनोंषटों
अवस्थाकाजहांअभावहोजावे। जडरूपहोवे। अरुभ
विष्यतदुःखहोणाहै। तिसकानामसुषुप्तहै। तिसअव
स्थाविषेघासवृक्षादिकस्थितहैं। हेरामजीअज्ञानकी
सप्तभूमिकाकहीहै। तिसीएकएकविषेअसंख्यअव
स्थाकेभेदहैं। हेरामजीस्वप्नचिरकालकरकेजागतरू
पहोजाताहै। तिसकेअनंतरअवरहैं। इसप्रकारएक
एककेअंतरअनेकहैं। इहमोहकीघनताहै। तिसक
रजीवपडेभ्रमतेहैं। जैसेजलनीचेतेंनीचेकोचल्याजा
ताहै। तैसेमोहकेअनंतरमोहकोंपावतेहैं। हेरामजीइ
हअज्ञानकीअवस्थाकहीहै। नानाप्रकारकेमोहभ्रम
विकारहैं। तिनतेंतूंविचारकरकेमुक्तिहो। जबतूंमहा
त्मापुरुषआत्मविचारकरकेनिर्मलबोधवानहोवें
गा। तबइसभ्रमकोंतरजावेंगा।। ।।इतिश्रीउत्पत
प्रकरणेमहारामायणेमोक्षउपायेअज्ञानभूमिका
नामसर्गः।। ८३ ।।श्रीवशिष्ठोवाच।। हेरामजीअबतूं
सप्तभूमिकाज्ञानकीसुण। भूमिकाकहीयेचित्तकीअ
वस्था। सोज्ञानकीभूमिकाकेंसीहैं। हेरामजीअनेकमतों
वालेभूमिकाकोंबहुतप्रकारकरकहतेहैं। अरुमेराति
प्रायहैंतोएहीहै। इसकरकेसुगमनिर्मलज्ञानकोप्रा
प्तहोताहै। स्वरूपविषेजागणेकानामज्ञानहै। तिसज्ञा
नकीसप्तभूमिकाहैं। अरुसप्तभूमिकातेंपरेहै। सोविदे
हमुक्तिहै। अरुभूमिकाकेनामभेदसुण। प्रथमशुभे
च्छा। दूसरीविचारणा। तीसरीतनमानसा। चतुर्थीस
त्वापत्ति। पंचमअसंसक्ति। षष्टमपदार्थाभावनी। स
प्तमतुर्या। इसकेसारकोंप्राप्तहूयाबहुडशोकनहीक

तो॥ अब इसका अर्थ सुण॥ हे रामजी जिसकों इह विचार
फुरता है॥ जो मय महामूढ हो रहा हों॥ मेरी बुधे सत विषे न
हीं। संसार की ओर लागी हुई है॥ ऐसे विचार कर के सत
शास्त्र अरु संतजनों की संगत करणी॥ वैराग्य पूर्वक स
त की इछा होवे॥ इसका नाम शुभइछा है॥ अरु सत शास्त्रों
के विचारणें संतों की संगत विषयों तें वैराग्य सतमार्ग
का अभ्यास॥ इनों सहित सदाचार विषे विचरणा॥ सत कों
सत जानणा अरु असत कों असत जान कर त्यागणा॥ इ
सका नाम विचारणा है॥ विचार शुभइछा सहित तत्व का
अभ्यास करणा। इंद्रीयों के विषयों तें वैराग्य करणा।
इसका नाम तन्मानसा है॥ मन सूक्ष्म होता है॥ सो तीसरी
भूमिका तन्मानसा है॥ चतुर्थी भूमिका का अभ्यास कर
णा। इंद्रीयों के अर्थों तें वैराग्य अरु जगत के मिथ्यापतें
नी वैराग्य करणा दूसरा। इसका नाम श्रवण मनन नि
दिध्यासन है॥ इसकर सत्तात्मा विषे इस्थित होती है॥ इ
सका नाम सत्वापत्ति है॥ सत्तात्मा का साक्षात्कार होता है
इह जो चार भूमिका हैं॥ संयमरूप॥ जो तिसका फल है॥
शुध विनेती॥ तिस फल विषे असंसक्ति रहणा। तिसका
नाम असंसक्ति है॥ दृश्य का विस्मरणा अरु आत्मारामी
अंतर बाहर तें नाना प्रकार के पदार्थों का तुछ भासणा सि चौ आदिक
होवे॥ तिसका नाम पदार्थ अभाविनी है॥ सो षष्टमी भूमि
का है॥ हे रामजी चिरकाल पर्यंत छटीं भूमिका का अ
भ्यास करने दद कलना का अभाव हो जाता है॥ अरु स्व
रूप विषे दृढ अप्रणाम होता है॥ छटी[illegible] भूमिका जहां एक
ता कों प्राप्त होवें॥ तिसका नाम तुर्या है॥ इह जीवन्मुक्ति की
अवस्था है॥ जीवन्मुक्ति तुर्यापद विषे स्थित है॥ अर्थ इह
जो तीन भूमिका जगत की जाग्रत अवस्था विषे स्थित है
अरु चौथी तत्वज्ञानी की है॥ अरु पंचम षष्ट सप्तम जीव
न्मुक्ति की अवस्थां है॥ अरु तुर्यातीत पद विषे विदेह मु मेंर
क्ति स्थित होता है॥ हे रामचंद्र जो पुरुष महाभाग्यवान है

सो सप्तम भूमिका विषे स्थित होते हैं ॥ सो आत्मारामी महा
पुरुष हैं ॥ सो परम पद को प्राप्त होते हैं ॥ हे रामजी जो जीवन
मुक्ति पुरुष हैं ॥ सो सुख दुःख विषे चलायमान नहीं होते
शांतिरूप होकर अपने प्रकृति आचार विषे विचरते हैं ॥ अ
थवा नहीं विचरते ॥ तो भी तिनकों बंधन कछु नहीं ॥ जैसे
सुषुप्त पुरुष के निकट जाकर क्रिया करे ॥ तैसे उसकों
कर्तृत्व का बोध कछु नहीं ॥ सुषुप्तवत उनके भी लित लो
चन हैं ॥ हे रामचंद्र जैसे सुषुप्त पुरुष को रूप अरु इंद्रीयं
मन का अभाव हो जाता है ॥ इह सप्त भूमिका ज्ञानकी ज्ञा
नवानका विषय हैं ॥ मूर्खों का विषय नहीं ॥ जिसका मन
निर्मल है ॥ तिसको भूमिका विषे अधिकार है ॥ हे रामचं
द्र आत्मज्ञान कर जिनके हृदे ग्रंथ छूट गई है ॥ तिनकों
संसार मृगतृष्णा के जलवत मिथ्या भासता है ॥ उह मुक्ति
रूप है ॥ अरु जो संसार तें विरक्त होकर इन भूमिका विषे
आए हैं ॥ मोहरूपी समुद्र कों तरते नहीं ॥ अरु पूर्ण पद कों
भी प्राप्त नहीं भए ॥ सप्त भूमिका विषे किसी भूमिका विषे
लागे हूए हैं ॥ सो भी आत्मपद कों पाकर पूर्ण आत्मा होवें
गें ॥ हे रामजी एक सप्त भूमिका को प्राप्त भए हैं ॥ केई एक
भूमिका ॥ केई दूसरी भूमिका ॥ केई तीसरी भूमिका ॥ केई
चौथी ॥ केई पंचमी भूमिका ॥ केई देढ ॥ केई अढाई ॥ केई
साढे तीन ॥ केई साढे चार ॥ केई साढे पंच ॥ केई साढे छीह
केई सप्त भूमिका कों प्राप्त भए हैं ॥ केई गृहस्थ विषे स्थि
त हैं ॥ केई वन विषे हैं ॥ केई तपस्वी ॥ केई अतीत हैं ॥ केई
राज विषे हैं ॥ इसतें आदि लेकर सो पुरुष धंन्य हैं ॥ अरु
वंदेसर मे हैं ॥ जो वंदे दिगपाल हस्ती हैं ॥ सो तिनके सर
मत्व आगें तृणवत हैं ॥ काहेतें जो अवरसर मत्व सुगम
है ॥ अरु इंद्रीयों रूपी शत्रुयों का जीतणा कठिन है ॥ जि
न पुरुषों इनकों जीत्या है ॥ सो वंदना करणे योग्य हैं ॥ ति
नकों चक्रवर्ती राजा लोग ॥ अरु कुबेर राजऐश्वर्य विभू
ति तिनकों सनतृणवत हैं ॥ उह परम पद कों प्राप्त भए

जैसे सप्तम भूमिका विषे अभाव हो जाता है

है ॥ ॥ इति श्री उत्पतप्रकरणे मोक्षउपाये ज्ञानभू
मिकाउपदेशो नाम सर्गः ॥ ९४ ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥
हे रामजी जैसे स्वर्ण विषे भूषण फुरे ॥ तिसकों ऽअपणा
स्वर्णभाव भूल जावे ॥ ऽअरु कहे मय भूषण हों ॥ तैसे चित
संवेदन जिसतें फुरी है ॥ तिसतें भूलकर ऽअहंवेदना हूई
है ॥ ऽअहंकाररूप धारता है ॥ जो मय ऐही कछु हों ॥ श्रीरा
मोवाच ॥ हे भगवन स्वर्ण विषे भूषण होता है ॥ सो मय
जानता हों ॥ पर ऽआत्मा विषे ऽअहंभाव कैसे होता है ॥ सो क
हो ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ हे राम चेद ऽअहंकारादिकों का
जो होवणा है । सो ऽअसतरूप है । ऽआगमापाई है । तिनका
कछु भिन्नरूप नहीं । इह ऽआत्मा का चिमतकार है । वास्त
वतें इतर कछु नहीं । जैसे समुद्र विषे ऽअर्ध ऊर्ध जल ही है ।
इतर कछु नहीं ॥ तैसे परमतत्व विषे विभागकलनाकों
ऊ नहीं । सनत्रां तिरूप है ॥ जैसे समुद्र विषे द्रवता करके
तरंगादिक भासते हैं ॥ तैसे फुरणे करके ऽआत्मा विषे भा
नाप्रकार का जगत भासता है । पर इतर कछु नहीं ॥ जैं
से स्वर्ण विषे भूषण भासते हैं ॥ तैसे ऽआत्मा विषे जगत
भासता है ॥ जैसे जल विषे तरंग वायु कर भासते हैं ॥ तैं
से ऽआत्मा विषे फुरणे कर जगत भासता है ॥ फुरणे तें र
हित ऽआत्मा ही है ॥ इतर कछु नहीं ॥ हे रामजी जैसे मृत्ति
का की सेना होती है ॥ तिस विषे हस्ती घोडे ऽआदिक भा
सते हैं ॥ सो सभ मृत्तिका रूप हैं ॥ तैसे सभ जगत ऽआत्मरू
प है ॥ भ्रम करके नानात्व भासता है ॥ तातें ऽआत्मा ही ऽअप
णे ऽआप विषे स्थित है ॥ जैसे ऽआकाश विषे ऽआकाश स्थि
त है । तैसे ऽआत्मा विषे ऽआत्मा स्थित है ॥ जैसे दर्पण विषे
प्रतिबिंब स्थित होता है ॥ तैसे ऽआत्मा विषे जगत भासता
है ॥ जैसे स्वप्न विषे दूर पदारथ नेडे भासते हैं ॥ सो भ्रम
मात्र हैं ॥ तैसे ऽआत्मा विषे जगत भासता है ॥ हे रामजी ऽअ
सत जगत भ्रम करके सत भासता है ॥ जैसे मृगजल स
त भासता है ॥ तैसे ऽआत्मा विषे जगत भासता है ॥ जैसे

इंद्रजालकेसंयोगकरआकाशविषेनगरभासताहै
तैसेआत्माविषेअज्ञानकरइहजगतभासताहै॥ ॥
॥इतिउत्पतप्रकरणेयुक्तउपदेशोनामसर्गः॥ ॥
॥९५॥श्रीवसिष्ठोवाच॥हेरामजीजैसेस्वर्णविषे
भूषणहोताहै।सोमिथ्यारूपहै।तैसेआत्माविषेअ
हंत्वंआदिकइहअविद्यारूपहै।जैसेलवणराजा
कीकथासुनीहै।सोदूसरेदिनविचारनेलागा।जो
इहमुजकोंभ्रमभासयाहै।परसतरूपहोकरदेखा
है।देशनगरमानुषादिकपदार्थमुजकोंप्रत्यक्षदि
खआएहैं।बडजाकरदेखों।जोकैसेवार्त्ताहै॥ऐ
सेविचारकरदिग्विजयकानामकीया।मंत्रीसेना
कोंसाथलेकरदक्षिणदिशाकीओररचल्या॥अवर
देशाकोंलंघतालंघताविंध्याचलपर्वतकोंजाप्राप्त
भया॥पूर्वदिशाअरदक्षिणदिशाकेमध्यविषेअ
टवीकोंभ्रमताभ्रमताजाप्राप्तभया॥जैसेआकास
वीथीयांविषेसूर्यभ्रमताहै।तैसेराजाभ्रमताभ्र
मतादेखताभया॥जोदेखाथामपदार्थभ्रमविषे
देखेथे॥सोप्रत्यक्षदेखताभया॥तबविस्मयकोंप्रा
प्तभया॥अरुकहा॥हेदेवइहक्याहै।जोकछुमैंस्वप्ने
मविषेदेखाथा॥सोअबमुजकोंप्रत्यक्षभासताहै
बडाआश्चर्यहै।बडाआश्चर्यहै।ऐसेविचारक
रकेआगेगया॥क्यादेखेजोअग्निकरवृक्षजल्ये
हूयेहैं॥अरुअकोडदुर्भिक्षपडीथी।~~अरुअग्नि~~
~~करवृक्षजल्येहूयेहैं~~॥अरुसनबंधीदेखे॥तिनकी
चेष्टाकेस्थानदेखे॥क्यादेखे।जोचंडालीसरीरकी
ससबैठीहै॥सोरुदनपडीकरतीहै।हेदेवमेरा
पुत्रकहांगया।हेपुत्रतूंकहांगया।मेरी जीर्ण
देहहोगईहै।चंद्रमाकीन्याईमेराद्युवाईराजकु
मारकहांगया।अरुमृगनयनीमेरीबेटीथी।अरु

दुहित्रेदुहित्रीयांसोदुर्भिक्षतेताकरजातेरहे॥ तिनकेदुः
खावणेकेपदार्थहैं॥ अरुचेष्टाकेस्थानहैं॥ रतकोंकी
मालागलेविषेडारतेथे॥ अरुजीवोंकेमांसखातेथे॥ रु
धिरपानकरतेथे॥ उहकहांगये॥ इसतेंलेकरपुत्रअरु
पुत्रीयांअरुभरताअरुघवाईकानामलैरुदनकरे॥ ले
तबराजाउनकोंरुदनतेंछुटाया॥ अरुवृत्तांतपूछणेला
गा॥ जोतूंकिसनिमित्तरुदनकरतीहैं॥ किससाथतेरावि
योगहूयाहै॥ ॥इतिउत्पतप्रकरणेचंडालीसोच
ननामसर्गः॥ ९६॥ चंडालीयोवाच॥ हेराजनएकका
लेमोंवर्षाहोणेतेंरहिगई॥ कालपडा॥ जीवोंकोंवडादुः
खआनपडा॥ तबमेरेपुत्रदुहित्रेअरुदुहित्रीयांघवाई
भरताआदिकजोनिकसगए॥ उनकेवियोगतेंमयदुः
खीहोकररुदनकरतीहों॥ तिनोंविनांमयशून्यहोगई
हों॥ उहकहूंकष्टकोंपावतेमरगएहैं॥ जैसेकूंजविछडी कूई
कुरलावतीहै॥ तैसेमयकुरलावतीहों॥ हेरामजीजबइ
सप्रकारचंडालीकहा॥ तबराजाविस्मयकोंप्राप्तभया
अरुमंत्रीकेमुखकीओरदेखणेलागा॥ जैसेकागजऊ
परमूर्त्तिलिखीहोतीहै॥ तैसेराजाहोगया॥ उसचंडालीसों
वारंवारपूछे॥ उहबहुडंकहे॥ राजाआश्चर्यमानहोवे
तबराजायथायोग्यउसकोंधनदेकरचलतारहा॥ बहु
डंअपणेराजमंदरकोंआवताभया॥ जबप्रातकालहूया
सफालागी॥ राजामुजसोंपूछतभया॥ राजोवाच॥ हेमु
नीश्वरइहस्वप्नामुजकोंप्रत्यक्षकैसेहूयाहै॥ इसकोंदे
खकरमयआश्चर्यमानहूयाहों॥ जबइसप्रकारराजेक
हा॥ तबमयग्रहमकेअनुसारउसकोंउत्तरदीया॥ श्रीव
सिष्टोवाच॥ युक्तसहितउसकेचितकासंसादूरकीया
जैसेमेघकोंवायुदूरकरे॥ सोतुजकोंकहताहों॥ हेरामजी
अविद्याऐसीहै॥ जोअसतकोंसतकरदिखावतीहै॥ वहे
भ्रमकोंदिखावणेहारीहै॥ श्रीरामोवाच॥ हेभगवन

चित्तभ्रमसत्तकोंवैंसेप्राप्तभया॥ इहमेरेचित्तविषेनारी
संसेउत्पन्नहूयाहै॥ तिसकोंदूरकरो॥ श्रीवसिष्टोवाच॥ हे
रामजीइसविषेक्याआश्चर्यहै॥ अविद्याविषसनकछू
बनताहै॥ स्वप्नेविषेतत्प्रत्यक्षदेखा॥ जोघटतेंपटहोताहै
अनेकपदार्थइसीप्रकारविपर्ययहोभासतेहैं॥ तैंसेइह
भीहूया॥ दूरनिकटहोजाताहै॥ अरुनिकटदूरहोभास
ताहै॥ जैंसेदर्पणविषेप्रतिबिंबपर्वतकाहोताहै॥ तैंसेभ्र
मविषेचिरकालकाअल्पकालहोजाताहै॥ अरुअल्पका
लकादीर्घकालहोभासताहै॥ जैंसेमदपानकोउकर्ताहै
तिसकीबुधविपर्ययहोजातीहै॥ जैंसेमूर्छाविषेबुधि
विपर्ययहोजातीहै॥ जैंसेमृत्युमूर्छाकेअनंतरबुधिविप
र्ययहोजातीहै॥ केतेस्थानोंविषेबुधिविपर्ययहोकरअ
वेश्त नेकभ्रमकोंदेखताहै॥ तैंसेवासनोंकरजिनकाचित्तहै
तिनकोंजैंसीसंवेदनफुरतीहै॥ तैंसीहोभासतीहै॥ हेराम
जीजिनकाचित्तस्वरूपतैंगिडहाहै॥ तिनकोंअविद्याअने
कभ्रमदिखावतीहै॥ कल्पकोक्षणअरुक्षणकोंकल्प
करदिखावतीहै॥ जैंसेमदपानकरणेवालाभ्रमकोंप्राप्त
होताहै॥ तैंसेअविद्याकरजीवभ्रमकोंप्राप्तहोताहै॥ एक
अवरराजाथा॥ तिसकोइहअवस्थाप्राप्तहूईथी॥ सोजैं
सीअवस्थाउनकेचित्तविषेफुरआईथी॥ तैंसेइसराजाकों
फुरआईतबजानतभया॥ जोमयइहक्रियाकरीहै॥ जैंसे
अनोखापुरुषस्वप्नेविषेआपकोंनोखादेखताहै॥ अरु
नखासोयाहै॥ अरुअकर्तारूपसोयाहै॥ अरुआपकों
अप्ररतनमदेखताहै स्वप्नेविषेकर्तादेखताहैं॥ जोइहक्रियामयकरीहै॥ जैंसे
ईहासोयापडाहै॥ दिशांतरविषेआपकोंचलतादेखताहै
सभाविषे तैंसेलवणकोंफुरआया॥ सोप्रतिभामात्रहै॥ पर्वतकीन्यां
ईअचलरूपबैगा॥ चंडालीकीचेष्टालवणराजाकोंफुरु
बैल आई॥ अथवा विंध्यपर्वतकेचंडालोंकोंलवणकीप्रति
भाफुरआईहै॥ लवणकेचित्तकाभ्रमउनकोंदृढहोगया॥

है॥ जैसे एक ही सद्रूप भ्रम अनेकों को फुर आवता है॥ स्व
प्नों सद्रूप होता है॥ जैसे एक ही जेवडी विषे अनेकों को स
र्प भ्रम होता है॥ इसी प्रकार अनेक जीवों को एक भ्रम अ
नेक हो भासता है॥ तैसे उनकों फुर आई है॥ हे रामजी जे
ते कछु पदार्थ भासते हैं॥ तिसकी सत्ता रूप संवेदन है॥ जै
से तिस विषे संकल्प होता है॥ तैसे होकर भासता है॥ जो प
दार्थ सत रूप हो भासता है॥ सो सत हो जाता है॥ अरु जो अ
सत रूप हो भासता है॥ सो असत हो जाता है॥ सत्त ही पदार्थ
संवेदन रूप है॥ तीनों लोक अरु काल संवेदन करके उपजे
हैं॥ इनका बीज संवेदन है॥ सत्त अविद्या रूप है॥ अरु अ
विद्या क्या है॥ जैसे स्वर्ण विषे भूषण हैं॥ तैसे आत्मा विषे अ
विद्या है॥ अरु आत्मा को अविद्या का संबंध कदाचित नहीं
का है तें जो संबंध तिसका होता है॥ जो सम रूप होता है॥
जैसे काष्ट अरु लाख का संबंध होता है॥ सो आकार सहि
त है॥ जो आकार तें रहित होवे॥ तिसका संबंध कैसे होवे
जैसे गगन अरु तम का संबंध नहीं होता॥ जड़ साथ ज
ड़ का संबंध होता है॥ चेतन साथ चैतन्य का संबंध होता
है॥ सो सजातीय रूप का संबंध होता है॥ विजातीय का सं
बंध नहीं होता॥ तातें अविद्या रूप देह को आत्मा साथ सं
बंध नहीं॥ जे जड़ साथ आत्मा का संबंध होवे॥ तब आत्मा
भी जड़ हो जावे॥ सो तो आत्मा सदा चेतन स्वरूप है॥ सदा अ
नुभव करके प्रकाशता है॥ तिसको जड़ कैसे कहिये॥ जै
से स्वाद को जिह्वा ग्रहण करती है॥ तैसे जड़ साथ जड़ की
एकता होती है॥ जैसे जल साथ जल की एकता होती है॥
माटी साथ माटी की एकता होती है॥ अग्नि साथ अग्नि की
होती है॥ प्रकाश साथ प्रकाश की होती है॥ इसी प्रकार सर्व
पदार्थों की सजातीय साथ एकता होती है॥ विजातीय सा
थ नहीं होती॥ तातें सर्व चैतन्य आकाश है॥ अवर पाषाणा
दिक दृश्य वर्ग के उ नहीं॥ भ्रम करके आकार भासते हैं॥

जैसे स्वर्ण बुधि कों लागता है ॥ तब नाना प्रकार के भू
षण भासते हैं ॥ तैसे जब अहं वेदनी आत्मा विषे फुरती
है ॥ तब अनेक रूप होकर विश्व भासती है ॥ जैसे स्वर्ण की
ओर देखीये ॥ तब सब स्वर्ण ही है ॥ तैसे जब ब्रह्मसत्ता की
ओर देखीये ॥ तब सर्व जगत ब्रह्म ही भासता है ॥ जैसे मृत्त
का की सेना बालिक कों अनेक रूप भासती है ॥ अरु बुधि
वान कों एक मृत्तका भासती है ॥ तैसे अज्ञानी कों नाना रू
प जगत भासता है ॥ अरु ज्ञानवान कों एक ब्रह्म ही भास
ता है ॥ सो ब्रह्म क्या है ॥ जो द्रष्टा दर्शन दृश्य जिस विषे फुर
ते हैं ॥ इनके मध्य अरु इनतें रहित जो सत्ता है ॥ सो ब्रह्मस
त्ता है ॥ हे रामजी जो सत्ता अजड रूप है ॥ अरु त्रिलोकी को
शावत निर्विकल्प स्वरूप है ॥ तिस विषे जब इस्थित होवेगी
तब समाधि होवे ॥ अथवा उथान होवे तुजकों सन ब्रह्म
सत्ता ही भासेगी ॥ हे रामजी जो पुरुष निर्मनता विषे स्थित
भया है ॥ सो सरीर के इष्ट विषे हर्ष नही करता ॥ अनिष्ट
विषे शोक नही करता ॥ निर्मनन रूप होकर स्थित होता
है ॥ जैसे भविष्यत नगर विषे जीव पडे वसते हैं ॥ अरु अ
नेक चिंता कर संयुक्त भासते हैं ॥ सो सब तिसके चित्त वि
षे इस्थित होते हैं ॥ जैसे कोउ पुरुष देशांतर को जाता है ॥
तिसकों मार्ग विषे अनेक पदार्थ भासते हैं ॥ पर किसी वि
षे चित्त नही लगावता ॥ जहां जाणा है ॥ तिसकी वृत्ति तहां
रहती है ॥ तैसे तुम भी रागद्वेष किसी विषे नही करणां ॥
जैसे जल सों अग्नि नही निकसती ॥ तैसे आत्मा विषे चित्त
नही होता ॥ अविचार अविद्या कर चित्त भासता है ॥ विचा
र कीये तें चित्त नहीं पाईता ॥ जैसे प्रकाश कर तम का अ
भाव होता है ॥ तैसे आत्मा विषे चित्त का अभाव है ॥ आत्म
सत्ता नित्य शुध परमानंद स्वरूप अपणे आप विषे स्थि
त है ॥ अनुभव रूप है ॥ तिसके विस्मरण कर के दुःखों कों
प्राप्त होता है ॥ मूर्खता कर के । तिसकों अमृत रूपी चंद्रमा

विषेअग्निप्राप्तहोतीहै॥ हेरामजीतांतेतंसावधानहो
इहजोफुरणापडाफुरताहै॥ इसीकानामचित्तहै॥ अ
वरतोचित्तकोऊनहीं॥ इसचित्तकोंदूरतेत्यागकर। जो
तंहैं। तिसीविषेस्थितहोवो॥ संसारकीभावनातेंमुक्ति
होकरपरमनिर्वाणपदविषइस्थितहोवो॥ हेरामजीअ
सतरूपचित्तहीसंसारहै॥ जोतिसकोसतजानकरत्या
गनहींकर्त्ता। सोआकाशकेवनविषेविचरताहै॥ तिस
कोमेराधिकारहै॥ अरुजिनकामननष्टहूयाहै॥ सोम
हापुरुषहैं॥ सोसंसारकेपारकोंप्राप्तहूएहैं॥ ॥इति
श्रीउत्पतप्रकरणेचित्ताभावप्रतिपादनंनामसर्गः॥
॥९८॥ श्रीवसिष्ठोवाच॥ हेरामजीइहपुरुषभूमिका
कोंकिंउकरप्राप्तहोताहै॥ तिनकाक्रमसुण॥ प्रथमइस
पुरुषकोंकछुबोधहोताहै॥ बडेक्रमकरकेसंतोकी
संगतकरताहै॥ सदासदरूपरूपजोसंसारकाप्रवाहहै।
तिसकेतरणेकोंसतशास्त्रअरुसंतोकीसंगतबिनास
मर्थनहीहोता॥ जबसंतोकासंगअरुसतशास्त्रोंकावि
चारकरणेलागताहै॥ तबइसकोंग्रहणत्यागकीबुधि
उपजतीहै॥ जोइहकर्मकर्तव्यहै॥ अरुइहत्यागणेयोग्य
है॥ इहविचारउपजताहै॥ इसकानामशुभइछाहै॥ जब
इहइछाहूई॥ तबशास्त्रोद्वाराइसकोंदृढविचारउपज
ताहै॥ जोइहशुभहै॥ इहअशुभहै॥ शुभकाग्रहणकर
णा॥ अरुअशुभकात्यागकरणा॥ यथाशास्त्रविचरणा
इसकानामविचारणाहै॥ जबसम्यकविचारदृढहोताहै
तबमिथ्यारूपसंसारकीभावनात्यागदेताहै॥ अरसत
विषेस्थितहोताहै॥ इसकानामतन्मानसाहै॥ जबसंसार
कीवासनाक्षीणहोतीहै॥ अरुसतकादृढअभ्यासहोता
॥ तबतिसवैराग्यअरुअभ्यासकरसम्यकज्ञानउपजे
है॥ आत्माकासाक्षात्कारहोताहै॥ तिसकानामसत्वा
पत्तिहै॥ मनतेवासनानष्टहोजातीहै॥ तिसकरसिधीपद

र्थप्राप्त होते हैं॥ तिनकी प्राप्तविषे भी असक्ति नही
होता॥ स्वरूपविषे सदा सावधान रहता है॥ स्त्री आ
दिक पदार्थ प्रारब्धकर प्राप्त होते हैं॥ तिनको स्वप्नपदा
र्थके समान जानता है॥ इसका नाम असंसक्ति है॥ जो
कर्मोके फलविषे बंधमान नही होता॥ इसका नाम अ
संसक्ति है॥ इसके अनंतर मनकी तनता होती गई॥ मो तनुमता
अरु स्वरूपकी ओर चित्तका प्रणाम होता है॥ तब दृढ
प्रणाम करके व्यवहारका भी अभाव होजाता है॥ जो प
लपलविषे कर्म करते॥ अथवा प्रारब्धवेगकर क
र्ता है॥ परउसके चित्तविषे फुरणा कछु नही फुरता॥ म
न क्षीण भावकौं प्राप्त होता है॥ कर्त्ता भी उह कछु न
होकर्त्ता॥ देखता है तौभी नही देखता॥ अर्धसुषुप्त हो
ता है॥ कर्तृत्वकी भावना नही फुरती॥ मन नही फुरता
इसका नाम पदार्थाभावनी जोगभूमिका है॥ इसविषे
चित्त लीन होजाता है॥ इस अवस्थाविषे जो अभ्या
स होता है॥ चित्तके भावीके अभावकों॥ जबकेताइक
काल इस अभ्यासविषे व्यतीत होता है॥ अरु अंतरते
पदार्थोंकी अभावना दृढ होती है॥ तब तुर्यारूप होता
है॥ तब जीवन्मुक्ति कहीता है॥ इष्टकों पाकर हर्षवा
न नही होता॥ अरु अनिष्टविषे शोकवान नही होता॥
केवल विगतज्वर अरु संसेतें रहित होता है॥ सो उत्तम
पदकौं प्राप्त होता है॥ हे रामजी तें भी अब ज्ञान ज्ञेय कू
या है॥ जो कछु जानणे योग्य था॥ सो तुज जिंनु का तिनु जा
णया है॥ सर्वपदार्थोंकी भावना तेरी नष्ट होगई है॥ अ
ब तेरे साथ सरीर रहे॥ अथवा न रहे॥ हर्षशोकतें रहि
त तूं निरामय आत्मा हैं॥ तूं अपने आप स्वच्छ आत्मा
विषे स्थित हो॥ बोधरूप शोकतें रहित अद्वैतरूप अप
ने आपविषे स्थित हो॥ देह उदे होता है॥ अरु लीन हो
जाती है॥ देशकालवस्तुके परिछेदतें रहित जो आने

माहै॥ सो उदे अस्तिकैसे होवे॥ हे रामजी तूं अविनाशी हैं॥ आपको सरीर नहीं जानणा॥ तूं परमईश्वर स्वरूप हैं॥ जैसे घटके नास हूए घटाकाश नाश नहीं होता॥ तैसे सरीरके नाश हूए तेरा नाश नहीं होता॥ जैसे सूर्यकी किरणां जा लपते मृगजलका नाश होजाता है॥ किरणका नाश नहीं होता॥ तैसे देहके नाश हूए आत्माका नाश नहीं होता॥ हे रामचंद्र जेते कब जगतके पदार्थ भासते हैं॥ सो सब असत रूप हैं॥ अरु तूं तो अद्वैत रूप हैं॥ इह सब दृश्य तेरी इछा मात्र है॥ तूं किसकी इछा करता हैं॥ शब्द स्पर्श रूप रस गंध इह जो पांचो विषय दृश्य रूप है॥ सो तुज ते भिन्न रंचक मात्र भी नहीं॥ सब तेरा ही स्वरूप हैं॥ हे रामजी सर्व सक्ति आत्मा है॥ सोई आभास करके अनेक रूप हो भासता है॥ जैसे आकास विषे सून्यता शक्ति है सो आकाशते भिन्न नहीं॥ तैसे आत्मा विषे सर्वशक्ति है तिसते द्वैत रूप जगत हो भासता है॥ सो आत्माते भिन्न नहीं॥ सो फुरणे करके चित विषे भासते हैं॥ सो तीन प्रकारका त्रिलोकी जगत जीवको भ्रम हूया है॥ एक सात्विक॥ एक राजस॥ एक तामस॥ जब इह तीनों एक समान होवें॥ तब कल्याण होवे॥ वासनाके क्षय हूए सब कर्म क्षय हो जाते हैं॥ तिसकर भी भ्रम नाश हो जाता है॥ चित्त के संसरणे का नाम वासना है॥ सो [illegible]र्म संसार माया मात्र है॥ इसके नष्ट हूए सब नाश हो जाता है॥ हे रामचंद्र इह संसार घटीयंत्रकी न्यांई है॥ अरु जीव रूपी टिंडा है॥ वासनारूपी रसडी साथ बांधे हूए पडे भ्रमते हैं॥ अरु तुम आत्मविचार कर इस रसडी को काटो॥ इस अविद्यारूपी रसडी को जब लग जाणा नहीं॥ तब लग इह बहु भ्रम मोहको दिखावती है॥ अरु जब इसको जाणया॥ तब इह नष्ट होजाती है॥ अरु सुखको प्राप्त होवीता है॥ अनंत अनादि तत्व लक्षण तत्वको प्राप्त होवीता है॥

१९६



196

अर्थ इह ॥ जब लग अविद्या को नही जाणा ॥ तब लग सं
सार सत भासता है ॥ तिस विषे अनेक भ्रम को देखता है ॥
जब इस कों स्वरूप तें जाणा ॥ जो इह वस्तु नही भ्रमरूप
है ॥ तब संसार वृत्ति कों त्याग कर स्वरूप विषे स्थित होता
है ॥ हे रामजी इह संसार ब्रह्म तें उपजा है ॥ अरु ईहा रूप
है ॥ अरु सर्व लीलों को कर्त्ता है ॥ बहुड़ अपने विषे लीन
कर लेता है ॥ जो एक चैतन्य शुध संवित अनुभव रूप है
अरु आकाश तें भी सूक्षम निर्मल है ॥ तिस विषे जगत
ऐसे है ॥ जैसे दर्पण विषे प्रतिबिंब होता है ॥ तैसे आत्मा
विषे जगत भासता है ॥ सो दर्पण तें इतर नही ॥ हे रामजी
चित्त संवेदन जो जाती है ॥ तिस के अनुभव करणे वाली
जो सत्ता है ॥ सो सूर्य के मार्ग कर भी नही रोकी जाती ॥ तिस
को तूं चित्त सत्ता जान ॥ सोई पुरुष का रूप है ॥ सरीर पुरु
ष का रूप नही ॥ देह के रहणे अथवा नष्ट होवणे विषे
अ आत्मा जिउ का तिउ है ॥ जिन पुरुषों को ज्ञान कर के दे
ह विषे अभिमान हूया है ॥ तिन कों सुख दुःख लागता
है ॥ अरु ज्ञानवान को सुख दुःख स्पर्श नही करते ॥ काहे
ते जो उह आत्मा रूप हैं ॥ सो आत्मा निराकार निर्विकार
है ॥ अरु आकाश की न्याई स्थित है ॥ तिस कों सुख दुःख कै
से होवे ॥ अरु देह साथ मिथ्या हूया भासता है ॥ सो स्वरूप
के प्रमाद कर इस अप के चेतणे सो देहादिक भ्रम भासता
है ॥ वासनों के संयोग कर देह साथ संबंध होता है ॥ जैसे भ्र
मरे अरु कमलों का संयोग होता है ॥ तैसे देह अरु देही
का संयोग होता है ॥ सो देह के नाश हूए देही का नाश नही
होता ॥ जैसे कमलों के नाश हूए भ्रमरों का नाश नही हो
ता ॥ तैसे देह के नाश हूए ॥ आत्मा का नाश नही होता ॥ हे
रामजी तुम निरइछित साक्षीभूत विषे जगत जो भास
ता है ॥ सो तुम तें इतर नही ॥ जैसे मणि का प्रकाश मणि
तें भिन्न नही ॥ तैसे जगत आत्मा का प्रकाश है ॥ सो आत्म

तें भिन्न नहीं॥ सो अैसे हैं॥ जैसे आकाश विषे नीलता भास
ती है॥ तैसे आत्मा विषे इह जगत भासता है॥ हे रामजी इ
ह जगत चित्त विषे इस्थित है॥ अरु चित्त संकल्प रूप है॥
जब संकल्प क्षय होता है॥ तब चित्त भी नष्ट हो जाता है॥
जब चित्त नष्ट हूया॥ तब संसार कुही इ नष्ट हो जाता है॥ नि
र्मल सर्वत काल के आकाशवत आत्मा ही प्रकाशता है॥
सो चिन्मात्र सत्ता एक है॥ अज है॥ आदि अंत मध्य तें रहि
त है॥ तिस विषे स्पंद फुरणा है॥ तब संकल्प रूप ब्रह्मा होक
र स्थित भया है॥ तिसने बड़े नाना प्रकार का जगत रचा आगें
है॥ सो जगत भ्रमरूप है॥ मूर्ख बालिकों कों सत रूप भास
ता है॥ जैसे बालिक कों पिछावें विषे वेताल भासता है॥ तै
से जीवों कों अज्ञान कर देह भासती है॥ असत रूप सत
होकर भासती है॥ जब सम्यक ज्ञान होता है॥ तब देह भ्र
म लीन हो जाता है॥ जैसे समुद्र विषे तरंग उपज कर ली
न हो जाता है॥ तैसे आत्मा तें जगत उपज कर आत्मा विषे
लीन हो जाता है॥ ॥

॥ इति श्री महारामायणे मोक्षउपाए उत्पत्ति प्रकरणे
परमार्थ निरूपणं नाम सर्गः॥ ९८॥ ३॥ त्रयम्रक
उम् उम् उम् ओं समाप्तम् उम् उम् उम् उम्


339